अंक 295 वर्ष 60

भाषा

मार्च–अप्रैल 2021

नई शिक्षा नीति 2020 विशेषांक

सत्यमेव जयते

केंद्रीय हिंदी निदेशालय

भारत सरकार

भाषा

मार्च–अप्रैल (विशेषांक) 2021

भाषा (द्वैमासिक)

लेखकों से अनुरोध

1. ***भाषा*** में छपने के लिए भेजी जाने वाली सामग्री यथासंभव सरल और सुबोध होनी चाहिए। रचनाएँ प्रायः टंकित रूप में भेजी जाएँ। हस्तलिखित सामग्री यदि भेजी जाए तो वह सुपाठ्य, बोधगम्य तथा सुंदर लिखावट में होनी अपेक्षित है। रचना की मूलप्रति ही भेजें। फोटोप्रति स्वीकार नहीं की जाएगी।

2. लेख आदि सामान्यतः फुल स्केप आकार के दस टंकित पृष्ठों से अधिक नहीं होने चाहिए और हाशिया छोड़कर एक ओर ही टाइप किए जाने चाहिए।

3. अनुवाद तथा लिप्यंतरण के साथ मूल लेखक की अनुमति भेजना अनिवार्य है। इससे रचना पर निर्णय लेने में हमें सुविधा होगी। मूल कविता का लिप्यंतरण टंकित होने पर उसकी वर्तनी संबंधी त्रुटियाँ प्रायः नहीं होंगी, अतः टंकित लिप्यंतरण ही अपेक्षित है। रचना में अपना नाम और पता हिंदी के साथ–साथ अंग्रेजी में भी देने का कष्ट करें।

4. सामग्री के प्रकाशन विषय में संपादक का निर्णय अंतिम माना जाएगा।

5. रचनाओं की अस्वीकृति के संबंध में अलग से कोई पत्राचार कर पाना हमारे लिए संभव नहीं है, अतः रचनाओं के साथ डाक टिकट लगा लिफाफा, पोस्टकार्ड आदि न भेंजे। इन पर कोई कार्रवाई नहीं की जाएगी।

6. अस्वीकृत रचनाएँ न लौटा पाने की विवशता/असमर्थता है। कृपया रचना प्रेषित करते समय इसकी प्रति अपने पास अवश्य रख लें।

7. भाषा में केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा स्वीकृत मानक हिंदी वर्तनी का प्रयोग किया जाता है। अतः रचनाएँ इसी वर्तनी के अनुसार टाइप करवाकर भेजी जाएँ।

8. समीक्षार्थ पुस्तकों की दो प्रतियाँ भेजी जानी चाहिए।

संपादकीय कार्यालय

संपादक भाषा, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, पश्चिमी खंड–7, रामकृष्णपुरम,
नई दिल्ली–110066

भाषा

मार्च–अप्रैल 2021
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा अनुमोदित पत्रिका (क्रमांक–16)

अध्यक्ष, परामर्श एवं संपादन मंडल
प्रोफेसर रमेश कुमार पाण्डेय

परामर्श मंडल
प्रो. योगेंद्र नाथ शर्मा 'अरुण'
डॉ. पी. ए. राधाकृष्णन
प्रो. ऋषभ देव शर्मा
प्रो. मंजुला राणा
प्रो. दिलीप कुमार मेधी
श्रीमती पद्मा सचदेव
श्री हितेश शंकर

संपादक
डॉ. राकेश कुमार

सह–संपादक
डॉ. किरण झा
डॉ. शालिनी राजवंशी
श्रीमती सौरभ चौहान

प्रूफ रीडर
श्रीमती इंदु भंडारी

कार्यालयीन व्यवस्था
सेवा सिंह

**केंद्रीय हिंदी निदेशालय, उच्चतर शिक्षा विभाग,
शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार**

ISSN 0523-1418
भाषा (द्वैमासिक)
वर्ष : **60** **अंक : 2 (295)**
मार्च–अप्रैल 2021(विशेषांक)

संपादकीय कार्यालय
केंद्रीय हिंदी निदेशालय,
उच्चतर शिक्षा विभाग,
शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार,
पश्चिमी खंड-7, रामकृष्णपुरम्,
नई दिल्ली-110066
वेबसाइट : www.chdpublication.mhrd.gov.in
www.chd.mhrd.gov.in
ईमेल : bhashaunit@gmail.com
दूरभाष: 011–26105211 / 12

बिक्री केंद्र :
नियंत्रक,
प्रकाशन विभाग, सिविल लाइंस,
दिल्ली - 110054
वेबसाइट : www.deptpub.gov.in
ई–मेल : pub.dep@nic.in
दूरभाष : 011-23817823/ 9689

सदस्यता हेतु ड्राफ्ट नियंत्रक,
प्रकाशन विभाग, दिल्ली के पक्ष में भेजें।

बिक्री केंद्र :
केंद्रीय हिंदी निदेशालय,
उच्चतर शिक्षा विभाग,
शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार,
पश्चिमी खंड-7, रामकृष्णपुरम्,
नई दिल्ली-110066
वेबसाइट : www.chdpublication.mhrd.gov.in
www.chd.mhrd.gov.in
ईमेल : bhashaunit@gmail.com
दूरभाष: 011–26105211 / 12
सदस्यता हेतु ड्राफ्ट निदेशक, कें. हिं. नि.,
नई दिल्ली के पक्ष में भेजें।

मूल्य :

1.	एक प्रति का मूल्य	=	रु. 25.00	(डाक खर्च सहित)
2.	वार्षिक सदस्यता शुल्क	=	रु. 125.00	
3.	पंचवर्षीय सदस्यता शुल्क	=	रु. 625.00	
4.	दस वर्षीय सदस्यता शुल्क	=	रु. 1250.00	
5.	बीस वर्षीय सदस्यता शुल्क	=	रु. 2500.00	

पत्रिका में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। इनसे भारत सरकार या संपादन मंडल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

अनुक्रमणिका

निदेशक की कलम से
संपादकीय
आलेख

1.	नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति और भारतीय भाषाएँ	डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय	9
2.	'अनुवाद' बना नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति का आधार स्तंभ	प्रो. पूरन चंद टंडन	16
3.	नई शिक्षा नीति के तहत 'प्राथमिक शिक्षा में भाषा' पर एक दृष्टि	डॉ. आरती स्मित	19
4.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में महिला शिक्षा हेतु प्रावधान	डॉ. मोनिका पारीक	25
5.	नई शिक्षा नीति 2020 में 'द लैंग्वेजेज ऑफ इंडिया' से भाषा शक्ति और भारत को जानने का अवसर	मीनाक्षी डबास "मन"	31
6.	नई शिक्षा नीति त्रिपुरा के जनजातियों के जीवन में अमूल्य परिवर्तन लेकर आएगी	डॉ. बीना देवबर्मा	34
7.	नई शिक्षा नीति और भारतीय भाषाओं में अंतर्संबंध	अखिलेश आर्येन्दु	37
8.	भारतीय भाषाएँ और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020	डॉ. वेदप्रकाश	44
9.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति और मातृभाषा प्रसंग	प्रो. गजेंद्र कुमार पाठक	47
10.	मातृभाषा में शिक्षा – सहजता का अर्थगर्भ मार्ग	डॉ. वसुधा गाडगिल	52
11.	नई शिक्षा नीति एवं भारतीय भाषाएँ	प्रो. प्रदीप के. शर्मा	56
12.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति के क्रियान्वयन में भारतीय भाषाओं की भूमिका	डॉ. अभिषेक शर्मा	60
13.	नई शिक्षा नीति में राष्ट्रीय विकास का प्रमुख अस्त्र : अनुवाद	डॉ. हरीश कुमार सेठी	63
14.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति के परिप्रेक्ष्य में	डॉ. राज शेखर	72
15.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और मूल्य–परक शिक्षा : स्वामी विवेकानंद के विशेष संदर्भ में	डॉ. सत्येंद्र श्रीवास्तव	76
16.	मातृभाषा में शिक्षा–नवीन संघर्षों का कंटकपथ	अंतरा करवड़े	83
17.	शिक्षण संस्थानों की बढ़ती बेचैनी का परिणाम है नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020	डॉ. हरेंद्र सिंह	86
18.	गुणवत्तापूर्ण और सर्व–समावेशी शिक्षा का दृष्टिपत्र : राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020	प्रो. रसाल सिंह	89
19.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भाषा	डॉ. बनवारी लाल मीना	96

20. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और साहित्य में शिक्षा के प्रश्न	डॉ. नृत्य गोपाल	100
21. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भारतीय भाषाओं की पुनर्स्थापना	संजय चौधरी	106
22. लिबरल आर्ट्स की ओर	गोपाल शर्मा	112
23. शिक्षा का मर्म और नई शिक्षा नीति	डॉ. शशिकांत मिश्र	118
24. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का भाषाई संदर्भ	डॉ. जयंत कर शर्मा	125
25. आखिर पूर्व प्राथमिक शिक्षण में सिखाना क्या है?	हरिराम	132
26. नई शिक्षा व्यवस्था 2020 : वर्तमान शिक्षा व्यवस्था के सवाल तथा भारत सरकार की समाधान की रणनीतियाँ	डॉ. संजय कुमार	137
27. नई शिक्षा नीति में शिक्षा और भारतीय संस्कृति की सार्वभौमिक पहल	हेतराम	146
28. नई शिक्षा नीति और मातृभाषा	डॉ. बी. अशोक	151
29. हर शिक्षा नीति में शिक्षक की भूमिका	डॉ. शकुंतला कालरा	154
30. डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन की शिक्षा नीति	डॉ. राजरानी शर्मा	158
31. महान शिक्षा शास्त्री : जे. सर्वपल्ली राधाकृष्णन	डॉ. हरिसिंह पाल	161
32. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भारतीय भाषाओं की भूमिका	डॉ. संतोष खन्ना	166
33. नई शिक्षा नीति में शिक्षक शिक्षा का विवेचन	डॉ. अनिल कुमार	170
34. मूल्य–शिक्षा प्रसार में महिलाओं की भूमिका	डॉ. रवींद्र कुमार	176
35. नई शिक्षा नीति में मातृभाषा के संदर्भ में सिक्किम का अध्ययन	डॉ चुकी भूटिया	179
36. नई शिक्षा नीति 2020 : एक विवेचन	विजय कुमार भारती	182

संपर्क सूत्र **187**

सदस्यता फॉर्म

निदेशक की कलम से

शिक्षा और शिक्षण, निरंतर घटित होने वाली सतत परिवर्धित, परिभार्जित होने वाली प्रक्रिया है। यह ऐसी परिवर्तनशील क्रिया है जो सृष्टि के प्रारंभ में भी विद्यमान थी और नित नवीन आविष्कारों से वैज्ञानिक, तकनीकी ऊँचाइयों को छू रही है। शिशु जन्म के कुछ समय पश्चात् ही शिक्षा ग्रहण करना प्रारंभ कर देता है और प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से शिक्षा प्राप्त करने की यह प्रक्रिया आमरण क्रियाशील रहती है। शिक्षा के कई उपादानों में से शिक्षण की पारंपरिक पद्धति इसका मजबूत स्तंभ है। शिक्षण संस्थानों में शिक्षकों द्वारा दी जाने वाली शिक्षा ही शिक्षा ग्रहण करने में व्यापक और दूरगामी परिणाम लाता है। वैदिक काल से ही गुरुकुल की शिक्षा प्रणाली विकसित थी और आगे चलकर इसकी महत्ता और परिणाम अद्भुत रूप से फलीभूत हुए। अंग्रेजों ने भारत देश पर राज करने एवं उन पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने हेतु शिक्षा को अपने अनुरूप ढाँचे में ढाला। किसी भी सभ्यता और समाज में यदि मूलभूत परिवर्तन परिलक्षित होता है तो उसमें शिक्षा का अभूतपूर्व और अपरिमित योगदान होता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के एक वर्ष पश्चात् भारतीय संविधान के चौथे भाग में उल्लिखित नीति निदेशक तत्वों के अनुसार प्राथमिक स्तर तक के सभी बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था किए जाने का उल्लेख है। सन् 1948 में डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के गठन के साथ ही भारत में शिक्षा प्रणाली को व्यवस्थित स्वरूप प्रदाने करने का कार्य प्रारंभ किया गया था। सन् 1952 में लक्ष्मणस्वामी मुदलियार की अध्यक्षता में गठित माध्यमिक शिक्षा आयोग तथा 1964 में दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में गठित शिक्षा आयोग की अनुशंसाओं के आधार पर 1968 में शिक्षा नीति पर एक प्रस्ताव पारित हुआ जिसमें राष्ट्रीय विकास के प्रति वचनबद्ध, चरित्रवान तथा कार्यकुशल युवक–युवतियों को शिक्षित किए जाने का लक्ष्य रखा गया। शिक्षा के नीति निर्धारक तत्वों के विकास क्रम में विभिन्न सोपानों से होती हुई वर्ष 1986 में आचार्य राममूर्ति की अध्यक्षता में सन् 1990 में समीक्षा समिति एवं सन् 1993 में प्रो. यशपाल समिति का गठन किया गया।

सन् 1986 से सन् 2020 तक की दीर्घ अवधि के उपरांत 29 जुलाई 2020 को तत्कालीन शिक्षा मंत्री के कार्यकाल में अंतरिक्ष वैज्ञानिक के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में गठित समिति की रिपोर्ट पर आधारित नई शिक्षा नीति–2020 घोषित हुई। नई शिक्षा नीति के लागू होने के साथ शिक्षा क्षेत्र में असीम संभावनाओं के सृजन और अवसर के मार्ग प्रशस्त होंगे।

"ज्ञातिभिर्वण्टयते नैव चोरेणापि न नीयते।
दाने नैव क्षयं याति विद्यारत्नं महाधनम्।।

मार्च–अप्रैल 2021 का 'नई शिक्षा नीति–2020 विशेषांक" सुधी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे असीम प्रसन्नता हो रही है। उक्त विशेषांक में सम्मिलित सभी विज्ञ लेखकों, रचनाकारों के योगदान से इस अंक का प्रकाशन संभव हो पाया। मैं सभी लेखकों को केंद्रीय हिंदी निदेशालय परिवार की ओर से कृताज्ञ अर्पित करता हूँ। 'नई शिक्षा नीति–2020 विशेषांक' आपके समक्ष प्रस्तुत है। आपके सुझावों का सदैव स्वागत है।

जय हिंद।

रमेश कुमार पांडेय

प्रोफेसर रमेश कुमार पांडेय

विद्या ददाति विनयं विनयाद् याति पात्रताम्।
पात्रत्वात् धनमाप्नोति, धनात् धर्मं ततः सुखम्।।

****

विद्याभ्यास स्तपो ज्ञानमिन्द्रियाणां च संयमः।
अहिंसा गुरुसेवा च निःश्रेयसकरं परम्।।

भाषा ISSN 0523-1418

संपादकीय

लगभग चौंतीस वर्षों के लंबे अंतराल के उपरांत बहु प्रतीक्षित नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 घोषित की गई। स्कूली शिक्षा, उच्च शिक्षा, व्यावहारिक शिक्षा, दूरस्थ शिक्षा, तकनीकी एवं प्रौद्योगिकीय शिक्षा, कानूनी शिक्षा, चिकित्सा, विज्ञान एवं व्यावसायिक शिक्षा जैसी समकालीन अपेक्षाओं और आवश्यकताओं को देखते हुए सुदीर्घ विचार–विमर्श के पश्चात् अध्ययन एवं चिंतन पर आधारित नई शिक्षा नीति अपनाने का प्रशंसनीय प्रयास किया गया है। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में जहाँ भारतीय शिक्षा पद्धति की बुनियादी विकास यात्रा को अपनाया गया है वहीं राष्ट्रीय नियामक प्राधिकरण के गठन के माध्यम से बहुविकल्पीय अवसरों की उपलब्धता, शिक्षण–प्रशिक्षण पर बल, कमजोर, असमर्थ, निर्धन एवं पिछड़े वर्गों के छात्र–छात्राओं के लिए अतिरिक्त शिक्षण की व्यवस्था, लेखन कौशल, पठन–पाठन एवं संवादात्मक अभिव्यक्ति कौशल की संस्कृति का विकास तथा रोजगार मूलक तकनीकी शिक्षा अर्जन के नए–नए द्वार खोलने का प्रयास किया गया है।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में नित्य नई वैश्विक चुनौतियों को देखते हुए अधुनातन एवं अद्यतन विश्व ज्ञान की सभी संभावनाओं को उद्घाटित करने के प्रयास किए गए हैं। शिक्षा को मनोरंजक एवं अभिरुचिपरक बनाना भी नई शिक्षा नीति का प्रमुख उद्देश्य है।

लगभग तिहत्तर वर्ष की आजादी के बाद भी हमारी शिक्षा व्यवस्था अंग्रेजी की बैसाखियों पर चलती रही है। नई शिक्षा नीति में प्रारंभिक शिक्षा अपनी मातृभाषा में प्रदान किए जाने पर जोर दिया गया है जिससे बच्चे अपनी भाषा एवं संस्कृति से जुडे रहें। नई शिक्षा नीति में सरकार की यह भी योजना है कि स्कूली शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक भारतीय भाषाओं को शामिल किया जाए। भारतीय भाषाओं के संवर्धन को ध्यान में रखते हुए यह भी सुझाव दिया गया है कि सभी भारतीय भाषाओं के शब्द भंडार लगातार अद्यतन होते रहें।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति लगभग पाँच वर्षों के अध्ययन और चिंतन के बाद सामने आई है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद यह पहला प्रयास है जिसमें भारतीय भाषाओं के विकास के संबंध में समग्रता से विचार किया गया है। नई शिक्षा नीति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें कला, संस्कृति और भाषा के माध्यम से मनुष्य की सृजनात्मक क्षमता को विकसित और जागृत करने पर बल दिया गया है।

भाषा के प्रस्तुत अंक में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 से संबंधित आलेखों को समाहित करके इस अंक को आपके सम्मुख प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है आशा है अब शिक्षा राष्ट्रीय विकास का बहुआयामी, सशक्त, सार्थक एवं परिणामोन्मुख साधन बन सकेगी। भाषा के इस अंक के सभी लेखकों के प्रति भाषा परिवार हृदय से आभारी है। आपके सुझावों की प्रतीक्षा रहेगी।

(डॉ. राकेश कुमार)

आप जिस तरह बोलते हैं, बातचीत करते हैं, उसी तरह लिखा भी कीजिए। भाषा बनावटी नहीं होनी चाहिए।

महावीर प्रसाद द्विवेदी

****

कलम अपनी साध और
मन की बात बिलकुल ठीक कह एकाध

भवानी प्रसाद मिश्र

भाषा ISSN 0523-1418

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति और भारतीय भाषाएँ

डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय

भारत सरकार द्वारा 21 वीं सदी की पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति के आने के बाद सबसे पहले उसके सम्यक् मूल्यांकन की चुनौती है। इस शिक्षा नीति में जो अंतिम बात है वह हमारे लिए सर्वाधिक उपयोगी है। इसके अंतर्गत भारतीय भाषाओं की जानकारी, योग्यता और प्रवीणता को भी रोजगार की अर्हता में जोड़ा जाएगा। यदि यही मुद्दा ठीक से लागू किया जाए तो भारतीय भाषाएँ लहलहा उठेंगी। उनके विकास की गति को पंख लग जाएँगे। इस शिक्षा नीति के प्रारूप को अंतिम रूप देने से पूर्व इसमें 2 लाख सुझावों का समावेश किया गया है जिसे 2.5 लाख ग्राम पंचायतों, 6600 ब्लाकों और 676 जिलों से प्राप्त किया गया था। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में 206 बार भाषा शब्द का प्रयोग किया गया है जो इस बात का सबूत है कि इसमें भारतीय भाषाओं को यथोचित सम्मान दिलाने का गंभीर प्रयास हुआ है। इसमें त्रिभाषा सूत्र एवं बहुभाषिकता को शिक्षा के केंद्र में लाया गया है। इसे वर्तमान सदी की आशा एवं आकांक्षा के अनुरूप तैयार किया गया है। इसका उद्देश्य ज्ञान आधारित जीवंत समाज का विकास रखा गया है जिसे प्राप्त करने के लिए विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों को पर्याप्त लचीला बनाया जाएगा। यह भारतीय शिक्षा पद्धति को राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना के अनुरूप संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था को लोकतांत्रिक बनाने के प्रयास की अभिव्यक्ति है। अब छात्रों को बीच में ही नामांकन और पाठ्यक्रम बदलने की छूट दे दी गई है। फलतः यदि कोई छात्र अपनी योग्यता के विपरीत किसी गलत विषय का चयन कर लेता है तो वह अपनी गलती सुधार सकता है। इसमें पहली बार शिक्षा के माध्यम के रूप में पाँचवीं कक्षा तक मातृभाषा को रखा गया है और यदि संभव हो तो उसे आठवीं कक्षा तक जारी रखने का आग्रह किया गया है। इससे भारतीय बच्चों के मानवाधिकारों की रक्षा हो सकेगी। साथ ही, आगे की कक्षाओं के लिए भारतीय भाषाओं पर आनंददायक परियोजना का विकल्प भी रखा गया है।

भारत सरकार ने नई शिक्षा नीति को लोकोपयोगी बनाते हुए छठी कक्षा से ही व्यावसायिक शिक्षा पर जोर दिया है। चूँकि शिक्षा और रोजगार दोनों एक दूसरे के पूरक हैं अतः नई शिक्षा नीति में अच्छी शिक्षा के साथ बेहतर भविष्य की कल्पना को भी साकार करने का प्रयास किया गया है। इसमें छात्रों के मूल्यांकन की प्रक्रिया में भी आमूल चूल परिवर्तन किया गया है। अब उनके योग्यतामूलक आकलन के बजाय रचनात्मक आकलन पर जोर दिया जाएगा जिससे उनमें निहित संभावनाओं को सही दिशा दी जा सके। इसमें उच्चस्तरीय शोध को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन की स्थापना की व्यवस्था

की गई है। साथ ही, शिक्षण क्षेत्र में नई प्रौद्योगिकी के प्रयोग पर जोर दिया जा रहा है। इसके लिए राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी मंच की स्थापना की जाएगी।

आज कोरोना संकट ने प्रौद्योगिकी एवं डिजिटल आधारित शिक्षा पद्धति अपनाने के लिए विवश कर दिया है। हम भली–भाँति जानते हैं कि कोरोना कहर से शिक्षा क्षेत्र सर्वाधिक प्रभावित हुआ है, जिसके चलते करोड़ों छात्रों की शिक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। हमें अधिकांश सत्रों की परीक्षाएँ रद्द करनी पड़ी हैं और शेष के विकल्प ढूँढने पड़ रहे हैं। बावजूद इसके एक प्राध्यापक होने के नाते हम अपने उत्तरदायित्वों का पूरी निष्ठा से पालन करते हुए तकनीक की सहायता से छात्रों को शिक्षा प्रदान कर रहे हैं। वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग, सिस्को वेब एक्स, गूगल मीट, गूगल क्लासरूम, जूम, ई–पाठशाला, यू–ट्यूब, रिकॉर्डिंग, टी.सी.एस. आयन क्लासरूम एवं स्मार्ट फोन आदि माध्यमों से हम विद्यार्थियों को पढ़ा रहे हैं, उनकी कक्षाएँ ले रहे हैं। हम आंतरिक मूल्यांकन का कार्य भी ऑनलाइन ही कर रहे हैं। हम ई–कंटेंट अथवा अध्ययन सामग्री उन तक पहुँचा रहे हैं। इसके अलावा पीएचडी के विद्यार्थियों को ऑनलाइन मार्गदर्शन प्रदान कर रहे हैं। आगामी समय में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा के क्षेत्र में आमूलचूल परिवर्तन देखने को मिलेंगे। ऑनलाइन शिक्षण सामग्री अधिक मात्रा में कैसे उपलब्ध हो, ऑनलाइन परीक्षाएँ कैसे हों, ऑनलाइन पाठ्यक्रम कैसे पढ़ाए जाएँ, इस दृष्टि से बड़े परिवर्तन होने की उम्मीद है। हमने हाल ही में दो दिवसीय अंतरराष्ट्रीय वेब–संगोष्ठी का आयोजन किया था, जिसमें छात्रों सहित विश्व के विभिन्न देशों के विद्वानों को इससे जोड़ा गया था। हमने इस दौरान शोध प्रक्रिया और शिक्षण प्रक्रिया के बदलावों पर भी चर्चा की थी। वर्तमान विश्व–व्यवस्था की जो स्थिति है उस पर भी विचार–विमर्श किया गया। इसके अलावा आलोचना की जो नई पद्धतियाँ हैं, समकालीन विमर्श हैं उस पर भी विस्तार से बातचीत हुई। वर्तमान विश्व में ज्ञान–विज्ञान के जो नवीनतम साधन और उपलब्धियाँ हैं, उस संदर्भ में छात्रों को अद्यतन रखना बेहद आवश्यक है। इसलिए हम सब तकनीकी साधनों के माध्यम से कार्य कर रहे हैं। हमारे मार्ग में चाहे किसी भी प्रकार की बाधा आए लेकिन हमें रुकना नहीं है, थकना नहीं है बस राष्ट्र–विजय की कामना लेकर आगे ही बढ़ते जाना है। आगामी समय तकनीक आधारित शिक्षा व्यवस्था और तकनीक केंद्रित विश्व–व्यवस्था का साक्षी बनने जा रहा है। अब ऑनलाइन शिक्षा हमारी विवशता और दिनचर्या का अभिन्न हिस्सा बनती जा रही है। भारत सरकार ने नई शिक्षा नीति में शिक्षा के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी के उपयोग पर विशेष जोर दिया है। इसमें डिजिटल अथवा ऑनलाइन शिक्षा के साथ–साथ खुली एवं दूरस्थ शिक्षा पर भी बल दिया गया है।

इसलिए सरकार से हमारा निवेदन है कि शिक्षा जगत में आधारभूत सुविधा के लिए तकनीक आधारित शिक्षा प्रणाली को बढ़ावा दे। वह इस दिशा में योग्य कदम उठाए ताकि किसी भी स्थिति में छात्रों को शिक्षा से वंचित न रहना पड़े। किसी भी देश की प्रगति और आर्थिक उन्नति शिक्षा पर ही अवलंबित होती है। इसलिए शिक्षा के क्षेत्र में जो भी आवश्यक कदम उठाने चाहिए वे जल्द से जल्द उठाए जाने चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र में समय की माँग के अनुरूप सरकार को नई शिक्षा नीति भी लागू करनी चाहिए। चूँकि हिंदी और भारतीय भाषाओं के छात्रों को ई–सामग्री की कमी पड़ती है अतः इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किए जाने चाहिए। हमें अपनी भाषा अर्थात् हिंदी और भारतीय भाषाओं में तकनीकी समझ का विकास करना होगा। साथ ही, ज्ञान एवं नवाचार को सक्षम हथियार के रूप में प्रयुक्त करना होगा।

भारत जैसे विपुल जनसंख्या वाले देश में हमें गरीब, उपेक्षित एवं दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों में बसे छात्रों तक इंटरनेट,उसके अनुप्रयोग और उसकी सतत उपलब्धता की भी चुनौती है। देश के शहरी इलाकों में मोबाइल की उपलब्धता 78 प्रतिशत और ग्रामीण क्षेत्रों में 57 प्रतिशत है। आज भी देश के 59 प्रतिशत युवाओं को कंप्यूटर का ज्ञान नहीं है और 64 प्रतिशत युवाओं को इंटरनेट के इस्तेमाल

की प्रक्रिया का ज्ञान नहीं है। ऐसी स्थिति में हम भले ही ई–लर्निंग की ओर बढ़ रहे हों परंतु हमारी सरकारों के समक्ष अंतिम छात्र तक मूलभूत सुविधाएँ पहुँचाने की भी चुनौती है। इसके अलावा भारत में इंटरनेट की गति भी एक बड़ी समस्या है। ब्रॉडबैंड स्पीड का विश्लेषण करने वाली कंपनी ऊकला के अनुसार सितंबर 2019 तक भारत मोबाइल स्पीड के मामले में संपूर्ण विश्व में 128 वें स्थान पर था। साथ ही, यह भी देखा गया है कि ऑनलाइन कक्षाओं का विद्यार्थियों के मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव पड़ रहा है। उनमें मानसिक व्याधियाँ बढ़ रही हैं। अतः हमारे समक्ष डिजिटल विश्व में आत्मनिर्भर और स्वावलंबी बनने के साथ – साथ उसके खतरों की भी गहरी समझ विकसित करने की चुनौती है। ऑनलाइन शिक्षा के कारण छात्रों की सामाजिकता बाधित हो रही है। उनमें प्रतियोगिता का अभाव पैदा हो रहा है। अतः प्राध्यापकों के समक्ष पाठ्य–सामग्री, प्रश्न–बैंक एवं नोट्स प्रेषित करने के अलावा छात्रों को प्रेरित, प्रभावित और उनके व्यक्तित्व निर्माण की भी चुनौती है। चूँकि शिक्षा पर सभी का समान अधिकार है अतः शिक्षकों का भी प्रशिक्षण होते रहना चाहिए। यह दायित्व योग्य, कर्तव्यनिष्ठ और क्षमतावान प्रशिक्षकों को सौंपा जाना चाहिए।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि भारत जब तक स्वदेशी गुरुकुल शिक्षा पद्धति पर आश्रित था तब तक उसका विश्व गुरु का पद सुरक्षित था। हमारा इतिहास साक्षी है कि राम, कृष्ण, भीष्म, अर्जुन, चंद्रगुप्त मौर्य, अशोक, चंद्रगुप्त, विक्रमादित्य, स्कंदगुप्त, शंकराचार्य, स्वामी विवेकानंद जैसी अप्रतिम विभूतियाँ गुरुकुल शिक्षा पद्धति की ही देन हैं। आज भी विश्व के दस सर्वश्रेष्ठ विद्यालयों में भारत का नई दिल्ली स्थित मुनि इंटरनैशनल स्कूल है जो विशुद्ध रूप से गुरुकुल पद्धति पर आधारित है। हमें नवीनतम प्रौद्योगिकीय उपलब्धियों के साथ अपने परंपरागत ज्ञान भंडार तथा नए एवं संभावित ज्ञान की दिशाओं के साथ एक सामंजस्य स्थापित करके अपनी शिक्षा व्यवस्था को परिमार्जित करने की जरूरत है। अतः एक विवेकपूर्ण संस्थागत संरचना में भारतीय शिक्षा दृष्टि और पाश्चात्य शैक्षणिक ढंग के बीच संतुलन बनाना होगा जिससे हम न केवल युवा पीढ़ी का सर्वांगीण विकास कर सकें अपितु उन्हें विश्व की आगामी चुनौतियों के निष्पादन हेतु समर्थ बना सकें। हमारी नई शिक्षा नीति में जड़ता को तोड़ने का प्रयास तो किया गया है लेकिन शिक्षा व्यवस्था को भारतीय पद्धति के अनुरूप जितना जोर देना चाहिए था उतना जोर नहीं दिया गया है। हमारा मानना है कि विश्व के जितने भी विकसित राष्ट्र हैं उन सबने अपनी भाषा में विकास किया है। संपूर्ण यूरोपीय देशों की अपनी भाषाएँ हैं। रूस ने रूसी, जापान ने जापानी और चीन ने मंदारिन में विकास किया है। दूसरी ओर अफ्रीका देशों के पिछड़ेपन का सबसे बड़ा कारण विदेशी भाषाएँ हैं। चूँकि वे यूरोपीय देशों के उपनिवेश रहे हैं अतः वहाँ यूरोपीय देशों की भाषाएँ और अरबी प्रचलन में है। इन देशों की अपनी भाषाएँ न होने के कारण इनका अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कोई स्वतंत्र तथा सांस्कृतिक व्यक्तित्व नहीं निर्मित हो सका है और न ही अंतरराष्ट्रीय राजनीति में कोई बड़ा हस्तक्षेप निर्धारित हो पा रहा है। यदि भारत को विश्व गुरु की स्वाभाविक हैसियत प्राप्त करनी है तो उसे यह सम्मान हिंदी एवं भारतीय भाषाओं में ही मिल सकता है। अंत में, मैं यही कहना चाहूँगा कि भविष्य की शिक्षा में तकनीक का हस्तक्षेप बढ़ेगा और अनेक अनजाने तथा अनदेखे विषय अध्ययन के क्षेत्र में आएँगे। बावजूद इसके हमें भारतीय और पाश्चात्य, परंपरागत एवं तकनीक आधारित शिक्षा पद्धति के बीच संतुलन बनाकर अपनी शिक्षा व्यवस्था को लगातार परिष्कृत करना होगा। वर्तमान सदी इतिहास की सबसे अनिश्चित तथा चुनौतीपूर्ण परिवर्तनों की सदी है अतः भविष्य की अनजानी चुनौतियों को ध्यान में रखकर हमें स्वयं को तैयार करना होगा। आने वाले समय में केवल एक विषय के ज्ञान से हमारा भला नहीं हो सकता है अतः हमें हर विषय की अद्यतन जानकारी को शिक्षा का अविच्छिन्न अंग बनाना होगा। मुझे पूर्ण विश्वास है कि हमारी वर्तमान सरकार इस दिशा में भविष्यवादी दृष्टि के

अनुरूप सुधार तथा बदलाव करती रहेगी। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति इस दिशा में उठाया गया पहला गंभीर कदम है। इसमें छात्रों के लिए वित्तीय सहायता छात्रवृत्तियों के रूप में देने का लक्ष्य रखा गया है। पहली बार वित्त पोषण के लिए देश के सकल घरेलू उत्पाद अर्थात् जी.डी.पी. का 6 प्रतिशत शिक्षा क्षेत्र को आबंटित करने का लक्ष्य रखा गया है। यह भारत जैसे युवतर मानव संसाधन वाले देश के लिए एक राष्ट्रीय अनिवार्यता है।

21 वीं सदी जिस तकनीकी कौशल और वैश्वीकरण की आँधी को लेकर आई है उसका सर्वाधिक प्रभाव विश्व की भाषाओं पर पड़ रहा है। इस समय हमारी भाषाएँ जिस त्वरा के साथ परिवर्तनशील हैं वैसा इतिहास में कभी नहीं हुआ है। यह लुप्तप्राय प्रजातियों और भाषाओं को बचाने का समय है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि मनुष्य अपने जीवन में दो चीजों का सबसे ज्यादा प्रयोग करता है: उसका शरीर और उसकी भाषा। बावजूद इसके वह दैनंदिन व्यस्तता में इन दोनों की घोर अनदेखी करता है। वह शरीर का दायित्व चिकित्सक पर भाषा की जिम्मेदारी भाषाविदों, वैयाकरणों और विद्वानों पर छोड़ देता है। ऐसी स्थिति में ये दोनों संकटग्रस्त हो जाते हैं। भाषाविदों के अनुसार इस समय प्रयुक्त होने वाली भाषाओं का एक बड़ा हिस्सा आने वाले समय में विलुप्त हो जाएगा। भारतीय भाषाविद गणेश एन.देवी का मानना है कि आगामी पचास वर्षों में विश्व की 6000 भाषाओं में से 4000 भाषाएँ विलुप्त हो सकती हैं। इनमें से 10 प्रतिशत अर्थात् 400 भाषाएँ भारत की होंगी। ऐसी स्थिति में हमें भाषाओं के समक्ष आसन्न संकट की गंभीरता को समझना होगा और उसके लिए व्यावहारिक तथा त्वरित समाधान ढूँढ़ने होंगे। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि अब तक लैटिन अमरीका की 400 भाषाओं में से 300 विलुप्त हो चुकी हैं। फलतः जो भाषाएँ बहुभाषिक कंप्यूटर, इंटरनेट, सोशल मीडिया, सूचना एवं शिक्षण प्रौद्योगिकी की एकदम नवीनतम आविष्कृतियों/ प्लैटफॉर्म पर अपने संपूर्ण शब्दकोश, विश्वकोश, व्याकरण, साहित्य, लोक साहित्य तथा ज्ञान–विज्ञान के विविध क्षेत्रों की तमाम उपलब्धियों सहित उपस्थित नहीं होंगी और डिजिटल पुस्तकालय, ई–बुक तथा आभासीय विश्व में अपनी प्रभावी उपस्थिति नहीं करा सकेंगी वे अस्तित्व के संकट से जूझेंगी। साथ ही, जो अपनी संपूर्ण शक्ति से इस दिशा में क्रियाशील रहेंगी उनकी प्रगति निर्विवाद है।

यूनेस्को के अनुसार कोई भी भाषा तब विलुप्त हो जाती है जब उसे बोलने वाला कोई नहीं होता है। इस दिशा में उक्त संस्था विलुप्तप्राय भाषाओं को बचाने के लिए भी प्रयासरत है। उसने विश्व की विलुप्तप्राय भाषाओं को चार श्रेणियों में विभक्त किया है– 1. सुभेद्य (Vulnerable) 2. निश्चित रूप से लुप्तप्राय (Definitely Endangered) 3. तीव्र गति से लुप्तप्राय (Severely Endangered) 4. गंभीर रूप से लुप्तप्राय अथवा संकटग्रस्त (Critically Endangered)। हमारे प्रधानमंत्री ने भोपाल में संपन्न 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए कहा था कि 2100 ई. तक विश्व की 90 प्रतिशत भाषाएँ लुप्त होने के कगार पर पहुँच सकती हैं। यह इस बात का सबूत है कि भाषाओं के संकट को हर स्तर पर महसूस किया जा रहा है। फलतः इस दिशा में हर स्तर पर गंभीर प्रयास की दरकार है। यह तभी संभव है जब हर व्यक्ति अपनी भाषा एवं विरासत को सहेजने तथा संरक्षित करने के दायित्व को समझे। भारतीय परिवेश में स्वभाषा –प्रेम की भयावह कमी हमारी भाषाओं के संकट को बढ़ाने में सहायक है। अतः हमें अंग्रेजी के मोहजाल से मुक्त होकर अपनी भाषाओं के प्रति सच्ची निष्ठा विकसित करनी होगी। तभी हम अपने दायित्व का सम्यक् निर्वाह कर सकेंगे।

इस दिशा में पहला महत्वपूर्ण कार्य नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के माध्यम से संपन्न हो सकता है। नए माध्यमों के जरिए भारतीय भाषाओं के प्रशिक्षण की सुविधा उपलब्ध कराने का संकल्प भी एक उपयोगी आयाम है। हमारे प्रधानमंत्री जिस कौशल विकास की चर्चा करते हैं वह भाषिक कौशल के बिना संभव नहीं है। अतः इसमें ज्ञान, नवाचार और भाषिक कौशल को यथोचित सम्मान दिया

गया है। पहली बार इसमें मातृभाषा में अच्छी शिक्षा की व्यवस्था की बात कही गई है जिसके द्वारा ही बेहतर भविष्य की कल्पना संभव है। इसका सबसे बड़ा वैशिष्ट्य यह है कि इसमें पहली बार शिक्षा और रोजगार को परस्पर पूरक भूमिका में देखा गया है। भारतीय भाषाओं में शिक्षण कार्य से उनके महत्व की भी श्रीवृद्धि होगी, इसमें कोई दो राय नहीं है। हम भारतीय भाषाओं में शिक्षण की जितनी अधिक सुविधाएँ उपलब्ध कराएँगे उतना अधिक नवाचार और मौलिक शोधकार्य को बढ़ावा मिलेगा। इसमें पहली बार शिक्षा पर होने वाले खर्च को सकल घरेलू उत्पाद का 6 प्रतिशत करने का प्रस्ताव रखा गया है जिसके दूरगामी परिणाम होंगे।

वैश्वीकरण और ग्लोबल प्रतिस्पर्धा के इस युग में भाषाएँ भी अछूती नहीं हैं। अब उन्हें भी उपयोगिता तथा बदलाव की हर कसौटी पर खरा उतरना होगा। यह हिंदी का सौभाग्य है कि आज बाजारवाद की नियोजक शक्तियाँ उसके साथ हैं। वे अपने हित में ही सही हिंदी का प्रयोग करने के लिए अभिशप्त हैं। ऐसी स्थिति में अब हिंदी राष्ट्रीय जन संपर्क से बाहर निकलकर वैश्विक संवाद का जरिया बन रही है। इसमें एक बड़ी भूमिका नई प्रौद्योगिकीय उपलब्धियों की भी है। इस समय वेब–लिंक्स और गूगल सर्च का बोलबाला है। इस समय हिंदी में भी दर्जन भर सर्च इंजन उपलब्ध हैं। अब स्वयं गूगल का सर्वेक्षण यह सिद्ध करता है कि इंटरनेट में हिंदी में प्रस्तुत होने वाली सामग्री में विगत चार वर्षों में 94 प्रतिशत की दर से इजाफा हुआ है जबकि अंग्रेजी केवल 19 प्रतिशत की दर से बढ़ रही है। अब सोशल मीडिया में हिंदी और भारतीय भाषाओं का प्रयोग जिस तरह से बढ़ रहा है उससे इंटरनेट की दुनिया में लोकतंत्र आ रहा है। इंटरनेट के माध्यम से निर्मित आभासीय विश्व में हिंदी और भारतीय भाषाओं की विश्वव्यापी पहुँच जिस द्रुत गति से साकार हो रही है वह इस नव माध्यम का सबसे सकारात्मक आयाम है। इस समय भारत में 50 करोड़ से अधिक इंटरनेट उपभोक्ता हैं जिनमें से 40 करोड़ से अधिक लोग स्मार्ट फोन के द्वारा इंटरनेट का उपयोग करते हैं। अब भारत विश्व का ब्रॉडबैंड राष्ट्र बन गया है। हिंदी और भारतीय भाषाओं की सुलभता के कारण सोशल मीडिया सेवा निवृत्त लोगों का स्वर्ग बन गया है। इस समय संपूर्ण विश्व में यू–ट्यूब के 1.8 अरब प्रयोक्ता हैं। इनमें से 27 करोड़ लोग भारतीय भाषाओं और 24 करोड़ लोग हिंदी का प्रयोग करते हैं। भारत के 93 प्रतिशत युवा यू–ट्यूब पर हिंदी वीडियो देखते हैं। भारतीय युवाओं के मोबाइल में औसतन 32 ऐप्स होते हैं। इनमें से कम–से–कम दस ऐप्स हिंदी के होते हैं। भारतीयों द्वारा हर महीने गूगल प्ले स्टोर से एक अरब ऐप्स डाउनलोड किए जाते हैं। इस क्षेत्र में हमारा देश विश्व में पहले क्रमांक पर आ गया है। हिंदी वॉयस सर्च क्वेरी प्रतिवर्ष 400 प्रतिशत की दर से बढ़ रही है और सोशल मीडिया अंग्रेजी न जानने वालों के लिए सबसे बड़ा प्लेटफॉर्म बन गया है। इस समय अंग्रेजी की तुलना में फेसबुक, ट्विटर पर हिंदी ज्यादा लोकप्रिय है। इसका सबसे बड़ा कारण अभिव्यक्ति की सरलता है। इसलिए अंग्रेजी की तुलना में हिंदी में प्रस्तुत होने वाली सामग्री ज्यादा शेयर भी की जाती है। अब ब्लॉगिंग के महासागर में हिंदी की उत्ताल तरंगें देखी जा सकती हैं। भारत निकट भविष्य में विश्व का सबसे बड़ा इंटरनेट उपभोक्ता बनने जा रहा है जिसका सबसे प्रभावी माध्यम हिंदी रहने वाली है। सोशल मीडिया के कारण अब ई–मेल भी अप्रासंगिक हो रहा है। अब भाषाओं का प्रशिक्षण भी ई–लर्निंग के माध्यम से संभव है। हिंदी में इस समय जो वेब लिंक्स उपलब्ध हैं उनमें राष्ट्रीय पोर्टल, साहित्य कोश और शब्दकोश संबंधी पोर्टल, शिक्षा एवं हिंदी शिक्षण संबंधी पोर्टल, धर्म एवं खेल संबंधी पोर्टल, पत्र– पत्रिकाओं तथा विविध चैनलों के पोर्टल का समावेश है। एक नवीनतम सूचना यह भी है कि नेटफलिक्स अब पूरी तरह से हिंदी में उपलब्ध है। आप अमेजॉन पर भी हिंदी में आदेश भेज सकते हैं। संक्षेप में, आज वे सारी तकनीकी सुविधाएँ जो विश्व की किसी भी भाषा के पास हैं, वे हिंदी में या तो उपलब्ध हैं अथवा बनने की प्रक्रिया में हैं।

जब हम भाषाओं के भविष्य पर विचार करें तो यह भी जरूरी है कि हम उनके इतिहास और वर्तमान स्वरूप को भी समझ लें। हिंदी लगभग एक हजार सालों से अलग–अलग रजवाड़ों और जनपदों में राजकीय भाषा रही है। वह स्वाधीनता आंदोलन के इतिहास में संवाद का मुख्य जरिया बनकर उभरती है और खैबर के दर्रे से लेकर रंगून तक वह स्वाधीनता आंदोलन की अभिव्यक्ति का स्वाभाविक माध्यम बनती है। अपनी इसी ऐतिहासिक भूमिका के कारण वह स्वतंत्र भारत की राजभाषा बनती है। वह लंबे समय तक नेपाल की भी दूसरी राजभाषा रही है जिसका दर्जा वहाँ की कम्युनिस्ट सरकार ने समाप्त कर दिया है। हिंदी इस समय भारत के अलावा फिजी एवं संयुक्त अरब अमीरात में भी आधिकारिक भाषा बन गई है। अब संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी अपना ट्विटर हैंडल हिंदी में आरंभ कर दिया है। उसकी वेबसाइट भी हिंदी में उपलब्ध है। वह हर शुक्रवार एक घंटे का हिंदी कार्यक्रम रेडियो पर प्रस्तुत कर रहा है। अमरीकी जनगणना के अनुसार सन् 2000 से 2011 के बीच अमरीका में हिंदी बोलने वाले 105 प्रतिशत की दर से बढ़े हैं। हमें यह भी स्मरण रखना होगा कि विश्व के जितने भी विकसित राष्ट्र हैं उन सबने अपनी भाषा में विकास किया है। यह बात अमरीका, रूस, जर्मनी, जापान, फ्रांस, ब्रिटेन, इटली, स्पेन, पुर्तगाल, इजरायल और चीन तक समान रूप से देखी जा सकती है। इजरायल जैसे छोटे से राष्ट्र ने हिब्रू में उत्कृष्ट तथा मौलिक शोधकार्य करके अब तक 12 नोबेल पुरस्कार प्राप्त किए हैं। ये सारे देश अपनी भाषाओं के विकास पर बड़ी धनराशि खर्च करते हैं। इसकी तुलना में भारत सरकार हिंदी एवं भारतीय भाषाओं पर बहुत कम धनराशि खर्च करती है। इन देशों की सरकारें ऐसी योजनाएँ प्रस्तुत करती हैं कि उनकी भाषा और साहित्य के प्रति आकर्षण बढ़े और विश्व समुदाय की उन्मुखता उनकी ओर बनी रहे। भारत सरकार विश्व के तमाम देशों में हिंदी और भारतीय भाषाओं की स्थिति का आकलन करने के लिए विद्वानों–विशेषज्ञों की एक समिति गठित करे जो हर दस साल की जनगणना के बाद हिंदी और भारतीय भाषाओं की वस्तुस्थिति का खाका तैयार करे। इसी के साथ भारत में परिचालन करने तथा अंधाधुंध कमाई करने वाली तमाम कंपनियों का यह कर्तव्य सुनिश्चित किया जाए कि वे अपनी सेवाएँ हिंदी और भारतीय भाषाओं में दें। उनके विज्ञापन में हमारी भाषाओं को यथोचित सम्मान मिले। चूँकि लिपि भाषा का शरीर है अतः देवनागरी तथा दूसरी भारतीय लिपियों के प्रयोग को बढ़ावा देने की आवश्यकता है।

यह हर्ष का विषय है कि आज भारत विश्व की सबसे तीव्र गति से उभरने वाली अर्थव्यवस्था है और अंतरराष्ट्रीय राजनीति में उसकी हैसियत लगातार बढ़ रही है। जब किसी राष्ट्र को विश्व बिरादरी अपेक्षाकृत ज्यादा महत्व और स्वीकृति देती है तथा उसके प्रति अपनी निर्भरता में इजाफा पाती है तो उस राष्ट्र की तमाम चीजें स्वतः महत्वपूर्ण हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में भारत की विकासमान अंतरराष्ट्रीय हैसियत हिंदी के लिए वरदान–सदृश है। अब हिंदी राष्ट्रभाषा अथवा राजभाषा की गंगा से विश्वभाषा का गंगा सागर बनने की प्रक्रिया में है। आज विश्वस्तर पर उसकी स्वीकार्यता और व्याप्ति अनुभव की जा सकती है। आने वाला समय हिंद और हिंदी का है। इस समय हिंदी राजनीति, समाज–व्यवस्था, धर्म, दर्शन, संस्कृति, पर्यटन, मनोरंजन, मीडिया, खेल और रोजगार के क्षेत्र में सबसे प्रभावी भाषा बनकर उभरी है। हमें एकजुट होकर अंग्रेजी के खिलाफ खड़े होना चाहिए। हिंदी और भारतीय भाषाओं को हम शिक्षा का माध्यम बनवाकर अपनी भाषाओं के भविष्य को सदा–सर्वदा के लिए सुरक्षित कर सकते हैं। हमें अपनी सरकारों को इस बात के लिए तैयार करना होगा कि वे शिक्षा का माध्यम हिंदी और भारतीय भाषाओं को रखें और अंग्रेजी दूसरी विदेशी भाषाओं की तरह एक भाषा के रूप में सिखाई जाए। ऐसा करके ही हम आगामी चुनौतियों के लिए अपने युवाओं को सक्षम, समझदार तथा नवाचार के योग्य बना सकते हैं। तभी वे विश्वस्तरीय मौलिक शोधकार्य कर सकेंगे। यह

दौर खुली एवं विश्वस्तरीय प्रतिस्पर्धा का है। इस युग का मंत्र है–'स्पर्धा में जो उत्तम ठहरे रह जावें।' हम अपने नौनिहालों को हिंदी तथा भारतीय भाषाओं में ही विश्वस्तरीय प्रतियोगिता के योग्य बना सकते हैं। यदि भारत को विश्व गुरु की अपनी स्वाभाविक छवि पुनः प्राप्त करनी है तो यह हिंदी और भारतीय भाषाओं द्वारा ही संभव है। हम विदेशी भाषा में विश्व गुरु नहीं बन सकते हैं। संक्षेप में, इतना तय है कि आने वाले समय में विश्व की बड़ी भाषाओं का भविष्य और वर्चस्व बढ़ेगा लेकिन जिन उपभाषाओं और बोलियों के बोलने वाले बहुत कम हैं उनके समक्ष अस्तित्व का संकट उपस्थित होगा। इन बोलियों को भी डिजिटलीकरण द्वारा सुरक्षित किया जा सकता है। इस दिशा में विश्व समुदाय को और भी गंभीर होने की जरूरत है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि हम नवीनतम तकनीक का सदुपयोग करके भारतीय भाषाओं के समक्ष आसन्न संकट का सफलतापूर्वक सामना कर सकेंगे। इसी दिशा में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के रूप में एक बड़ा कदम उठाया गया है। इस दृष्टि से यह स्वाधीन भारत का सबसे बड़ा प्रयास है

– प्रोफेसर एवं अध्यक्ष हिंदी विभाग, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई–400098

❑❑❑

'अनुवाद' बना नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति का आधार स्तंभ

प्रो. पूरन चंद टंडन

लगभग 45 केंद्रीय विश्वविद्यालय और 900 के आसपास अन्य विश्वविद्यालयों वाला यह देश भारत, दुनिया भर में सबसे बड़ी शिक्षा प्रणाली वाला देश है। लगभग 16 लाख विद्यालय, 50 से अधिक राष्ट्रीय–अंतरराष्ट्रीय महत्व की संस्थाएँ, लगभग 25 आई. आई. टी. संस्थाएँ, 30 के आसपास एन. आई. टी. तथा अन्य अनेक शिक्षण–प्रशिक्षण संस्थान भारत की शिक्षा पद्धति और नीति की ओर ध्यान आकृष्ट करते हैं। बृहत् जनसंख्या, विराट भूगोल तथा अनंत चुनौतियों, समस्याओं वाले इस देश ने शिक्षा को महत्व तो दिया किंतु लगभग 34 वर्षों के पश्चात् समकालीन अपेक्षाओं–आवश्यकताओं को देखते हुए नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को लागू करने का भी पुण्य प्रयास किया है। स्कूल शिक्षा, उच्चशिक्षा, व्यावहारिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, दूरस्थ शिक्षा, तकनीकी एवं प्रौद्योगिकीय शिक्षा, कानूनी शिक्षा, चिकित्सा, विज्ञान एवं व्यवसाय क्षेत्र की शिक्षा जैसे अनेक आयाम हैं जिन पर इस नई शिक्षा पद्धति ने बहुत ही बड़े स्तर पर, सुदीर्घ विमर्श–विवेचन के अध्ययन–चिंतन आधृत नई प्रणाली और सार्थक पद्धति अपनाने का रचनात्मक साहस किया है।

अब शिक्षा का अधिकार, नर्सरी से बारहवीं कक्षा तक 5+3+3+4 का नया फार्मूला अर्थात् चार चरणों में विभक्त इस पूरी शिक्षा पद्धति की बुनियादी विकास यात्रा का मार्ग प्रशस्त किया गया है। राष्ट्रीय नियामक प्राधिकरण के गठन से पर्यावरण हितैषी शिक्षण–प्रशिक्षण पर बल, शिक्षण के बहु–विकल्पीय अवसरों की उपलब्धि, रेमेडियल शिक्षा की सशक्त व्यवस्था, कमजोर, असमर्थ, निर्धन तथा पिछले वर्ग के छात्र–छात्राओं हेतु अतिरिक्त शिक्षण की व्यवस्था, लेखन कौशल, भाषा और गणित आदि तकनीकी विषयों का मेल, पठन–पाठन तथा संवादात्मक अभिव्यक्ति, कौशल की संस्कृति का विकास, पठनीयता की अभिरुचि जाग्रत करने के प्रमाण तथा व्यवहार एवं रोजगारमूलक तकनीकी शिक्षा अर्जन के नए–नए द्वार खोलने का दर्शन, इसी विलक्षण परिकल्पना का परिचायक है।

राष्ट्र की नई शिक्षा नीति में नई वैश्विक चुनौतियों को देखते हुए, उसका सामना और मुकाबला करने वाली शिक्षा व्यवस्था के अंतर्गत कंप्यूटर, लैपटॉप, स्मार्ट मोबाइल फोन, ट्वीटर, ब्लॉग राइटिंग, ई–लर्निंग सिस्टम से अभिज्ञता, ऑनलाइन शिक्षण–प्रशिक्षण उपकरणों के अनुप्रयोग की तकनीक का बोध, सभी शिक्षकों का इस दृष्टि से प्रशिक्षण, अधुनातन एवं अद्यतन विश्व ज्ञान की सभी संभावनाओं को उद्घाटित करने के उपाय तो इस नई शिक्षा पद्धति के प्रेरक तत्व हैं ही, 'लर्निंग विदाउट बर्डन' अर्थात् बिना किसी बोझ की अनुभूति के शिक्षा अर्जित करना, शिक्षा को मनोरंजक एवं अभिरुचिपरक बनाना भी इसके मानचित्र का हिस्सा रहा है।

सत्तर–बहत्तर वर्ष की आज़ादी के बाद भी हमारी शिक्षा पद्धति एवं व्यवस्था अंग्रेजी की बैसाखियों

भाषा ISSN 0523-1418

पर ही चलती रही। लाखों–करोड़ों विद्यार्थी स्कूल और कॉलेजों में प्रवेश लेकर भी बीच यात्रा में ही पढ़ना–लिखना इसीलिए छोड़ते रहे कि उन्हें अंग्रेज़ी नहीं आती। अंग्रेज़ी ने उच्चशिक्षा को तो पूर्णतः आंतकित किया ही है। न जाने कितने ही कालिदास, कितने ही भर्तृहरि, कितने ही महाकवि आज अंग्रेजी–आधृत शिक्षा पद्धति के भय के कारण पूर्णतः प्रतिभाशाली होकर भी शिक्षा से वंचित रह गए। नई शिक्षा पद्धति ने इन सभी त्रुटियों, चुनौतियों, समस्याओं का गहन गंभीर अध्ययन कर कुछ नए एवं सार्थक परिदृश्य खड़े किए हैं। अंतरानुशासनात्मक शिक्षा, बहुअनुशासनात्मक शिक्षा, मातृभाषा में शिक्षा अर्जन के विकल्प, कौशल विकास आधृत शिक्षा, भारतीय परंपराओं को उद्घाटित करने एवं उनका गहन ज्ञानार्जन कराने वाली शिक्षा, विश्वस्तरीय अनुसंधान उन्मुख शिक्षा, विषय निष्ठ एवं रोजगारमूलक उच्चशिक्षा, उच्च गुणवत्ता पर बल देने वाली शिक्षा तथा मानवता और भाईचारे को बढ़ाने वाली, मूल्य–बोध कराते हुए बच्चों और युवाओं को केवल धनार्जन की मशीन न बनाकर, उन्हें एक सुसंस्कृत नागरिक, राष्ट्र समर्पित मानव बनाने वाली शिक्षा का सूत्रपात कराने का आह्वान इस पद्धति में किया गया है। केवल उपाधि बाँटना उद्देश्य न रहे, केवल नौकरी माँगने का स्वप्न न रहे, रोजगार प्रदान करने वाली शिक्षा पद्धति तैयार हो सके। आत्मनिर्भर नागरिक तैयार हों, केवल रटंतु विद्या या किताबी विद्या मात्र न हो, मानसिक, आत्मिक एवं आध्यात्मिक विकास की शिक्षा द्वारा संभव हो सके, यह प्रयास भी इस परिवर्तन के मूल में स्पष्ट परिलक्षित होते हैं।

इस नई शिक्षा पद्धति और नीति ने भारतीय भाषाओं के विकास तथा हिंदी और अनुवाद अनुशासन को विशिष्ट महत्व देते हुए एक सशक्त आधारशिला रख दी है। हमारे विद्यार्थी अपनी मातृभाषा, राजभाषा, राष्ट्रभाषा आदि की कीमत पर अंग्रेजी के अध्येता बनाए जा रहे थे। अब भारतीय भाषाओं में, राष्ट्र की महत्वपूर्ण भाषा हिंदी में अधुनातन–अद्यतन शिक्षा अर्जन भी संभव हो, इसकी व्यवस्था की गई है। अनुवाद से अथवा मौलिक लेखन से अब ज्ञान–विज्ञान की पाठ्य पुस्तकें निर्मित हों, संदर्भ ग्रंथ तैयार किए–कराए जाएँ, ई–लर्निंग की सामग्री का निर्माण हो जिससे हम भारत का नव–निर्माण कर सकें। शिक्षण शास्त्र में अनुवाद की सशक्त भूमिका सुनिश्चित हो। अब अनुवाद दोयम दर्जे का विषय या अनुशासन न रहे। अब अनुवाद को 'पाप' या 'प्रवंचना' न कहा जाए बल्कि उसकी आंतरिक शक्ति एवं उपादेयता को सही अर्थों में समझा जाए जिससे समस्त जीवनोपयोगी क्षेत्रों की शिक्षा मिल सके और स्वभाषा में मिल सके। अनुवाद को अब राष्ट्रीय विकास का बहुआयामी नव–निर्माण का सशक्त उपकरण, सार्थक साधन तथा परिणामगामी सेतु बनाकर उसका यथासंभव दोहन किया जाए।

अनुवाद से अध्ययन–अध्यापन की अद्यतन सामग्री का निर्माण हो, अनुवाद की कसौटी निर्धारित हो, अनूदित पाठ्य सामग्री की गुणवत्ता निर्धारित हो पुस्तकों, पांडुलिपियों, अभिलेखों, उपेक्षित दुर्लभ ग्रंथों, कालजयी भारतीय संस्कृति को प्रतिबिंबित करने वाली विलक्षण रचनाओं के भारतीय भाषाओं में परस्पर अनुवाद हों, विदेशी भाषाओं में भी युद्ध स्तर पर आदर्श अनुवाद हों ताकि विश्व के समक्ष भारतीय मनीषा और प्रतिभा की सही–सही छवि उभरकर आए। भारतीय भाषाओं के शब्दकोश, विश्वकोश बनें, ई–कोश निर्मित हों, अद्यतन शब्दावलियाँ बनाई जाएँ तथा भारतीय भाषाओं की बृहत् शब्द संपदा को समृद्ध एवं संपन्न बनाया जाए, इसके भी प्रावधान दिए गए हैं।

तत्काल भाषांतरण पर बल देने का सुझाव भी दिया गया है। 'अनुवाद और विवेचना' अथवा 'अनुवाद और निर्वचन' क्षेत्र में व्यापक कार्य योजनाएँ बनाने उनका कार्यान्वयन करने का संकल्प लेने पर भी बल दिया गया है। नीति ने 'इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ ट्रांसलेशन एंड इंटरप्रिटेशन' की स्थापना की घोषणा भी की है। भाषा तथा विषयों को आधुनिकीकरण एवं प्रौद्योगिकी से जोड़ने में इससे लाभ मिलेगा। संभावना है कि हर राज्य में एक 'अनुवाद अकादमी' बने कम से कम एक या दो 'अनुवाद–विश्वविद्यालय' बनें और 'अनुवाद

प्राधिकरण' की स्थापना भी अनेक राष्ट्रीय स्वप्नों को साकार कर सकेगी।

नई शिक्षा नीति ने विद्यालयी पाठ्यपुस्तकों के अनुवाद की भारतीय भाषाओं में उनकी उपलब्धता की, शिक्षण सामग्री की एकरूपता की चिंता भी की है। इससे समेकित भारतीय संस्कृति को स्वर मिलेगा, परस्पर भारतीय भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान संपदा का बोध हो सकेगा।

भारतीय भाषाओं की भी अंग्रेजी–हिंदी तथा हिंदी–अंग्रेजी की तरह ज्ञान–विज्ञान मूलक अवधारणात्मक शब्दावली तैयार करने का संकल्प भी नीति के उद्देश्यों मे शामिल है। इससे भारतीय एकता, राष्ट्रीय अस्मिता तथा गौरवशाली भारतीय अतीत एवं विरासत द्योतक संपदा का परिचय भी मिल सकेगा। बहु अनुशासनात्मक (बहु–विषयक) शिक्षा की ओर अग्रसर होने का संकल्प स्तुत्य एवं प्रणम्य संकल्प है। इस तरह के प्रणामों से भारतीय साहित्य, कला, ज्ञान–विज्ञान, समाजशास्त्र आदि विषयों को उद्घाटित करने, उनका प्रचार–प्रसार करने का स्वप्न भी पूरा हो सकेगा।

अनुवाद के पाठ्यक्रम सभी विश्वविद्यालयों में प्रारंभ करने, इन पाठ्यक्रमों के क्रेडिट निर्धारण तथा अंतरण करने की व्यवस्था करवाने, अभ्यास पुस्तकें, वर्क–बुक, पत्र–पत्रिकाओं में समावेश कराने, विद्यालयी स्तर पर अनुवाद–शिक्षण को जोड़ेने तथा ज्ञान की नई संभावनाओं को खोजने पर भी बल दिया गया है। वास्तव में अनुवाद को 'सेवा प्रदाता' अनुशासन बनाने अर्थात् 'सर्विस प्रोवाइडर' के रूप में उसका विकास करने का मार्ग भी प्रशस्त किया गया है। इसी से भारतीय भाषाओं के तथा विदेशी भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान–संपदा का प्रचार–प्रसार एवं आदान–प्रदान संभव हो सकेगा। अनुवाद से हम उपेक्षित अभिलेखों को, दस्तावेजों को, कलात्मक रचनाओं को, ज्ञान–विज्ञान की उपलब्धियों तथा प्रदेय को विश्व के समक्ष उद्घाटित कर सकेंगे। 'नैशनल इंस्टीट्यूट फॉर इंडियन लैंग्वेज़िज' की स्थापना करते हुए पालि, प्राकृत एवं अपभ्रंश आदि भाषाओं की विरासत को भी अनुवाद द्वारा उजागर किया जा सकेगा। बहुभाषावादी साहित्य–संस्कृति का विकास भी इसी से संभव हो सकेगा।

मौलिक लेखन एवं अनुवाद कर्म में तकनीक, प्रौद्योगिकी, मशीन–तंत्र की यथासंभव मदद लेने, नए 'एप' बनाने, कंप्यूटर के फॉन्ट निर्धारित करने, नए–नए सॉफ्टवेयर बनाने आदि के लक्ष्य निर्धारित करते हुए नई शिक्षा पद्धति 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' का सपना साकार करने का मूलमंत्र लेकर आई है।

इस प्रकार नई शिक्षा नीति में अनुवाद की रचनात्मक भूमिका का निर्धारण संगीत, दर्शन, भारतीय पारंपरिक विद्याओं, कलाओं, सिद्धांतों तथा अनेक अनुशासनों में एक 'मील का पत्थर' स्थापित करेगी। स्वतंत्र भारत में आजादी के पश्चात् युवाओं के जो स्वप्न अधूरे रह गए थे, बिखर गए थे और 'सारा आकाश' उन्हें अपने लिए शून्य प्रतीत होता था, अब उसमें आशाओं के तारे टिमटिमाते प्रतीत हो रहे हैं, आलोक विकीर्ण करता चाँद मुस्कुराता दिखाई देने लगा है।

– हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

❑❑❑

नई शिक्षा नीति के तहत 'प्राथमिक शिक्षा में भाषा' पर एक दृष्टि

डॉ. आरती स्मित

'नई शिक्षा नीति 2020' शिक्षा के क्षेत्र एवं शिक्षण पद्धति में कई नए बदलावों को लेकर शिक्षाविदों के बीच निरंतर विमर्श का हिस्सा बनी हुई है। इन विमर्शों में नीति के सकारात्मक एवं नकारात्मक आयामों पर दृष्टि डाली गई, डाली जा रही है जो आवश्यक भी है।

सबसे पहले हम बात करें शिक्षा की, शिक्षा का अर्थ क्या है और यह प्रत्येक व्यक्ति के लिए क्यों जरूरी है; इसी प्रकार, प्राथमिक शिक्षा सबसे अधिक क्यों महत्वपूर्ण है और इसमें भाषा की क्या विशेष भूमिका होती है; प्राथमिक शिक्षा में मातृभाषा क्यों महत्वपूर्ण है और इसकी उपादेयता की परिसीमा क्या है?

शिक्षा सीखने–सिखाने से संदर्भित है और सीखना/सिखाना शिशु के जन्म से ही शुरू हो जाता है। देखा जाए तो जन्म से पूर्व गर्भावस्था से ही– सायास नहीं, अनायास। गर्भ में पल रहा जीव माँ से भोजन की खुराक ही नहीं पाता, बल्कि भाव, भाषा व संस्कार भी पाता है। जन्म के बाद भी शिशु का व्यक्तित्व विकास उसे मिलने वाली शिक्षा पर निर्भर करता है। यह शिक्षा घर, आस–पड़ोस से आरंभ होकर विद्यालय के माध्यम से एक निश्चित पड़ाव पर जा पहुँचती है। प्रत्येक व्यक्ति के सर्वांगीण विकास की कुंजी है शिक्षा। शिक्षा व्यक्ति को अपेक्षाकृत अधिक विवेकी और बौद्धिक बनाती है। वह दूरदृष्टि देती है; कर्तव्य और अधिकार के प्रति सजग बनाती है। शिक्षा की अनिवार्यता पर बल देते हुए स्वामी विवेकानंद ने कहा है : "मेरे विचार में जनसाधारण की अवहेलना महान राष्ट्रीय पाप है और हमारे पतन के कारणों में से एक है। सभी प्रकार की राजनीति उस समय तक विफल रहेगी जब तक भारत में जनसाधारण को एक बार फिर भली प्रकार से शिक्षित नहीं किया जाएगा"[1] और औपचारिक शिक्षा के क्रम में सबसे महत्वपूर्ण पड़ाव होता है प्राथमिक शिक्षा का, क्योंकि शोध बताते हैं कि व्यक्ति का सबसे अधिक मस्तिष्क/बौद्धिक विकास 3 वर्ष की उम्र तक, फिर 5 वर्ष की उम्र तक होता है। बढ़ती उम्र के साथ मस्तिष्क का विकास एक औसत क्रम में होता है। इस कालक्रम में शिशु सबसे अधिक घर–परिवार के निकट होता है।

यदि ध्यान दें तो पाएँगे, शिशु को बगैर तोते की तरह रटाए भी वह मातृभाषा के शब्द बोलना प्रारंभ कर देता है। संबोधन का पहला शब्द भी वह वही कहता है जो शब्द उसके आस–पास के वायुमंडल में तैर रहा होता है। जैसे, यदि कोई मराठी परिवार, खासकर माँ, घर–बाहर मराठी भाषा का उपयोग अधिक करती है तो शिशु मराठी शब्द ग्रहण करता रहता है किंतु यदि मराठी परिवार घर में हिंदी या अन्य भाषा का उपयोग करते हैं तो शिशु उस भाषा के शब्द सहज रूप में ग्रहण करेगा। तो मातृभाषा का अर्थ घर–परिवार में बोली

जाने वाली भाषा है जिसे वह गर्भकाल से ही ग्रहण करता जाता है।

शिशु जन्म के तुरंत बाद शब्द नहीं कहता, उसकी ध्वनियाँ वर्णों को नहीं पिरोतीं, मगर वह सुनता और ग्रहण करता है, बढ़ती उम्र के साथ वह सुने गए शब्द की ध्वनियों के साथ पूर्व अनुभव के सहयोग से अर्थ का तादात्म्य स्थापित कर, अर्थ बोध ग्रहण करता है। जैसे राजस्थान की मीणा जनजाति का बच्चा माँ को 'जीजी' कहकर बुलाता है तो मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र के गोंड–बैगा–अगारिया जाति का बच्चा माँ को 'आई' पुकारता है। किसी भी शिशु का पहला विद्यालय उसका घर और आसपास का परिवेश होता है। इसलिए माँ को पहली गुरु कहा गया है, किंतु अक्षर ज्ञान के क्रम में घर से बाहर जब कदम प्ले स्कूल, आँगन बाड़ी आदि संस्थानों से गुजरते हुए विद्यालय में कक्षा एक से पाँच तक पहुँचते हैं और अक्षर ज्ञान के साथ ही व्यक्तित्व विकास के विभिन्न चरणों की नींव मजबूत करते हैं, वे समस्त शिक्षा प्राथमिक शिक्षा कहलाती हैं।

अब जो महत्वपूर्ण सवाल है कि प्राथमिक शिक्षा में भाषा की क्या विशेष भूमिका होती है तथा इसके लिए मातृभाषा को क्यों महत्वपूर्ण माना गया है? भाषा अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। छोटे बच्चे अपने अनुभव, अपनी जानकारी, जिज्ञासा और समझ को घर की भाषा में बेहतर ढंग से अभिव्यक्त कर पाते हैं और उतनी ही तीव्रता से नई बातें सीख भी पाते हैं। प्रथम भाषा के रूप में घर की भाषा/मातृभाषा उनके मानसिक एवं बौद्धिक विकास में सहायक होती है। उसके साथ अन्य भाषाओं को सिखाया जाना अपेक्षाकृत सरल होता है। यदि वैश्विक स्तर पर दृष्टि डालें तो भारतीय एवं पाश्चात्य बाल मनोविज्ञानियों, मनोचिकित्सकों सहित स्वामी विवेकानंद, गांधी एवं रवींद्रनाथ प्रभृति समाज के भिन्न–भिन्न क्षेत्रों के पुरोधाओं ने भी प्राथमिक शिक्षा में मातृभाषा की महत्ता प्रतिपादित की है। स्वीट्जरलैंड के चिकित्सा मनोविज्ञानी जीन पियाजे, रूसी मनोवैज्ञानिक लिव सिमन वोइगोत्स्की का भी यही मानना है।

कई शोधों से यह स्पष्ट हो चुका है कि बच्चा मातृभाषा में जल्दी सीखता है, इसलिए घर से बाहर, शिक्षा का पहला चरण मातृभाषा में हो तो बच्चे की प्रतिभा और संप्रेषण–कौशल अपेक्षाकृत बेहतर निखरेंगे। दूसरे चरण में बच्चे दूसरी–तीसरी भाषा सीखने की क्षमता प्राप्त कर लेते हैं। बढ़ती कक्षा में अन्य विषय शामिल किए जाने चाहिए। लैंग्वेज एंड लर्निंग फाउंडेशन नामक संस्था इन्हीं आधारों पर विभिन्न राज्यों के शिक्षकों को प्रशिक्षित करने हेतु पिछले एक दशक से भी अधिक समय से कार्य कर रही है।

प्राथमिक शिक्षा में मातृभाषा के प्रति विद्यालयीन उदासीनता का दुष्प्रभाव बाल मन–मस्तिष्क किस कदर झेलता है इसका अंदाजा बापू के अनुभव से भी लग जाता है जिसकी अभिव्यक्ति 'हरिजन सेवक' में 9 जुलाई, 1938 को प्रकाशित लेख के रूप में हुई..... "बारह बरस की उम्र तक मैंने जो भी शिक्षा पाई, वह अपनी मातृभाषा गुजराती में ही पाई। उस समय मुझे गणित, इतिहास, भूगोल का थोड़ा–थोड़ा ज्ञान था।... हाई स्कूल में स्कूल मास्टर का काम विद्यार्थियों के दिमाग में ठूँस–ठूँस कर अंग्रेजी भरना था।... जितना गणित, रेखागणित, बीजगणित, रसायनशास्त्र और ज्योतिष सीखने में मुझे चार साल लगे, अगर अंग्रेजी के बजाय गुजराती में पढ़ा होता तो उतना मैंने एक साल में सीख लिया होता! गुजराती का मेरा शब्दज्ञान कहीं ज्यादा समृद्ध हो गया होता और उस ज्ञान का मैंने अपने घर में उपयोग किया होता! लेकिन इस अंग्रेजी के माध्यम ने मेरे और मेरे कुटुंबियों के बीच, जो अंग्रेजी में पढ़े–लिखे नहीं थे, एक बड़ी खाई खड़ी कर दी।.... इस तरह मैं अपने ही घर में बड़ी तेजी के साथ अजनबी बनता जा रहा था। .... हमें और हमारे बच्चों को अपनी ही विरासत बनानी चाहिए। अगर हम दूसरों की विरासत लेंगे तो हमारी अपनी नष्ट हो जाएगी।"[2]

दस वर्षीय बालक नरेंद्र (स्वामी विवेकानंद) ने भी कुछ ऐसे ही भाव अभिव्यक्त किए थे.... अभी मैं अपनी मातृभाषा में लिखे साहित्य को पढ़ना चाहता हूँ, देवभाषा संस्कृत को गहराई से सीखना

चाहता हूँ और अपने देश के बारे में जानना चाहता हूँ। यदि अभी से सारे विषय अंग्रेजी में पढ़ने पड़े तो हमारा बहुत समय और ऊर्जा इसी को सीखने में नष्ट हो जाएँगे।

कवि शिरोमणि रवींद्रनाथ टैगोर ने भी अपने लेख 'शिक्षार स्वांगीकरण' के माध्यम से भावाभिव्यक्त किए—— "शिक्षा में मातृभाषा माता के दूध के समान है। ये सरल और सार्वभौमिक उद्‌गार मैंने बहुत पहले प्रकट किए थे और मैं उन्हें फिर दुहरा रहा हूँ जो उस समय अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव में थे, उनके कानों के लिए ये शब्द अप्रिय थे। यदि इन शब्दों का अभी भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता तो मेरा विचार है कि लोग उसे बार–बार दुहराएँगे।"[3]

भाषा से संदर्भित नई शिक्षा नीति के उस हिस्से पर गौर करें तो हम पाएँगे कि इस नीति में प्राथमिक शिक्षा के लिए लगभग वे सभी तत्व शामिल किए जाने की कोशिश की गई है जिन्हें पहले भी आवश्यक माना जाता रहा है। नई शिक्षा नीति में विद्‌यालयी शिक्षा को 10+2 की जगह 5+3+3+4 वर्ष का बनाया गया है। प्रारंभिक 5 वर्ष बुनियादी चरण, शेष तीन वर्ष कक्षा 3, 4 और 5 के लिए प्रारंभिक विद्‌यालयी शिक्षा के चरण के रूप में रेखांकित हैं।[4] शिक्षा मंत्री के अनुसार, नई शिक्षा नीति का यह प्रारूप सीबीएसई के सभी सरकारी/गैर सरकारी प्राथमिक विद्‌यालयों में लागू किया जाएगा, इस नीति के तहत प्राथमिक शिक्षा का माध्यम मातृभाषा, स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा रखा गया है संभव हुआ तो कक्षा 8 तक शिक्षा का माध्यम मातृभाषा रखा जाएगा। राज्य सरकारें अपने अनुरूप विद्‌यालयी शिक्षा का प्रारूप बना सकती हैं।[5]

बुनियादी शिक्षण के आरंभिक तीन वर्ष को 'अर्ली चाइल्ड केयर एंड एडुकेशन' के उद्‌देश्य से प्रारूपित किया गया है। इस दिशा में एनसीईआरटी द्‌वारा प्रत्येक विद्‌यालय में कार्य किया जाएगा। आरंभिक स्तर पर बच्चों को वर्ण/अक्षर/शब्द की ध्वनियों को डिकोड करना सिखाने की प्रक्रिया एलएलएफ के प्रशिक्षण में शामिल है, जिसके सकारात्मक परिणाम मिलने पर अब इसे इस नीति के तहत पूरे देश के सीबीएसई शिक्षण नीति से संबद्‌ध विद्‌यालयों में लागू किया जा रहा है। यह अच्छी पहल है।

वर्तमान समय में विमर्श के कई मुद्‌दों में एक बड़ा मुद्‌दा मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाना भी है। वर्तमान स्थिति–परिस्थिति के अनुसार बुनियादी स्तर पर शिक्षा का माध्यम मातृभाषा रखना उचित है। जैसा कि इस नीति के तहत कहा गया कि इस चरण में बच्चों के भाषा कौशल एवं उनके शिक्षण विकास पर शिक्षकों का ध्यान केंद्रित रहेगा। यदि इस नीति को ईमानदारी और सजगता से कार्यान्वित किया जाए तो इसका लाभ निश्चित तौर पर होगा और विशेषकर उन बच्चों को जो विद्‌यालय आने के समय मातृभाषा के सिवा अन्य भाषा न जान पाने के कारण, अपने पूर्व ज्ञान एवं अनुभव को साझा न कर पाने के कारण विद्‌यालय में चुप रहते हैं और नई भाषा अनायास न समझ पाने की स्थिति में शिक्षा के प्रति उदासीन भी रहते हैं। ऐसे बच्चों को जब अपनी भाषा में भावाभिव्यक्ति और शिक्षण का अवसर मिलेगा तो बच्चे खुलकर हिस्सा ले सकेंगे। यहाँ अनिवार्यता इस बात की होगी कि शिक्षक उनकी मातृभाषा एवं क्षेत्रीय भाषा के जानकार हों तथा प्रत्येक छात्र के बौद्‌धिक, मानसिक, शारीरिक एवं सामाजिक विकास के लिए प्रतिबद्‌ध रहें, जैसी कि इस नीति की योजना है।

यहाँ यह उल्लेख करना अनिवार्य प्रतीत हो रहा है कि लैंग्वेज एंड लर्निंग फाउंडेशन संस्था के संस्थापक एवं निदेशक डॉ. धीर झींगरन अपनी संस्था के माध्यम से पिछले एक दशक से इस दिशा में कार्य कर रहे हैं। एनसीईआरटी के साथ मिलकर भी इस संस्था ने काम किए। यह संस्था उन सभी बिंदुओं पर शिक्षकों को प्रशिक्षित करने का काम करती आ रही है जिन्हें 29 जुलाई 2020 को नई शिक्षा नीति के तहत प्राथमिक शिक्षा के लिए तय किया गया है। प्रशिक्षित शिक्षकों की सोच में पर्याप्त बदलाव भी हुए जिन्हें छात्रों के लिए सकारात्मक कहा जा सकता है। एलएलएफ की सीनियर प्रोग्राम मैनेजर श्वेता लाल के अनुसार, अब तक हरियाणा के लगभग 3,000, छत्तीसगढ़

के 200 और राजस्थान के 40 प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों को प्रशिक्षित किया जा चुका है और उनके विद्यालयों में बेहतर परिणाम भी देखने को मिले। बच्चों की अभिव्यक्ति क्षमता एवं भाषा कौशल का विकास हुआ। इन आधारों पर यह कहा जा सकता है कि भाषा के स्तर पर नई शिक्षा नीति का पहला चरण जाँचा–परखा एवं प्रयोगसिद्ध है।

स्कूल शिक्षा सचिव 'अनीता करवाल के अनुसार, स्कूली शिक्षा में दस बड़े सुधारों पर मुहर लगाई गई है। नई नीति में तकनीक के इस्तेमाल पर विशेष ध्यान दिया गया है। प्री प्राइमरी शिक्षा के लिए एक विशेष पाठ्यक्रम तैयार किया जाएगा। इसके तहत 3 से 6 वर्ष के बच्चे आएँगे। 2025 तक कक्षा 3 तक के छात्रों को मूलभूत साक्षरता तथा अंक ज्ञान सुनिश्चित किया जाएगा।

यहाँ जो कमी खटकती है, वह है प्री स्कूल/आँगनबाड़ी का समय तीन वर्ष तक तय करके उन्हें विद्यालय के साथ जोड़ना। खेल–खिलौनों एवं विविध गतिविधियों के जरिए बच्चों को सिखाने की प्रक्रिया पहले से चली आ रही है और इसके लिए 1 से 2 वर्ष पर्याप्त माना जाता रहा है। यहाँ यह भी याद दिलाना आवश्यक जान पड़ता है कि बच्चों का मस्तिष्क विकास 5 वर्ष की उम्र तक सबसे अधिक होता है, तो इस पूरे समय को खेल और गतिविधियों के साथ ही नई भाषाओं से परिचित कराना उचित होगा। कक्षा 1 एवं 2 में बच्चे की उम्र 7–8 वर्ष होगी। शोध यह भी बताते हैं कि मातृभाषा को प्रथम भाषा के रूप में शुरू के एक वर्ष विकसित करने के बाद दूसरी–तीसरी भाषा को सीखना आसान होता है। यह हम अपने आसपास भी देख सकते हैं कि तीन वर्ष की उम्र में प्ले स्कूल गया बच्चा पाँच वर्ष की उम्र में दो–तीन भाषाओं को बड़ी आसानी से बोल लेता है। इस समय से वर्णाक्षरों को डिकोड करना सिखाया जाना उत्तम है। यह अभिभावक एवं शिक्षक पर निर्भर करता है कि वे बच्चे को किस तरह सिखाते हैं। अतएव बच्चों को आठ वर्ष की उम्र तक केवल मातृभाषा से जोड़े और संख्या कौशल से जोड़े रखना उनके मस्तिष्क विकास को परोक्ष रूप से अवरुद्ध करेगा। माध्यम बेशक मातृभाषा हो, किंतु बुनियादी चरण के दूसरे वर्ष से क्षेत्रीय भाषा (यदि वह मातृभाषा से भिन्न है) तथा तीसरे वर्ष से राजभाषा सहित हिंदी/अंग्रेजी एक भाषा के रूप में शामिल की जाए। कक्षा एक से शब्द बनाने दिए जाने से उनका बहुभाषा शब्दावली समृद्ध होगा। सात वर्ष का बच्चा कुछ शब्द और छोटे वाक्य आसानी से बना सकता है, लिख सकता है, 8 वर्ष की उम्र में छोटी किताब पढ़ सकता है, कहानी–कविता की विषयवस्तु समझ सकता है और उस पर अभिनय भी कर सकता है, यदि उसे पहले से सही रूप में मार्गदर्शन मिले, जैसा कि इस शिक्षा नीति में कहा भी गया है।

हम इस सच को नकार नहीं सकते कि वैश्विक पटल से जुडने और ऑनलाइन शिक्षा, जो इस कोरोना काल में अनिवार्य हिस्सा बन गई, उससे जुड़ने, इंटरनेट की सहायता से संबद्ध चीजें ढूँढ़ने और रजिस्टर्ड होने के लिए और अधिक से अधिक जानकारी हासिल करने के लिए अंग्रेजी की जरूरत पड़ती है। इसलिए बुनियादी शिक्षण काल से ही अंग्रेजी से नफरत करने के बदले उसे एक अंतरराष्ट्रीय संपर्क भाषा के रूप में साथ लेकर चलना उचित होगा।

इस शिक्षा नीति का दूसरा चरण, जिसे प्रारंभिक या तैयारी का चरण कहा गया है। इसके अंतर्गत कक्षा 3 से 5 तक (9–11 वर्ष) के बच्चे आते हैं। इनके पाठ्यक्रम क्षेत्रीय भाषा में तैयार किए जाएँगे। इस चरण में बच्चों के भाषाई विकास एवं गणितीय कौशल पर ध्यान देने की बात कही गई है। यहाँ पुनः यह बता देना उचित होगा कि एलएलएफ द्वारा इस दिशा में भी शिक्षकों को प्रशिक्षित करने का काम जारी है। छात्रों को मातृभाषा में भी उत्तर देने की छूट आदिवासी इलाकों के बच्चों को बहुत बड़ी राहत देगी, किंतु उन इलाकों के बच्चों को अंग्रेजी भाषा सिखाने के बदले शिक्षक द्वारा किताब में भर देने या बच्चों से सिर्फ नकल करने को कहना भाषा और बच्चों के प्रति अन्याय करना है और यह मध्य प्रदेश के कई आदिवासी बहुल ग्रामीण विद्यालयों में हो रहा है। इससे भी अधिक

कठिनाई है शिक्षकों की न्यूनतम संख्या और ऐसे शिक्षकों की नियुक्ति जो उस परिवेश से जुड़े नहीं होते और न ही शिक्षा को अपना दायित्व मानते हैं। एक व्यावहारिक समस्या यह भी है कि एक स्कूल में जहाँ कमरे, पानी और शिक्षक— तीनों की कमियाँ हैं, बावजूद इसके भिन्न–भिन्न समुदायों के बच्चे वहाँ पढ़ने आते हैं, निश्चित तौर पर उनकी मातृभाषा अलग–अलग है। शिक्षक कमरे के अभाव में दो–तीन कक्षाओं को एक साथ बिठाने का उपक्रम करते हैं, प्रत्येक कक्षा को अलग–अलग बिठा या समझा पाना उनके लिए कठिन होता है। ऐसी स्थिति में किस प्रकार सबकी मातृभाषा को पाठ्यक्रम में शामिल किया जा सकेगा?

इसी प्रकार, हिंदीभाषी प्रदेशों के अधिकांश सरकारी प्राथमिक विद्यालयों में जहाँ शिक्षा का माध्यम हिंदी है, सीबीएसई तथा मिशनरी स्कूलों की अंग्रेजी— प्रत्येक स्कूलों में भिन्न–भिन्न मातृभाषा के बच्चे पढ़ते हैं। ऐसी स्थिति में हर एक को मातृभाषा में शिक्षा दे पाना शिक्षक के लिए शायद संभव न हो, किंतु क्षेत्रीय भाषा विकल्प में रहे तो संभव है। देश की नन्ही पौध को राष्ट्रभाषा हिंदी एवं अंतर्जाल से जुड़ने की भाषा अंग्रेजी से जोड़ते चलना ही उचित होगा। स्वयं शिक्षा मंत्री ने भी ऑनलाइन शिक्षा, नई तकनीकी व्यवस्था तथा विभिन्न ऐप के उपयोग से ऑनलाइन शिक्षण को रोचक बनाने पर जोर दिया है। यह तभी संभव है जब अंग्रेजी भाषा का ज्ञान हो।

सचमुच, कोरोना काल ने शिक्षण संस्थानों से संबद्ध अधिकारियों, शिक्षकों एवं छात्रों को जिन नई तैयारियों के लिए सोचने पर विवश किया, उन पर कस्तूरीरंगन की टीम का भी ध्यान टिका। हम सभी जानते हैं कि नई शिक्षा नीति का ड्राफ्ट इसरो के वैज्ञानिक रह चुके शिक्षाविद के. कस्तूरीरंगन के नेतृत्व में कमेटी ने बनाया है। चार विशेषज्ञों / प्रो. के. कस्तूरीरंगन, प्रो. किरण देवेंद्र(शिक्षाविद, एनसीईआरटी), प्रो. नजमा अख्तर (कुलपति, जामिया विश्वविद्यालय) एवं पुष्पेश पंत (इतिहासकार एवं शिक्षाविद) के लंबे विमर्श के बाद जो परिणाम सामने उभरे हैं, वह नई शिक्षा नीति के रूप में है।

कक्षा 3 में परीक्षा के बाद कक्षा 5 में परीक्षा की बात कही गई है, रिपोर्ट कार्ड की जगह प्रगति पत्र दिए जाने की घोषणा है। यह नीति भी बहुत पुरानी ही है। प्रगति पत्र को रिपोर्ट कार्ड कहने का चलन हाल के अंग्रेजी स्कूलों की देन है, जबकि देते वे भी प्रगति पत्र ही हैं। हाँ, आकलन / मूल्यांकन की यह पद्धति देश के लिए नई होगी। कक्षा 2 से मूल्यांकन पद्धति आरंभ करनी चाहिए क्योंकि किसी भी कक्षा में बिना मूल्यांकन के पास करना साक्षरता का कोरम पूरा करना होगा।

कक्षा 3 से क्षेत्रीय भाषा में पाठ्यक्रम तैयार करने और नए विषयों को शामिल करने की योजना अच्छी है। कक्षा 5 तक पाठ्यक्रम क्षेत्रीय भाषा में होते हुए माध्यम केवल मातृभाषा में होने की बात कहना या दावा करना बेमानी होगा क्योंकि आज भी सभी मातृभाषाएँ संज्ञान में नहीं हैं। इतना अवश्य है कि छात्रों को मातृभाषा में उत्तर देने की छूट से शिक्षा में पिछड़े कई ग्रामीण / शहरी, सरकारी / गैर सरकारी विद्यालय के छात्रों को राहत मिलेगी। छात्रों द्वारा विविध विषयों के उत्तर संक्षिप्त और लिखित रूप में हों और उसका मूल्यांकन हो तो यह प्रक्रिया बोझिल न होकर रचनात्मक हो सकती है। इससे विविध भाषाओं के लेखन में रुचि भी बनी रहेगी और परीक्षा जैसा बोझ भी महसूस नहीं करेंगे। अन्यथा छात्र मिशनरी व राज्य अधिकृत विद्यालय के छात्रों से पिछड़ते चले जाएँगे। इस शिक्षा नीति में शारीरिक शिक्षा, संगीत एवं कला आदि को प्रमुख विषय के रूप में शामिल किए जाने की भी बात कही गई है। सभी को उनकी मातृभाषा में संगीत सहित अन्य विषयों की शिक्षा दे पाना कहाँ तक संभव हो पाएगा, यह तो समय ही बताएगा क्योंकि जब मूल्यांकन की बात आती है और तीन स्तरों पर मूल्यांकन की बात आती है तब यह और महत्वपूर्ण हो जाता है कि सहपाठी और शिक्षक प्रत्येक छात्र की मातृभाषा से परिचित हों। हर हाल में विषय–शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण है।

संभावनाएँ अनगिनत हैं तो असफल होने के खतरे भी, फिर भी नए कदम का स्वागत होना

चाहिए। प्रारंभिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की महत्ता को नकारा नहीं जा सकता। इस बहुभाषी देश में प्राथमिक कक्षाओं में मातृभाषा एवं क्षेत्रीय भाषाओं को माध्यम बनाना अच्छी पहल है। किंतु राजभाषा, राष्ट्रभाषा हिंदी सहित अंग्रेजी से बुनियादी चरण में ही जुड़ाव भी छात्रों के बौद्धिक विकास एवं वैश्विक गतिविधियों से जोड़ने के लिए आज अनिवार्य है। इसे एक या डेढ़ शताब्दी पूर्व कही बातों के आधार पर पूरी तरह नहीं त्यागा जा सकता।

देश शिक्षित हो, सोई चेतना जगे, यही कामना!

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. scotbuzz-org; प्राथमिक शिक्षा का अर्थ उद्देश्य और महत्व

2. गांधी और हिंदी, संकलन–संपादन : राकेश पांडेय, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2015, पृ–89–90

3. रवींद्रनाथ टैगोर; शिक्षार स्वांगीकरण, बंगाल एजुकेशन वीक, 1936,खंड 1, पृ–71

4.नई शिक्षा नीति 2020, publication formpdf.com;Dec 2,2020

5.cgwall.com./objective-of-new-education-policy/

6. अन्य जानकारियाँ; नई शिक्षा नीति 2020 विकिपीडिया hi.m.wikipedia.org

– डी–136, गली नं. –5, गणेश नगर, पांडव नगर कॉम्प्लेक्स, दिल्ली–92

❑❑❑

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में महिला शिक्षा हेतु प्रावधान

डॉ. मोनिका पारीक

जैसा कि विदित है कि भारत सरकार द्वारा दिनांक 29 जून, 2020 को 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' का प्रारूप देश के सम्मुख रखा गया है। 34 वर्षों बाद इस बहुप्रतीक्षित शिक्षा नीति में देश की शिक्षा के लिए अनेक ऐसे परिवर्तनों की संस्तुति की गई है जिनकी माँग लंबे समय से की जा रही थी। इस शिक्षा नीति के आने के बाद से ही शिक्षा जगत में उत्साह का वातावरण है यह उत्साह इसलिए भी है कि यह शिक्षा नीति उन सभी समस्याओं की चर्चा करती है जिनके समाधान की अत्यंत आवश्यकता काफी समय से महसूस की जा रही थी किंतु दूसरी ओर यह आशंका भी व्यक्त की जा रही है कि क्या ये प्रस्तावित परिवर्तन वर्तमान में संचालित शिक्षा की गुणवत्ता का संवर्धन करेंगे? विशेष रूप से महिला शिक्षा के विकास में। साथ ही क्या राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में महिला शिक्षा के विकास के लिए जिन नवीन प्रावधानों की संस्तुति दी गई है क्या ये प्रस्तावित प्रावधान उस सीमा तक महिला शिक्षा के संवर्धन में समर्थ होंगे, जिस सीमा को ध्यान में रखकर इनकी संस्तुति की गई है? इस शोधपत्र की संकल्पना इन सभी प्रश्नों को केंद्र में रख कर की गई है।

महत्वपूर्ण बिंदु–महिला शिक्षा, समावेशी शिक्षा

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एक पॉलिसी डॉक्यूमेंट है जिसमें इस बात का उल्लेख किया गया है कि सरकार का आने वाले दिनों में शिक्षा को लेकर क्या विजन है? इस शिक्षा नीति के द्वारा ज्ञात किया जा सकता है कि सरकार की शिक्षा के विषय में क्या सोच है? सरकार शिक्षा के विकास के लिए निकट विषय में क्या योजना बनाने वाली है? साथ ही इससे यह भी ज्ञात किया जा सकता है कि सरकार शिक्षा व्यवस्था में कौन–कौन से नवीन प्रावधान लाने वाली है और पुराने प्रावधानों में क्या–क्या परिवर्तन होने वाले हैं? संक्षेप में यह शिक्षा नीति देश में वर्तमान में संचालित शिक्षा व्यवस्था के भूत, वर्तमान और भविष्य के विषय में स्पष्टता और विस्तार के साथ चर्चा करती है। निश्चित रूप से आने वाले समय में यह शिक्षा नीति देश की शिक्षा की दशा और दिशा तय करेगी। 34 वर्षों की प्रतीक्षा के उपरांत आई इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में यद्यपि भारतीय शिक्षा व्यवस्था के सुधार हेतु अनेकों महत्वपूर्ण और सकारात्मक सुझाव दिए गए हैं किंतु महिला शिक्षा के विकास में इस शिक्षा नीति में विशेष ध्यान दिया गया है। इसका ज्ञान इस शिक्षा नीति के छठे अध्याय के इस कथन से ही हो जाता है। जहाँ यह शिक्षा नीति कहती है कि "यद्यपि भारतीय शिक्षा प्रणाली और क्रमिक सरकारी नीतियों ने विद्यालय शिक्षा व्यवस्था के सभी स्तरों में सामाजिक श्रेणियों और लिंग के अंतराल को कम करने की दिशा में लगातार प्रगति की है किंतु यह समानता आज भी देखी जा सकती है विशेषकर माध्यमिक स्तर पर सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित

ऐसे समूहों को देखा जा सकता है जो शिक्षा के क्षेत्र में भूतकाल से ही पीछे रहे हैं सामाजिक, आर्थिक रूप से वंचित इन समूहों को लिंग, विशेष रूप से महिला व ट्रांसजेंडर व्यक्ति, सामाजिक सांस्कृतिक पहचान, भौगोलिक पहचान, असहाय परिस्थिति में रहने वाले बच्चे, बाल तस्करी के शिकार बच्चे, अनाथ बच्चे जिनमें शहरों में भीख माँगने वालो के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। स्कूलों में कक्षा 1 से लेकर कक्षा 12 तक लगातार नामांकन घट रहा है नामांकन में यह गिरावट सामाजिक आर्थिक रूप से वंचित समूहों (एसईडीजी) में अधिक है और विशेषकर एसईडीजी की महिला विद्यार्थियों के संदर्भ में यह और अधिक स्पष्ट है।" (रा.शि.नी.6.2) राष्ट्रीय शिक्षा नीति निर्माता देश में संचालित महिला शिक्षा की स्थिति को लेकर काफी गंभीर है। उनकी यह चिंता निराधार भी नहीं है।

यूडीआईएसई 2016–17 के आँकड़ों के अनुसार प्राथमिक स्तर पर लगभग 19.6 प्रतिशत छात्र अनुसूचित जाति के हैं, उच्चतर माध्यमिक स्तर पर यह प्रतिशत घटकर 17.3 प्रतिशत हो गया है। नामांकन में यह गिरावट अनुसूचित जनजाति के छात्रों के लिए अधिक गंभीर है इनमें से प्रत्येक श्रेणी में महिला छात्रों के नामांकन में और भी अधिक गिरावट देखी गई है उच्चतर माध्यमिक शिक्षा में महिला छात्रों के नामांकन में यह गिरावट और भी अधिक बढ़ जाती है। इसलिए यह शिक्षा नीति महिला शिक्षा के विकास पर काफी बल देती है। नवीन राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को लागू करने के लिए केंद्र ने वर्ष 2030 तक का लक्ष्य रखा है। शिक्षा संविधान में समवर्ती सूची का विषय है जिसमें राज्य और केंद्र सरकार दोनों को अधिकार दिए गए हैं जिससे राज्यों के पास ये अधिकार हैं कि वे अपने क्षेत्र विषय की आवश्यकता के अनुसार शिक्षा व्यवस्था में अपेक्षित परिवर्तन कर सकें इसलिए यह भी आवश्यक है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आने के बाद भी इस नीति की संपूर्ण संस्तुतियों को राज्य सरकारें यथावत् स्वीकार न करें। ऐसी स्थिति में जहाँ कहीं टकराव वाली स्थिति होगी वहाँ दोनों पक्षों (केंद्र और राज्य)को आम सहमति से इसे सुलझाने का सुझाव दिया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में महिला शिक्षा के विकास के लिए क्या–क्या नवीन प्रावधान आएँ हैं और पुराने प्रावधानों में कौन–कौन से परिवर्तन किए गए हैं? यह जानने से पहले आवश्यक होगा कि महिला शिक्षा के लिए पूर्व के आयोगों द्वारा क्या–क्या सुझाव दिए गए और उन सुझावों से महिला शिक्षा में क्या–क्या गुणात्मक परिवर्तन हुए तथा वर्तमान में महिला शिक्षा की स्थिति क्या है? इस पर भी एक दृष्टि डाला जाना आवश्यक है। यदि निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की संकल्पना को ध्यानपूर्वक देखें तो पाएँगे कि इस अवधारणा से सबसे ज्यादा समाज के पिछड़े और सुविधा वंचित छात्रों को ही लाभ हुआ है और महिला भी इसी लाभान्वित समूह में से एक है। अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान करते समय नीति निर्माताओं के मस्तिष्क में अवश्य ही महिला शिक्षा के उन्नयन की संकल्पना होगी क्योंकि शिक्षा ही वह साधन या उपकरण है जिससे महिलाओं को समाज में अपेक्षित स्थान मिल सकता है। शिक्षित महिला एक सभ्य समाज के निर्माण में अभूतपूर्व योगदान दे सकती है क्योंकि वह भावी समाज के निर्माण में अपना अतुलनीय योगदान दे सकती है। इसीलिए माता को बालक का सर्वप्रथम शिक्षक माना गया है यहाँ कहा गया है कि "मात्रि पित्रिमान आचार्यवान पुरुषों वेद" अर्थात् मानव के तीन शिक्षक हैं माता, पिता और आचार्य। इस क्रम में सर्वप्रथम माता अर्थात् महिला का ही स्थान है। महिला शिक्षा पर बल देते हुए विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग 1948 में कहा गया है कि "शिक्षित स्त्री के बिना पुरुष हो ही नहीं सकता। यदि पुरुषों और स्त्रियों में से केवल किसी एक के लिए सामान्य शिक्षा का प्रावधान करना हो तो यह अवसर स्त्रियों को दिया जाना चाहिए क्योंकि यह शिक्षा स्वयमेव अगली पीढ़ी को प्राप्त हो जाएगी।" महिला शिक्षा के माहात्म्य को देखते हुए वनस्थली विद्यापीठ के कार्यक्रम में भाषण देते हुए पं. जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि "एक लड़के की शिक्षा केवल एक व्यक्ति की शिक्षा है परंतु एक

लड़की की शिक्षा संपूर्ण परिवार की शिक्षा है।" इसी प्रकार का विचार स्वामी विवेकानंद का है कि समाज के प्रत्येक नागरिक विकास के बिना कोई भी राष्ट्र पूर्ण रूप से कभी भी विकसित नहीं हो सकता है। उक्त कथनों से एक बात बिल्कुल स्पष्ट है कि कोई भी राष्ट्र तभी पूर्ण रूप से विकसित हो सकता है जब उसके प्रत्येक नागरिक के लिए, विशेष रूप से महिला शिक्षा की पर्याप्त व्यवस्था हो क्योंकि शिक्षा के बिना किसी भी सभ्य समाज का निर्माण नहीं हो सकता है शिक्षा के इसी माहात्म्य को देखते हुए संस्कृत साहित्य में कहा गया है 'नास्ति विद्या समं चक्षु' अर्थात् शिक्षा (विद्या) मानव के नेत्र सदृश है। अगर हम महिला शिक्षा के विषय में स्वतंत्रता पूर्व से ही देखें तो पाएँगे कि ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा सन् 1854 में महिला शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया गया तत्पश्चात् विभिन्न सरकारी और गैर सरकारी प्रयासों के कारण महिला शिक्षा की साक्षरता की दर बढ़ गई। कालांतर में कोलकाता विश्वविद्यालय महिलाओं की शिक्षा के महत्व के स्वीकार करने वाला देश का पहला विश्वविद्यालय बना। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सन् 1947 से लेकर वर्तमान समय तक भारत सरकार द्वारा विद्यालयों में लड़कियों की शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए अनेक योजनाओं की शुरुआत की गई है उदाहरण स्वरूप निःशुल्क पुस्तकें, निःशुल्क वेशभूषा देना, छात्रवृत्ति प्रदान करना, दोपहर का भोजन इत्यादि। इन सभी योजनाओं से महिला शिक्षा को बढ़ाने में काफी मदद मिली है।

1854 के 'वुड घोषणा पत्र' में सर्वप्रथम महिला शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया गया और शिक्षा का प्रसार करने के लिए सभी संभव प्रयास भी किए गए। इस प्रकार कंपनी द्वारा महिला शिक्षा की प्रगति आरंभ हुई। सन् 1882 में हंटर कमीशन ने तत्कालीन महिला शिक्षा की दयनीय दशा से द्रवित होकर यह सिफारिश की कि महिला शिक्षा अभी पिछड़ी हुई दशा में ही है और उसका विकास किया जाना अत्यंत आवश्यक है। उस काल में महिला शिक्षा के विकास के संबंध में डॉ. मुखर्जी का कहना है कि जनता एवं सरकार के सम्मिलित प्रयासों के फलस्वरूप बालिकाओं की शिक्षा का विकास द्रुत गति से हुआ और 1902 में सभी प्रकार के बालिका विद्यालयों की संख्या 6107 हो गई। 1921 से 1947 तक की अवधि में महिला शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र में अद्वितीय प्रगति हुई। महात्मा गांधी के राष्ट्रीय आंदोलन के कारण महिलाओं में उत्पन्न होने वाली जागृति ने भी महिला शिक्षा के विकास में सकारात्मक प्रभाव डाला। 1925 में राष्ट्रीय महिला परिषद् की स्थापना, 1927 में आयोजित किए गए अखिल भारतीय महिला शिक्षा सम्मेलन द्वारा शैक्षिक अवसरों की समानता की माँग काफी जोर–शोर से उठने लगी। शारदा अधिनियम 1929 द्वारा महिला शिक्षा के संवर्धन के लिए बाल विवाह का निषेध किया गया इन कुछ प्रमुख बातों ने महिला शिक्षा के विकास में अभूतपूर्व योगदान दिया। इन सभी प्रयासों और सामाजिक सुधारों से 1947 तक महिला शिक्षा संबंधी संस्थाओं की संख्या 6107 से बढ़कर 8196 हो गई और उनमें अध्ययन करने वाली बालिकाओं की संख्या लगभग चालीस लाख तक पहुँच गई थी। स्वतंत्र भारत में महिलाओं की सामाजिक स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ। पुराने समय से महिलाओं को जिन अधिकारों से वंचित कर दिया गया था वह उसे पुनःत्र प्राप्त होने लगे, महिला शिक्षा के संबंध में पुरुषों के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन होने लगा। भारतीय संविधान में भी नारी को समानता प्रदान करते हुए घोषणा करते हुए कहा गया कि "राज्य किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, प्रजाति, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इसमें से किसी के आधार पर कोई भी भेदभाव नहीं करेगा।" स्वतंत्र भारत में नारी अधिकारों ने करवट ली है उसने अपने वास्तविक महत्व को जानना और पहचाना शुरू किया है यही कारण है कि स्वतंत्र भारत नारी जागरण का युग बना। जिसमें सन् 1959 में राष्ट्रीय महिला शिक्षा परिषद, हंसा मेहता समिति, कोठारी कमीशन ने महिला शिक्षा के प्रचार और प्रसार के लिए अपने महत्वपूर्ण सुझाव दिए। विभिन्न आयोगों द्वारा दिए गए

सुझावों और महिला शिक्षा विकास के लिए किए गए प्रयासों के बावजूद महिला शिक्षा के विकास मार्ग में आने वाली अनेक ज्वलंत समस्याएँ हैं जो महिला शिक्षा के विकास में बाधक के रूप में दिखलाई पड़ती हैं इनमे से कुछ समस्याएँ हैं जैसे शैक्षिक अवसरों की समानता की समस्या, लड़कियों का स्वयं की शिक्षा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण का अभाव, अपव्यय और अवरोधन की समस्या, दोषपूर्ण पाठ्यक्रम, दोषपूर्ण प्रशासन, विद्यालयों में महिला अध्यापिकाओं का अभाव इत्यादि कुछ महत्वपूर्ण समस्याएँ हैं जो कि महिला शिक्षा के विकास में पर्याप्त रुकावटें पैदा करती हैं। ये समस्याएँ काफी समय से महिला शिक्षा के उन्नयन में बाधक बन रही हैं इसलिए इन समस्याओं के निराकरण की आवश्यकता काफी समय से महसूस की जा रही थी। परिणामस्वरूप राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में महिला शिक्षा के सुधार के लिए अनेक सुझावों की संस्तुति दी गई है।

नई शिक्षा नीति 2020 में महिला शिक्षा हेतु प्रावधान

मानव के सर्वांगीण विकास के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि उसे शिक्षा प्राप्ति के पर्याप्त अवसर मिले, यह न केवल व्यक्ति विशेष के लिए आवश्यक है अपितु एक सभ्य समाज के निर्माण एवं विकास के लिए भी महत्वपूर्ण है। परिणामस्वरूप इस नीति में न केवल महिलाओं की शिक्षा, अपितु समाज के हरेक सुविधा वंचित वर्ग की शिक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ करने पर बल दिया गया है। इस नई शिक्षा नीति के अंतर्गत गुणवत्तापूर्ण स्कूलों तक पहुँच पाने में असमर्थ रहे, अनुसूचित जातियों के बच्चों की भागीदारी और अधिगम परिणामों में उनके अंतराल को पूरा करना प्रमुख लक्ष्यों में से एक रखा गया है। आदिवासी समुदायों के बच्चों के उत्थान के लिए कई कार्यक्रम शुरू किए जाने की बात कही गई है और जो सुधारात्मक कार्यक्रम संचालित हैं वे आगे भी संचालित किए जाते रहेंगे यह सुनिश्चित करने के लिए विशेष तंत्र बनाए जाने की आवश्यकता पर बल दिया गया है। इस बात पर भी पर्याप्त बल दिया गया है कि जनजातीय समुदाय के बच्चों को समस्त शैक्षिक कार्यक्रमों का लाभ मिल सके। यह नीति विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को किसी भी अन्य बच्चे के समान गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के समान अवसर प्रदान करने के लिए सक्षम तंत्र बनाने के महत्व को पहचानती है साथ ही स्कूली शिक्षा में सामाजिक श्रेणी के अंतराल को कम करने पर ध्यान केंद्रित करने के लिए अलग रणनीति तैयार करने की संस्तुति प्रदान करती है। प्रत्येक सुविधा वंचित वर्ग की भागीदारी स्कूली शिक्षा प्रणाली में बढ़े इसके लिए जिन नीतियों से देश में शिक्षा व्यवस्था में गुणात्मक सुधार हुआ है उन नीतियों और योजनाओं को पूरे देश में और अधिक सुदृढ़ किया जाना चाहिए। (रा.शि.नी. 6.2.,6.4) यह शिक्षा नीति वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए अतिरिक्त सुविधा प्रदान करने की भी संस्तुति देती है। इस शिक्षा नीति के छठे अध्याय में कहा गया है कि "साइकिल प्रदान करना और स्कूल तक पहुँचने के लिए साइकिल व पैदल चलने वाले समूह का आयोजन करना, महिला छात्रों की बढ़ती भागीदारी के संदर्भ में यह विशेष रूप से शक्तिशाली तरीके के रूप में उभरा है यहाँ तक कि कम दूरी वाले स्थानों पर भी सुरक्षा की दृष्टि से और माता–पिता को मिलने वाले सुरक्षा भाव के कारण यह काफी प्रभावी तरीका रहा है सुनिश्चित करने की दृष्टि से एक बच्चे के साथ शिक्षक, सहपाठी शिक्षक, मुक्त विद्यालय शिक्षा, उचित बुनियादी ढाँचा और उपयुक्त तकनीक का प्रयोग विशेष रूप से प्रभावी हो सकता है। गरीब क्षेत्रों में काउंसलर अथवा प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ताओं को जो कि छात्रों अभिभावकों स्कूलों व शिक्षक–शिक्षकों के साथ मिलकर काम करते हैं, को काम पर रखना उपस्थिति, सीखने के परिणामों को बेहतर बनाने की दृष्टि से विशेष रूप से प्रभावी हैं। "(रा.शि.नी 6.5) यह शिक्षा नीति महत्वपूर्ण सामाजिक कार्यक्रमों और योजनाओं में महिलाओं की सहभागिता को लेकर काफी गंभीर है और यह सत्य भी है कि एक सुव्यवस्थित, सभ्य और विकसित समाज में दोनों(महिला और पुरुष)

की समान रूप से सहभागिता परमावश्यक है महिलाओं की सहभागिता के विषय में इस नीति का विचार है कि "अल्प प्रतिनिधित्व वाले सभी समूहों में आधी संख्या महिलाओं की है। एसईडीजी के साथ होने वाले अन्याय का सामना ज्यादातर इन समूह की महिलाओं को करना पड़ता है। यह नीति समाज में महिलाओं की विशिष्ट और महत्वपूर्ण भूमिका, स्तर को ऊपर उठाने का सर्वोत्तम तरीका होगा। अतः नीति इस बात की सिफारिश करती है कि एसईडीजी विद्यार्थियों के उत्थान के लिए बनाई जा रही नीतियों और योजनाओं को विशेष रूप से इन समूहों की बालिकाओं पर केंद्रित होना चाहिए। भारत सरकार सभी लड़कियों और साथ ही ट्रांसजेंडर छात्रों को गुणवत्तापूर्ण और न्याय संगत शिक्षा प्रदान करने की दिशा में देश की क्षमता का विकास करने हेतु एक जेंडर समावेशी निधि का गठन करेगी केंद्र सरकार द्वारा निर्धारित प्राथमिकताओं को लागू करने के लिए राज्य को यह सुविधा उपलब्ध कराने के लिए एक कोश उपलब्ध होगा। महिला और ट्रांसजेंडर बच्चों तक शिक्षा की पहुँच सुनिश्चित करने की दृष्टि से यह प्रावधान बेहद महत्वपूर्ण है।" (रा.शि.नी 6.8) यह शिक्षा नीति बालिकाओं की शिक्षा व्यवस्था उनके घर के निकट करने का सुझाव देती है अगर घर के नजदीक विद्यालय की व्यवस्था कर पाना संभव न हो तो बालिकाओं के लिए छात्रावास की व्यवस्था करने की सिफारिश की गई है इस संबंध में इस नीति का सुझाव है कि "विद्यालय तक आने के लिए छात्रों को अधिक दूरी तय करनी पड़ती है वहाँ जवाहर नवोदय विद्यालय के स्तर की तर्ज पर निःशुल्क छात्रावासों का निर्माण किया जाएगा विशेषकर ऐसे बच्चों के लिए जो सामाजिक–आर्थिक रूप से सुविधा वंचित पृष्ठभूमि से आते हैं। इन छात्रावासों में सभी बच्चों विशेषकर लड़कियों की सुरक्षा की उपयुक्त व्यवस्था की जाएगी। कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय को और मजबूत बनाया जाएगा तथा सामाजिक आर्थिक रूप से पिछड़े समूह की बालिकाओं की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा वाले विद्यालयों में प्रतिभागिता बढ़ाने की दृष्टि से इन्हें और अधिक विस्तारित किया जाएगा। भारत के हर कोने में उच्चतर गुणवत्ता की शिक्षा के अवसर प्रदान करने की दृष्टि से विशेषकर शिक्षा क्षेत्रों व वंचित क्षेत्रों में अतिरिक्त जवाहर नवोदय विद्यालय व केंद्रीय विद्यालय खोले जाएँगे।" (रा.शि.नी 6.9) इसके अलावा महिला शिक्षा के उन्नयन हेतु नीति ने कुछ अन्य सुझाव भी दिए हैं जैसे "स्कूल शिक्षा में भागीदारी बढ़ाने के प्रयासों के तहत सभी सामाजिक आर्थिक रूप से वंचित समूह (एसईडीजी) से प्रतिभाशाली और मेधावी छात्रों के लिए बड़े पैमाने पर समर्पित क्षेत्रों में विशेष छात्रावास ब्रिज पाठ्यक्रम और फीस माफ करने तथा छात्रवृत्ति के माध्यम से वित्तीय सहायता विशेषकर माध्यमिक स्तर पर प्रदान की जाएगी ताकि उच्चतर शिक्षा में उनके प्रवेश को सुविधाजनक बनाया जा सके। 6.16

छात्र–छात्राओं के लिए उपलब्ध छात्रवृत्ति अवसर और योजनाओं में प्रतिभाग करने की दृष्टि से और क्षमता को बढ़ाने के लिए कुछ सरलीकरण तरीके स्थापित किए जाएँगे जैसे "किसी ऐसे एकल एजेंसी या वेबसाइट के माध्यम से आवेदन लेना जो सभी विद्यार्थियों तक इन योजनाओं छात्रवृत्ति अथवा अवसरों की पहुँच सुनिश्चित करें और सिंगल विंडो प्रणाली के माध्यम से उनका आवेदन सुनिश्चित करें।" (रा.शि.नी 6.18) इस नीति में प्राथमिक स्तर से ही बालिकाओं की शिक्षा को सुदृढ़ करने पर बल दिया गया है। इस संबंध में नीति ने अपनी सिफारिश देते हुए कहा है कि "संभावित तंत्र स्कूल परिसर नामक एक समूह संरचना की स्थापना होगी जिसमें एक माध्यमिक विद्यालय होगा जिनमें 5 से 10 किलोमीटर के दायरे में आँगनवाड़ी केंद्रों सहित अपने पड़ोस में निचले ग्रेड की पेशकश करने वाले अन्य सभी विद्यालय भी होंगे।" (रा.शि.नी 7.6) इसके अतिरिक्त हर राज्य और जिले को प्रोत्साहित किया जाएगा कि वह बाल भवन स्थापित करें जहाँ हर उम्र के बच्चे सप्ताह में एक या अधिक बार जा सके और कला खेल और कैरियर संबंधी गतिविधियों में भागीदारी कर सकें। (रा.शि.नी 7.11) यह नीति

इस बात की पुष्टि करती है कि स्कूल शिक्षा में पहुँच, सहभागिता क्षेत्र विकास कार्यक्रमों का मुख्य लक्ष्य होगा (रा.शि.नी 6.1)

उपर्युक्त सुझावों से बिल्कुल स्पष्ट है कि इस नीति की महिला शिक्षा के विकास और सुधार हेतु क्या मंशा है? किंतु आने वाले समय में इस मंशा की संपूर्ति किस सीमा तक होगी? यह शोध का विषय होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986), मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार।

2. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (2005), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली।

3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020), मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार।

– काउंसलर, एस. ओ. एल, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

❑❑❑

नई शिक्षा नीति 2020 में 'द लैंग्वेजेज ऑफ इंडिया' से भाषा शक्ति और भारत को जानने का अवसर

मीनाक्षी डबास 'मन'

"भारत की भाषाएँ दुनिया में सबसे समृद्ध, सबसे वैज्ञानिक, सबसे सुंदर और सबसे अधिक अभिव्यंजनात्मक भाषा में से हैं, जिनमें प्राचीन और आधुनिक गद्य और कविता दोनों के विशाल भंडार हैं।" (शिक्षा नीति मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार की प्रस्तुत रिपोर्ट–खंड 4.15)

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भारत की राष्ट्रभाषा के संबंध में कहा है– "हिंदी भाषा का प्रश्न स्वराज्य का प्रश्न है। अखिल भारत के परस्पर व्यवहार के लिए ऐसी भाषा की आवश्यकता है, जिसे जनता का अधिकतम भाग पहले से ही जानता–समझता है। और हिंदी इस दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ है। राष्ट्रीय व्यवहार में हिंदी को काम में लाना देश की शीघ्र उन्नति के लिए आवश्यक है।" राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी के इस कथन से समझ सकते हैं कि हम अपने देश की भाषा को जाने, समझे और अपनी भाषा में संवाद ही नहीं बल्कि शिक्षण भी प्राप्त करें। हमें अपने देश की भाषा को बोलने, पढ़ने, लिखने में और देश से बाहर किसी विश्व पटल पर अपनी भाषा में संवाद करने पर हिचकिचाना नहीं चाहिए। अतः हमें हमारे देश की भाषा की उन्नति और विकास के लिए ही कार्य करना चाहिए। हमारे देश में आज अंग्रेजी भाषा का प्रभुत्व है, जबकि अंग्रेजी मूलतः ब्रिटेन की राजभाषा है। जब हमारा भारत ब्रिटिश शासन से आजाद हुआ था। तब इसी भाषा को हमने अपनी भारतीय राजभाषा हिंदी और अंग्रेजी दोनो के संबंध में संविधान सभा ने लंबी चर्चा के बाद 14 सितंबर, 1949 को हिंदी को भारत की राजभाषा स्वीकारा गया। इसके बाद संविधान में अनुच्छेद 343 से 351 तक राजभाषा के संबंध में व्यवस्था की गई। संविधान की धारा 343(1) के अनुसार भारतीय संघ की राजभाषा हिंदी एवं लिपि देवनागरी है। संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त अंकों का रूप भारतीय अंकों का अंतरराष्ट्रीय स्वरूप (अर्थात् 1, 2, 3 आदि) है। किंतु इसके साथ संविधान में यह भी व्यवस्था की गई कि संघ के कार्यकारी, न्यायिक और वैधानिक प्रयोजनों के लिए 1965 तक अंग्रेजी का प्रयोग जारी रहे। आज अंग्रेजी पूरी तरह स्थापित होने हेतु प्रयासरत है। तथापि यह प्रावधान किया गया था कि उक्त अवधि के दौरान भी राष्ट्रपति कतिपय विशिष्ट प्रयोजनों के लिए हिंदी के प्रयोग का प्राधिकार दे सकते हैं।" क्योंकि तत्कालीन समय में अंग्रजी भाषा का ही शासकीय तौर पर प्रभुत्व था, भारत में अपने–अपने राज्यों की अपनी शासकीय भाषाएँ हैं उदाहरणार्थ केरल में मलयालम, तमिलनाडु में तमिल, आंध्र प्रदेश में कन्नड़। अतः स्पष्ट है कि हमारे देश में जब अपनी भाषाएँ हैं तो हमें किसी विदेशी भाषा पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। क्योंकि विश्व के भूमंडल पर अनेक देश ऐसे हैं। जिन देशों की अपनी–अपनी राज्य भाषाएँ और शासकीय भाषाएँ है। जबकि हमारे देश में अपने राज्यों की अपनी राज्य भाषाएँ

और हमारे केंद्र की भाषा हिंदी होने के साथ–साथ अंग्रेजी भी शासकीय भाषा बनी हुई है। सच्चे अर्थों में यदि हम अपने देश की भाषा को संवैधानिक तौर पर ही नहीं बल्कि वैश्विक पटल पर भी हिंदी को आगे रखते हैं तो हमें किसी प्रकार की बाधा महसूस नहीं होनी चाहिए क्योंकि हमारे देश की भाषा सबसे समृद्ध और विशुद्ध व्याकरण सम्मत भाषा है।

आज हमारा देश विश्व की बड़ी अर्थव्यवस्थाओं की होड़ में शामिल होने जा रहा है। अतः जब विश्व के बड़े राष्ट्रों की अपनी राष्ट्रभाषा शासकीय भाषा है तो क्यों ना हम भारतीय हमारे देश की शासकीय और राष्ट्रभाषा हिंदी को ही अपनाएँ और हिंदी के माध्यम से हम आगे बढ़ें क्योंकि विश्व के अनेक बड़े राष्ट्र, अनेक वैश्विक स्तर की दीर्घा में अपनी शासकीय भाषा का ही प्रयोग करते हैं। जब यूरोपीय देश बड़े मंच पर अपनी शासकीय भाषा में प्रस्तुति करते हैं तो उनकी न तो अवहेलना की जाती है और न ही उनकी प्रतिभा को किसी ने कम आँका, तो हम पीछे क्यों? नई शिक्षा नीति 2020 में यह एक स्वर्णिम अवसर है कि उसमें हमारी भारतीय भाषाओं के प्रति उत्कर्ष व उत्थान को ध्यान में रखते हुए प्रारंभिक शिक्षा को मातृभाषा से जोड़ा गया है। वहीं दूसरी ओर केंद्रीय भाषा हिंदी रखी गई है, जबकि बालक मिडिल स्टेज में आकर विदेशी भाषा भी सीख सकेगा यह उसके लिए विषय चुनने का स्वतंत्र अधिकार रहेगा। हमारी प्राचीन और सनातन भारतीय संस्कृति, इतिहास, भारतीय विज्ञान चिकित्सा और भारतीय विचारों की परंपरा समर्थ बनेगी। और इस प्रकार की नीति तैयार होगी कि हमे भारत को भाषा के स्तर पर जानने का पूरा–पूरा अवसर मिलेगा। अर्थात् हम 'द लैंग्वेजेज ऑफ इंडिया' के माध्यम से अपने भारत को जानेंगे और समझेंगे। विश्व के पटल पर हमारे भारत की समस्त भाषाओं के माध्यम से हम अपने भारत को गौरवान्वित करेंगे।

शिक्षा नीति 2020(4.15) में प्रस्तुत ड्राफ्ट में भारतीय भाषाओं के संबंध में सशक्तिकरण के संबंध में यह स्पष्ट कहा गया है– "जैसा कि दुनिया भर के कई विकसित देशों में यह देखने को मिलता है कि अपनी भाषा संस्कृति और परंपराओं में शिक्षित होना कोई बाधा नहीं है, बल्कि वास्तव में शैक्षिक सामाजिक और तकनीकी प्रगति के लिए इसका बहुत बड़ा लाभ ही होता है। भारत की भाषाएँ दुनिया में सबसे समृद्ध, सबसे वैज्ञानिक, सबसे सुंदर और सबसे अधिक अभिव्यंजनात्मक भाषा में से हैं, जिनमें प्राचीन और आधुनिक गद्य और कविता दोनों के विशाल भंडार हैं इन भाषाओं में लिखी गई फिल्म, संगीत और साहित्य भारत की राष्ट्रीय पहचान और धरोहर है। सांस्कृतिक और राष्ट्रीय एकीकरण की दृष्टि से भी सभी युवा भारतीयों को अपने देश की भाषाओं के विशाल और समर्थ भंडार और उनके साहित्य के खजाने के बारे में जागरूक होना चाहिए। हम अपने देश की भाषाओं को समृद्ध बनाएँगें तो हमारे देश की समृद्धि हमारी संस्कृति और हमारी प्राचीन परंपरा अक्षुण्ण रहेगी। हमारे देश की संस्कृति और परंपरा हमारी शिक्षा से जुड़ेगी और हम अपने शैक्षणिक, सामाजिक विकास के साथ–साथ विश्व की तकनीकी होड़ में भी बराबर आएँगे और हमारे देश की भाषाओं के माध्यम से विश्व पटल पर हम अपने देश को समर्थ बनाएँगे। अतः 'द लैंग्वेजेज ऑफ इंडिया' के संबंध में 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' की झलक संपूर्ण विश्व को देखने के लिए मिलेगी।

निष्कर्ष में स्पष्ट है कि हमारा भारत देश विशाल भू–भाग वाला देश है भारत के दस राज्यों में मूलतः शासकीय व मातृभाषा के रूप में हिंदी ही मुख्य भाषा है। समस्त भारत में यदि हम अपनी भारतीय भाषाओं से शिक्षा ग्रहण करते हैं तो हम हमारे देश की भाषाओं का व्याकरणिक ज्ञान, भारतीय भाषाओं का शास्त्रीय महत्व और भारतीय भाषाओं की शब्दावली के स्रोतों का अध्ययन करते हुए अपने देश की भाषाओं को सशक्त और विश्व के मानचित्र पर समृद्ध बनाएँगे। हमें 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' को भाषा के स्तर पर जानने का सुनहरा अवसर प्राप्त होगा। और हम अपने देश की शैक्षणिक गतिविधियों के माध्यम से अपने भारत की एकता और सुंदर सांस्कृतिक विरासत को आजीवन बचाकर

रख सकते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020(4.17) ड्राफ्ट में यह कहा गया है– "भारत की शास्त्रीय भाषा और साहित्य के महत्व, प्रांसगिकता और सुंदरता को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। संस्कृत, संविधान की आठवीं अनुसूची में वर्णित एक महत्वपूर्ण आधुनिक भाषा होते हुए भी, इसका शास्त्रीय साहित्य इतना विशाल है कि सारे लैटिन और ग्रीक साहित्य को भी यदि मिलाकर इसकी तुलना की जाए तो भी इस की बराबरी नहीं कर सकता।" यह कथन हम भारतीयों को मानसिक स्तर पर प्रतिबद्ध करता है कि हमारे देश की शास्त्रीय भाषा संस्कृत जिसको सामान्यतः हमने तृतीय भाषा के रूप में ही या अन्य भाषा के रूप में ही उसे अपने अध्ययन–अध्यापन में प्रयोग किया है, जबकि हिंदी के साथ संस्कृत को हमारे देश की प्राथमिक या प्रथम भाषा के रूप में अध्ययन करना चाहिए था क्योंकि जो भाषा विश्व के स्तर पर सबसे बड़ी और समृद्ध भाषा है, वह अपने ही देश में गौण हैं, यह चिंतनीय है। अतः संस्कृत में गणित, दर्शन, व्याकरण, संगीत, राजनीति, चिकित्सा, वास्तुकला, धातु विज्ञान, नाटक, कविता और कहानियों इत्यादि का विपुल भंडार है। इसके साथ–साथ वेद, उपनिषद, पुराण, ऋचाएँ अन्य ग्रंथ संस्कृत साहित्य से भरे पड़े हैं। इनको जानने और समझने का अवसर हमें प्राप्त होगा। नई शिक्षा नीति में हमें हमारी भारतीय भाषाएँ संस्कृत , मलयालम, तेलुगु, कन्नड, बांग्ला इत्यादि प्रादेशिक भाषाओं को जानने का अवसर प्राप्त होगा। जो हमारे भारत के स्वर्णिम भविष्य की उन्नति और देश की बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में शामिल होने के लिए एक बड़ी पहल है। भारतीय शिक्षा पद्धति पर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने कहा था– "हृदय की कोई भाषा नहीं है, हृदय–हृदय से बातचीत करता है और हिंदी हृदय की भाषा है।" गांधी जी के इस कथन से हम स्पष्ट कह सकते हैं कि बालकों की हृदय की भाषा उसकी मातृभाषा होती है, यदि बालक मातृभाषा में शिक्षण करते हैं तो उनमें दुगुना उत्साह होता है। अतः नई शिक्षा नीति में इसी उत्साह को ध्यान में रखते हुए बाल संवेदना को उकेरा गया है। बालकों का यह उत्साह उसे आँगनबाड़ी की ओर अग्रसर करेगा और शिक्षण में रुचि पैदा करेगा। यही बालक जब विद्यालय में आएँगें तो उन्हें विद्यालय के वातावरण में हिचकिचाहट नहीं होगी क्योंकि सभी आँगनबाड़ियाँ भी विद्यालय से जुड़ी रहेंगी जिससे आँगनबाड़ियों के बालकों को विद्यालय के विभिन्न बाल आयोजनों में समय–समय पर आमंत्रित किया जाएगा, जिससे वे विद्यालय के शिक्षकों और बालकों से मिलते रहेंगे। विद्यालय में बालकों को कक्षा 3 से कक्षा 5 तक अध्ययन में भी उनकी मातृभाषा का शिक्षण उन्हें प्रोत्साहित करेगा। अतः बालक का भविष्य उन्नत व स्वर्णिम होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति– 2020 द्वारा मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार (प्रस्तुत रिपोर्ट)

2. दीक्षा ऐप शैक्षणिक कार्यक्रम– नैशनल इनिशिएटिव फॉर स्कूल हेड्स एंड टिचर्स होलिस्टिक अडवांसमेंट (निष्ठा)

3. द डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर फॉर नॉलेज शेयरिंग– दीक्षा एप के शैक्षणिक प्रशिक्षण कार्यक्रम, दिल्ली और सीबीएसई

4. भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची द्वारा ल्यूसेंट सामान्य ज्ञान– ल्यूसेंट पब्लिकेशन पटना

5. डी एन ए– नई शिक्षा नीति का संपूर्ण विश्लेषण द्वारा ज़ी न्यूज़ 29 जुलाई 2020

6. नीति कहाँ है नई शिक्षा नीति की? –एन डी टीवी

7. बदल जाएगा एजुकेशन सिस्टम हो जाएँगे कई बदलाव– आज तक

– प्रवक्ता–हिंदी, राजकीय सह शिक्षा विद्यालय, पश्चिम विहार, दिल्ली

❑❑❑

नई शिक्षा नीति त्रिपुरा के जनजातियों के जीवन में अमूल्य परिवर्तन लेकर आएगी

डॉ. बीना देवबर्मा

मानव के सर्वांगीण विकास का मूल तत्व शिक्षा है। शिक्षा के बिना मनुष्य का मानसिक विकास हो पाना असंभव सा जान पड़ता है। आज मनुष्य के जीवन में शिक्षा का महत्व इतना ज्यादा बढ़ गया है कि हर कोई एक दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा करने लगा है। नई शिक्षा नीति हाल ही में भारत सरकार द्वारा भारत में लाई गई है। जहाँ विद्वानों और समालोचकों द्वारा भिन्न–भिन्न मत दिए गए हैं। साथ ही यह भी कहा गया है कि शिक्षा से दूर और शैक्षणिक गतिविधियों से पिछड़े लोगों को यह नीति किसी प्रकार का लाभ व राहत प्रदान नहीं करती है। 2020 में भारत सरकार के द्वारा नई शिक्षा नीति 2020 नाम से 29 जुलाई, 2020 को घोषित की गई है। भारत में प्रथम शिक्षा नीति 1986 में जारी हुई थी। इस नई शिक्षा नीति के द्वारा देश में विद्यालयों एवं उच्च शिक्षा में सुधार और परिवर्तन की बहुत सी अपेक्षाएँ की गई हैं। इसके अंतर्गत '2030' तक विद्यालयों की शिक्षा में 100 / जीईआर के साथ–साथ पूर्व विद्यालय से माध्यमिक स्तर तथा शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लक्ष्य को शामिल करने की बात कही गई है।

नई शिक्षा नीति के माध्यम से प्रारंभिक शिक्षा जो कि बच्चों को मातृभाषा में देने की बात कही गई है यह वास्तव में प्रशंसनीय है। विश्व में आज हर कोई अपनी मातृभाषा के प्रति जागरूक हो रहा है और विलुप्त होती जा रही भाषाओं को बचाया जा सकता है। मैं यहाँ खासतौर से जनजातियों के बीच बोली जाने वाली भाषा के बारे में बात करना चाहूँगी। कॉकबरक भाषा त्रिपुरा के स्थानीय जनजातीय लोगों में सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है। त्रिपुरा राज्य के विद्यालयों में बहुत ही कम शिक्षा कॉकबरक भाषा में दी जाती है। किंतु टीटीएएडीसी एरिया के स्कूलों में कॉकबरक भाषा में कक्षा पाँचवी तक की पढ़ाई होती है। परंतु यह प्रत्येक स्कूल में नहीं होता। कई स्कूलों में केवल एक ही विषय कॉकबरक भाषा में पढ़ाया जाता है। नई शिक्षा नीति के अंतर्गत स्कूलों के बच्चों में अपनी संस्कृति, कला और भाषाओ के प्रति प्रेम और जागरूकता पर भी बल दिया गया है। आवश्यकता सिर्फ इस बात की है कि लोगों को नई शिक्षा नीति के बारे में पूर्ण जानकारी देना भी बहुत ही जरूरी है। विशेष रूप से उन क्षेत्रों में नई शिक्षा नीति के बारे में जानकारी पहुँचना चुनौतीपूर्ण हो जाता है, जहाँ लोग शिक्षा से कोसों दूर हैं। हमें कक्षा बारहवीं+दसवीं की जगह अब 5+3+3+4 की जो नई पाठ्यक्रम संरचना लागू की जाएगी, उसको विस्तृत तरीके से गाँवों में रह रहे विद्यार्थियों और अभिभावकों को समझना आवश्यक है। कारण अभी भी त्रिपुरा के अधिकांश कस्बों और गाँवों में शायद लोग नई शिक्षा नीति के बारे में सुन तो चुके होंगे पर नई शिक्षा नीति के भीतर आखिर है क्या? इस को समझ नहीं पाए हैं। जिस कारण विद्यार्थियों व अभिभावकों के बीच

भाषा ISSN 0523-1418

इस नीति को लेकर गलतफहमी जैसी भावनाएँ देखने व सुनने को मिल रही हैं। 5+3+3+4 के तहत तीन से आठ, आठ से ग्यारह, ग्यारह से चौदह और चौदह से अठारह वर्ष के उम्र वाले बच्चों को शामिल किया गया है। साथ ही तीन से छह वर्ष के उम्र वाले बच्चों को शिक्षा के साथ जोड़कर, उनके मानसिक विकास को गति देने की भी बात कही गई है। साथ ही हमारा यह भी कर्तव्य हो जाता है कि इस नई शिक्षा नीति के बारे में यदि हमें विस्तृत जानकारी है, तो हमें दूसरों को इसके बारे में सही जानकारी देनी चाहिए। ताकि हमारे संपर्क में जो लोग रह रहें हैं, वह इस नीति को जान व समझ सकें।

मै यहाँ यही कहना चाहती हूँ कि नई शिक्षा नीति की जो रूपरेखा तैयार की गई है, उसका अनुवाद भी हर भाषा में करवाया जाना चाहिए। ताकि लोग ज्यादा से ज्यादा इस नीति को समझ सके। भारत देश के हर नागरिक को न तो अंग्रेजी पढ़ना आता है और न ही हिंदी। कम से कम कक्षा प्री स्कूलिंग के साथ कक्षा बारहवीं तक की शिक्षा और उसके साथ ही तीन साल की आँगनवाड़ी का जुड़ा हुआ होना, लोगों को यह समझाना भी आवश्यक है। अभी कुछ दिन पहले जब मैं अपने गाँव गई थी बिलोनिया तुईसामा, जो की दक्षिणा त्रिपुरा में है। मैंने वहाँ एक पाँच वर्ष की बच्ची को देखा, तो पूछा कि स्कूल जाती हो कि नहीं? बच्ची की माँ ने उत्तर दिया अभी बहुत छोटी है अगले वर्ष भर्ती करवा दूँगी। बच्ची की माँ मेरी परिचित है। वह पाँचवी तक ही पढ़ी है। शिक्षित नहीं है और पढ़ाई के बारे में ज्यादा कुछ नहीं जानती शायद। खासतौर से ऐसे अभिभावकों को समझाना और ज्यादा जरूरी हो जाता है जो स्वयं पढ़ाई–लिखाई नहीं जानते हैं या फिर पढ़ाई के बारे में ज्यादा कुछ नहीं जानते हैं।

मेरा मानना है कि यह नीति जनजातियों के लिए भी सकारात्मक नीति होगी, कारण मातृभाषा के द्वारा शिक्षा प्राप्त कर अपने समाज, संस्कृति, रीति–रिवाजों को तो विकसित करने का अवसर मिलेगा ही साथ ही ऐसी भाषाएँ जो लुप्त हो रही हैं या फिर जो भाषा अपनी अस्मिता व अस्तित्व के लिए सदा संघर्ष करती रही है, ऐसी भाषाओं को पहचान मिलेगी। भारत में लगभग 1635 भाषाएँ प्रचलित हैं। जिसमें लगभग 197 भाषाओं को यूनेस्को ने संकटग्रस्त भाषा घोषित किया है। नई शिक्षा नीति के अंतर्गत मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त करने से हर संकटग्रस्त भाषा को नया जीवन मिलेगा ऐसा मेरा विश्वास है। आज त्रिपुरा में बोडचेर, चाईमल, और कोर जनजातियों की भाषाएँ विलुप्त होने की कगार पर हैं। इन भाषाओं को बोलने वाले कुछ गिने–चुने लोग ही आज बचे हुए हैं। यदि नई शिक्षा नीति के तहत इन भाषाओं को बचाने की कोशिश की जाती है तो निश्चित रूप से यह भाषा बची रहेगी अन्यथा लुप्त हो जाएगी।

त्रिपुरा में ऐसे कई जनजातीय क्षेत्र हैं, जहाँ लोगों का शिक्षा से बहुत ही कम वास्ता है या फिर वह चौथी–पाँचवी कक्षा तक शिक्षा प्राप्त कर आगे की पढ़ाई–लिखाई छोड़ देते हैं। इसके कई कारण हैं, जैसे– गरीबी, विद्यालयों का घर से दूर होना, गाँव में बिजली न होना आदि। पहाड़ी इलाकों में बसने वाले लोगों का घर एक दूसरे से दूर–दूर है। जिस कारण उन्हें स्कूलों में दल बनाकर जाने में भी असुविधा महसूस होती है। फिर सुरक्षा आदि के प्रश्नों के चलते उन्हें आगे की पढ़ाई छोड़नी पड़ती है। इसका मुख्य उदाहरण है दलाई त्रिपुरा, दक्षिण त्रिपुरा और उत्तर त्रिपुरा इन जिलों में भी टीटीएएडीसी क्षेत्रों में ज्यादा इस तरह की समस्याओं से लोगों को जूझते हुए हम देख सकते हैं। जहाँ जनजातियों का निवास है। मुझे लगता है कि नई शिक्षा नीति के नियमों के लागू होने से इन क्षेत्रों के बच्चों को शिक्षा से जोड़ पाएँगें और बच्चे सामान्य शिक्षा को आत्मसात् कर सकेगें। विद्यालयों में जाकर मिड–डे–मील की प्राप्ति तक सीमित न रहकर शिक्षा बच्चों की मानसिक चेतना को विकसित कर सर्वांगीण विकास के लिए भी उपयोगी होगा, ऐसा मुझे लगता है। साथ ही हमें यह भी देखना होगा कि क्या जनजातियों में बच्चों और अभिभावकों की समस्याएँ सिर्फ भोजन ही हैं या फिर और कुछ भी हैं। स्कूल में जाकर उन्हें एक वक्त का भोजन

तो मिलता है किंतु जो स्कूलों में पढ़ाए गए पाठ्यक्रम हैं क्या उसे घर आकर फिर से सही तरीके से उन्हें गाइड करने वाला है। इन सभी बातों का जिक्र मैं यहाँ इसलिए कर रही हूँ ताकि नई शिक्षा नीति के तहत जो सुविधाएँ जनजातियों व पिछड़े जातियों के लिए मुहैया कराई गई हैं, वह सही ढंग से उन तक पहुँच जाए। साथ ही नई शिक्षा नीति का सही तरह से लागू होना और आम जनता तक सही ढंग से पहुँचना भी आवश्यक है। कारण जनजातीय ग्रामीण क्षेत्रों में परिवार के आर्थिक संकटों के चलते बच्चे बीच में ही पढ़ाई–लिखाई छोड़कर माता–पिता की मदद के लिए खेती करने लग जाते हैं।

त्रिपुरा के तिपरासा समाज में आज लोगों में नई चेतना व जागरूकता की भावना पहले की अपेक्षा बहुत ही ज्यादा देखने को मिलती है। आज की पीढ़ी किसी भी नई चीज को बहुत तेजी के साथ सीख लेती हैं और आगे बढ़ने में विश्वास करती हैं। किंतु उचित दिशा और मार्ग दिखाने वाला भी होना आवश्यक है। इसलिए मैं यहाँ कहना चाहूँगी कि भारत सरकार के द्वारा जिस नई शिक्षा नीति को लागू किया गया है वह देश के हर उस कोने तक पहुँच जाए जिससे हर कोई लाभान्वित हो। मेरा मानना है कि केवल पिछड़े वर्ग को ही इससे लाभ नहीं मिलेगा बल्कि देश के हर नागरिक को लाभ मिलेगा। बस हर चीज़ हर जगह सही ढ़ंग से व सही समय पर पहुँचनी चाहिए।

मैं त्रिपुरा के जनजातीय समाज के बारे में ही नहीं बल्कि हर उन अभिभावकों के बारे में कहना चाहूँगी कि जिनके बच्चे स्कूल जा रहे हैं या जाने वाले हैं या फिर नहीं जा रहे हैं। ऐसे अभिभावकों को नई शिक्षा नीति के बारे में जानकारी देना आवश्यक है। कभी–कभी शिक्षा के प्रति उदासीनता भी इसका एक कारण हो सकता है कि अभिभावक बच्चों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए ज्यादा जोर नहीं देते हैं। त्रिपुरा के तिपरासा समाज के अभिभावकों और विद्यार्थियों को लगता है कि कक्षा एक से लेकर कक्षा नवीं तक तो वे मेहनत करके पास हो जाते हैं किंतु दसवीं पास करना बहुत ही कठिन हो जाता है। जो दसवीं कक्षा में फ़ेल हो जाते हैं उन्हें आगे की पढ़ाई के साथ जोड़ना है न कि पढ़ाई के नाम से भय पैदा करना है। मुझे ऐसा लगता है कि नई शिक्षा नीति के तहत त्रिपुरा का तिपरासा समाज भी इससे लाभान्वित होगा। यहाँ के बच्चों में शिक्षा के प्रति रुचि जागेगी। उनका भविष्य उज्ज्वल होगा।

– सहायक प्राध्यापिका, हिंदी विभाग, रामठाकुर कॉलेज, अगरतला, त्रिपुरा

❑❑❑

नई शिक्षा नीति और भारतीय भाषाओं में अंतर्संबंध

अखिलेश आर्येन्दु

शिक्षा और मातृभाषा

केंद्र सरकार द्वारा नई शिक्षा नीति लागू किए जाने के बाद इसे शिक्षा के क्षेत्र में एक बड़ा बदलाव माना जा रहा है। शिक्षा नीति में जहाँ नर्सरी से लेकर इंटर तक की शिक्षा और व्यवस्था में परिवर्तन किया गया है वहीं पर, उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भी बदलाव किया गया है। नई शिक्षा नीति में शिक्षा संसाधन नहीं, बल्कि मानव के विकास का माध्यम माना गया है। स्वदेशी, स्वावलंबन, संस्कार, सुचिता, सेवा और साधना सभी को सम्मिलित करके इसे अद्यतन की आवश्यकता के अनुसार बनाया गया है। विदेशी भाषा को स्वैच्छिक बना दिया गया है और कक्षा पाँचवी तक मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषा पढ़ने के लिए अनिवार्य कर दिया गया है। इससे जहाँ अंग्रेजी का वर्चस्व समाप्त करने में सहायता मिलेगी, वहीं पर फ्रेंच, चाइनीज और अन्य विदेशी भाषाओं को भी पढ़ने पर बल दिया गया है। स्पष्ट है, अंग्रेजी का विकल्प पाठ्यक्रम में मजबूती के साथ सम्मिलित करने पर बल दिया गया है। एक ओर जहाँ शिक्षा को तार्किक, प्रासंगिक, उपयोगी, मौलिक और नवीन बनाया गया है, वहीं पर बौद्धिक, सामाजिक, शारीरिक, भावात्मक और नैतिक क्षमताओं को एकीकृत तौर पर विकसित करने और उसे महत्वपूर्ण बनाने की ओर भी ध्यान दिया गया है।

नई शिक्षा नीति में तीन भाषाओं को छात्र को सीखने के लिए अनिवार्य किया गया है। आँचलिक, मातृभाषा और एक विदेशी भाषा को पाठ्यक्रम में सम्मिलित कर दूर दृष्टि का परिचय दिया गया है। साथ ही, भारतीय भाषाओं को सीखने–सिखाने और उन्हें महत्वपूर्ण मानने पर बल दिया गया है। शिक्षा के लिए भाषा आधार है। भाषा को लेकर नई शिक्षा नीति में स्वदेशी को बढ़ावा देने पर बल देना, इस बात का द्योतक है कि देश का गौरव स्वदेशी में ही निहित है। बढ़ती तकनीक और प्रौद्योगिकी को ध्यान में रखते हुए 'ऑर्टिफिशियल इंटेलिजेंस सॉफ्टवेयर' के उपयोग को अनिवार्य बनाना भी आधुनिकता की आवश्यकता के साथ पुरातन को समझने की आवश्यकता में सामंजस्य बिठाने का प्रयास भी कम सराहनीय नहीं है।

भारतीय जीडीपी का 6 प्रतिशत नई शिक्षा नीति के लिए देना भी सरकार की स्वस्थ मानसिकता को ही दर्शाता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि शिशुओं से लेकर नौजवानों तक को शिक्षा की आवश्यकता, उपयोगिता और क्षमता (प्रतिभा) को विकसित करने का अवसर समग्र नीति में द्रष्टव्य होता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है शिक्षा को 'केवल डिग्री' से बाहर निकालकर 'ज्ञान और सेवा' की ओर लगाया गया है। इसी प्रकार मातृभाषा और अन्य भारतीय भाषाओं को सीखने की उत्सुकता जागृत करने का कार्य भी नई शिक्षा नीति का एक महत्वपूर्ण भाग है। ये कुछ बातें हैं, जो नई शिक्षा नीति को महत्वपूर्ण, उपयोगी और सर्वहितकारी बनाती हैं।

नई शिक्षा नीति में मातृभाषा के साथ–साथ अन्य भारतीय भाषाओं को सीखने और उनके अंतर्संबंधों को समझने पर भी बल दिया गया है। आज रोजगार में लगे और आज के भाग–दौड़ भरे जीवन में भाषा के प्रति लोगों में वैसा आकर्षण नहीं है, जिससे उनमें देश को समझने के लिए उत्सुकता पैदा हो। स्पष्ट है बिना आँचलिक भाषाओं और क्षेत्रीय भाषाओं को सीखे भारत की गौरवमयी संस्कृति, कला, अध्यात्म, समाज और लोकसाहित्य को नहीं समझा जा सकता है। नई शिक्षा नीति में अन्य भारतीय भाषाओं को पढ़ने–पढ़ाने, उनके प्रति सम्मान पैदा करने की ओर भी ध्यान दिया गया है। प्राथमिक कक्षा से लेकर परास्नातक या उससे बड़ी शिक्षा जिस भाषा में दी जाती है, वह भाषा उसके जीवन के विकास का मानक बन जाती है। इस लिहाज से स्वदेशी भाषाओं पर अत्यधिक बल देना शिक्षा नीति की दूरगामी सोच का ही परिणाम है। स्पष्ट है शिक्षा में आदर्श स्थिति को प्राप्त करने के लिए मातृभाषा और आँचलिक भाषा का ज्ञान होना ही आवश्यक नहीं है, अपितु वह शिक्षा प्राप्त करने का आधार भी बनें, यह भी महत्वपूर्ण है।

बढ़ते इंटरनेट(सोशल मीडिया) की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए मातृभाषा में ई–पाठ्यक्रम को विकसित करने का कार्य नई शिक्षा नीति में कम महत्वपूर्ण नहीं है। इससे आधुनिक ज्ञान–विज्ञान और अन्य सभी पाठ्यक्रम की सामग्री सुगमता से सभी को उपलब्ध हो जाएगी। ई–पाठ्यक्रम मातृभाषा में उपलब्ध करना नई सोच–समझ को महत्व देना है। व्यावसायिक शिक्षा में प्रशिक्षण का पाठ्यक्रम आत्मनिर्भरता को प्रोत्साहित करने का महत्वपूर्ण कदम माना जाना चाहिए। और ये व्यावसायिक पाठ्यक्रम छात्र की मातृभाषा में हों, यह उससे भी महत्वपूर्ण है। सबको उच्च शिक्षा और सार्थक शिक्षा उपलब्ध हो, शिक्षा की इस नई नीति को अपनाकर प्राप्त करने का लक्ष्य अत्यंत उपयोगी और महत्वपूर्ण है।

नई शिक्षा नीति में अंतर्भाषाई संबंध

नई शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं को महत्व ही नहीं दिया गया है, अपितु उनकी शिक्षा, संस्कार और लोक व्यवहार में उपयोगिता और सार्थकता को भी महत्व दिया गया है। नए युग में जबकि भारत में अंग्रेजी का एकल प्रदर्शन और एकल साम्राज्य स्थापित हो गया है, ऐसे में हिंदी सहित अन्य भारतीय भाषाओं के अंतर्संबंधो को समझने और उसे उपयोगी बनाने की पहल स्वदेशी और स्वावलंबन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। पिछले तीस वर्षों में भारत सहित विश्व में अनेक स्तरों पर अनेक परिवर्तन आए हैं। भूमंडलीकरण के कारण लोगों की सांस्कृतिक, भाषाई और देशज सोच में बदलाव आए हैं। भारतीय समाज में इस बदलाव का असर कहीं अधिक देखा जा रहा है। जिससे लोगों में मूल्यों से अधिक सुख–सुविधाओं के प्रति कहीं ज्यादा मोह बढ़ा है। पैसा जीवन का पर्याय बन गया है। सांस्कृतिक और भाषाई चेतना धीरे–धीरे बदलती या गायब होती दिखाई पड़ रही है। ऐसे में सांस्कृतिक और भाषाई चेतना को लेकर संकट महसूस होना स्वाभाविक है।

जिस प्रकार से संस्कृतियों का वर्षों से अंतर्संबंध रहा है, उसी तरह से भाषाओं का अंतर्संबंध भी रहा है, लेकिन इस अंतर्संबंध को हमने कभी गहराई से समझने का प्रयत्न किया ही नहीं। यही कारण है हम एक देश में रहते हुए भी आँचलिकता और अदूरदृष्टिता के संकीर्ण खूँटे में बँधे रहे और इसी को उपयुक्त समझते रहे। इस संकट को महर्षि दयानंद और महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता के बहुत पहले ही समझ लिया था। इतना ही नहीं, अंग्रेजी के सम्मोहन में बँधे भारतीयों की मनःस्थिति का अनुभव भी कर लिया था। अंग्रेजी का खतरा केवल हिंदी के लिए ही नहीं अपितु भारतीय भाषाओं पर ही है। गांधी कहते हैं– "आप और हम चाहते हैं कि करोड़ों भारतीय आपस में अंतर्प्रांतीय संपर्क कायम करें। स्पष्ट है कि अंग्रेजी के द्वारा दस पीढ़ियाँ गुजर जाने के बाद भी हम परस्पर संपर्क स्थापित न कर सकेंगे।" स्पष्ट है सात दशक व्यतीत हो जाने के बाद भी गांधी द्वारा महसूस किया गया भाषाई संकट पहले से कहीं अधिक गहरा हो गया है। हम भले ही इसे राजनीतिक षडयंत्र या स्वार्थ का परिणाम बताएँ, लेकिन सच

यह भी है कि हिंदी और हिंदीतर भाषाओं का आपसी भाईचारा कायम करने में यह सबसे बड़ा बाधक रहा है। अब जबकि हिंदी का संकट अन्य कई तरह से हमारे सामने द्रष्टव्य होने लगा है, भारतीय भाषाओं का आपसी भाईचारे का मुद्दा गौण होता जा रहा है। ऐसे में डॉ. रामविलास शर्मा का यह कथन कितना प्रासंगिक हो जाता है– "हिंदी अंग्रेजी का स्थान ले, इसकी बजाय यह वातावरण बनाना चाहिए कि सभी भारतीय भाषाएँ अंग्रेजी का स्थान लें" स्पष्ट है नई शिक्षा नीति में इन्हीं मुद्दों को ध्यान में रखते हुए हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं के विकास पर ध्यान दिया गया है।

हिंदी की व्यापकता का दायरा उसके संग्रहणीयता और उदारता के कारण है। यही कारण है कि देश के प्रत्येक अंचल में हिंदी उस आँचलिक भाषाई मिठास के रूप में उपस्थित है। लेकिन यह मिठास तब खटास में बदल जाती है जब इसमें अंग्रेजी की घृणात्मकता का तथाकथित विकास, भूमंडलीकरण और उदारीकरण के नाम पर मिलाई जा रही कृत्रिमता उसकी मौलिकता और नवीनता को खत्म करने का कार्य करने लगती है। स्पष्ट है, हिंदी में उदारता के नाम पर उसकी मौलिकता, नवीनता और सृजनात्मकता को धूमिल किया जा रहा है। हिंदी भारतीय भाषाओं की मिठास, नवीनता और सृजनात्मकता' की पावन पवित्रता से वंचित होती जा रही है। इसे इस रूप में भी हम समझ सकते हैं कि हिंदी अंग्रेजी की अवैज्ञानिकता, दबंगई और विचित्रात्मकता के कारण 'हिंग्लिष' के रूप में अपना स्वभाव खोती जा रही है और 'निर्मित' होने की जगह खंडहर में बदलती जा रही है। आवश्यकता है भारतीय भाषाओं के शब्दों, शैलियों और सांस्कृतिक चेतना से लबरेज होकर हिंदी अधिक सहज और संग्रहणीय बने, लेकिन हो रहा है इसका ठीक उल्टा। इससे हिंदी के साथ अन्य भारतीय भाषाओं के अंतर्संबंध बढ़ने और गहरे होने के स्थान पर दुरूह होते जा रहे हैं। जिस पर दृष्टि डालने की आवश्यकता है।

भारत सांस्कृतिक विविधता के साथ ही साथ भाषाई विविधता वाला देश है। कोस–कोस पर बदले पानी चार कोस पर बदले वाणी की कहावत इसी परिप्रेक्ष्य में प्रचलित रही है। अनेक बदलावों के बाद भी आज भारत की सांस्कृतिक और भाषाई विविधता अपने मूल स्वरूप में कायम दिखती है। जब हम भाषाई विविधता की बात करते हैं तो, हमारे सामने भारत में बोली जाने वाली प्रादेशिक भाषाओं की बात ही नहीं आती, बल्कि सैकड़ों की तादाद में बोली जाने वाली बोलियाँ भी इसमें सम्मिलित होती हैं। भारतीय संस्कृति और समाज के विकास में किसी के योगदान को नकारा नहीं जा सकता है। हमारे लिए जितनी महत्वपूर्ण हिंदी है उतनी ही तमिल, तेलुगु, कन्नड, पंजाबी, डोगरी, बोडो, मलयालम, बांग्ला, असमिया, मराठी और कश्मीरी है। यदि हिंदी राजभाषा और राष्ट्रभाषा रूपी गंगा की धारा है तो अन्य प्रादेशिक भाषाएँ भी कावेरी, सतलुज और ब्रह्मपुत्र की धाराएँ हैं। जैसे सभी नदियाँ बहते हुए समुद्र में मिलकर एक हो जाती हैं, उसी तरह से भारत की सभी भाषाओं का मिलन भी निरंतर होता रहता है। सुब्रह्मण्यम भारती ने कभी कहा था– "भारत माता भले ही 18 भाषाएँ (अब 22 हो गई हैं) बोलती हों, फिर भी उसकी चिंतन प्रक्रिया एक ही है।"

आज भूमंडलीकरण का दौर है। भाषा–संस्कृति की महत्ता बाजारवाद के आगे दबती दृष्टिगोचर हो रही है। लेकिन इस बात को नहीं नकारा जा सकता कि भारतीय भाषाओं के अंतर्संबंध तथा भारतीय संस्कृति की विराटता आज कहीं पहले से अधिक महत्व के हो गए हैं। अपनी पहचान के लिए हमें हर हाल में, इस संबंध को समझना और जीना होगा। बिना इसके भारतीयता का कोई अर्थ नहीं रह जाता है। इन्हीं से हमारी पहचान है। हिंदी छह दशक पहले इस देश की राजभाषा बनी थी, लेकिन राष्ट्रभाषा कब बनेगी, इस पर कोई न तो राजनेता बोलने की स्थिति में हैं न तो हिंदी के ध्वजवाहक ही। यह जानते हुए भी कि हिंदी को भारत की पहचान के लिए जीवित रहना ही नहीं, मुखर रहना भी आवश्यक है। और

हिंदी न तो बिना भारतीय भाषाओं के सहयोग से जीवित रह सकती है और न भारतीय भाषाएँ हिंदी के बिना जीवित रह सकती हैं। सदियों से हिंदी और भारतीय भाषाओं का जो अंतर्संबंध रहा है, वह सहोदर बहनों की तरह रहा है। कन्याकुमारी से लेकर कश्मीर तक भारत को एकता के सूत्र में बाँधने का कार्य यदि किसी भाषा ने किया तो, वह हिंदी है। इसलिए हिंदी किसी भारतीय भाषा के लिए खतरा बनेगी, प्रश्न ही नहीं उठता है। हिंदी और भारतीय भाषाओं को खतरा तो अंग्रेजी और 'हिंग्लिश' से है। इसलिए समय की आवश्यकता को समझते हुए प्रत्येक देशवासी को हिंदी या भारतीय भाषाओं के संबंधों पर सवाल न उठाकर अंग्रेजी की बढ़ती एकाधिकारिता पर सवाल उठाने चाहिए और इससे सावधान रहना चाहिए। अब समय आ गया है कि हिंदीतर भाषी प्रदेशों को नए सिरे से हिंदी प्रदेशों के अपने संबंधों पर विचार–विमर्श करना चाहिए।

भाषा के बिना न तो किसी देश की कल्पना की जा सकती है और न तो किसी समाज की ही। इसलिए भाषा की उपेक्षा का मतलब स्वयं अपने अस्तित्व को ही नकारना है। जैसे विविधताओं के बीच भी सांस्कृतिक आदान–प्रदान कभी नहीं रुकता, इसी तरह भाषाई विविधता के होते हुए भी भाषाओं के मध्य आदान–प्रदान नहीं रुकता। वह चाहे भाषाई संस्कृति के रूप में हो, या व्याकरणिक रूप में अथवा वचनात्मक रूप में हो। भाषाओं के अंतर्संबंध को न तो रोका जा सकता है और न तो समाप्त ही किया जा सकता है।

हिंदी हमारे देश की राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित है। स्वतंत्रता के पहले भी यह संपर्क भाषा के रूप में प्रयोग की जाती रही है। यही कारण है कि हिंदी के अनेक शब्द, क्रियापद और संज्ञाएँ भारत की अनेक प्रांतीय भाषाओं में उसी अर्थ में या दूसरे अर्थ में मिल जाते हैं। इतना ही नहीं, हिंदी की सहजता, वैज्ञानिकता और रागात्मकता भी भारत की प्रांतीय भाषाओं में मिल जाती है। यह सब सहज रूप से हुआ है। हिंदी का महत्व हिंदीभाषियों के लिए जितना है, उससे कहीं अधिक गैर हिंदी भाषियों के लिए है। वह हिंदी को उसके शुद्धात्मक रूप में अपनाने का कहीं अधिक प्रयास करता है।

हिंदी न किसी एक प्रांत की भाषा रही है और न तो किसी जाति, वर्ग या क्षेत्र विशेष की भाषा रही है। हिंदी बहती नदी की धारा की तरह सबके लिए उपयोगी और कल्याणकारी रही है। यही कारण है हिंदीतर भाषा–भाषी क्षेत्रों के हिंदी उन्नायकों ने हिंदी को जन भाषा के रूप में स्वीकार करते हुए इसके उत्थान के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। वह चाहे गुजराती भाषा–भाषी महर्षि दयानंद और गांधी रहे हों, बांग्ला के राजाराम मोहन राय, केशवचंद्र सेन और रवींद्र नाथ टैगोर, नेता सुभाष रहे हों या महाराष्ट्र के नामदेव, गोखले और रानाडे रहे हों। इसी तरह तमिलनाडु के सुब्रह्मण्यम भारती, पंजाब के लाला लाजपत राय, आंध्र प्रदेश के प्रो. जी. सुंदर रेड्डी जैसे अनेक हिंदीतर भाषा–भाषी क्षेत्रों में हिंदी को बढ़ावा देने के लिए अनेक महत्वपूर्ण कार्य किए।

हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं का अंतर्संबंध प्रगाढ़ होने में सबसे बड़ी बाधा अंग्रेजी रही है। अंग्रेजी ने स्वतंत्रता के पूर्व ही इसका जाल तैयार कर दिया था। और भाषा जो हमारे जीवन, समाज और संस्कृति का अभिन्न अंग है को राजनीतिक रंग दे दिया गया। स्वतंत्रता के 70 वर्षों के बाद आज जब हिंदी वालों को तमिल, तेलुगु, कन्नड, पंजाबी और ओड़िया शब्द–संस्कृति में तैरने की जगह अंग्रेजी के जाल–जंजाल में अधिक भाता रहा है। इस विडंबना और संकट को वर्षों पूर्व हिंदी के महान उन्नायक फादर डॉ. कामिल बुल्के ने समझ लिया था। डॉ. बुल्के कहते हैं– "भारत पहुँचकर मुझे यह देखकर दुख हुआ कि बहुत से शिक्षित लोग अपनी ही संस्कृति से नितांत अनभिज्ञ हैं और अंग्रेजी बोलना तथा विदेशी सभ्यता में रंग जाना गौरव की बात समझते हैं।"

हम भले ही हिंदी का विरोध करने वाले दक्षिण के कुछ राज्यों के अंग्रेजी परस्त राजनेताओं के स्वार्थवादी और संकीर्णवादी विरोध को अपने अनुसार अलग–अलग तर्कों से इसे 'किंतु–परंतु'

में उलझाकर इसके पीछे छिपे मंसूबे को दरकिनार कर दे, लेकिन इस वास्तविकता को कैसे झुठला सकते हैं कि इसके पीछे मुख्य रूप से भारतीय भाषाई सांस्कृतिक चेतना को कमजोर करने का ही उद्देश्य रहा है। और अंग्रेजी को बलशाली बनाने के लिए भारतीय अस्मिता, संस्कृति और संवेदना को निर्बल बनाने का षड्यंत्र सर्वविदित है। इस घृणित मंसूबे के कारण ही अंग्रेजी का प्रभुत्व लगातार भारतीय भाषाई चेतना को अचेतन बनाता रहा है। हम इस संकट को समझने में निरंतर भूल करते आ रहे हैं। इसे समझने की आवश्यकता है।

इस सच्चाई को हम कैसे झुठला सकते हैं कि आज भी तमिल, कर्नाटक, आंध्र, केरल, त्रिपुरा, असम, महाराष्ट्र, गुजरात जैसे अनेक राज्यों में हिंदी समझने वाले, बोलने वाले ही नहीं हिंदी में लेखन करने वाले सैकड़ों लेखक–पत्रकार मिल जाते हैं, जो हिंदी को समृद्ध बनाने के लिए पूरे मनोवेग से कार्य कर रहे हैं। इससे हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के अंतर्संबंधों में मजबूती आ रही है, लेकिन यह आवश्यकता से बहुत कम है। या कहें यह ऊँट के मुँह में जीरे के समान है। लेखक को भारत सरकार के गैर हिंदी भाषा–भाषी पत्रकार– लेखक शिविर में प्रशिक्षक के रूप में सम्मिलित होने का अवसर मिला है और उन नव लेखक–पत्रकारों की भाषाई चेतना को पास से देखा समझा है। जिस उत्सुकता और संकल्प को गैर हिंदी भाषा–भाषी नवलेखकों में देखने को मिला, वह आश्चर्य में डालने वाला था। यहाँ तक कि तमिलनाडु जहाँ हिंदी का सबसे अधिक विरोध कभी हुआ करता था, उस क्षेत्र के नव हिंदी लेखक हिंदी को तमिल के साथ सहअंतर्संबंधों को अधिक प्रगाढ़ बनाने की बात करते दिखे। इतना ही नहीं, तमिल के शब्दों को हिंदी में प्रयोग करने के आश्चर्यजनक तजुर्बे भी हुए।

हिंदी का स्वभाव और भारतीय भाषाओं का स्वभाव एक जैसा है। किसी भी स्तर पर टकराव नहीं है। फिर क्यों हिंदी का विरोध हिंदीतर भाषा–भाषी क्षेत्रों में यत्र–तत्र देखा जाता है? यह प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण है। दरअसल, आजादी के पहले अंग्रेजों ने भारतीय भाषाओं का वर्गीकरण कराया था, उसके पीछे न कोई भाषाई तथ्य, व्याकरण और लिपि का आधार था और न ही सांस्कृतिक या धार्मिक ही। भारतीय भाषाओं का वर्गीकरण इस तरह से किया गया कि जिससे यह साबित हो सके कि आर्य भाषा परिवार' की भाषाओं और 'द्रविड़ भाषा परिवार' की भाषाओं में न पूरकता है और न ही कोई अंतर्संबंध ही है। जिससे उन्हें भाषा के नाम पर भी देश को विभाजित कर राज्य करने में सुविधा हो सके। ध्यान देने योग्य बात यह है कि 'आर्य भाषा परिवार' का नामकरण मैक्समूलर के द्वारा किया गया और 'द्रविड़ भाषा परिवार' का नामकरण पादरी रॉबर्ट कॉल्डवेल के द्वारा किया गया।

आधुनिक भारतीय भाषा वैज्ञानिकों की दृष्टि आज भी वैसी ही है जैसी स्वतंत्रता के पूर्व थी। आज भी भाषा वैज्ञानिक यह मानते हैं कि भारत की आर्य भाषाओं का ईरानी, यूनानी, जर्मन और लातीनी भाषाओं से किसी न किसी स्तर पर अंतर्संबंध हैं लेकिन दक्षिण में प्रचलित भाषाओं से आर्य भाषाओं का कोई संबंध नहीं जुड़ता है। हम सभी इस बात पर विचार करने के लिए ही तैयार नहीं है कि दक्षिण की भाषाएँ द्रविड़ परिवार की हैं और उत्तर भारत की भाषाएँ आर्य परिवार की। इस धारणा को दृढ़ता प्रदान करने में पादरी कॉल्डवेल की पुस्तक 'द्रविड़ भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन' का योगदान सबसे अधिक रहा है। स्पष्ट है जब भी इस विषय पर चर्चा होती है तो भारत के भाषा वैज्ञानिक उक्त पुस्तक का हवाला देकर यह साबित करने का प्रयास करते हैं कि फादर कॉल्डवेल का शोध इस संबंध में भाषाई अंतर्संबंधो को समझने में मील का पत्थर है। वहीं पर इस धारणा को अपने शोधपरक और तथ्यपरक तर्कों से निर्मूल साबित करते हुए कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर एम.बी. ऐमना ने अपने तथ्यपरक निंबध 'भारत एक भाषाई क्षेत्र' में कहा है– "एक ही भूखंड की भाषा होने के कारण उत्तर और दक्षिण भारतीय भाषाओं की वाक्य रचना में, प्रकृति और प्रत्यय में, शब्द और धातु में, भाव–धारा और चिंतन

प्रणाली में और कथन–शैली में प्रत्येक स्तर पर समानता दिखाई पड़ती है।" नई शिक्षा नीति में इस बात पर बल दिया गया है कि हिंदीतर राज्यों की भाषाओं को उतना ही महत्व मिले जितना की हिंदी को मिल रहा है। भारतीय भाषा आचार्य काशीराम शर्मा ने अपनी तथ्यपरक विवेचना से इस धारणा को निर्मूल सिद्ध किया है कि जो अभिलक्षण द्रविड़ भाषाओं (13 अभिलक्षण माने गए हैं) में पाए जाते हैं वही अभिलक्षण उत्तर की भाषाओं में भी पाए जाते हैं। आचार्य काशीराम के शोध के अनुसार दक्षिण भारत की भाषाएँ और हिंदी का उत्स एक ही है। कहने का मतलब यह है कि जो अलगाव विदेशी भाषाविद् भारतीय भाषाओं में देखते हैं, वह कहीं उनके दुराग्रह और स्वार्थवादी प्रवृत्ति के कारण ही है।

हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में साम्यता एक स्तर पर नहीं है। सैकड़ों की संख्या में ऐसे शब्द हैं जो हिंदी में भी प्रयोग किए जाते हैं और अन्य भारतीय भाषाओं में भी। उदाहरण के लिए तेलुगु में प्रयुक्त 'दर्जी' शब्द हिंदी में भी प्रयोग होता है और अन्य दूसरी भाषाओं में भी। इसी तरह कागज, ताला, फ़कीर, ताजा, अम्मा आदि जैसे अनेक शब्दों का प्रयोग हिंदी सहित भारत की अधिकांश भाषाओं में होता है। इसी तरह पंजाबी भाषा जो गुरुमुखी में लिखी जाती है उसके हजारों शब्द हिंदी में प्रयोग में दिखाई देते हैं। वस्तुतः ये शब्द संस्कृत से हिंदी और पंजाबी में प्रयोग में आए। आज दोनों भाषाओं में संस्कृत के इन शब्दों का प्रयोग धड़ल्ले के साथ किया जाता है। यदि लिपि को छोड़ दिया जाए तो कोई भी हिंदी भाषा–भाषी व्यक्ति जो कुछ पढ़ा–लिखा हो, उसे पंजाबी समझ में आ जाती है। इसी तरह पंजाबी को हिंदी समझते देर नहीं लगती। दोनों एक ही भाषा परिवार की मानी जाती हैं। दोनों का प्रयोग सदियों से आपसी भाईचारे को बढ़ावा देने के लिए किया जाता रहा है। पंजाब में मध्यकाल में ब्रज भाषा और गुरुमुखी लिपि में, इसके सुमेल से ही हिंदी साहित्य का सृजन हुआ। गुरु गोबिंद सिंह और इनके दरबारी कवि, पंजाब के दूसरे राज्याश्रित कवि गुरुमुखी लिपि में ब्रज भाषा की रचना करते थे। यह निकटता हिंदी और पंजाबी संस्कृतियों को भी रेखांकित करती है। पंजाबी और हिंदी भाषा के अंतर्संबंध भक्तिकाल, गुरुवाणी और आधुनिक युग के साहित्य में भी सहज सुलभ है। प्रो. पूर्णसिह, अमृता प्रीतम, देवेंद्र सत्यार्थी और अजीत कौर जैसे न जाने कितने रचनाकार जो पंजाबी पृष्ठभूमि के होते हुए भी हिंदी में सबको स्वीकार हुए।

इस बात को कितने लोग जानते हैं कि जिस लिपि देवनागरी में हिंदी–संस्कृत लिखी जाती है उसी लिपि में कश्मीरी और मराठी भी लिखी जाती रही है। लिपि की एकता ने भी हिंदी को मराठी, कश्मीरी के पास आने का अवसर दिया। इसी तरह गुजराती लिपि भी कुछ अंतर से देवनागरी जैसी ही है। गुजराती और हिंदी का अंतर्संबंध जगजाहिर है। गुजराती भाषियों ने हिंदी को बढ़ावा देने के लिए क्या नहीं किया। इसी तरह मलयालम में अस्सी प्रतिशत शब्द संस्कृत से सीधे ग्रहण किए गए हैं। मलयालम बोलते समय ऐसा लगता है, बोलने वाला संस्कृत के बदले हुए रूप वाली भाषा बोल रहा है।

उच्च स्तर के अनुसंधानों से यह साबित हो चुका है कि हिंदीतर प्रदेशों में रचा गया हिंदी साहित्य परिणाम में अतुलित तो है ही, साहित्यिक विशेषताओं से भी उत्कृष्ट कोटि का है। इस बात को हिंदी भाषा–भाषी क्षेत्र के लोगों को समझना चाहिए कि जिस प्रकार से हिंदीतर प्रदेशों में हिंदी को समृद्ध बनाने के लिए हिंदीतर भाषा–भाषी लेखक, पत्रकार और हिंदी प्रचारकों ने अपना जीवन समर्पित करके हिंदी को सर्वसुलभ और सर्वमान्य भाषा बनाने में लगे हुए हैं, उसी तरह अन्य भारतीय भाषाओं को भी हिंदी क्षेत्र के लोगों को सीखना चाहिए। इससे हिंदी और अच्छी तरह से देशभर में आगे बढ़ सकेगी।

आज मीडिया का जमाना है। अंतरजाल (इंटरनेट) के कारण सारा विश्व एक ग्लोबल गाँव के रूप में विकसित होता जा रहा है। ऐसे में हिंदी और भारतीय भाषाओं को एक साथ विश्व स्तर पर स्थापित करने के अवसर अधिक बढ़ गए हैं।

लेकिन इसके लिए पूरब–पश्चिम और उत्तर–दक्षिण का भेद मिटना चाहिए। अंग्रेजी के प्रति जैसा रोजगार के कारण व्यामोह बढ़ गया है, उसकी जगह हिंदी और भारतीय भाषाओं के प्रति अनुराग पैदा करना होगा। हिंदी विश्व स्तर पर तब अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकेगी जब उसकी अन्य बहनों यानी भारतीय भाषाओं को भी पूरा सम्मान मिलेगा। स्पष्ट है प्रत्येक भाषा के साथ उसकी अपनी संस्कृति भी होती है। यदि भाषा को बचाना है तो उस भाषा की संस्कृति को भी बचाना आवश्यक है। ध्यान देने की बात यह है, इस भाषाई संस्कृति के कारण ही भारत विविधताओं का देश होते हुए भी हमेशा एक नजर आता है। यह भाषाई विविधता कहीं समाप्त न हो जाए, इसके प्रति हमें सचेत रहने की आवश्यकता है। अंग्रेजी के व्यामोह ने हिंदी और भारतीय भाषाओं के अंतर्संबंधों में गहरा असर डाला है। यही कारण है शिक्षा के क्षेत्र में जब पूरे देश में हिंदी माध्यम से पठन–पाठन की बात आती है तो हिंदी के विरोध में आवाज बुलंद की जाने लगती है लेकिन अंग्रेजी के नाम पर कोई किसी तरह का विरोध नहीं दिखाई पड़ता है। जबकि अंग्रेजी से हिंदी को जितना खतरा है उतना ही खतरा भारतीय भाषाओं को भी है। इस सच्चाई को यदि हम समझ लें तो भारत की राष्ट्रभाषा की अधिकारिणी हिंदी और भारतीयता की पहचान भारतीय भाषाओं पर मंडराता संकट समाप्त हो सकता है। एक ही देश की भाषाओं में विरोधाभास देखना या दिखलाना हमारी अपनी दृष्टि नहीं हो सकती। यह तो विदेशी दृष्टि है, जो हमेशा भाषा और संस्कृति के नाम पर विभाजन की बात करती रही है।

नई शिक्षा नीति में उन सभी बातों को भी सम्मिलित किया गया है जो लेख में मैंने लिखा है। समय की आवश्यकता और भारतीयता को अक्षुण्य बनाए रखने के लिए नई शिक्षा नीति प्रत्येक व्यक्ति के लिए हितकारी तभी होगी, जब प्रत्येक भारतीय भारत की सभी भाषाओं का सम्मान करना सीख लेगा।

– 7/377, प्रथम तल, कृष्णा गली (इंद्रा पार्क), ज्वाला नगर, शाहदरा, दिल्ली–110032

❑❑❑

भारतीय भाषाएँ और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

डॉ. वेदप्रकाश

भाषा केवल विचारों के आदान–प्रदान का साधन मात्र ही नहीं है अपितु यह विचार, संस्कार और आधार प्रदान करने वाली महत्वपूर्ण कड़ी है। भाषा ही किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का वह महत्वपूर्ण पहलू है जो उस व्यक्ति को पहचान देता है। भाषा ही व्यक्ति को विभिन्न पटलों पर विचार अभिव्यक्ति हेतु सक्षम बनाती है। भाषिक ज्ञान के साथ ही शिक्षा भी व्यक्ति के निर्माण के साथ–साथ उसके व्यक्तित्व के महत्वपूर्ण आयामों, संस्कार, विचार, व्यवहार आदि का विकास करती है। विकृतियों से मुक्त करती है, अज्ञानता को दूर करती है। यह शिक्षा ही है जो व्यक्ति को निहित स्वार्थों से मुक्त कर परमार्थ के द्वार खोलती है और विभिन्न परिस्थितियों में उसे सामंजस्य सिखाती है। यदि सार रूप में कहा जाए तो व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व के प्रति दायित्व बोध जगाने का काम शिक्षा ही करती है। सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने कहा था– "शिक्षा केवल आजीविका प्राप्त करने का साधन नहीं है, न ही यह नागरिकों को शिक्षित करने का अभिकरण है, न ही यह प्रारंभिक विचार है। यह जीवन में आत्मा का आरंभ है, सत्य तथा कर्तव्य पालन हेतु मानवीय आत्मा का प्रशिक्षण है। यह दूसरा जन्म है जिसे 'दिव्यात्म जन्म' कहा जा सकता है।" गांधी जी ने भी कहा था– "सच्ची शिक्षा वह है जो बालकों के आध्यात्मिक, बौद्धिक तथा शारीरिक विकास हेतु प्रेरित करती है।"

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 हमारे सामने है, जिसमें विभिन्न बदलावों एवं आवश्यकताओं के साथ–साथ भारतीय दृष्टि की प्रधानता और भारतीय जीवन मूल्यों की स्थापना की गई है। यह शिक्षा नीति इस रूप में भी महत्वपूर्ण है कि इतिहास में पहली बार न केवल भारत अपितु विश्व इतिहास में पहली बार राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनाते हुए लोकतांत्रिक आधार को ग्रहण किया गया। गाँव–गाँव, नगर–नगर शिक्षाविद्, विद्यार्थी, शिक्षक, अभिभावक एवं जन सामान्य आदि सभी के सुझाव और विचारों को इसमें सम्मिलित किया गया है। लाखों लोगों की भागीदारी से बनी यह शिक्षा नीति अपनी प्रक्रिया में दो–तीन वर्ष चली, किंतु समुद्र मंथन के समान अमृत रूप में सामने आई है। इसमें बालक अथवा शिक्षार्थी को संसाधन न मानकर एक समग्र व्यक्ति के रूप में विकसित करने की संकल्पना निहित है। इस शिक्षा नीति के विजन में कहा गया है कि– "इस राष्ट्रीय शिक्षा का विजन भारतीय मूल्यों से विकसित शिक्षा प्रणाली है, जो सभी को उच्चतम गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराकर, भारत को वैश्विक ज्ञान महाशक्ति बनाकर एक जीवंत और न्याय संगत ज्ञान समाज में बदलने के लिए योगदान करेगी।" राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का महत्व इसलिए भी बढ़ जाता है कि यह शिक्षा नीति शिक्षण संस्थानों की पाठ्यचर्या और शिक्षा विधि, छात्रों में अपने मौलिक दायित्वों और संवैधानिक मूल्यों, देश के

भाषा ISSN 0523-1418

साथ जुड़ाव और बदलते विश्व में नागरिक की भूमिका और उत्तरदायित्व की जागरूकता उत्पन्न करने वाली है। नीति का विजन स्पष्ट करता है कि छात्रों में भारतीय होने का गर्व न केवल विचार में बल्कि व्यवहार, बुद्धि और कार्यों में भी और साथ ही ज्ञान, कौशल, मूल्य और सोच में भी होना चाहिए। जो मानवाधिकारों, स्थाई विकास और जीवनयापन तथा वैश्विक कल्याण के लिए प्रतिबद्ध हों ताकि वे सही मायने में वैश्विक नागरिक बन सकें। शिक्षा नीति की इस भावना को स्पष्ट करते हुए प्रधानमंत्री ने अपने संबोधन में कहा था– "हमारे छात्र ग्लोबल सिटीजन तो बनें, साथ–साथ अपनी जड़ों से भी जुड़े रहें। जड़ से ले करके जग तक, मनुष्य से मानवता तक, अतीत से आधुनिकता तक सभी बिंदुओं का समावेश करते हुए इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति का स्वरूप तय किया गया है।" स्पष्ट है कि यह राष्ट्रीय शिक्षा नीति जड़ों से जोड़ने वाली होगी और जड़ों से जोड़कर छात्र को ग्लोबल सिटिजन के रूप में भी स्थापित करने में महत्वपूर्ण अथवा कारगर सिद्ध होगी।

पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति वर्ष 1968 में और दूसरी वर्ष 1986 में आई थी, जिनमें कई महत्वपूर्ण प्रावधान दिखाई देते हैं किंतु व्यावहारिक स्तर पर वह अपूर्ण ही रहे। भारतीय भाषाओं के प्रश्न पूर्व की शिक्षा नीतियों में प्रायः उपेक्षित ही दिखाई देते हैं। स्वतंत्र भारत में भी शिक्षा नीतियों में मैकाले की शिक्षा नीतियों और भारत विरोधी शिक्षा दृष्टि को बनाए रखा गया। कहीं न कहीं अंग्रेजी के वर्चस्व को बनाए रखने के लिए भारतीय भाषाओं की उपेक्षा की गई। इस उपेक्षा के दुष्परिणाम आज समाज और राष्ट्र जीवन में देखे जा सकते हैं। नागरिक के रूप में मूल्यों का ह्रास और दायित्व बोध के विषय हाशिए पर पहुँच रहे हैं। जब भी भारतीय भाषाओं अथवा राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी की चर्चा की गई तो एक सुनियोजित विरोध का वातावरण कुछ तथाकथित बुद्धिजीवियों और राजनीति के लोगों के द्वारा बनाया जाता रहा है। क्या भारतीय भाषाओं की संकल्पना के बिना भारत की संकल्पना करना समुचित होगा? हिंदी और भारतीय भाषाओं में कहीं भी किसी प्रकार का विरोध व्यवहार के स्तर पर अथवा आपसी सामंजस्य के स्तर पर नहीं है। राष्ट्रभाषा की दृष्टि से हिंदी सदैव प्रायोजित विरोध का सामना करती रही। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय भाषाओं की विराट संकल्पना के साथ प्रस्तुत हुई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में अध्ययन–अध्यापन की दृष्टि से प्रारंभिक स्तर पर, माध्यमिक स्तर पर और यदि संभव हो तो उच्च शिक्षण में भी मातृभाषा के प्रयोग, प्रोत्साहन की संकल्पना निश्चित रूप से सराहनीय और ऐतिहासिक प्रयास है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में बहुभाषावाद और भाषा की शक्ति को महत्व दिया गया है। वहाँ यह स्पष्ट किया गया है कि कम से कम कक्षा पाँच तक और बेहतर यह होगा कि कक्षा आठ और उससे आगे तक भी यदि हो सके तो शिक्षा का माध्यम घर की भाषा, मातृभाषा, स्थानीय भाषा, क्षेत्रीय भाषा होनी चाहिए। इसके साथ–साथ यह भी महत्वपूर्ण है कि यह प्रावधान सार्वजनिक और निजी दोनों प्रकार के विद्यालयों पर लागू होगा। विज्ञान सहित सभी विषयों में उच्चतम गुणवत्ता वाली पाठ्य पुस्तकों को घरेलू भाषाओं अथवा मातृभाषा में उपलब्ध कराया जाएगा। विभिन्न शोध और अनुसंधानों से यह स्पष्ट है कि बालक अपनी आरंभिक अवस्था यानी दो से आठ, दस वर्ष की आयु के बीच बहुत जल्दी भाषिक ज्ञान में दक्षता प्राप्त करते हैं। उनका मानसिक विकास इस आयु में सर्वाधिक होता है। इस अवस्था में विभिन्न भाषाओं का ज्ञान और उनकी समझ उसके पूरे जीवन को प्रभावित करने वाली सिद्ध हो सकती है। भारतीय चिंतन, दर्शन, अध्यात्म और ज्ञान–विज्ञान सदियों से विश्व को प्रभावित करता रहा है। गुरुकुल शिक्षण प्रणाली विश्व के लिए कौतूहल का विषय रही है, किंतु धीरे–धीरे ज्ञानार्जन का विषय बाजार और व्यवसाय पर केंद्रित होने लगा, विद्यालयों–महाविद्यालयों के रूप में भव्य भवनों के निर्माण हुए और भारतीय भाषाओं का शिक्षण अथवा भारतीय भाषाओं में शिक्षण कम होता चला गया। हिंदी में बोलना अथवा अभिव्यक्ति प्रतिबंध जैसा हो गया, दंड के

विधान तक स्थितियाँ पहुँच गई। शिक्षा नीतियाँ मानव संसाधन पर केंद्रित होती चली गईं। समग्र मानव की संकल्पना कहीं पीछे ही छूट गई। अधूरा ज्ञान अथवा विषय विशेष तक ही ज्ञान सीमित होता चला गया। क्षेत्रीय भाषाओं अथवा संस्कृति का लोप युवा वर्ग में दिखाई देने लगा। भारतवर्ष की क्षेत्रीय भाषाओं के साथ–साथ राष्ट्रीय शिक्षा नीति शास्त्रीय भाषाओं के महत्व को भी संबोधित करती है। भारतीय भाषाओं की जननी संस्कृत साहित्य में गणित, दर्शन, व्याकरण, संगीत, राजनीति, चिकित्सा, वास्तुकला, धातु विज्ञान, नाटक, कविता, कहानी और बहुत कुछ इतने विशाल रूप में है, यदि उसका अवगाहन किया जाए तो एक बड़े ज्ञान का भंडार हमारे सामने उपलब्ध हो सकता है। इसी प्रकार भारतवर्ष की अन्य शास्त्रीय भाषाओं जैसे तमिल, तेलुगु, कन्नड, मलयालम और ओड़िया आदि में भी समृद्ध ज्ञान परंपरा विद्यमान है। पूर्व की सरकारी नीतियों और पाठ्यक्रम की संरचनाओं में इस प्रकार के प्रावधान अथवा अभाव रहे जिसके चलते ज्ञान का यह विपुल भंडार उपेक्षित होता गया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भारतीय भाषाओं के साथ–साथ अंग्रेजी, कोरियाई, जापानी, थाई, जर्मन, स्पेनिश, पुर्तगाली, रूसी आदि भाषाओं के शिक्षण– अध्ययन के भी प्रावधान हैं ताकि विद्यार्थी अंग्रेजी ही नहीं अपितु अन्य वैश्विक भाषाओं और संस्कृतियों के बारे में भी जानें और अपनी रुचि और आकांक्षाओं के अनुसार अपने वैश्विक ज्ञान का विस्तार करें। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में केंद्रित विचारणीय मुद्दों की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण यह भी है कि भाषा का संबंध सीधे कला और संस्कृति के साथ जुड़ा हुआ माना गया है। हमारी संस्कृति हमारी भाषाओं में समाहित है। साहित्य, संगीत और कलाएँ उसे भिन्न–भिन्न रूपों में अभिव्यक्त करती हैं। संस्कृति के संरक्षण, संवर्धन और प्रसार के लिए यह आवश्यक है कि उस संस्कृति से जुड़ी हुई महत्वपूर्ण भाषाओं का संरक्षण और संवर्धन भी किया जाए। आज विडंबना यह है कि भारतवर्ष की विभिन्न महत्वपूर्ण भाषाएँ लुप्त हैं। यूनेस्को ने 197 भारतीय भाषाओं को लुप्तप्राय घोषित किया है। विभिन्न भाषाएँ लुप्त होने के कगार पर हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति जहाँ संविधान की आठवीं अनुसूची की 22 भारतीय भाषाओं के संरक्षण, शिक्षण और संवर्धन की दिशाएँ खोलने वाली है वहीं लुप्तप्राय अथवा संरक्षित भाषाओं को भी महत्व देने वाली है। इस शिक्षा नीति में भारतवर्ष की महत्वपूर्ण भाषाओं को ऑडियो और वीडियो के माध्यम से संरक्षित करने का, उनकी पांडुलिपियों को प्रकाशित करने का, उनके संरक्षण का, इन भाषाओं के बोलने वाले समाजों के साथ तालमेल बनाते हुए उन्हें प्रोत्साहित करने की संकल्पना विद्यमान है। भारतीय भाषाओं की दृष्टि से राष्ट्रीय शिक्षा नीति का एक बड़ा पक्ष यह भी कहा जा सकता है कि इसमें तकनीकी और डिजिटल माध्यमों के साथ जोड़कर भारतीय भाषाओं को राष्ट्रीय स्तर पर तो समन्वयात्मक बनाया ही जाएगा, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी उनके प्रोत्साहन के प्रयास किए जाएँगे। भारतीय भाषाएँ और भारतवर्ष की शास्त्रीय भाषाएँ इन सभी में आपसी तालमेल है। इसमें समस्त भारतीय भाषाओं की जननी संस्कृत को विशेष आदर, सम्मान, संरक्षण और संवर्धन के प्रावधान किए गए हैं। इस दृष्टि से यह कहा जा सकता है राष्ट्रीय शिक्षा नीति एक ऐतिहासिक नीति सिद्ध होगी। इससे भारतीय भाषाओं को साथ लेकर नए भारत और आत्मनिर्भर भारत की संकल्पना आगे बढ़ेगी। क्योंकि आत्मनिर्भर भारत में एक बड़ा और महत्वपूर्ण आयाम भाषिक आत्मनिर्भरता भी है।

– सी–298, सरिता विहार, नई दिल्ली–110076

❑❑❑

राष्ट्रीय शिक्षा नीति और मातृभाषा प्रसंग

प्रो. गजेंद्र कुमार पाठक

राष्ट्रीय शिक्षा नीति स्वतंत्र भारत के इतिहास में पहली बार परंपरा और भविष्य के बीच सार्थक संवाद की प्रस्तावना के रूप में दिखाई पड़ती है। ऐसी प्रस्तावना जो आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में रुके हुए और उठे हुए पैर के रूपक के रूप में देखी जा सकती है। द्विवेदी जी ने रुके हुए पैर को परंपरा और उठे हुए पैर को आधुनिकता माना था। राष्ट्रीय शिक्षा नीति की परिधि में एक तरफ जहाँ अतीत के गौरव बिंदु तक्षशिला, नालंदा, वल्लभी और विक्रमशिला के रूप में एक प्रेरणा के रूप में खड़े हैं तो दूसरी तरफ नई संचार क्रांति से पैदा हुई चुनौतियाँ हैं जो हमारे देश की युवा पीढ़ी के लिए अपार संभावनाओं का द्वार खोल कर स्वागत करने को तैयार हैं। इसी कड़ी में शिक्षा के माध्यम के रूप में मातृभाषाओं की भूमिका को रेखांकित करते हुए जो ऐतिहासिक पहल हुई है वह भी उस ऐतिहासिक अनुभव की देन है जिसने अपने देश में बुद्ध की स्मृति को महसूस किया है। ज्ञान परंपरा के जिन गौरवशाली अध्यायों का विश्वविद्यालय के रूप में अपने देश में जो प्रयोग हुए उनमें से अधिकांश महात्मा बुद्ध के प्रकाश से दीप्त थे यह बात अलग से कहने की जरूरत नहीं है। वैसे ही जैसे मातृभाषाओं और भारत की बहुभाषिकता के बल पर ही ये सारे प्रयोग सफल हुए और अपने समय में दुनिया भर के लिए आकर्षण के केंद्र बने। बुद्ध के प्रकाश से दुनिया के जो देश दीप्त हुए उन्होंने उस दीप्ति में मातृभाषाओं का प्रकाश भी पाया। मातृभाषाओं से प्यार के बल पर इन देशों ने तकनीकी दक्षता भी हासिल की है यह भी अलग से कहने की जरूरत नहीं है।

नालंदा में सरहपा थे। हिंदी का पहला कवि बुद्ध, लोक और लोकभाषाओं का मुरीद राहुल सांकृत्यायन ने सरहपा को पहली बार पहचाना और हिंदी के बुद्ध संपर्क को स्थापित और प्रस्तावित किया। राहुल जी की इस स्थापना ने एक तरफ जहाँ हिंदी के सांस्कृतिक इतिहास का विस्तार किया वहीं दूसरी तरफ उस भूल की भी पहचान की जो एक तरफ हमारे देश की लंबी गुलामी की देन थी तो दूसरी तरफ उस दृष्टि का विरोध किया जो अपने ही देश में भाषाओं में वर्णाश्रम लागू करने की पक्षधर थी।

राहुलजी जहाँ राष्ट्रभाषा और संपर्कभाषा के रूप में हिंदी के हिमायती हैं, वहीं मातृभाषाओं की बात को लेकर वे जनता के भी हिमायती हैं। उन्हें देश और देश के जनमानस पर विश्वास है। इसलिए हिंदी की सत्ता स्वीकार करते हुए भी देश की मातृभाषाओं के पक्ष में खड़े हैं। उनकी दृष्टि में मातृभाषा का मतलब है जिसे बिना किसी प्रयास के सीखा जा सके। "मातृभाषा की हमारी परिभाषा है, जिसके बोलने में अनपढ़ से अनपढ़ आदमी और बच्चा तक भी व्याकरण की गलती नहीं कर सके।"[1] उनका यह भी मानना था कि "आप इन भाषाओं को हिंदी से अभिन्न नहीं कह सकते।"[2]

मातृभाषाओं के प्रश्न पर राहुल जी की बहुत सी अवधारणाएँ एक–दूसरे से जुड़ी हुई हैं। आम जनता के बीच जहाँ मातृभाषाओं को लेकर उन की उपयोगिता का सवाल है, यह अपने आप में एक महत्वपूर्ण सवाल है। जहाँ तक मातृभाषा के आधार पर शिक्षा की उपयोगिता का सवाल है, इस पर प्रश्न चिह्न नहीं खड़ा हो सकता। हिंदी–उर्दू के विवाद को सुलझाने को भी वे मातृभाषाओं के प्रश्न से जोड़कर देखते हैं।

मातृभाषाओं की प्रासंगिकता को लेकर राहुल जी के विचार एकदम स्पष्ट हैं। उनकी दृष्टि बहुत दूरदर्शी थी। उनका मानना था कि देश बनाने के लिए देश के लोगो को शिक्षित करना पड़ेगा और यह काम उनकी मातृभाषा में ही हो सकता है किसी विदेशी भाषा में नहीं। उनके सामने इसका स्पष्ट उदाहरण रूस था। उनका मानना था कि यदि देश लोकतांत्रिक समाज चाहता है, तो मातृभाषाओं के सवाल पर विचार करना पड़ेगा और यदि ऐसा नहीं हुआ तो देश की अर्थव्यवस्था चरमरा जाएगी।

मातृभाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाने के पीछे राहुल जी के अनुसार बहुत से कारण थे। वह चाहते थे कि साम्राज्यवादियों के चंगुल से निकलने के बाद सत्ता की बागडोर फिर से चंद पढ़े–लिखे लोगों के हाथ में न चली जाए। इसीलिए राहुल मातृभाषाओं के आधार पर शिक्षा की वकालत करते हैं। उनके सामने रूस प्रत्यक्ष उदाहरण था। जिसने अपनी मुख्य भाषा (रूसी और तुर्की) को अपनाते हुए अपनी अलिखित भाषाओं (तुर्कमानी, उज्बकी, किर्गिजी, कजाकी) में जनता को जागृत किया था। राहुल जी ने लिखा है "मातृभाषाओं को ज्ञान का माध्यम बनाने में शिक्षा की प्रगति कितनी तेजी से हो सकती है, इसका सुंदर उदाहरण सोवियत–मध्य–एशिया की तुर्कमान, उज्बेक, कजाक जातियाँ हैं, जो 1907 ई. से पहले शिक्षा में भारतीयों से भी अधिक पिछड़ी हुई थी।"[3] राहुल जी मातृभाषाओं की ताकत से अपरिचित नहीं थे। उन्होंने अपने जीवन में जितनी भाषाएँ सीखीं, शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो। उसके बाद भी मातृभाषा की वकालत करना उनकी सरलता और उनके चिंतन को दर्शाता है। उन्हें ज्ञान था जिसकी ओर भारतेंदु का भी रुख था कि 'निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल। बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को सूल' राहुल जी इसीलिए मातृभाषा की पुरजोर वकालत करते हैं।

राहुल मातृभाषा के प्रश्न को लेकर अतिरेक में नहीं हैं। उन्होंने अपने विचार स्पष्ट करते हुए लिखा है "हम मातृ–भाषा माई की जै के नाम पर लोगों को पागल नहीं बनाना चाहते।"[4] मातृभाषा के सवाल को वह देश से जोड़कर देखते थे। उन्हें आभास था कि देश की आम जनता को शिक्षित किए बगैर देश की बात नहीं की जा सकती। वे राजनीति से आम जनता को अलग करके नहीं देखते थे। उनका मानना था कि "यदि विदेशी साम्राज्य–वादियों की भाँति हम भी चंद सेठों बाबुओं को शिक्षित बना उन्हें शासक बनाना चाहते हैं और चाहते हैं कि 90 फीसदी जनता अशिक्षित रह अपने शासकों की मनमानी में दखल न दे, तो मातृभाषा छोड़ दूसरी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने की शर्त बिल्कुल ठीक है।"[5]

राहुल मातृभाषाओं की ताकत और उनकी परंपरा से परिचित थे। इसीलिए जो लोग यह सोचते थे कि इन बोलियों का साहित्य मरणासन्न अवस्था में पहुँच गया है और यह साहित्य जल्दी–से जल्दी संगृहीत कर लेना चाहिए। "उनकी दृष्टि में मातृभाषाओं का बस इतना ही मूल्य है। अथवा वह इतने ही दया की पात्र हैं।"[6] जहाँ तक मातृभाषाओं के अस्तित्व का सवाल है उसको लेकर राहुल जी बहुत भ्रम में नहीं हैं। वह स्पष्ट लिखते हैं कि "मनमाना मृत्यु का वारंट निकालने की धृष्टता न कीजिए यदि यह भाषाएँ, "बोलियाँ" अब तक नहीं मरी तो नजदीक भविष्य में वे नाम–शेष नहीं होने जा रही हैं।"[7] राहुल जी जनता की भाषा के पक्ष में हैं। वे किसी भाषा–भाषी को उपेक्षित करके समाज निर्माण के पक्ष में नहीं हैं। वे भाषा के सवाल को जनता से और देश के सवाल को भाषा और जनता से जोड़कर देखते हैं। राहुल जी जनता को उसकी परंपरा और उसकी भाषा से

अलग नहीं देखना चाहते हैं। वह स्पष्ट लिखते हैं "जाकर पूछिए इन भाषाओं के बोलने वाले करोड़–करोड़ नर–नारियों से और सूर, तुलसी, विद्यापति से भी पूछिए। यदि सूर, तुलसी, विद्यापति की मुँह देखी करना चाहते हैं, तो क्या मल्लिका (भोजपुरी), बुंदेली, बघेली को जीने की अनधि–कारिणी समझते हैं? जाकर पूछिए तो सवा करोड़ मल्लों (भोजपुरियों) को और चेकोस्लोवाकिया तथा बेल्जियम जैसी जनसंख्या रखने वाले बुंदेलों और बघेलों को।"[8] राहुल जी अपने विचारों को लेकर एकदम स्पष्ट थे। वह चाहते थे कि जनता शिक्षित होकर देश के विकास में भागीदारी निभाएँ। जहाँ तक मातृभाषा में शिक्षा का सवाल था उस पर अक्सर पाठ्य–पुस्तकों को लेकर अड़चनें आती हैं। राहुल जी ने जो हिंदी और हिंदी की बोलियों का खाका–खींचा है, उसके अनुसार हिंदी के बहुत से लेखक ऐसे हैं जिनकी मातृभाषा हिंदी नहीं थी। राहुल खुद भोजपुरी क्षेत्र से थे। उनका मानना था कि "हिंदी के बहुत अधिक लेखक ऐसे हैं, जिनकी मातृभाषा हिंदी नहीं , बल्कि ब्रज, कोसली, काशिका, मल्लिका आदि हैं।"[9] हिंदी के लेखकों का क्रमवार उन्होंने विवरण दिया है कि कौन से लेखक की मातृभाषा हिंदी नहीं है और उनकी मातृभाषा कौन सी है। मातृभाषा के सवाल को लेकर राहुल जी बहुत सजग थे। इसीलिए वह उन्हें म्यूजियम की निर्जीव वस्तुओं के रूप में नहीं देखना चाहते थे। आजादी के सात दशक बीत जाने के बाद राहुल जी जैसे चिंतकों पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने स्पष्टतः गौर करते हुए यह स्पष्ट किया है कि "शिक्षा का माध्यम घर की भाषा/मातृभाषा/स्थानीय भाषा/क्षेत्रीय भाषा होगी। इसके बाद घर/स्थानीय भाषा को जहाँ भी संभव हो भाषा के रूप में पढ़ाया जाता रहेगा।" (पृ.19)

मातृभाषाओं को राहुल जी जनता के लिए जरूरी समझते हैं। उनके लिए मातृभाषाएँ जनता के ज्ञान का माध्यम हैं, राजनीति में भागीदारी करने के लिए एक कड़ी है। इसीलिए राहुल जी मातृभाषा को प्रथम स्थान पर स्थापित करते हैं। संपूर्ण भारत के लिए उनकी यही नीति है। बंगाल और महाराष्ट्र की जनता के लिए बंगला और मराठी ही ज्ञान–विज्ञान का माध्यम बनेगी, वहीं भोजपुरियों, ब्रजवासियों एवं बुंदेलियों के लिए क्रमशः भोजपुरी, ब्रज एवं बुंदेली ज्ञान का दीपक बनेगी। हिंदी द्वितीय भाषा के रूप में स्वीकार की जानी चाहिए। यह उनके स्पष्ट विचार थे। उन्होंने स्पष्ट लिखा भी है कि "हिंदी भाषा को शिक्षित होने की कसौटी बनाना गलत है।"[10] हिंदी को राहुल जी द्वितीय भाषा के रूप में दर्जा देते हैं। हिंदी उनके विचारों में संपूर्ण उत्तर भारत की मातृभाषा नहीं है। वह कुछ लोगो की मातृभाषा है। वे स्पष्ट लिखते हैं "हिंदी को हम अंतर–प्रांतीय भाषा मान सकते हैं, पर वह हमारी मातृभाषा नहीं है और उसे कभी किसी भी मातृभाषा को मार कर पूतना बनने का अधिकार नहीं है।"[11] राहुल जी के इस तरह के चिंतन के पीछे मूलतः जनता है। इसीलिए वे हिंदी के साथ–साथ मातृभाषा के सवाल पर संजीदगी से चिंतन करते हैं। जहाँ तक हिंदी को मातृभाषा के रूप में स्वीकार करने की बात है, उस पर राहुल जी स्पष्ट लिखते हैं कि "मेरठ कमिश्नरी (कुरु–जनपद) के पौने चार जिलों को छोड़कर बाकी लोगों की अपनी निजी मातृभाषाएँ हैं। यदि आप इस बात को मान लेते हैं, तो आगे का काम बिल्कुल सरल हो जाता है। पांचाली (रूहेलखंडी), ब्रज (शौरसेनी), बुंदेलखंडी (दशार्ण), बघेलखंडी (चेदिका), वात्सी (दक्षिण–अवधी), काशिका (बनारसी), मल्लिका (भोजपुरी) आदि में से एक–एक के बोलने वालों की संख्या लाखों नहीं करोड़–करोड़ तक पहुँचती है, और ये इन लोगों की मातृभाषाएँ हैं।"[12] जहाँ तक मातृभाषाओं के अस्तित्व का प्रश्न है तो इस पर हमें परंपरा की पड़ताल और सत्ता में जनता की भागीदारी को लेकर चलना चाहिए। हमेशा से जिस वर्ग के हाथ में सत्ता रही है उसी वर्ग की भाषा का भी अधिकार रहा है। संस्कृत को ले लीजिए, फारसी को ले लीजिए और वर्तमान समय में अंग्रेजी को ले लीजिए। इतिहास की कड़ियाँ परंपरागत रूप से एक–दूसरे से जुड़ी हुई हैं। इसीलिए राहुल जी मातृभाषाओं के अस्तित्व पर प्रश्न करते हुए लिखते हैं "यह भाषाएँ मृत नहीं

जीवित हैं। यह अधिकारच्युत हैं। शोषकों को हटा कर आज जनता को अधिकार प्राप्त हो जाने दीजिए, फिर देखिए कल ही यह भाषाएँ कितनी नागर, सभ्य और ललित दिखाई देने लगती हैं।" राहुल जी का यह चिंतन ही उन्हें औरों से अलग करता है। वह जानते थे कि हमें यदि जनता के बीच अपनी पैठ बनानी है, तो उसके लिए देश–व्यापी भाषा में नहीं बल्कि जनता की भाषा अर्थात् मातृभाषा में बात करनी पड़ेगी। राहुल जी का बिहार के किसान आंदोलन का नेतृत्व करना बहुत कुछ मातृभाषा का ही परिचायक है। राहुल किसानों के बीच किसानों की ही भाषा में अपने विचार उन तक पहुँचाते थे। यही राहुल जी की सबसे बड़ी खूबी थी। इसी वजह से वह लोगों के बीच जल्दी घुल–मिल जाते थे। राहुल जी अपने सभी नाटकों की भाषा तक भोजपुरी ही रखते हैं। जनता को जागृत करने के लिए उन्होंने "भागो नहीं (दुनिया को) बदलो" पुस्तक को बनारस के आस–पास की भाषा 'काशिका' में लिखा। मतलब यह है कि मातृभाषा के सवाल को यूँ ही नहीं टाला जा सकता। राहुल जी मातृभाषाओं के प्रश्न को देश के विकास के साथ जोड़कर देख रहे थे। उनके जेहन में था कि यदि देश की जनता शिक्षित होगी तभी देश आगे बढ़ सकेगा, सही तरह से, सही दिशा में।

भाषाओं को लेकर राहुल जी का ज्ञान बहुत विस्तृत एवं गहन था। राहुल जी मातृभाषाओं और हिंदी की स्पष्ट रेखा खींचते हैं। उन्हें देश के आम–जन की पहचान थी। वे जितनी संजीदगी से मातृभाषा के प्रश्न पर विचार करते हैं, उतनी ही संजीदगी से देश की संपर्क भाषा के रूप में हिंदी पर भी। राहुल जी हिंदी को मातृभाषा के रूप में नहीं देखते "हिंदी को हम अंतर–प्रांतीय भाषा मान सकते हैं, पर वह हमारी मातृभाषा नहीं है।"[14] राहुल जी की मातृभाषा खुद हिंदी नहीं थी। उनकी मातृभाषा भोजपुरी थी। राहुल देश के स्तर पर हिंदी के महत्व को अस्वीकार नहीं करते, लेकिन जनता के हित के दृष्टिकोण से वे मातृभाषाओं के पक्षधर हैं। इसी चिंतन को आधार बना कर राहुल जी ने उत्तर भारत के अधिकांश राज्यों को मातृभाषा के आधार पर प्रांतों या जनपदों के विभाजन को लेकर अपनी स्पष्ट राय प्रकट की थी, जिसको लेकर राहुल जी की काफी आलोचना हुई।

राहुल इस संदर्भ में दूसरे तरीके से सोच रहे थे। वह हिंदी के पक्ष में तो थे ही, लेकिन हिंदी से पहले वे मातृभाषा के हिमायती थे। जनता उनके चिंतन के केंद्र में थी। इसीलिए वे शिक्षा को मातृभाषा में एवं जनता का कामकाज मातृभाषा में लागू करने के पक्ष में थे। वे देश की सांस्कृतिक विभिन्नता से परिचित थे। वे देख रहे थे कि एक तरफ बंगला, ओड़िया, मराठी और गुजराती और देश की अन्य छोटी–छोटी मातृभाषाएँ अपने अस्तित्व को लेकर सजग थीं, तब उनका सवाल था कि अवधी, ब्रज, बुंदेली, मल्लिका अपने अस्तित्व को क्यों दबाकर रखें। जहाँ तक हिंदी और जिन्हें हिंदी की बोलियाँ कहा जाता है, उसको लेकर राहुल जी की स्पष्ट धारणा थी कि हिंदी कुछ ही लोगों की मातृभाषा है।[15] राहुल जी यहाँ तक कहते हैं कि "माफ कीजिए यह कहने के लिए कि हिंदी भी हम में से अधिकों की मातृभाषा नहीं , सीखी हुई भाषा है, और ऐसी सीखी कि चौदह वर्ष लगाने पर कितने ही बिहारी हिंदी के व्याकरण पर अधिकार प्राप्त नहीं कर सकते।"[16] मातृभाषाओं के अस्तित्व को लेकर उनका सीधा तर्क है कि "जब बंगला, ओड़िया, गुजराती, मराठी को आप अखंडता के नारे से आत्म–हत्या, आत्म–गोपन करने के लिए तैयार नहीं कर सकते, तो बेचारी ब्रजभाषा, बुंदेली, मल्लिका, मैथिली से कौन अपराध बन पड़ा है।"[17]

राहुल जी और रामविलास जी में यही मूलभूत अंतर है। दोनों हिंदी के महत्त्व से परिचित हैं। दोनों के लिए हिंदी सबसे ऊपर है। दोनों के केंद्र में जनता है। रामविलास जी ने तो राहुल जी के हिंदी प्रेम को उद्घाटित भी किया है और प्रशंसा भी की है। "हिंदी के प्रति बहुत जागरूक थे। यहाँ पर अंग्रेजी का वर्चस्व समाप्त करके हिंदी को लाना चाहते थे।"[18] अंतर यह है कि रामविलास जी बंगला जातीयता, ओड़िया जातीयता, मराठी जातीयता के समक्ष हिंदी जातीयता की बात करते

हैं। जबकि राहुल जी का चिंतन इसके एकदम विपरीत है। राहुल जी ओड़िया, मराठी, बंगला भाषा की अखंडता के समकक्ष ब्रजभाषा, बुंदेली, मल्लिका, मैथिली की अखंडता की बात करते हैं, हिंदी जातीयता की बात नहीं। राहुल यहीं रामविलास जी से अलग हैं। हिंदी उनके लिए देश की भाषा है जिसे सभी को सीखने की आवश्यकता है। यह बात जिस तरह से बंगालियों, मराठियों के साथ लागू होती है उसी तरह से बुंदेलियों, भोजपुरियों और ब्रज भाषा–भाषी लोगों के साथ भी लागू होती है। राहुल जी हिंदीतर भाषी लोगों के इस भ्रम से पर्दा उठाते हैं। "हमारे हिंदीतर भाषी भाई समझते हैं कि उत्तर में एक ही हिंदी भाषा है, बाकी उसी की छोटी–छोटी बोलियाँ हैं।"[19]

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. राहुल सांकृत्यायन, साहित्य निबंधावली, पृ.76
2. वही, पृ.76
3. वही, पृ.77
4. वही, पृ.77
5. वही, पृ.77
6. वही, पृ.78
7. वही, पृ.78
8. वही, पृ.78
9. वही, पृ.79
10. वही, पृ.73
11. वही, पृ.73
12. वही, पृ.76
13. वही, पृ.72
14. वही, पृ.73
15. वही, पृ.75
16. वही, पृ.72
17. वही, पृ.80
18. डॉ. रामविलास शर्मा, 'राहुल : एक समीक्षा' (साक्षात्कार–गीतेश शर्मा द्वारा), अनय व कुसुम जैन (संपा.), राहुल : मंथन एवं चिंतन', जन संसार, कलकत्ता, पृ.22
19. राहुल निबंधावली, पृ.72

– प्रोफेसर, हिंदी विभाग, मानविकी संकाय हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद–500046

❑❑❑

"मातृभाषा में शिक्षा – सहजता का अर्थगर्भ मार्ग"

डॉ. वसुधा गाडगिल

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, समाज की कल्पना भाषा के बिना असंभव है। भाषा, मानव समाज की नींव है जिस पर मानव समाज का विकास निर्भर है।

संपूर्ण पृथ्वी पर विचरण करने वाले सभी प्राणियों में सबसे संवेदनशील और बुद्धिमान प्राणी मानव है। अन्य जीवधारियों की अपेक्षा मानव की अभिव्यक्ति सर्वाधिक संवेदनशील मानी गई है। वह स्वंय को सतत अभिव्यक्त करता रहता है, वह समाज के अन्य सदस्यों के साथ निरंतर वैचारिक आदान–प्रदान करता है। आदिकाल में मानव ध्वनि–संकेतों और अस्पष्ट ध्वनियों से अपने विचार व्यक्त करता था, जैसे–जैसे उसका मानसिक, बौद्धिक विकास होता गया, उसने ध्वनि समूह बनाए और उनका सार्थक प्रयोग प्रारंभ किया। इन ध्वनि समूहों से प्रतीक चिह्न बनते गए जिनसे मानव समाज द्वारा प्रयुक्त भाषा बनी जो वैचारिक अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बनी।

इस प्रकार "भाषा, ध्वनि–संकेतों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा मनुष्य बोलकर, लिखकर स्वयं के विचार दूसरों तक प्रेषित करता है। इससे मानव समाज परस्पर वैचारिक संप्रेषण करता है।"

विश्व में हज़ारों प्रकार की बोलियाँ बोली जाती हैं। प्रत्येक व्यक्ति मातृभाषा, अपने देश की भाषा से सहजता से जुड़ता है लेकिन दूसरे देश या समाज की भाषा से जुड़ने में उसे कठिनाई होती है। जैसे–जैसे मानव समाज का विकास हुआ भाषा का भी विकास हुआ। मानव समाज के निर्माण, विकास, अस्मिता, सांस्कृतिक व सामाजिक अस्तित्व, पहचान का महत्वपूर्ण साधन 'भाषा' है। मनुष्य को सुसंस्कृत, सभ्य बनने के लिए सबसे आवश्यक है– उचित शिक्षा ग्रहण करना, जिसे ग्रहण करने का माध्यम भाषा है। जीवन के सभी क्षेत्रों में पुस्तकीय ज्ञान हो या व्यावहारिक ज्ञान दोनों ज्ञान भाषा द्वारा ग्रहण किए जाते हैं। यदि यह मातृभाषा हो तब बालकों के ज्ञानार्जन की क्षमता निश्चित रूप से बढ़ेगी।

2020 का वर्ष विषम परिस्थितियों से घिरा रहा लेकिन परिवर्तनकारी रहा है। इस वर्ष केंद्रीय मंत्रिमंडल ने 'नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' घोषित की जिसके अंतर्गत कक्षा पाँचवीं तक शिक्षा का माध्यम मातृभाषा, क्षेत्रीय भाषा, घरेलू भाषा को अपनाए जाने का निर्णय लिया गया है। इस शिक्षा नीति में 5+3+3+4 प्रणाली को लागू किया जाना है। सरकार ने सभी भाषाओं के संरक्षण, विकास, उन्नयन तथा उन्हें सशक्त बनाने के लिए स्कूली शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक भारतीय भाषाओं को सम्मिलित करने की सिफारिश की है साथ ही सभी भारतीय और प्राकृत भाषाओं हेतु, राष्ट्रीय संस्थान इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ ट्रांसलेशन एंड इंटरप्रिटेशन (आई. आई. टी. आई.) की स्थापना की बात की है। दरअसल मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में पढ़ाई करने से बच्चों में सीखने की प्रक्रिया में रुचि उत्पन्न होगी, उनकी शिक्षा की

भाषा ISSN 0523-1418

नींव मजबूत होगी। स्वतंत्रता के पहले अंग्रेजों की शिक्षा नीति ने हमारी संस्कृति, हमारे संस्कारों पर कुठाराघात ही नहीं किया वरन् भारत के भविष्य को भी क्षतिग्रस्त कर दिया। उनके चले जाने के बाद भी ना मैकाले की शिक्षा नीति बदली ना ही शिक्षा प्रणाली। परिणामतः हमारे नौनिहालों, देश के कर्णधारों की मस्तिष्क की धार भोथरी हो गई। उनकी समझने सीखने की क्षमता सीमित हो गई। किसी पौधे से पेड़ और पेड़ से फलदार वृक्ष बनने के विकास को रोकने का उपाय है, जड़े काटते जाओ। निश्चित वृद्धि तक ही पौधे को पनपने दो। जड़े जितनी छोटी, बौनी होंगी पौधे या पेड़ों का विकास भी उतना ही छोटा (अल्पविकसित) होगा अर्थात् जड़े काटो विकास रोको। इस मानसिकता से ग्रस्त अंग्रेजों की शिक्षा नीति ने हमारे देश का विकास अवरुद्ध कर दिया। स्वाधीनता के पश्चात् भी जस की तस शिक्षा नीति को अपनाकर हमारे शासकों ने शिक्षा व्यवस्था का ढाँचा विकृत कर दिया। लेकिन अब नई शिक्षा नीति ने उम्मीद जगाई है, इस नीति में 'त्रिभाषा प्रणाली' को शिक्षा व्यवस्था में अपनाया जाना है। आइए तत्संबंधी कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं पर विचार करते हैं।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा को माध्यम बनाया जाना है इसके दीर्घकालीन प्रभाव दिखाई देंगे। अपनी भाषा में शिक्षा प्रदान करने से शिक्षा के क्षेत्र में आमूलचूल परिवर्तन आ सकता है। मातृभाषा, क्षेत्रीय भाषा मानवीय मूल्यों और भावनाओं को बढ़ाने में, अभिव्यक्त करने में सहायक होती हैं, इनसे देश के नौनिहालों, भविष्य की पीढ़ियों को भारतीय सामाजिक, सांस्कृतिक मूल्य सहेजने, संस्कारों, संस्कृति को समझने में मदद मिलेगी। हमारे सांस्कृतिक ताने–बाने को मजबूती प्रदान होगी। इससे बच्चों की विचार व्यक्त करने की पद्धति भी सरल होगी। प्रांरभिक स्तर पर इसे अपनाए जाने से बच्चों द्वारा बोली जाने वाली भाषा से पढ़ाई में रोचकता का अनुभव होगा फलस्वरूप बच्चों में शिक्षा के प्रति रुचि बढ़ेगी, उनमें आत्मविश्वास जागेगा। वे विषय वस्तु से आधारभूत ज्ञान से जल्दी एकाकार होंगे, उसे समझेंगे।

विगत कई वर्षों से अभिभावक अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों में पढ़ाने में स्वयं की प्रतिष्ठा समझते हैं। बालक गुणवत्ता में कितना भी पिछड़ा क्यों ना हो अंग्रेजी की अशुद्ध भाषा से भी वे संतुष्ट हैं। उनका मानना है कि आंग्ल भाषा सीखना यही जीवन की सफलता की कुंजी है। 2017–18 में देश के ग्रामीण क्षेत्रों में निजी शालाओं में प्रवेश दिलाने वाले 20 प्रतिशत, शहरी क्षेत्रों में निजी विद्यालयों में प्रवेश दिलाने वाले 14 प्रतिशत लोगों की मानसिकता बच्चों को अंग्रेजी माध्यमों में पढ़ाने की रही परिणामस्वरूप गुणवत्ता में ये बच्चे पिछड़ गए। ये बच्चे प्राथमिक स्तर पर पिछड़ जाने के बाद माध्यमिक, उच्चतर माध्यमिक शिक्षा, महाविद्यालय शिक्षा के स्तर तक पहुँचते–पहुँचते सीखने की प्रक्रिया में बुरी तरह पिछड़ते हैं। ये रटते हुए उत्तीर्ण तो हो जाते हैं लेकिन कुछ नया सीखने के प्रत्येक स्तर पर पीछे हटते जाते हैं। नई शिक्षा नीति बच्चों की सीखने की प्रक्रिया भी सहज बना देगी। इसके शिक्षण संबंधी निर्देश जब विद्यार्थियों को मातृभाषा या स्थानीय भाषा में मिलने लगेंगे तब वे खेल भावना से इसे अपनाएँगे।

प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक जॉर्ज ग्रियर्सन ने भारतीय भाषाओं का विशद अध्ययन किया था। उन्होंने भाषा विज्ञान और व्याकरण के साथ ही देश का भाषा संबंधी मानचित्र भी बनाया था जिसमें भारतीय भाषाओं, बोलियों को चिह्नित कर उनका सांस्कृतिक महत्व बताया था। उन्होंने भाषाओं, बोलियों का दैनिक जीवन में व्यवहार, उनका सूक्ष्म अध्ययन, शिक्षा में प्रभाव आदि पर विचार व्यक्त किए थे। अन्य भाषा वैज्ञानिक भी यह मानते हैं कि मातृभाषा, क्षेत्रीय भाषाएँ बच्चों को सामाजिक और सांस्कृतिक परिचय के अवसर प्रदान करती हैं। इतना ही नहीं उत्तम शिक्षा तब होती है जब शिक्षा के माध्यम से बच्चों में आत्मसम्मान विकसित होता है। कक्षा में सकारात्मक और भयमुक्त वातावरण के साथ अच्छे परिणाम आते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से बच्चे

उत्कृष्ट प्रदर्शन करें। जब बच्चे अंग्रेजी भाषा में शिक्षण में श्रेष्ठ प्रदर्शन नहीं कर पाते हैं तब उनमें मनोग्रंथि विकसित हो जाती है। वे अन्य बच्चों की तुलना में आत्मग्लानि का अनुभव करने लगते हैं, परिणामस्वरूप अवसाद, आत्महत्या जैसे कदम उठा लेते हैं। अतः आवश्यक है कि उन्हें अपनी भाषा में खुलकर प्रदर्शन करने का अवसर दें, इसी तरह बच्चों की समझ से परे भाषा में यदि शिक्षा दी जाए तो बच्चे उस भाषा को, उस विषय को कंठस्थ कर लेते हैं, रट लेते हैं या यांत्रिक रूप से दोहराने लगते हैं। इससे वे ज्ञान वृद्धि से वंचित हो जाते हैं, उनकी चिंतन क्षमता कम हो जाती है फिर वे विद्यालय जाना छोड़ देते हैं। यदि बच्चों को विद्यालय में मातृभाषा में शिक्षण मिलेगा तो वे पढ़ाई को बेहतर तरीके से समझेंगे। उनमें भाषाई कुशलता का विकास होगा, वे अपनी पढ़ाई को यथावत जारी रखेंगे।

भाषा को अपनाने में परिवेश, माहौल का भी प्रभाव पड़ता है। मेरे परिचितों में मराठी परिवार में एक बालक है जिसकी माँ बंगाली और पिता मराठी हैं। बच्चे के शैशवावस्था से बाल्यावस्था में पदार्पण के साथ ही उसके अक्षर ज्ञान के साथ बांग्ला शब्दों का शब्दकोश बढ़ता गया। बालक विद्यालय में अंग्रेजी तथा घर में माँ के साथ बंगाली में बातचीत करता था। दादा–दादी चिंतित हुए, उन्होंने बालक के साथ मराठी संवाद प्रारंभ किए। बालक कुछ दिन असहज हुआ। धीरे–धीरे घर से बाहर, मित्रों के साथ खेलते हुए मराठी शब्द उसे सहज लगने लगे। वह अंग्रेजी, मराठी, बांग्ला तीनों भाषाएँ समझने लगा। वर्तमान में बालक छठी कक्षा में पढ़ता है तथा तीनों भाषाओं में सहज संवाद करता है। तात्पर्य यह है कि बच्चे को जिस भाषा का स्वस्थ माहौल मिले वह उसे सहज ही स्वीकार कर लेता है, इसी तरह नई शिक्षा नीति में बच्चों को मातृभाषा, घरेलू भाषा ही आसान लगेगी। सच्चाई यह है कि बच्चों को मातृकुल परिवेश की भाषा अर्थात् मातृभाषा में शिक्षा देना अर्थात् उनके व्यक्तित्व विकास में सहयोग करना उन्हें उच्च शिक्षित करना है।

शुरुआती दौर में बच्चे जब पाठशाला जाते हैं तब वे मातृभाषा में ही अपनी आवश्यकताओं की अभिव्यक्ति करते हैं। मातृभाषा में संवाद साध लेने का उनमें आधारभूत कौशल होता है, जिस पर बड़ी कक्षाओं में उनका भाषिक ज्ञान, बौद्धिक विकास निर्भर करता है। ऐसे में मूर्त वस्तुओं के माध्यम से अमूर्त शब्द या अवधारणाएँ यथा सच्चाई, आकार, ईमानदारी जैसे शब्दों के भाव समझने में आसानी होती है। यह संज्ञानात्मक भाषाई कौशल बड़ी कक्षाओं में अनिवार्य होता है। यह कौशल बच्चों में शनैः–शनैः विकसित होता है जो मातृभाषा के द्वारा ही संभव होता है। आधुनिक काल के अग्रणी कवि भारतेंदु हरिश्चंद्र मातृभाषा में शिक्षा की अवधारणा को स्वीकार करने का आग्रह करते हैं। वे कहते हैं कि–

"और एक अति लाभ यह, या में प्रगट लिखात,
निज भाषा में कीजिए जो विद्या की बात।"

मातृभाषा में शिक्षा देने से बच्चे हमारी परंपराओं, प्राकृतिक, सामाजिक परिवेश को आसानी से समझेंगे। उनके आहार–व्यवहार, सगे–संबंधी, मित्र–सखा, पास–पड़ोस, विद्यालय के सहपाठी, शिक्षक, विषय संबंधी ज्ञान से वे आसानी से जुड़ेंगे। यह जुड़ाव मानसिक, बौद्धिक होने के साथ ही आत्मीयता भरा होगा जिससे ज्ञानार्जन तो होगा ही विद्यार्थियों का सामाजिक, नैतिक, आचरण निर्मल और शुद्ध होगा। मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने का मुख्य उद्देश्य हमारे समाज और देश की संप्रेषण प्रक्रिया को, शक्ति को, सशक्त सुदृढ़ और विस्तृत बनाना है। इससे व्यक्ति संस्कारी होता है उसका सामाजीकरण होता है। भारत में हिंदी, मराठी, गुजराती, बांग्ला, कन्नड, पंजाबी, तमिल, तेलुगु, डोगरी इत्यादि विभिन्न मातृभाषाएँ हैं। इन भाषाओं में शिक्षण देना कुछ हद तक चुनौतीपूर्ण भी है। सरकारी पाठशालाओं में शिक्षकों की उपस्थिति अनिवार्य करनी होगी। बच्चों को निजी पाठशालाओं से अधिक सरकारी पाठशालाओं में प्रवेश के लिए प्रेरित किया जाए। शिक्षकों को अभिभावकों एवं बच्चों के मस्तिष्क से यह बात निकालनी होगी कि केवल अंग्रेजी से ही उनकी

प्रगति होगी, इस भ्रमजाल से बाहर निकलते ही बच्चे मातृभाषा में आत्मविश्वास के साथ शिक्षा ग्रहण करेंगे। हमें हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं को रोजगार से जोड़ना होगा। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, वाणिज्य, अर्थशास्त्र जैसे सभी विषयों को अपनी भाषाओं से जोड़ना होगा। डिजिटल शिक्षा हेतु भाषा संबंधी संसाधनों को विकसित करना अत्यंत आवश्यक होगा इससे भाषाओं का आधुनिकीकरण भी होगा। नई शिक्षा नीति में त्रिभाषा प्रणाली निश्चित रूप से रोजगार के नए विकल्प लाएगी। इससे ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं की पूर्ति होगी। शैक्षणिक गुणवत्ता बढ़ने के साथ नवाचार और अनुसंधान को भी बढ़ावा मिलेगा। इसमें आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, थ्री डी मशीन, डेटा विश्लेषण, जैव प्रोद्योगिकी जैसे अत्याधुनिक विषयों का भी समावेश किया जाना है। हाँ, ऐसे विषयों को हमारी भाषाओं में लाने के लिए कुछ समय लग सकता है लेकिन समेकित प्रयासों से यह संभव होगा। नई शिक्षा नीति में शिक्षा के वैश्विक मानकों का प्रयोग करने से देश की भावी पीढ़ी केवल भारत की नागरिक नहीं होगी वरन् वह 'वैश्विक नागरिक' की संज्ञा से पहचानी जाएगी। इस पीढ़ी में साहित्यिक रसास्वादन की क्षमता, भाषा की सूक्ष्मता, विशिष्टता के साथ सर्जनात्मक तार्किक शक्ति का विकास होगा। ये ज्ञान–विज्ञान का नूतन साहित्य सृजन करेंगे। निश्चित रूप से ये सशक्त राष्ट्र निर्माता, शिक्षा अध्येता, मानवता के पुजारी होंगे। इस सहज शिक्षा के गर्भ से नई संभावनाएँ, नए मार्ग, नए लक्ष्य प्राप्त होंगे। नई शिक्षा नीति से नवीन भारत का उदय होगा, हमारे नौनिहाल अपनी विरासत को, देश को एकता के सूत्र में पिरो रही हिंदी भाषा, मातृभाषा, क्षेत्रीय भाषा के द्वारा सूर्यरश्मियों के उजास– सी जाज्वल्यमय आभा बिखेरेंगे।

– वैभव अपार्टमेंट, उत्कर्ष बगीचे के सामने, 69, लोकमान्य नगर, इंदौर, मध्य प्रदेश

❑❑❑

नई शिक्षा नीति एवं भारतीय भाषाएँ

प्रो. प्रदीप के. शर्मा

किसी भी राष्ट्र के लिए तीन तत्व अनिवार्य हैं– एक जन, दूसरा भूमि और तीसरा संस्कृति। कुछ लोग राष्ट्र को एक राजनीतिक इकाई भी मानते हैं परंतु वास्तव में ऐसा नहीं है। राजनीतिक सत्ताएँ बदलती रहती हैं लेकिन राष्ट्रीयता और राष्ट्र बदलता नहीं है।

पुण्यभूमि भारत सदियों से अपनी कला, संस्कृति, शिक्षा, दर्शन, चिंतन आदि की गौरवशाली परंपराओं पर गर्व करता रहा है। भारत अपने गौरवपूर्ण और स्वर्णिम और अतीत के वैभव के लिए आज भी विश्व विख्यात है। तत्कालीन भारत के बहुमुखी विकास और उन्नति का श्रेय यहाँ की शिक्षा व्यवस्था व संस्कृति पर ही निर्भर करता है। यहाँ के ज्ञान, विज्ञान एवं कला से प्रभावित होकर ही तो विदेशों के बहुत से विद्यार्थी एवं विद्वान वर्षों तक भारत में रहकर ज्ञानार्जन करते थे।

अतः उस विद्या को प्राप्त करने के लिए महान तप या परिश्रम की आवश्यकता है। कठोपनिषद – 1/3/24 में उल्लेख है–

उत्तिष्ठित जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गम्पथस्तत् कवयो वदन्ति।

अर्थात् उठो, जागो और अपने लक्ष्य को प्राप्त करो, क्योंकि क्षुरपग या ब्लेड की धार के समान यह ज्ञान मार्ग है, जिसमें पदभ्यां (पैरों) से चलना बड़ा कठिन है। ऐसा विद्वान, कवि लोग कहते हैं।

स्वामी विवेकानंद जी ने कहा है "अगर आपको मनुष्य का निर्माण करना है– व्यक्ति विशेष में मनुष्य का निर्माण। मनुष्य द्वारा उन लौकिक व अलौकिक गुणों को धारण करना है जिससे वह दिव्य पुरुष बन जाए और आत्मविश्वास, आत्मश्रद्धा, आत्मत्याग, आत्मनियंत्रण, आत्मनिर्भरता, मानव प्रेम जैसे गुणों को आत्मसात् कर लें, सभी प्रकार की शिक्षा और अभ्यास का उद्देश्य मनुष्य निर्माण ही हो, सारे प्रशिक्षण का अंतिम ध्येय मनुष्य का विकास करना ही हो"।[1] गुरु और शिष्य के विषय में भी उन्होंने कहा है– "गुरु को शिष्य की प्रवृत्ति में अपनी सारी शक्ति बचा देनी चाहिए। सच्ची सहानुभूति के बिना हम अच्छी शिक्षा कभी नहीं दे सकते। शिष्य के लिए आवश्यकता है शुद्ध ज्ञान की, सच्ची पिपासा और लगन के साथ परिश्रम की। विचार, वाणी और कार्यों की पवित्रता नितांत आवश्यक है।"[2] मातृभाषा को लेकर आचार्य विनोबा भावे का कहना है– "मैं दुनिया की सभी भाषाओं की इज्जत करता हूँ पर मेरे देश में मातृभाषा की इज्जत न हो, यह मैं सह नहीं सकता।"[3] भाषा किसी देश की पहचान और परिचय होती है। बोली–भाषा मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति है। विदेशी भाषा की अपेक्षा व्यक्ति अपनी बोली–भाषा में अपने विचारों–भावनाओं का साधिकार, अच्छे तरीके से अच्छी शैली में प्रस्तुत कर सकता है। क्योंकि वह आत्मा से जुड़ी होती है। फिर भाषा का सवाल देश की अस्मिता से भी संबंधित है।

नई शिक्षा नीति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें कला, संस्कृति और भाषा के माध्यम से मनुष्य की सृजनात्मक क्षमता को जागृत करने पर बल दिया गया है।

"शिक्षा पूर्ण मानव क्षमता को प्राप्त करके एक न्याय संगत और न्यायपूर्ण समाज के विकास और राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिए मूलभूत आवश्यकता है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुँच प्रदान करना, वैश्विक मंच पर सामाजिक न्याय और समानता, वैज्ञानिक उन्नति, राष्ट्रीय एकीकरण और सांस्कृतिक संरक्षण के संदर्भ में भारत की सतत प्रगति और आर्थिक विकास की कुंजी है। सार्वभौमिक उच्चतर स्तरीय शिक्षा वह उचित माध्यम है, जिससे देश की समृद्ध प्रतिभा और संसाधनों का सर्वोत्तम विकास और संवर्द्धन व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व की भलाई के लिए किया जा सके। अगले दशक में भारत दुनिया का सबसे युवा जनसंख्यावाला देश होगा और इन युवाओं को उच्चतर गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराने पर ही भारत का भविष्य निर्भर करेगा" [4] राष्ट्रीय शिक्षा नीति लगभग पाँच वर्षों की तैयारियों के बाद सामने आई है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद यह पहला राष्ट्रीय प्रयास है, जिसमें भारतीय भाषाओं के बारे में समग्रता से विचार किया गया है, नीति में भाषा की केंद्रीयता को इस बात से समझा जा सकता है कि 66 पन्ने के इस प्रारूप में 206 बार 'भाषा' शब्द आया है, जिसमें से 126 बार बहुवचन के रूप में और 80 बार एक वचन के रूप में। यहाँ बहुवचन रूप के आधिक्य का होना इस बात को स्थापित करता है कि किसी एक भाषा और संस्कृति की बात न करके सभी भाषाओं पर केंद्रित बहुलता पर जोर दिया गया है। शिक्षा नीति में यह आत्म–स्वीकृति है कि विगत वर्षों में भारतीय भाषाओं के प्रति यथोचित ध्यान नहीं दिया गया पर अब यह एक महत्वपूर्ण बिंदु है।

नई शिक्षा नीति में सरकार की यह योजना है कि स्कूली शिक्षा से उच्च शिक्षा तक भारतीय भाषाओं को शामिल किया जाए। इसमें इंजीनियरिंग और मेडिकल जैसी पढ़ाई भी शामिल की गई है। नई शिक्षा नीति में स्कूली शिक्षा में अब त्रिभाषा फॉर्मूला चलेगा।इसमें संस्कृत के साथ तीन अन्य भारतीय भाषाओं का विकल्प होगा। वैकल्पिक विषय में ही विदेशी भाषा चुनने की आजादी होगी। सरकार ने पाँचवी कक्षा तक मातृभाषा, स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा में पढ़ाई का माध्यम रखने की योजना बनाई है। इसे कक्षा आठ या उससे आगे भी बढ़ाया जा सकता है। विदेशी भाषाओं की पढ़ाई सेकेंडरी स्तर से होगी। शिक्षा नीति में अलग–अलग भाषाओं पर भी जोर दिया गया है और यह भी कहा गया है कि किसी पर कोई भी भाषा थोपी नहीं जाएगी।

क्यों है मातृभाषा जरूरी

स्वतंत्रता के बाद भारत में शिक्षा का प्रचार–प्रसार अत्यंत तीव्रता से हुआ है। प्राथमिक विद्यालय से लेकर विश्वविद्यालय तक के सभी स्तरों की शिक्षण संस्थाओं में भारी वृद्धि हुई है। राष्ट्रपिता बापू ने प्राचीन भारतीय आदर्श, प्रगतिशील राष्ट्रों की शिक्षा तथा देश की तत्कालीन परिस्थिति को ध्यान में रखकर शिक्षा के विभिन्न पहलुओं, शिक्षण पद्धति, पाठ्यक्रम, शिक्षक, विद्यार्थी, विद्यालय, शिक्षा–योजना एवं अर्थव्यवस्था पर गंभीरतापूर्वक विचार किया और उसे साकार रूप देने के लिए आजीवन प्रयासरत रहे। आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षा–प्रणाली में कायापलट हो और ऐसी शिक्षा–प्रणाली तैयार हो जो सार्वजनिक हो। जिस शिक्षा–प्रणाली में बालकों के ही समान प्रौढ़ों की शिक्षा पर जोर नहीं दिया जाएगा तो वह असफल होगी। जिस शिक्षा–प्रणाली में मातृभाषा को अपना स्वाभाविक अग्रस्थान नहीं मिलता उसे कभी पूर्ण नहीं मान सकते।

नई शिक्षा नीति में प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा/स्थानीय भाषा के प्रयोग पर जोर दिया गया है जिसका उद्देश्य बच्चों को उनकी मातृभाषा और संस्कृति से जोड़े रखने का है। ताकि उनको शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ाया जाए। अपनी मातृभाषा/स्थानीय भाषा में बच्चों को अध्ययन करने में आसानी होगी और वह जल्दी सीख पाएगा। छोटे

बच्चे घर में बोली जाने वाली मातृभाषा/स्थानीय भाषा को जल्दी सीखते हैं, यदि विद्यालय में भी मातृभाषा का प्रयोग होगा तो इसका ज्यादा प्रभाव होगा और वे जल्दी सीख पाएँगे। उनके ज्ञान में भी बढ़ोत्तरी होगी। इसके साथ नई शिक्षा प्रणाली में भारतीय भाषाओं को शामिल करने का उद्देश्य है जिसमें बच्चों के संस्कार, नैतिक मूल्य तथा उनकी जीवनचर्या में भी बदलाव आ सके। ताकि वह अपनी संस्कृति को पहचान सकें और इससे भाषाओं को नया जीवनदान मिलेगा। इसी संदर्भ में राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन जी कहते हैं "मातृभाषा क्या है? यह सजीव शब्दों का कोष है। यह सुहावने चिह्नों का भंडार है। यह जाति के जीवन की साक्षात् मूर्ति है। यह जातीय शक्ति की वह प्रतिमा है, जो जाति के विचारों और उसके हृदय स्थित भावों को सुरक्षित रखकर उन्हें दूसरों पर प्रकट करती है। हमारे इतिहास, विचार और प्राचीन साहित्य भंडार की यह कुंजी है। इससे भी अधिक यह उस प्रभावशाली साहित्य के दिग्दर्शन कराती है, जो मानवीय विचार और प्रबल वासनाओं से परिपूर्ण है, जिसे भुलाना मानो आत्मघात करना है। हमारा भावी साहित्यिक और मानसिक गौरव उसी मातृभाषा के भविष्य पर निर्भर है"।[5]

मातृभाषा से बच्चों का परिचय घर और परिवेश से ही शुरू हो जाता है। इस भाषा में बातचीत करने और चीजों को समझने–समझाने की क्षमता के साथ बच्चे विद्यालय में दाखिला लेते हैं। अगर उनकी इस क्षमता का इस्तेमाल पढ़ाई के माध्यम के रूप में मातृभाषा का चुनाव करके किया जाए तो इससे सकारात्मक परिणाम देखने को मिलेगें। "यूनेस्को द्वारा भाषाई विविधता को बढ़ावा देने और उनके संरक्षण के लिए अंतरराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस की शुरुआत भी की गई। हम अक्सर देखते हैं कि बहुत सी बातें अवधी, भोजपुरी, ब्रजभाषा, मगही, मराठी, कोंकणी और मालवी, निमाड़ी आदि भाषाओं या बोलियों में कही जाती हैं। उनका व्यापक असर होता है"।[6]

शिक्षा की व्यवस्था हो चाहे व्यवस्था की शिक्षा दोनों में भाषा का महत्व सर्वविदित है। व्यावहारिक जीवन शैली हो चाहे अध्ययनशीलता, भाषा के बिना सब व्यर्थ है। भाषा को सीखे, समझे और जाने बिना कुछ भी सीखना असंभव है। भारतीय नवजागरण के अग्रदूत आधुनिक काल के पितामह भारतेंदु हरिश्चंद्र जी ने भाषा का महत्व इस प्रकार प्रकट किया है–

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को शूल।।[7]

संस्कृत भाषा को मुख्यधारा में लाने का प्रयास

भारत की देव वाणी, प्राचीन भाषा संस्कृत की प्रगति के लिए इसे मुख्यधारा में लाने का महत्वपूर्ण योगदान तथा विभिन्न विधाओं एवं विषयों को साहित्यिक, सांस्कृतिक महत्व और वैज्ञानिक प्रगति के चलते इस भाषा को उच्च शिक्षा संस्थानों में ज्ञान–विज्ञान की भाषा के रूप में प्रयोग करने का सुझाव दिया गया है। संस्कृत विश्व की सबसे समृद्ध भाषा है। "इसमें शब्दों की संख्या लगभग 10 करोड़ है और अंग्रेजी में केवल 35 हजार। हिंदी के मूल शब्द केवल 9 लाख हैं। विश्व में हिंदी केवल 85 करोड़ लोगों द्वारा बोली और समझी जाती है"।[8]

नई शिक्षा नीति में सभी भारतीय भाषाओं के संवर्धन को ध्यान में रखते हुए सुझाव दिया गया है कि भाषाओं के शब्द भंडार लगातार अपडेट होते रहें। कविता, उपन्यास, पत्र–पत्रिकाओं का प्रवाह बना रहे, उनका व्यापक प्रसार, समसामयिक मुद्दों और अवधारणाओं पर भाषाओं में चर्चा हो, तभी भाषाओं का संरक्षण हो सकता है। विदेशी भाषा अंग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन, कोरियाई में यह क्रम चल रहा है, किंतु भारतीय भाषाओं को जीवंत और प्रासंगिक बनाए रखने के मामले में अभी तक भारत की गति काफी धीमी रही है। "इसके लिए भाषा शिक्षकों की कमी दूर करने के साथ ही भाषाओं को अधिक व्यापक रूप में बातचीत और शिक्षण अधिगम के लिए प्रयोग में लाए जाने की आवश्यकता प्रतिपादित की गई है"।[9]

शिक्षा प्रथम कर्तव्य है शिक्षा बढ़ाना देश में,
शिक्षा बिना ही पड़ रहे हैं आज हम सब क्लेश में
शिक्षा बिना कोई कभी बनता नहीं सत्पात्र है,
शिक्षा बिना कल्याण की आशा दुराशा मात्र है।[10]

अंत में यही कहना चाहूँगा नई शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं/स्थानीय भाषाओं का बहुमुखी विकास होगा। बच्चे प्राथमिक स्तर से ही अपनी मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण करेंगे, जिससे अपनी संस्कृति को पहचान सकेंगे और यह सभी को आत्मनिर्भर बनने में मदद करेगी। इसके लिए हमें मानसिक रूप से तैयार होना है। बस बदलना है तो हमें अपनी मानसिकता।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. विवेकानंद साहित्य, पृ. सं. 78
2. डॉ. मुकेश कुमार : हिंदी कविता राष्ट्रीय चेतना एवं संस्कृति : पृ. भूमिका
3. संपादक, प्रभात शास्त्री, राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन एवं गांधी अंक, पृ. सं. 15
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, पृ. सं. 3
5. संपादक, प्रभात शास्त्री, राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन एवं गांधी अंक, पृ. सं. 15
6. इंटरनेट से
7. संपादक, डॉ. नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास
8. इंटरनेट से
9. इंटरनेट से
10. राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, भारत–भारती, पृ. सं. 152

– कुलसचिव उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, चेन्नई

❑❑❑

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के क्रियान्वयन में भारतीय भाषाओं की भूमिका

डॉ. अभिषेक शर्मा

भाषा शब्द की उत्पत्ति संस्कृत की 'भाष्' धातु से हुई है। भाषा का मूलाधार ध्वनि है जबकि लिपि का मूलाधार लिखित संकेत। वस्तुतः भाषा के कुल तीन तत्व होते हैं– अक्षर, शब्द और वाक्य। वाक्य की निर्मिति शब्द से होती है और शब्द अक्षरों के संयोग से बनते हैं। मानव व्यवहार में भाषा के सामान्यतः तीन रूप पाए जाते हैं– वाचिक, सांकेतिक और लिखित। विश्व के अधिकांश राष्ट्र अपने नागरिकों की शिक्षा–दीक्षा का प्रबंध अपनी राष्ट्रभाषा में करते हैं किंतु दुर्भाग्यवश भारतवर्ष में अभी तक ऐसा नहीं हो पाया है। समस्त भारतीय भाषाएँ 'संस्कृत' से उत्पन्न होने के कारण आंतरिक रूप से तो एक हैं किंतु राजनीतिक और क्षेत्रीयतावाद के कारण उनमें यदा–कदा वैमनस्यता के भाव दिखाई पड़ जाते हैं। 'हिंदी भाषा' के प्रति इस अनौचित्यपूर्ण विरोध पर विचार करते हुए प्रसिद्ध भाषाविद् डॉ. हरदेव बाहरी लिखते हैं कि– "हिंदी का विरोध सबसे अधिक तमिलनाडु में है। वहाँ के राजनीतिबाजों ने हिंदी विरोध को चुनाव का मुद्दा बना रखा है। यदि वे तमिल का समर्थन करते तो बात समझ में भी आती परंतु वे अंग्रेजी का समर्थन करते हैं मानो अंग्रेजी से तमिल भले ही दूषित हो जाए या अंग्रेजी पढ़े–लिखे उनसे बाज़ी मार ले जाए तो कोई बात नहीं। इस प्रकार राजभाषा हिंदी तमिल नेताओं की राजनीति में फँसी है।"[1] राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अध्याय 14 के उपशीर्षक 'बहुभाषावाद और भाषा की शक्ति' के बिंदु 4:15 में कहा गया है कि– "जैसा कि दुनिया भर के कई विकसित देशों में ऐसा देखने को मिलता है कि अपनी भाषा, संस्कृति और परंपराओं में शिक्षित होना कोई बाधा नहीं है, बल्कि वास्तव में शैक्षिक, सामाजिक और तकनीकी प्रगति के लिए इसका बहुत बड़ा लाभ ही होता है। भारत की भाषाएँ दुनिया में सबसे समृद्ध, सबसे वैज्ञानिक, सबसे सुंदर और सबसे अभिव्यंजक भाषाओं में से हैं, जिनमें प्राचीन और आधुनिक साहित्य (गद्य और कविता दोनों) के विशाल भंडार हैं। सांस्कृतिक और राष्ट्रीय एकीकरण की दृष्टि से सभी युवा भारतीयों को अपने देश की भाषाओं के विशाल और समृद्ध भंडार और इनके साहित्य खज़ाने के बारे में जागरूक होना चाहिए।"[2] ऊपर उद्धृत भाषाविद् के कथन और राष्ट्रीय शिक्षा नीति में वर्णित भारत सरकार के प्रयासों में एक बहुत बड़ा अंतर दिखाई पड़ता है। एक तरफ तो डॉ. हरदेव बाहरी के विचारों में हिंदी भाषा के हितार्थ परिवर्तनात्मक आक्रोश दिखाई पड़ता है, तो वहीं दूसरी तरफ भारत सरकार की शिक्षा नीति आपसी भाईचारे, भाषागत सामंजस्य और समन्वयात्मक प्रयोग पर टिकी हुई है। राष्ट्रीय भाषा नीति 2020 में स्पष्ट रूप में उल्लिखित (बिंदु 4:13) है कि– "संवैधानिक प्रावधानों, लोगों, क्षेत्रों और संघ की आकांक्षाओं और बहुभाषावाद और राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने की जरूरत को ध्यान में रखते हुए त्रिभाषा फॉर्मूले को लागू किया जाना जारी रहेगा।

हाँलाकि तीन भाषा के इस फॉर्मूले में काफी लचीलापन रखा जाएगा और किसी भी राज्य पर कोइ भाषा थोपी नहीं जाएगी। बच्चों द्वारा सीखी जानेवाली तीन भाषाओं के विकल्प राज्यों, क्षेत्रों और निश्चित रूप से छात्रों के स्वयं के होंगे जिनमें कम से कम तीन में से दो भाषाएँ भारतीय भाषाएँ हों।"[3]

यहाँ हम भारत सरकार के भाषाविषयक समग्रतावादी दृष्टिकोण से सहज ही अनुमान लगा सकते हैं कि वह किस प्रकार भारतवर्ष की सामूहिक भाषा शक्ति द्वारा संस्कृति और ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में विश्व का नेतृत्व करना चाहती है। भारतीय भाषा के समग्र विकास और उसके अध्ययन–अध्यापन की दृष्टि से मैं राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 को सर्वथा सहिष्णु और समन्वयवादी मानता हूँ। राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 संस्कृत भाषा के प्रचार–प्रसार के लिए भी उत्सुक है। इससे यह पता चलता है कि इस शिक्षा नीति में अनेक सिद्धांतों का निर्माण भारतवासियों की मूल भावनाओं को ध्यान में रखकर किया गया है। इसलिए यदि कोई कहना चाहे तो वह कह सकता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 इक्कीसवीं सदी की एक ऐसी भावनात्मक शिक्षा नीति है जिसके सिद्धांतों और संकल्पों के निर्माण में भारतीयों की भावनाओं को प्रमुखता दी गई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में यह तथ्य विशेष महत्व के साथ उल्लिखित (बिंदु 4:18) है कि– "भारत में शास्त्रीय तमिल, तेलुगु, कन्नड, मलयालम और ओड़िया सहित अन्य शास्त्रीय भाषाओं में एक अत्यंत समृद्ध साहित्य है, इन शास्त्रीय भाषाओं के अतिरिक्त पाली, फारसी और प्राकृत और उनके साहित्य को भी उनकी समृद्धि के लिए और भावी पीढ़ी के सुख और समृद्धि के लिए संरक्षित किया जाना चाहिए। जैसे ही भारत पूरी तरह से विकसित देश बनेगा, अगली पीढ़ी भारत के व्यापक और सुंदर शास्त्रीय साहित्य के अध्ययन में भाग लेना और इंसान के रूप में समृद्ध होना चाहेगी। सभी भारतीय भाषाओं, जो समृद्ध मौखिक और लिखित साहित्य, सांस्कृति परंपराओं और ज्ञान को अपने में संजोए हुए है, के लिए भी इसी प्रकार के प्रयोग किए जाएँगे।"[4]

राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 न सिर्फ भारतवर्ष के सांस्कृतिक उन्नयन के लिए वचनबद्ध है अपितु उसके अधीन विश्व की अनेक महत्वपूर्ण विदेशी भाषाओं के अध्ययन–अध्यापन की (बिंदु 4:20) व्यवस्था भी भारतवर्ष में ही की गई है जिससे भारतवर्ष के युवा विश्व नागरिकों से एक स्वस्थ प्रतिस्पर्धा कर सकें। इस तरह राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के माध्यम से भारतवर्ष कालांतर में विश्व नेतृत्व की बागडोर भी संभाल सकता है, क्योंकि संपूर्ण राष्ट्रीय शिक्षा नीति में, विश्व संस्कृति का समावेश, विश्व बंधुत्व की भावना का प्रचार–प्रसार, मानवजाति का कल्याण और विश्व नेतृत्व के स्नेहिल भाव निहित हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में लिखा है कि– "भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी में उच्चतर गुणवत्ता वाले कोर्स के अलावा विदेशी भाषाएँ जैसे कोरियाई, जापानी, थाई, फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश, पुर्तगाली और रूसी भी माध्यमिक स्तर पर व्यापक रूप में अध्ययन हेतु उपलब्ध करवाई जाएँगी, ताकि विद्यार्थी विश्व संस्कृतियों के बारे में जानें, और अपनी रुचियों और आकांक्षाओं के अनुरूप अपने वैश्विक ज्ञान को और दुनियाभर में घूमने–फिरने को सहजता से बढ़ा सके।"[5]

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के इन अनुच्छेदों के मूल मंतव्य के आलोक में अगर हम विचार करें तो यह ज्ञात होता है कि वर्तमान राष्ट्रीय शिक्षा नीति भारतीय शिक्षा व्यवस्था के उदारीकरण, शिक्षा की सर्वव्यापकता, शिक्षा की समाजोन्मुखता के साथ–साथ सभी भाषाओं के विकास का एक खुला मंच है। भारतीय ही नहीं अपितु विश्व की अनेक भाषाओं को उनके नामों और उपयोगिताओं के साथ राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में जगह दी गई है और भारतीय उन सभी के संरक्षण के लिए वचनबद्ध हैं। शिक्षा मनुष्य एवं समाज दोनों को समवेत रूप से गरिमामय बनाती है। मनुष्य किसी भाषा के माध्यम से ही ज्ञान लाभ प्राप्त कर सकता है इसलिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति के इन बिंदुओं को ध्यान में रखकर अगर इसका मूल्यांकन किया जाए

तो निश्चित रूप से भाषाओं का विकास और शिक्षा व्यवस्था दोनों ही दृष्टियों से भारतवर्ष की वर्तमान शिक्षा नीति विश्व के संपूर्ण मानव समुदाय को आलोकित करेगी। भारतवर्ष की सभी भाषाएँ वर्तमान शिक्षा नीति के मूल मंतव्यों को अध्ययन–अध्यापन के द्वारा भावी पीढ़ी के मन–मस्तिष्क में लगातार अंकित कर रही हैं। यही सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अखिल भारतीय स्तर पर क्रियान्वयन में भारतीय भाषाओं का स्तुत्य सहयोग और गौरवशाली भूमिका है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. बाहरी, हरदेवः हिंदी भाषा, पृ. सं. 148, संस्करण 2017 (पुनर्मुद्रण), अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद– 211004

2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, पृ. सं. 20–21, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, शास्त्री भवन, नई दिल्ली– 110001, भारत।

3. वही, पृ. सं. 20

4. वही, पृ. सं. 22

5. वही, पृ. सं. 22

– समन्वयक, हिंदी विभाग , रेवेंशा विश्वविद्यालय, ओड़िशा, भारत

❑❑❑

नई शिक्षा नीति में राष्ट्रीय विकास का प्रमुख अस्त्र : अनुवाद

डॉ. हरीश कुमार सेठी

प्राचीनकाल से ही बहु–सांस्कृतिक एवं बहुभाषा–भाषियों की कर्मभूमि भारत देश को भाषाई वैविध्य से परिपूर्ण महाकाय देश कहा जाता है। इस देश की माटी में बहुभाषिकता, भारतीय विद्वता की वह अनूठी उपलब्धि है जिसका प्रमाण वैश्विक पटल पर भारतीय मनीषियों की बौद्धिकता के डंके के रूप में आज भी बजता हुआ नजर आता है। लेकिन, इसके बावजूद, हकीकत यह भी है कि विभिन्न भारतीय भाषाओं का परिप्रेक्ष्य, भाषा–भाषी समाज की अस्मिताओं से जुड़ा हुआ भी है। ऐसे परिवेश में शिक्षा संबंधी नीतिगत फैसले लेना चुनौतीपूर्ण कार्य होता है। शिक्षा, ज्ञान अर्जित करने का वह माध्यम है जो भाषा के जरिए संपन्न हो पाता है। इसलिए शिक्षा और भाषा आपस में संबंधित विषय हैं। शासन–प्रशासन अपने दायित्व को अनुभव करते हुए शिक्षा के क्षेत्र में निवेश करके अपनी विशिष्ट और निर्माणकारी भूमिका निभाता है। इसी क्रम में शासन व्यवस्था करने वाली सरकार, देश की अन्य विकास संबंधी नीतियों के साथ–साथ शिक्षा नीति के दूरगामी प्रभावों को ध्यान में रखते हुए दूरदर्शी शिक्षा नीति तैयार करती है ताकि देश का विकास हो।

भारतीय शिक्षा जगत पर शिक्षा के इस दूरगामी प्रभाव को औपनिवेशिक शासनकाल के दौरान की लॉर्ड मैकाले की भाषा नीति के संदर्भ में देखा जा सकता है। इसे आधुनिक और पाश्चात्य शिक्षा व्यवस्था के नाम पर ईस्ट इंडिया कंपनी के शासनकाल से ही स्थापित करने के प्रयास कर दिए गए थे। इस तथाकथित शिक्षा व्यवस्था के अंतर्गत अंग्रेजी भाषा को उच्च स्तर पर ऐसा प्रतिष्ठित कराया गया कि उसके प्रभाव की छाया की ओट लिए आम भारतीय जनमानस आज तक पूरी तरह से मुक्त नहीं हो पाया है। सिर्फ इतना ही नहीं, आजादी के बाद हमारी शिक्षा व्यवस्था में किए गए कतिपय प्रयासों के बावजूद उसकी कतिपय सीमाएँ उभरकर सामने नजर आई हैं, लेकिन वह ढर्रे पर ही चल रही है। यह शिक्षा व्यवस्था, विद्यार्थी की अभिरुचि, योग्यता एवं जरूरत को दरकिनार करते हुए निश्चित ज्ञान, कौशल और योग्यता अर्जित करने पर केंद्रित रही है। स्वाभाविक है कि ऐसे में विद्यार्थियों में नई सोच, नई ऊर्जा को कोई स्थान और महत्व प्राप्त नहीं होता और हमारी शिक्षा उन्हें ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करने में सफल नहीं हो पाती है। जबकि, उससे पहले की भारत की प्राचीनकाल से चली आ रही गौरवशाली शिक्षा व्यवस्था में नालंदा और तक्षशिला जैसे विश्व–विख्यात शिक्षा केंद्र थे।

स्वतंत्र भारत में शिक्षा के क्षेत्र में विकास की दिशा में भी प्रयास शुरू किए गए थे। सर्वप्रथम, भारत के संविधान के नीति निदेशक तत्वों में ही देखें तो 6–14 वर्ष की आयु के बच्चों के लिए अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की बात कही गई। ये प्रयास वर्ष 1948 में उस समय से

साफ तौर पर नजर आते हैं जब सर्वपल्लि एस. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में 'विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग' को गठित किया गया था। आयोग ने भारत में शिक्षा प्रणाली को व्यवस्थित रूप देने के लिए काम शुरू किया। इस संदर्भ में वर्ष 1952 में लक्ष्मीस्वामी मुदलियार की अध्यक्षता में जहाँ माध्यमिक शिक्षा आयोग गठित किया गया, वहीं वर्ष 1964 में डॉ. दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में उच्च शिक्षा संबंधी आयोग गठित किया गया। कोठारी आयोग की सिफारिशों के आलोक में प्रस्तुत शिक्षा नीति पर वर्ष 1968 में एक प्रस्ताव प्रकाशित किया गया।

आगे चलकर वर्ष 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनी, जिसमें पूरे देश के लिए एक समान शैक्षिक ढाँचे को स्वीकार करते हुए 10+2+3 शिक्षा प्रणाली को अपनाया गया। इस नीति में 1992 में मामूली संशोधन किया गया। और, वर्ष 2020 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति को 2019 में प्रतिष्ठित विद्वान–मनीषी और इसरो के पूर्व अध्यक्ष श्री के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में गठित आयोग की सिफारिशों पर गहन–गंभीर विचार–मंथन, चर्चा–परिचर्चा और समालोचना आधारित चिंतन–विवेचन के पश्चात् सरकार ने प्रस्तुत किया।

औपनिवेशिक प्रभाव से मुक्त कराने वाली, लुप्त होती जा रही विभिन्न भारतीय भाषाओं की अस्मिता को बचाए रखने के साथ–साथ भारतीय ज्ञान परंपरा एवं संस्कृति के संरक्षण एवं भारतीयता को महत्व देते हुए देश–दुनिया की बदलती परिस्थितियों एवं जन–आकांक्षाओं की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के जरिए समय के अनुकूल आमूलचूल बदलाव करने का क्रांतिकारी प्रयास किया गया है। इस शिक्षा नीति के अनुसार, देश में पहले से चले आ रहे शिक्षा के प्रारूप को बदलने का प्रस्ताव है। इससे स्कूली शिक्षा और उच्चतर शिक्षा के स्तर पर सुधारों के प्रयास संभव हो सकेंगे। यह शिक्षा नीति, वर्ष 1986 से चली आ रही राष्ट्रीय शिक्षा नीति को प्रतिस्थापित कर देगी। शिक्षा जगत में व्यवहार में लाई जा रही वर्तमान शिक्षा नीति की कमियों को दूर करने वाली इस नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं, संस्कृति, ज्ञान परंपरा और भारतीयता को मजबूत करने का संकल्प है। इस शिक्षा नीति में स्कूली शिक्षा, उच्चतर शिक्षा, शोध–अनुसंधान और शिक्षा नियामक व्यवस्था के संदर्भों में शिक्षा के भारतीयकरण की परिकल्पना है। पहुँच (एक्सेसेबिलिटी), समानता, गुणवत्ता, सामर्थ्य और जवाबदेही के मूलभूत आधारों पर निर्मित और टिकी प्रस्तावित शिक्षा नीति वास्तव में संयुक्त राष्ट्र संघ के 'सतत विकास 2030 एजेंडा' के अनुरूप है। शिक्षा पर औपनिवेशिक प्रभाव से मुक्ति दिलाने की मूल भावना पर टिकी और विभिन्न दृष्टियों से विशिष्टता रखने वाली यह राष्ट्रीय शिक्षा नीति भारतीय ज्ञान परंपरा को बचाने और भारतीय भाषाओं–संस्कृति को मजबूत करने की दिशा में बहुत बड़ा कदम है।

भाषा के महत्व–प्रतिष्ठा के संदर्भ में देखें तो नई शिक्षा नीति में मातृभाषा, स्थानीय भाषाओं और क्षेत्रीय भाषाओं को भी विशेष महत्व प्रदान किया गया है। शिक्षा संबंधी नीति के इस मॉडल में त्रिभाषा सूत्र की नीति को भी बनाए रखा गया है। इसमें विदेशी भाषाओं को माध्यमिक शिक्षा में वैकल्पिक भाषा के रूप में पढ़ने का अवसर भी है। उल्लेखनीय है कि इस नीति में मूलतः बहुभाषावाद को शामिल किया गया है, देश की सभी भाषाओं को समान स्तर तक पहुँचाने की भावना बलवती है। इस तरह देखा जाए तो भारतीय भाषाओं को सशक्त–संपन्न बनाते हुए विद्यार्थियों की अद्वितीय क्षमताओं को उभारने और सामने लाने के उद्देश्य को पूरा करने की प्रक्रिया में शिक्षा के भारतीयकरण के साथ–साथ देश–दुनिया में हो रहे बदलावों, ज्ञान–विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी, डिजिटलीकरण जैसे विविध क्षेत्रों में हो रहे अधुनातन विकास आदि अनेकानेक दृष्टियों से यह बड़ी व्यावहारिक और उपयोगी नीति है। इस शिक्षा नीति के द्वारा भारत को एक जीवंत ज्ञान–आधारित समाज और वैश्विक ज्ञान की महाशक्ति के रूप में स्थापित करने के पुनीत संकल्प वाले इस शिक्षा–भवन के डिजाइन के मूल में 'अनुवाद', नींव के पत्थर का काम कर रहा है।

भारत जैसे बहु–सांस्कृतिक एवं बहुभाषा–भाषी देश में सभी संस्कृतियों को साथ लेकर चलना और भाषाई दीवारों को आपस में जोड़ने के प्रयास के लिए हमें अनुवाद पर निर्भर रहना पड़ता है। बहुभाषिक व्यवस्था में अनुवाद, विभिन्न भाषाओं के बीच संवाद सेतु का काम करता है। विविध भाषा–भाषियों के जीवन व्यवहार के सामाजिक, सांस्कृतिक और व्यावसायिक आदि सभी प्रकार के जीवन संदर्भों एवं गतिविधियों में अनुवाद की विशेष तौर पर जरूरत होती है। उनमें से शिक्षा का क्षेत्र, प्रमुख स्थान रखता है। भारत जैसे बहुभाषी देश में शिक्षा के क्षेत्र में अनुवाद की अनिवार्यता की स्थिति इसलिए भी बनती है कि किस भाषा को अध्ययन –अध्यापन का माध्यम बनाया जाए। ऐसे में अनुवाद, शिक्षा के जरिए स्थापित की जाने वाली राष्ट्रीय एकता में संवाद सेतु बाँधने का महत्वपूर्ण कार्य करता है।

स्पष्ट है कि अनुवाद, शिक्षा के क्षेत्र में अपनी अनिवार्यता प्रमाणित करता है। इसीलिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का निर्माण करते समय शिक्षा में अनुवाद के स्थान और महत्व का विशेष ध्यान रखा गया है। शिक्षा, सीखने की वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य ज्ञान अर्जित करता है और कला कौशल संपन्न बनता है। मनुष्य की ज्ञान–प्राप्ति की दिशा में भाषा, माध्यम का काम करती है। ज्ञान को अर्जित करके व्यक्ति का शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और नैतिक विकास होता है। साथ ही, अपने व्यावसायिक गुणों का उन्नयन करके व्यक्ति स्वयं को सक्षम–दक्ष और जीविका उपार्जित करने योग्य बनाता है। हालाँकि ज्ञान, स्वाध्याय से भी अर्जित हो सकता है, किंतु आधुनिक समय ने यह सिद्ध कर दिया है कि शिक्षा के संबंध में देश–काल के अनुरूप उपयुक्त योजना और नीति की आवश्यकता है। इसके लिए व्यवस्थित प्रयास अपेक्षित होते हैं, जो विभिन्न नियमों, विनियमों और निर्धारित पाठ्यक्रम के रूप में नजर आते हैं। इस दृष्टि से नई शिक्षा नीति समग्रता लिए हुए है।

नई शिक्षा नीति में शिक्षण प्रक्रिया के संदर्भ में यह साफ तौर पर रेखांकित किया गया है यह जिज्ञासा, खोज, अनुभव और संवाद के आधार पर संचालित होनी चाहिए, इसमें सही अर्थों में लचीलापन होना चाहिए और साथ ही व्यक्ति को समग्र एवं समन्वित रूप से देखने–समझने में सक्षम बनाने वाली होनी चाहिए। इन पक्षों के साथ–साथ शिक्षा का रुचिकर होना भी जरूरी है। कहने का अभिप्राय है कि यह विद्यार्थियों के जीवन के सभी पक्षों और क्षमताओं का संतुलित विकास करने वाली होनी चाहिए। इसके लिए पाठ्यक्रम में विज्ञान और गणित के अलावा बुनियादी कला, शिल्प, मानविकी, खेल और फिटनेस, भाषाओं, साहित्य, संस्कृति और मूल्यों का समावेश होना चाहिए ताकि उनका चरित्र निर्माण भी हो और वे रोजगार के लिए सक्षम भी बनें। शिक्षा के इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, स्कूली शिक्षा में छठी कक्षा से ही बच्चों को शिक्षा के साथ–साथ आधुनिकतम वोकेशनल प्रशिक्षण जैसे कौशल विकास की ओर उन्मुख है। शिक्षा नीति में परिलक्षित इन उद्देश्यों को प्राप्त करने में अनुवाद एक सार्थक माध्यम का काम करेगा।

शिक्षा के क्षेत्र में अनुवाद की अनिवार्यता को महसूस करते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति में अनुवाद के स्थान और महत्व का विशेष ध्यान रखा गया है। 108 पृष्ठों वाली इस शिक्षा नीति के हिंदी दस्तावेज के सात अध्यायों में अनुवाद का जो उल्लेख मिलता है उसके मुख्य बिंदु विशेष तौर पर अध्ययन–विवेचन का विषय हैं। इसके अलावा, इसमें परोक्ष रूप से अनुवाद संबंधी पक्ष भी रेखांकित किए जा सकते हैं। यह नीति, शिक्षा में पाठ्यक्रम और शिक्षणशास्त्र में अध्ययन को समग्रता प्रदान करने, उसे एकीकृत करने के साथ–साथ रुचिकर, सुपाठ्य और आनंददायक बनाने के लिए अनुवाद को राष्ट्रीय विकास के एक अस्त्र के रूप में इस्तेमाल करती है। जब पठनीयता को बढ़ावा देने पर बल दिया जाएगा तो स्वाभाविक है कि उसके लिए उच्च गुणवत्ता वाली पठन सामग्री भी उपलब्ध कराई जानी होगी। अध्ययन–अध्यापन और प्रिंट सामग्री, पुस्तकों, पांडुलिपियों और अभिलेखों आदि वाली इस पठन सामग्री के वैविध्य को बनाए रखने

में अनुवाद का भी सहारा लिया जाएगा। गुणवत्ता की उच्चता को बनाए रखते हुए त्वरित अनुवाद करने के लिए आधुनिक तकनीक की मदद लेने से गुरेज नहीं करना भी इस नीति में शामिल है। इस तरह, पठन सामग्री की दिशा में काम करने के प्रयासों में अनुवाद की अनिवार्य भूमिका को रेखांकित किया जा सकता है। अनुवाद के द्वारा उच्च कोटि की अध्ययन सामग्री–पुस्तकों आदि की उपलब्धता होने से अनुवादकों की छवि निखारने को बल मिलेगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में अनुवाद की प्रासंगिकता को इस स्तर तक ध्यान में रखा गया है कि इसे स्कूली स्तर से ही व्यवहार में लाने का प्रस्ताव है। ग्रेड 5 तक के स्कूली बच्चों को मातृभाषा, स्थानीय भाषा या क्षेत्रीय भाषा में पढ़ाई की सुविधा, इस राष्ट्रीय नीति की क्रांतिकारी विशेषता है। शिक्षा विदों–विद्वानों का मानना है कि बच्चे मातृभाषा में भाषा संप्रेषण कौशल (श्रवण, पठन, लेखन और वाचन) और संख्या ज्ञान सहजता से अर्जित करते हैं। स्कूल में जाने से पूर्व बच्चों को मातृभाषा का श्रवण बोध और वाचन कौशल का स्वाभाविक रूप से अर्जन हो चुका होता है। इसलिए स्कूली शिक्षा में वह पठन और लेखन कौशल अर्जित करना शुरू करता है। इस प्रक्रिया में अनुवाद का अपना विशेष स्थान और महत्व है। इसीलिए अनुवाद की स्कूली शिक्षा के स्तर पर ही उपस्थिति दर्ज करा दी गई है। स्कूली शिक्षा के दौरान विद्यार्थियों के लिए बड़ी मात्रा में पुस्तकें उपलब्ध कराने की व्यवस्था की जो बात कही गई है, उसमें उच्च गुणवत्ता वाली पुस्तकों का अनुवाद कराके बाल साहित्य और अन्य प्रकार के साहित्य को विस्तार प्रदान किया जाएगा। अनुवाद की यह व्यवस्था विज्ञान सहित सभी प्रकार की पाठ्य–पुस्तकों को स्थानीय भाषा, मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषा में उपलब्ध कराने से जुड़ी है। पाठ्य–पुस्तकों के अलावा विभिन्न भाषाओं के उत्कृष्ट ज्ञानात्मक और सृजनात्मक साहित्य की अपनी भाषाओं में अनुवादों के रूप में उपलब्धता से विद्यार्थी ज्ञानवान बनेंगे, उनमें पुस्तक पठनीयता की प्रवृत्ति बढ़ेगी।

इसी संदर्भ में, शिक्षा नीति के अनुसार एक राष्ट्रीय पुस्तक संवर्धन नीति तैयार करना भी शामिल है। शिक्षा नीति में जहाँ सार्वजनिक स्कूल पुस्तकालयों के विस्तार पर ध्यान दिया गया है, वहीं डिजिटल पुस्तकालय स्थापित करने की बात भी कही गई है। स्वाभाविक है उनमें अनूदित पुस्तकों का भी विशेष स्थान और महत्व होगा। रेखांकित करने योग्य है कि सार्वजनिक और स्कूली पुस्तकालयों में विभिन्न प्रकार की पुस्तकों आदि को पढ़कर जन–सामान्य और स्कूलों के विद्यार्थी तक भारत की हर प्रमुख भाषा के समृद्ध–संपन्न और नए–नए साहित्य के बारे में अनुवाद के माध्यम से जान सकेंगे और विभिन्न भाषाओं के साहित्यकार एक–दूसरे को प्रभावित कर सकेंगे। इससे अंततः भारत की एकता– अखंडता, सांस्कृतिक विरासत एवं विविधता का बोध होगा। इसे अगर विद्यार्थियों के संदर्भ में देखा जाए तो उन्हें स्कूली स्तर से ही इसका एहसास होना शुरू हो जाएगा। स्वाभाविक है कि साहित्य से यह जुड़ाव आगे चलकर तुलनात्मक साहित्य को व्यापक आधार प्रदान करेगा; तुलनात्मक व्याकरण का मार्ग प्रशस्त होगा; भारतीय भाषाओं की एकरूपता के तत्वों की पहचान हो पाएगी और भारतीय साहित्य की अवधारणा को मूर्त होते हुए देखा जा सकेगा। ये सभी आयाम तभी संभव हो पाएँगे जब इन्हें अनुवाद के जरिए पहचाना जाए और समृद्ध किया जाए।

स्कूलों में पाठ्यक्रम और शिक्षणशास्त्र में अध्ययन को समग्रता प्रदान करने, उसे एकीकृत करने, रुचिकर और आनंददायक बनाने के लिए विद्यार्थी अपनी पढ़ाई के दौरान 'द लैंग्वेजेज ऑफ इंडिया' पर रुचिकर परियोजना कार्य करने अथवा इससे जुड़ी गतिविधि में भी भाग लेंगे। इस तरह के प्रयास देश में व्याप्त भाषाई गैप को भरने का काम करेंगे और इस प्रक्रिया में अनुवाद का भी एक अस्त्र के रूप में इस्तेमाल होगा। इस तरह के कार्यों में विद्यार्थी, प्रमुख भारतीय भाषाओं की उल्लेखनीय एकता के बारे में जानने के क्रम में उनकी शब्दावली के स्रोत और उद्भव को संस्कृत और अन्य शास्त्रीय भाषा में से खोजने, और इन

भाषाओं के समृद्ध अंतर–प्रभाव और अंतरों को समझना आदि शामिल होगा। स्वाभाविक है इससे भारतीय शब्दावली भंडार की श्रीवृद्धि होगी जिससे अनुवाद कर्म और मौलिक लेखन में मदद मिलेगी।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शिक्षा को समग्र और बहु–विषयक (multi-disciplinary) शिक्षा की ओर कदम बढ़ाने में अनुवाद को महत्व देना भी ध्यान देने योग्य है। शिक्षा नीति के अनुसार, देश की विभिन्न उच्चतर शिक्षण संस्थाओं में अनुवाद एवं विवेचना (निर्वचन) सहित भाषा, साहित्य, संगीत, दर्शन, भारत–विद्या, कला, नृत्य, नाट्यकला, शिक्षा, गणित, सांख्यिकी, सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक विज्ञान, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र और खेल आदि विभिन्न विषयों को न केवल स्थापित करना और बल्कि उन्हें मजबूती प्रदान करना भी शामिल है। साथ ही, इन विषयों के विभागों को बहु–विषयक बनाने की जरूरत पर भी ध्यान दिया गया है ताकि देश में भारतीय शिक्षा और परिवेश को प्रोत्साहित किया जा सके, देश में बहु–अनुशासनात्मक शिक्षा व्यवस्था का विकास हो। इस संदर्भ में भी एक विषय और व्यावहारिक गतिविधि के रूप में अनुवाद की भूमिका और योगदान का रेखांकन महत्वपूर्ण है। शिक्षा नीति के इस दस्तावेज में यह भी उल्लेख किया गया है कि अनुवाद सहित विभिन्न विषयों में यदि उच्च शिक्षण संस्थाओं के द्वारा स्नातक उपाधि कार्यक्रमों में क्रेडिट नहीं दिए जाते हैं, तो वे भी दिए जाएँगे। नीति दस्तावेज में 'सांस्कृतिक क्लबों' की तर्ज पर स्कूल–कॉलेजों में 'भाषा क्लब' और 'अनुवाद मंच' बनाकर भाषा, साहित्य और अनुवाद को बढ़ावा देने का सुझाव भी सराहनीय है।

देश की अपनी भाषाओं को जीवंत और प्रासंगिक बनाए रखने के लिए नई शिक्षा नीति के दस्तावेज में अध्ययन सामग्री (जिसमें पाठ्य पुस्तकें, अभ्यास पुस्तकें, वीडियो, नाटक, कविताएँ, उपन्यास, पत्रिकाएँ आदि शामिल हैं) और प्रिंट सामग्री के साथ–साथ शब्दकोश बनाने पर भी गंभीरता से विचार किया गया है। इसमें जहाँ अनुवाद के जरिए भारतीय भाषाओं में उच्च गुणवत्ता वाली अध्ययन–अध्यापन सामग्री और प्रिंट सामग्री के सतत प्रवाह को बनाए रखने का आग्रह है, वहीं भारतीय भाषाओं के शब्दकोशों और शब्द भंडार को आधिकारिक रूप से लगातार अद्यतन (अपडेट) करने और उनका व्यापक प्रसार करने की जरूरत भी बताई गई है। भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के अंतर्गत शब्दावली के क्षेत्र में काम करने के लिए प्राधिकृत संस्थान 'वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग' (सी.एस.टी.टी.) देश के शब्दावली भंडार को समृद्ध–संपन्न करने की दिशा में निरंतर कार्यरत है। लेकिन, आयोग के द्वारा बनाई गई शब्दावली को देश की सभी शिक्षण संस्थाओं तक पहुँचाना, उसका आधुनिकीकरण और मानकीकरण, उसके अखिल भारतीय स्वरूप करने जैसे आयाम भी इस शिक्षा नीति के महत्वपूर्ण पक्ष हैं।

भारतीय भाषाओं के शब्दकोशों और शब्द भंडार को विकसित करने के लिए नई शिक्षा नीति में भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में उल्लिखित प्रत्येक भाषा के लिए अकादमी स्थापित करने की बात कही गई है। इन्हें केंद्र सरकार द्वारा राज्य सरकारों के साथ परामर्श करके या फिर उनके साथ मिलकर स्थापित किया जाएगा। अकादमियाँ स्थापित करने के बारे में ध्यान देने की बात यह भी है कि राज्यों की प्रमुख भाषाओं के लिए व्यापक पैमाने पर बोली जाने वाली अन्य भारतीय भाषाओं की अकादमियों की भी स्थापना की गई। इन्हें भी केंद्र अथवा/और राज्य सरकारों के द्वारा स्थापित किया जाएगा।

भारतीय भाषाओं के लिए स्थापित की जाने वाली ये अकादमियाँ नवीन अवधारणाओं के लिए अपनी मूल भाषा में सरल और सटीक शब्द भंडार विकसित करके नवीनतम कोश जारी करेंगी, जिनमें अनुवाद एक सार्थक साधन–उपकरण का काम करेगा। इन अकादमियों में हर भाषा से श्रेष्ठ विद्वानों और मूल रूप से वह भाषा बोलने वाले लोगों को शामिल किया जाएगा। ये विद्वान अधुनातन अवधारणाओं के लिए भाषा विशेष में सरल और सटीक शब्द सुनिश्चित करें। इससे भाषा विशेष का शब्दावली भंडार विकसित होगा और उनमें नवीनतम शब्दकोश निर्मित होंगे। इस

तरह के प्रयास से अधुनातन शब्द संपन्न कोशों के निर्माण में निरंतरता आएगी। शिक्षा नीति में इन अकादमियों के बीच परस्पर अंतः क्रिया का उस संदर्भ में उल्लेख भी मिलता है। इस प्रकार के कोश निर्माण करने के दौरान ये अकादमियाँ एक–दूसरे से परामर्श भी लेंगी। इस प्रकार निर्मित शब्दकोशों का व्यापक तौर पर प्रचार–प्रसार किया जाएगा ताकि भाषा विशेष में सिर्फ बातचीत के स्तर पर ही नहीं, शिक्षा, मीडिया, भाषा लेखन कर्म जैसे क्षेत्रों–स्थितियों में भी इन्हें व्यवहार में लाया जाए। ये शब्दकोश ऑफलाइन (यानी पुस्तकाकार रूप में) और ऑनलाइन उपलब्ध कराए जाएँगे जिससे आम लोगों तक इनकी पहुँच सुलभ हो सके। इस तरह, यह कहा जा सकता है कि वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग ने लाखों शब्दों का निर्माण करके पारिभाषिक शब्दावली का जो राष्ट्रीय राजमार्ग निर्मित किया है, नई शिक्षा नीति ने उसे और अधिक प्रशस्त करने का काम किया है।

अनुवाद जैसी मूलतः व्यावहारिक गतिविधि को औपचारिक शिक्षा का अंग बनाने के संदर्भ में नई शिक्षा नीति में की गई व्यवस्था भी विशेष उल्लेख की अधिकारी है। इस नीति में उच्च शिक्षा व्यवस्था में कला और संग्रहालय प्रशासन, पुरातत्व, कलाकृति संरक्षण (आर्टिफैक्ट कंजर्वेशन) और ग्राफिक डिजाइन के साथ–साथ अनुवाद और विवेचना/निर्वचन (Translation and Interpretation) से संबंधित उच्च कोटि के अध्ययन कार्यक्रम शुरू करने और डिग्रियों का सृजन करने के लिए कहा गया है। शिक्षा नीति का यह प्रस्ताव विशेष तौर पर स्वागत योग्य है क्योंकि इससे न केवल अनुवाद को दो भाषाओं के बीच संपन्न होने वाले कार्य–व्यापार की उच्च गुणवत्ता निर्धारित करने की दिशा में सार्थक प्रयास संभव हो सकेंगे, बल्कि डिग्रियों के सृजन से 'अनुवाद' को ज्ञान के अनुशासन (डिसिप्लिन) के रूप में भी मान्यता प्राप्त होगी। इससे अनुवाद में उच्च से उच्च शिक्षा प्राप्त करने और इस अनुशासन में शोध और अनुसंधान को बढ़ावा मिलेगा। स्वाभाविक है कि इससे अनुवाद शिक्षण संबंधी रोजगार के अवसर भी बढ़ेंगे। यह स्थिति और अधिक व्यापक रूप तब प्राप्त कर लेगी, यदि आगे चलकर केंद्र के स्तर पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग जैसी संस्था 'अनुवाद में नेट परीक्षा' का भी आयोजन करेगी और राज्यों के स्तर पर 'स्लैट' परीक्षाओं में अनुवाद विषय का समावेश हो जाएगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 'अनुवाद और विवेचना' संबंधी उच्च गुणवत्ता वाले अध्ययन कार्यक्रम शुरू करने और डिग्रियों का सृजन करने तक के प्रयासों तक ही सीमित नहीं रहती। बल्कि अनुवाद के कार्यक्षेत्र को विस्तार प्रदान करते हुए यह नीति देश में 'इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ ट्रांसलेशन एंड इंटरप्रिटेशन' (Indian Institute of Translation and Interpretation - IITI) को स्थापित करने की बात भी करती है। शिक्षा नीति में इसके लिए विस्तृत कार्य योजना तैयार करने और उसका कार्यान्वयन करने को महत्व दिया गया है ताकि देश के अधुनातन विकास को बढ़ावा दिया जा सके। नीति दस्तावेज के अनुसार यह 'अनुवाद और निर्वचन संस्थान', देश के लिए सेवा–प्रदाता (सर्विस प्रोवाइडर) का काम करेगा। अनुवाद और निर्वचन जैसी सेवा प्रदान करने की दिशा में अपने प्रयासों को सुचारू रूप से चलाने के लिए इस संस्थान में प्रौद्योगिकी का भी बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाएगा। यह संस्थान, अनेक बहुभाषा–भाषी और विषय–विशेषज्ञ तथा अनुवाद एवं निर्वचन के विशेषज्ञों को नियुक्त करेगा। इससे सभी भारतीय भाषाओं को प्रसारित और प्रचारित करने में मदद मिलेगी। आगे चलकर, इस संस्थान को उच्च शिक्षण संस्थाओं सहित देश के विभिन्न स्थानों में खोला जाएगा ताकि शिक्षण संस्थाओं आदि के 'अनुसंधान विभाग' के साथ इसकी भागीदारी सहज और सुगम हो सके। अनुवाद की महत्व–प्रतिष्ठा स्थापित करने की पुष्टि का इससे अधिक और क्या प्रमाण हो सकता है? अगर अनुवाद के इस संस्थान को सही अर्थों में अस्तित्व में ले आया जाता है और इसमें निहित पुनीत भावना का बड़े पैमाने पर विस्तार होता है तो वह दिन भी अवश्य ही आ जाएगा जब देश में स्वतंत्र 'अनुवाद विश्वविद्यालय' की स्थापना तक हो जाएगी।

आज के विश्व को सूचना और संचार प्रौद्योगिकी का युग कहा जाता है जिसमें 'मशीन अनुवाद' जैसे विषय तक अस्तित्व को प्राप्त कर चुके हैं। मशीन लर्निंग, कृत्रिम बुद्धि, प्राकृतिक भाषा संसाधन (नेचुरल लैंग्वेज प्रोसेसिंग– एन.एल.पी.) और स्पीच ट्रांसलेशन जैसी अत्याधुनिक तकनीकों ने मशीन अनुवाद जैसे भाषा के प्रौद्योगिकीय अनुप्रयोग को पहले से अधिक त्वरित, सटीक और विश्वसनीय रूप प्रदान करने में कारगर भूमिका निभाई है। मशीन अनुवाद के इन विविध क्षेत्रों में अधुनातन शोध और विकास को आज बड़े पैमाने पर महत्व प्रदान किया जा रहा है। इस महत्व को स्वीकार करते हुए नई शिक्षा नीति में इस तरह के प्रौद्योगिकीय आयामों वाले ज्ञानानुशासनों में, उच्च शिक्षण संस्थानों में शोध कार्य कराने तथा स्नातक और व्यावसायिक शैक्षिक कार्यक्रम शुरू करने की बात भी की गई है। शिक्षा नीति के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मशीन अनुवाद के विविध पहलुओं पर पी.एच.डी. की उपाधि प्रदान करने तक के अवसर उपलब्ध कराने की परिकल्पना को साकार करने की ओर कदम उठाकर मूलतः अनुवाद को ही प्रश्रय प्रदान किया गया है।

सिर्फ इतना ही नहीं, शिक्षा नीति में अध्ययन–अध्यापन के लिए देश की सभी भाषाओं में विभिन्न सॉफ्टवेयरों के विकास की बात भी कही गई है। इनके जरिए दूरदराज के क्षेत्रों में रहने वाले विद्यार्थियों के द्वारा उनकी अपनी भाषा में अध्ययन करना संभव हो सकेगा। इन सॉफ्टवेयरों को सर्वसुलभ कराने की दृष्टि से भी महत्व प्रदान करते हुए इन्हें ई–कंटेंट वेबसाइटों के साथ जोड़ा जाएगा। इसके लिए सभी राज्यों तथा एन.सी.ई.आर.टी., सी.आई.ई.टी. आदि जैसे अन्य निकायों/संस्थाओं के द्वारा विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में तैयार की गई अध्ययन संबंधी ई–कंटेंट को 'दीक्षा' प्लेटफॉर्म पर अपलोड किया जाएगा। इस तरह, सिर्फ 'दीक्षा' ही नहीं, अन्य शैक्षिक प्रौद्योगिकी उपायों के संवर्धन और प्रसार के लिए सी.आई.ई.टी. को सुदृढ़–मजबूत बनाने का उल्लेख भी इस नीति में मिलता है। इस संदर्भ में सभी ई–कंटेंटों का अनुवाद कराए जाने का भी विचार है ताकि अपेक्षित ध्येय की प्राप्ति हो सके।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार, शिक्षा जगत में प्रौद्योगिकी और अनुवाद के प्रयोग को केवल यहीं तक सीमित करने का विचार नहीं है। इस नीति में बुनियादी साक्षरता और संख्या ज्ञान अर्जित करने के लिए तात्कालिक आवश्यकता और पूर्वशर्त जैसे आयाम के संदर्भ में भी ध्यान रखा गया है। विद्यालयों में स्कूली शिक्षा के दौरान अर्जित ज्ञान और जीवन–पर्यंत सीखने की बुनियाद, वास्तव में साक्षरता और संख्या ज्ञान पर टिकी होती है, जो भविष्य में सीखने की एक पूर्वशर्त भी है। इसलिए शिक्षा नीति के दूसरे अध्याय के 2.3 में पाठ्यचर्या में बुनियादी साक्षरता और संख्या ज्ञान पर अधिक ध्यान देने की बात कही गई है। इसलिए आधारभूत साक्षरता एवं संख्यात्मकता पर एक राष्ट्रीय मिशन स्थापित करने का उल्लेख किया गया है। वहीं, साथ ही इसके लिए तकनीक और अनुवाद को माध्यम के रूप में स्वीकार किया गया है। नई शिक्षा नीति के अनुसार, 'स्वयं' और 'दीक्षा' आदि ई–लर्निंग के साधनों को विभिन्न भारतीय भाषाओं में विकसित करने के लिए अनुवाद का सहारा लिया जाएगा। इसी संदर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि ऑनलाइन मंचों पर उपलब्ध हर प्रकार की सामग्री को विभिन्न भारतीय भाषाओं में उपलब्ध कराने पर बल दिया जा रहा है। उदाहरण के लिए, राष्ट्रीय शिक्षा नीति के दूसरे अध्याय के 2.6 में यह उल्लेख मिलता है कि "द डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर फॉर नॉलेज शेयरिंग (दीक्षा) पर बुनियादी साक्षरता और संख्या–ज्ञान पर उच्चतर गुणवत्ता वाले संसाधनों का राष्ट्रीय भंडार उपलब्ध कराया जाएगा। इसमें शिक्षकों और विद्यार्थियों के बीच भाषाई बाधाओं को दूर करने के उपाय शामिल हैं।" इन भाषाई बाधाओं को दूर करने का सार्थक उपाय कुछ और नहीं, 'अनुवाद' ही है। इस तरह, उच्चतर गुणवत्ता वाले संसाधनों के राष्ट्रीय भंडार के लिए सामग्री का व्यापक स्तर पर अनुवाद कराना शामिल होगा।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में, सभी शास्त्रीय भाषाओं और साहित्य का अध्ययन करने वाले भारतीय संस्थानों और विश्वविद्यालयों का भी

विस्तार करने का उल्लेख मिलता है। स्वाभाविक है कि इससे देश के संस्कृत जैसे शास्त्रीय भाषा संस्थान के साथ–साथ भारतीय भाषाओं के संस्थान और विभाग मजबूत होंगे। नई शिक्षा नीति में भाषाओं के लिए एक नया संस्थान स्थापित करने का भी प्रस्ताव है। साथ ही, भाषाओं के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण कदम यह भी होगा कि पाली, फारसी और प्राकृत भाषा के लिए एक अलग से राष्ट्रीय संस्थान स्थापित किया जाएगा। स्वाभाविक है कि जहाँ पर भाषा और साहित्य की बात आएगी, वहाँ अनुवाद अपनी अनिवार्य उपस्थिति स्वयं ही दर्ज करा लेता है। ऐसे में अनुवाद के विस्तार पाने की परिकल्पना सहज ही की जा सकती है।

सिर्फ इतना ही नहीं, इस शिक्षा नीति में उन हजारों पांडुलिपियों को इकट्ठा करने, उन्हें संरक्षित करने और उनके अध्ययन करने के प्रयासों के साथ–साथ उनका अनुवाद कराने पर भी जोर दिया गया है, जिनपर अभी तक ध्यान नहीं दिया गया है। इससे उपेक्षित पांडुलिपियों का संरक्षण होगा और वे प्रचलित भाषाओं में उपलब्ध हो सकेंगी। इस तरह की पांडुलिपियों आदि में सहेजे हुए अनुभवों–विचारों, शिक्षा और ज्ञान संपदा का विस्तार करने की दिशा में भी प्रयास किए जा सकेंगे। इस तरह के प्रयास, अनुवाद के बिना अपनी सार्थकता को सिद्ध नहीं कर पाएँगे। शिक्षा नीति में पांडुलिपियों के साथ–साथ उपेक्षित लाखों अभिलेखों के संग्रहण–संरक्षण और उनके अनुवाद के दृढ़ता के साथ प्रयास करने की बात भी इस नई नीति में की गई है। इस तरह के प्रयासों में अनुवाद की उपस्थिति, अनिवार्यता और प्रासंगिकता भी ध्यान देने योग्य है।

शिक्षा नीति संबंधी इस दस्तावेज में भारतीय भाषाओं, कला और संस्कृति के संरक्षण और संवर्धन की बात कही गई है। संरक्षण–संवर्धन की इस प्रक्रिया में वेब–आधारित प्लेटफॉर्म/पोर्टल या फिर विकीपीडिया जैसे डिजिटल माध्यमों से दस्तावेजीकरण के प्रयास शामिल होंगे। लेकिन ये प्रयास सही अर्थों में तब तक सार्थक सिद्ध नहीं हो पाएँगे, जब तक कि वे अनुवाद से संबद्ध न हो जाएँ। शास्त्रीय, आदिवासी और लुप्तप्राय भाषाओं सहित सभी भारतीय भाषाओं को संरक्षित करने और उन्हें बढ़ावा देने के प्रयास तीव्र करने हों या फिर भारतीय कला और संस्कृति का संवर्धन करना हो, इसमें अनुवाद महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। कला और संस्कृति से समृद्ध–संपन्न भारत देश का विभिन्न विषयों के जरिए विदेशों तक विस्तार अनुवाद से ही संभव है।

नई शिक्षा नीति में उन प्रस्तावों की ओर भी संकेत किया जा सकता है, जिनका मोटे तौर पर नींव के पत्थर की भाँति अनुवाद से सीधा संबंध नजर नहीं आता। किंतु, मूल तक पहुँचने के प्रयास करने पर अनुवाद का आधार स्पष्ट हो जाता है। इस संबंध में, उदाहरण के तौर पर, प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक और उच्च शिक्षा यानी शिक्षा के सभी स्तरों पर स्थानीय भाषाओं के जानकार शिक्षकों की नियुक्ति जैसे प्रस्ताव का उल्लेख किया जा सकता है। शिक्षा नीति के इस प्रस्ताव से देशभर में बड़े पैमाने पर अनुवाद की भी निश्चित तौर पर माँग बढ़ेगी। कारण, मातृभाषा शिक्षकों को विषय–विशेष में प्रशिक्षण और प्रशिक्षण सामग्री की पूर्ति अनुवाद के माध्यम से संभव हो सकेगी। इसी तरह से अन्य प्रस्तावों के आलोक में भी अनुवाद की उपस्थिति और जरूरत बनी हुई नजर आएगी।

अंत में यही कहा जा सकता है कि देश में शिक्षा के क्षेत्र में आजादी के बाद यह पहला राष्ट्रीय प्रयास है जिसमें मातृभाषाओं, स्थानीय भाषाओं, क्षेत्रीय भाषाओं या यों कहें कि भारतीय भाषाओं को सशक्त–संपन्न बनाने के बारे में समग्रता से विचार करने के साथ–साथ 'अनुवाद' के महत्व को स्वीकार करने और स्कूली शिक्षा के स्तर से ही अनुवाद की उपस्थिति दर्ज कराई गई है। वहीं, माध्यमिक स्तर से विदेशी भाषाओं को वैकल्पिक भाषा के रूप में पढ़ने का अवसर भी नजर आता है। शिक्षा की इस नई राष्ट्रीय नीति में शामिल बहुभाषावाद की यह स्थिति वास्तव में अनुवाद के जरिए मूर्त हो पाएगी। इसमें अनुवाद की अपार संभावनाएँ उजागर होंगी

और अनुवाद से देश में भाषाई विकास होगा। अभी तक कुछेक लोगों के द्वारा अनुवाद के प्रति जो दोयम रवैया अपनाया जाता है, विश्वास है कि उसमें अवश्य ही सुधार होगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार भारतीय भाषाओं में कोश निर्माण, शब्दावली भंडार समृद्ध करना, शैक्षिक प्रौद्योगिकी संबंधी उपायों में अनुवाद के उपयोग को प्रोत्साहन और संवर्धन, अनुवाद और निर्वचन में उपाधि स्तरीय अध्ययन कार्यक्रम शुरू करना और क्रेडिट प्रदान करना, भारतीय अनुवाद एवं निर्वचन संस्थान की स्थापना आदि आयाम स्पष्ट रूप से अनुवाद की प्राण–प्रतिष्ठा की दिशा में उठाए गए कदम हैं। इस नीति ने शिक्षा को समग्र, एकीकृत, रुचिकर, सुपाठ्य और आनंददायक बनाने के लिए अनुवाद को राष्ट्रीय विकास का एक अस्त्र बनने का जो दायित्व सौंपा है, वह अवश्य ही अपनी सार्थकता सिद्ध करेगा। इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति के द्वारा भारत को जीवंत, ज्ञान–आधारित समाज और वैश्विक ज्ञान की महाशक्ति के रूप में स्थापित करने की पुनीत भावना वाले इस शिक्षा–भवन के डिजाइन के मूल में 'अनुवाद', मजबूत नींव स्थापित करने वाला पत्थर है।

– असिस्टेंट प्रोफेसर, अनुवाद अध्ययन और प्रशिक्षण विद्यापीठ, ब्लॉक 15–सी,
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, मैदान गढ़ी, नई दिल्ली–110068

❑❑❑

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के परिप्रेक्ष्य में

डॉ. राज शेखर

"इस विदेशी भाषा के माध्यम ने लड़कों के दिमाग को शिथिल कर दिया है और उनकी शक्तियों पर अनावश्यक जोर डाला, उन्हें रट्टू और नकलची बना दिया, मौलिक विचारों और कार्यों के लिए अयोग्य कर दिया और अपनी शिक्षा का सार अपने परिवार वालों तथा जनता तक पहुँचाने में असमर्थ बना दिया है। वर्तमान शिक्षा–प्रणाली का यह सबसे बड़ा दुःखांत दृश्य है। अंग्रेजी भाषा के माध्यम ने हमारी देशी–भाषाओं की प्रगति को रोक दिया है। यदि मेरे हाथ में मनमानी करने की सत्ता होती तो मैं आज से ही विदेशी भाषा के द्वारा हमारे छात्र और छात्राओं की पढ़ाई बंद कर देता, और सारे शिक्षकों और अध्यापकों से यह माध्यम तुरंत बदलवाता या उन्हें बरखास्त कराता। मैं पाठ्य पुस्तकों की तैयारी का इंतजार न करता। वे तो परिवर्तन के पीछे चली आएँगी। यह खराबी तो ऐसी है, जिसके लिए तुरंत इलाज की जरूरत है।"

–मोहनदास करमचंद गांधी, (हिंदी नवजीवन, राष्ट्रीय शिक्षा, 2 सितंबर, 1921, पृष्ठ सं. 21–22)

गांधी जी ने भारत के बच्चों की शिक्षा के बारे में जो चिंताएँ सितंबर, 1921 ई. में व्यक्त की थी। उसका मूल भाव सौ साल बाद आई इस नई शिक्षा नीति में फलीभूत होता दिखाई देता है। इस नीति के तहत साफ कहा गया है कि "शिक्षा से न केवल साक्षरता और संख्या ज्ञान जैसी 'बुनियादी क्षमताओं' के साथ–साथ 'उच्चतर स्तर' की तार्किक और समस्या–समाधान संबंधी संज्ञानात्मक क्षमताओं का विकास होना चाहिए बल्कि नैतिक, सामाजिक और भावनात्मक स्तर पर भी व्यक्ति का विकास होना आवश्यक है।" इस नीति में व्यक्ति के जिस विकास की बात की गई है, वह भाषा के बिना संभव नहीं है। भाषा केवल संवाद मात्र नहीं है बल्कि एक सशक्त व्यक्तित्व को प्रस्तुत करने का माध्यम भी है। ऐसे में हमेशा यह सवाल उठता है कि आखिर बच्चों की शिक्षा का माध्यम क्या हो? वह भी तब जब अगले दशक में भारत दुनिया का सबसे युवा जनसंख्या वाला देश होगा और इन युवाओं को उच्चतर गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराने पर ही भारत का भविष्य निर्भर करेगा।

इसी सवाल से जुड़ा एक और महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि जिन युवाओं की बात नई शिक्षा नीति में की गई है, वे स्वप्न किस भाषा में देखते हैं? कई लोगों को यह प्रश्न अटपटा लग सकता है, लेकिन यह एक सार्वभौमिक सत्य है कि भारत ही नहीं बल्कि संसार का कोई भी व्यक्ति स्वप्न अपनी मातृभाषा में देखता है; भले ही उसकी शिक्षा का माध्यम कोई भी भाषा हो। हम जानते हैं कि अपनी भाषा में अपनी भावनाएँ व्यक्त करने में हम सक्षम और सुगम होते हैं। कोई भी व्यक्ति कितनी भी भाषाएँ जान ले वह मौलिक चिंतन अपनी ही भाषा में कर सकता है। ऐसे में अपनी मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने में हिचकिचाहट कैसी?

भाषा ISSN 0523-1418

गांधी जी ने कहा है कि "मातृभाषा मनुष्य के मानसिक विकास के लिए उसी प्रकार स्वाभाविक है जिस प्रकार माँ का दूध शिशु के शरीर के विकास के लिए है। इसके अलावा कोई और बात हो भी कैसे सकती है? शिशु अपना पहला पाठ माँ से सीखता है। इसलिए बच्चों के मानसिक विकास के लिए उनके ऊपर मातृभाषा के अलावा कोई और भाषा थोपना मैं मातृभाषा के विरुद्ध पापाचार समझता हूँ।" (महात्मा गांधी के विचार, आर. के. प्रभु और यू. आर. राव, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, पृष्ठ सं. 368)

स्वर्णिम भारत की ओर कदम बढ़ाते हुए इस नई शिक्षा नीति में मातृभाषा और स्थानीय भाषा में ही पाँचवी कक्षा तक की पढ़ाई का प्रावधान किया गया है। ध्यान देने की बात यह है कि इस स्तर तक अंग्रेजी भी एक भाषा के रूप में ही पढ़ाई जा सकती है न कि शिक्षा के माध्यम के रूप में। कहीं भी अंग्रेजी को हटाने की बात नहीं की गई है। पाँचवी कक्षा के बाद भी आठवीं और संभव हो तो उससे आगे की भी शिक्षा मातृभाषा में करने पर जोर दिया गया है। यह इस नीति का एक मजबूत पक्ष है। भारतीय संविधान भी भारतीय बच्चों को यह अधिकार देता है। अनुच्छेद 350 ए में वर्णित है कि "प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी भाषाई अल्पसंख्यक–वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा और राष्ट्रपति किसी राज्य को ऐसे निर्देश दे सकेगा जो वह ऐसी सुविधाओं का उपबंध सुनिश्चित कराने के लिए आवश्यक या उचित समझता है।" सार्वजनिक और निजी दोनों तरह के विद्यालयों के लिए इसका पालन करना अनिवार्य होगा। विदेशी भाषा की पढ़ाई नौवीं कक्षा से शुरू हो सकेगी।

1968 ई. और 1986 ई. के बाद यह तीसरी राष्ट्रीय शिक्षा नीति है, जिसमें शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक सुधार की संभावना दिखती है। आने वाले समय में देश के भविष्य के साथ–साथ अतीत के गौरव को भी संजोना और हमारे देश के बच्चों को अपनी सभ्यता और संस्कृति के प्रति जागरूक बनाना इसका लक्ष्य है। प्रारंभिक शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को बनाना गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है। उद्देश्य साफ है कि बच्चों द्वारा बोली जाने वाली भाषा और शिक्षा के माध्यम की भाषा एक होगी। आज के समय में छोटे–छोटे क्षेत्रों में अंग्रेजी विद्यालयों की भरमार है और अभिभावकों के बीच उन विद्यालयों में नामांकन कराने की होड़। इन विद्यालयों में पढ़कर अधिकांश बच्चे एक नई भाषा को सीखने में उलझ कर रह जाते हैं और मौलिक चिंतन के अभाव में वे सही ज्ञान हासिल नहीं कर पाते। बच्चों के ज्ञानार्जन के लिए जहाँ मातृभाषा या स्थानीय भाषा में किताबें नहीं हैं वहाँ उन भाषाओं में पुस्तकों की व्यवस्था करना आसान कार्य नहीं है। इसके अतिरिक्त हमें उन भाषाओं के जानकर अध्यापकों की भी जरूरत पड़ेगी।

इसके लिए हमें बहुत सारे भाषा विशेषज्ञ और अच्छे अनुवादक तैयार करने होंगे, जो स्थानीय भाषाओं में पाठ्य सामग्री तैयार कर सकें। कई बार अनूदित सामग्री कठिन और जटिल दोनों हो जाती हैं और ऐसे में विज्ञान और सामाजिक जैसे विषय रुचिकर नहीं रह जाते। अंग्रेजी भाषा में पाठ्य सामग्री की बहुलता और सरलता ने ही भारतीय भाषाओं को पीछे धकेल कर अंग्रेजी ने अपनी जड़ें गहरी जमा ली हैं। यदि हम वास्तव में अपनी भाषा के लिए कुछ करना चाहते हैं तो सर्वप्रथम अनुवाद–प्रक्रिया को सरल और सुगम बनाना होगा। यह कार्य प्रथम दृश्टया कठिन लग सकता है, किंतु ऐसा कर पाना नामुमकिन नहीं है।

श्रेष्ठ भारत में लगभग 1300 मातृभाषाएँ हैं और सभी भाषाओं में शिक्षा दे पाना भी एक कठिन लक्ष्य है। किंतु कुछ प्रमुख भाषाएँ हैं, जिनसे सब बच्चे किसी–न–किसी रूप में परिचित होते हैं। उन्हें उन भाषाओं में प्राथमिक स्तर पर शिक्षित करके उनकी बुनियाद को मजबूत कर पाने में सफलता मिलने की संभावना है। भारत एक विविधताओं वाला देश है और इस शिक्षा नीति में उसे एक शक्ति के रूप में देखा गया है। आज

तक भारत की सभी भाषाओं को समान सम्मान नहीं मिला था। कुछ भाषाएँ केवल बोलचाल के स्तर तक ही सीमित रहीं हैं। लेकिन ऐसा पहली बार हुआ है जब सभी भाषाओं को बराबर का दर्जा मिला है। त्रिभाषा फार्मूला में कहीं भी हिंदी भाषा को थोपने की बात नहीं कही गई है और न ही अंग्रेजी को हटाने का जिक्र है; साथ ही सभी भारतीय भाषाओं के केंद्रीय महत्व को स्वीकार किया गया है। सभी भाषाओं को एक धरोहर के रूप में सुरक्षित रखने पर बल देना अच्छी शुरुआत है।

बहुभाषिकता और अध्ययन–अध्यापन के कार्य में भाषा की शक्ति को प्रोत्साहित करने के लिए त्रिभाषा फार्मूला की बात की गई । ऐसे तो यह फार्मूला कई राज्यों में पहले से है, लेकिन अभी भी कुछ राज्य ऐसे हैं जहाँ द्विभाषा फार्मूला लागू है और इस फार्मूला को लागू करने के उनके अपने तर्क हैं। उन्हें बाध्य भी नहीं किया जा सकता है क्योंकि शिक्षा संविधान में समवर्ती सूची का विषय है, जिसमें केंद्र और राज्य दोनों सरकारों का अधिकार होता है। दोनों पक्षों में किसी भी तरह की टकराहट को आम सहमति से सुलझाने का प्रस्ताव दिया गया है। बच्चों को अपनी इच्छानुसार भाषा चुनने की आजादी होनी चाहिए। किसी खास बंधन में बाँधकर उन्हें रख देना न्यायोचित नहीं है। दक्षिण भारत में कुछ ऐसे राज्य भी हैं जहाँ हिंदी के विस्तार की अपार संभावनाएँ हैं। खासकर तमिलनाडु में जो पयर्टन के क्षेत्र में पहले पायदान पर है। यह राज्य कला और संस्कृति के मामले में सबसे उत्कृष्ट राज्यों में से एक है। यहाँ आकर्षण का केंद्र यहाँ के वैभवशाली मंदिर, समुद्री तट, वन्य क्षेत्र, खान–पान, उद्योग–धंधे, पर्यटक स्थल आदि हैं। प्रतिवर्ष उत्तर भारत से लाखों लोग यहाँ भ्रमण के लिए आते हैं, लेकिन वे अपनी भाषा के माध्यम से यहाँ की विशेषताओं से परिचित नहीं हो पाते क्योंकि यहाँ उत्तर भारतीय भाषा बोलने वाले कम लोग हैं। इसी तरह अन्य राज्यों से लोग चिकित्सा के लिए आते हैं वे भी उचित संवाद के अभाव में परेशान होते हैं। यदि इस तरह के राज्यों में भी सरकार त्रिभाषा फार्मूला को स्वीकार करे तो संभव है कुछ बच्चे हिंदी का भी चुनाव करेंगे। इससे दो फायदे होंगे– पहला उत्तर और दक्षिण भारत के लोग अपनी–अपनी संस्कृति के माध्यम से और करीब आएँगे और उनके बीच परिपक्व समझ पैदा होगी और दूसरा यहाँ के लोगों के लिए इन क्षेत्रों में भाषा के माध्यम से रोजगार की संभावना बढ़ेगी।

गांधी जी ने बहुभाषिक एकता को बढ़ावा देने के लिए सुझाव दिया था कि "उत्तर भारतीयों को एक द्रविड़ियन भाषा सीखनी चाहिए और दक्षिण भारतीय लोगों को हिंदी सीखनी चाहिए।" लेकिन ऐसा नहीं हो सका। दक्षिण भारतीय लोगों से तो ये उम्मीद की जाती रही कि वे उत्तर भारतीय भाषा सीखें, परंतु उत्तर भारतीय लोगों ने भी कभी दक्षिण की भाषा सीखने की कोशिश नहीं की। जिसके कारण भाषाई स्तर पर मतभेद गहरा होता गया और हिंदी का विरोध भी बढ़ता गया। इस पर फिर से गहन मंथन की जरूरत है।

अब पहली बार आठवीं अनुसूची में शामिल 22 भारतीय भाषाओं के साथ–साथ स्थानीय स्तर पर बोली जाने वाली भाषाओं को भी प्राथमिकता मिली है। ऐसा बहुत पहले किया जाना चाहिए था। सभी भाषाओं को फूलने और फलने का मौका देना ही उचित कदम है। यह लोगों पर निर्भर करता है कि कौन–सी भाषा भविष्य में महत्वपूर्ण होगी। एक समय था जब कभी प्राकृत, पालि, संस्कृत, ब्रज आदि महत्वपूर्ण भाषाएँ हुआ करती थीं और आज के समय में हिंदी भारत में ही नहीं वरन् पूरे विश्व में अपनी एक मजबूत पकड़ बनाए हुए है। इसी तरह भारत की और भी भाषाएँ जैसे पंजाबी, बांग्ला, तमिल, भोजपुरी आदि ने भी दूरस्थ देशों में अपनी पहचान बनाई है।

इस नई शिक्षा नीति में भी प्रांतीय भाषाओं को विकसित और मजबूत बनाने की बात की गई है। गौर करने वाली बात यह है कि कहीं भी हिंदी को राष्ट्रभाषा या राजभाषा बनाने की बात नहीं कही गई है। त्रिभाषा फार्मूला के अंदर अंग्रेजी के साथ दो भारतीय भाषाओं को लाने की बात की

गई है लेकिन उसमें से कोई एक भाषा हिंदी ही होगी, इसका कहीं कोई जिक्र नहीं है। त्रिभाषा के तहत राज्य, क्षेत्र और छात्र की पसंद को प्राथमिकता दी जाएगी। हिंदी के बारे में अनावश्यक जोर न देना एक अच्छी पहल है क्योंकि हिंदी पहले से ही भारत में अपना विशेष स्थान बना चुकी है और भविष्य में भी इसके विकसित होते रहने की अपार संभावनाएँ हैं। स्थानीय भाषाओं की कुर्बानी पर हिंदी को विकसित करना कभी उचित कदम नहीं था। इसके बारे में गांधी जी ने कहा था कि "हिंदुस्तानी भारत की राष्ट्रभाषा होगी, पर वह प्रांतीय भाषाओं का स्थान नहीं ले सकती। वह प्रांतों में शिक्षा का माध्यम नहीं बन सकती और अंग्रेजी तो कतई नहीं। उसका कार्य प्रांतों को भारत के साथ अपने आंगिक संबंधों को समझने में मदद देना है।" (महात्मा गांधी के विचार, आर, के. प्रभु और यू. आर. राव. नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, पृष्ठ 369.)

बहुभाषिकता भारत की ताकत है। भारतीय भाषाओं के साथ–साथ हमने और भी बाह्य भाषाओं को अपनाया है। यहाँ के अधिकांश छात्र दो और दो से ज्यादा भाषाओं को जानते हैं। अंग्रेजी की उपस्थिति ने भी भारत को विश्व के स्तर पर सशक्त बनाया है। हमारे प्रतिभावान छात्रों की माँग अन्य देशों की तुलना में वैश्विक स्तर पर ज्यादा है। इसी कारण आज उन देशों ने भी अपने स्कूल और कॉलेजों में अंग्रेजी की पढ़ाई शुरू की है, जहाँ एक राष्ट्र एक भाषा का फार्मूला अपनाया गया था। गांधी जी भी अंग्रेजी भाषा के विरोधी नहीं थे बल्कि उसे एक उचित स्थान देना चाहते थे। उन्होंने इस संबंध में कहा है कि "लोग मुझ पर एक अनुचित आरोप मढ़ते हैं। वह यह है कि मैं विदेशी संस्कृति या अंग्रेजी भाषा पढ़ने के खिलाफ हूँ। यंग इंडिया में अक्सर मैंने यह प्रतिपादन किया है कि मैं अंग्रेजी को अंतर्जातीय व्यापार और कुटिल नीति की भाषा मानता हूँ और इसलिए उसके ज्ञान को हम में से कुछ लोगों के लिए आवश्यक समझता हूँ ...अतएव जिन लोगों को भाषा–शास्त्र की ईश्वरी देन हो उन्हें मैं जरूर उसके ध्यानपूर्वक अध्ययन के लिए उत्साहित करूँगा और उनसे यह उपेक्षा करूँगा कि वे अपने देश के लिए उसकी ज्ञान राशि को देशी भाषाओं के द्वारा प्रकट करें।" (हिंदी नवजीवन, पृष्ठ 22)

अपने देश और अपनी भाषा के प्रति सम्मान और उससे जुड़े गौरव को संजोकर रखना जितना जरूरी है, उतना ही आवश्यक अपनी भाषा को और समृद्ध बनाने के लिए प्रयास करना है। नई शिक्षा नीति में भी इसी बात पर बल दिया गया है। लेकिन आज के समय में अधिकांश बच्चों की दूरी अपनी मातृभाषा से बढ़ रही है और वे प्रायः इसी भाषा में अनुत्तीर्ण होते देखे जाते हैं। उन्हें व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध–शुद्ध भाषा लिखना कठिन मालूम होता है। कई बार ऐसा लगता है कि अपनी भाषा के प्रति सम्मान दिखाना एक शौक मात्र है। हमें मातृभाषा में शिक्षा के साथ–साथ ये भी आह्वान करने की जरूरत है कि लोग स्वयं सामने आएँ और अपनी भाषा की मान–मर्यादा एवं प्रतिष्ठा को आगे बढ़ाने और स्थापित करने में मदद करें। ज्ञान आधारित राष्ट्र बनाने का कार्य केवल सरकार का नहीं है बल्कि हर भारतीय का भी है जो अपनी मातृभूमि भारत को विश्वपटल के उच्च शिखर पर देखना चाहते हैं।

– हिंदी विभागाध्यक्ष, लोयोला कॉलेज, चेन्नई–600034, तमिलनाडु

❑❑❑

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और मूल्य–परक शिक्षा : स्वामी विवेकानंद के विशेष संदर्भ में

डॉ. सत्येंद्र श्रीवास्तव

"हमें ऐसी शिक्षा चाहिए, जिससे चरित्र का निर्माण हो, मस्तिष्क की शक्ति में वृद्धि हो, बुद्धि का विस्तार हो और जिससे व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो सके।"

'स्वामी विवेकानंद'

"ऐसी शिक्षा जो अच्छे–बुरे में भेद करना न सिखाए, अच्छे को अपनाने और बुरे से दूर रहना न सिखाए, वह एक मिथ्या– शिक्षा (मिसनोमर) है।"

'गांधी'

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की प्रस्तावना में लिखा गया है "शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य अच्छे मानव का विकास करना है– जो तर्कसंगत विचार और कार्य करने में सक्षम हो, जिसमें करुणा और सहानुभूति, साहस और लचीलापन, वैज्ञानिक चिंतन और रचनात्मक कल्पनाशक्ति, नैतिक दृढ़ता और मूल्यों का सम्मिलन हो। इसका उद्देश्य ऐसे सृजनशील लोगों को तैयार करना है जो कि हमारे संविधान द्वारा परिकल्पित– समावेशी और बहुलतावादी समाज के निर्माण में योगदान कर सकें।"[1] ये पंक्तियाँ नई शिक्षा नीति के लक्ष्यों और आदर्शों को मूर्त रूप देने हेतु एक मार्गदर्शिका का कार्य करती हैं। इस शिक्षा नीति में ऐसा शिक्षित वर्ग तैयार करने पर ज़ोर दिया गया है, जो अकादमिक ज्ञान के साथ–साथ नैतिक मूल्यों से भी परिपूर्ण हो। नई शिक्षा नीति अपने प्रारूप–पत्र में इस बात को बार–बार रेखांकित करती है कि शिक्षा केवल किताबी ज्ञान नहीं अपितु मनुष्य का समग्र विकास है, जिसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण उसका नैतिक विकास है।

सिस्टर निवेदिता ने एक बार कहा था कि "यदि श्री रामकृष्ण परमहंस उस परंपरा के प्रतीक हैं जिस पर भारत ने पिछले पाँच हज़ार सालों में चिंतन किया है तो स्वामी विवेकानंद उस सोच के प्रतीक हैं जिस पर भारत अगले पंद्रह सौ सालों तक चिंतन करेगा।"[2] यदि हम विवेकानंद के दर्शन और विचारों को समग्रता में समझें तो पाएँगे कि यह टिप्पणी नई शिक्षा नीति के संदर्भ में भी सटीक बैठती है। जब हम मूल्य–परक शिक्षा पर ज़ोर देते हैं, तो हमारे लिए यह जानना जरूरी है कि 'मूल्य' क्या हैं? वस्तुतः 'मूल्य' एक बहु–आयामी शब्द है, जिसके भीतर बहुत सारे नैतिक संप्रत्यय समाहित हैं– जैसे ईमानदारी, सत्यनिष्ठा, कर्तव्य, आत्म–सम्मान, सभी के प्रति करुणा, मनुष्यता का उत्थान, महिलाओं और वंचितों के प्रति विशेष आदर–भाव इत्यादि। एक मूल्य–आधारित शिक्षा में ये सभी तत्व समाहित होते हैं। इनके अभाव में वह केवल कुछ सूचनाओं का संग्रहण, शुष्क विचार मात्र रह जाएगी। इसलिए शुरू में ही यह जानना जरूरी है कि शिक्षा 'क्या नहीं है' उसके बाद ही हम 'शिक्षा क्या है' समझ पाएँगे। शिकागो, धर्म–संसद से वापस भारत लौटने के बाद अपने एक व्याख्यान 'द फ्यूचर ऑफ इंडिया' में स्वामी विवेकानंद कहते हैं–

भाषा ISSN 0523-1418

"शिक्षा सूचनाओं का संग्रहण मात्र नहीं, जो आपके मस्तिष्क में ठूँस दी जाती है और जहाँ वह जीवनपर्यंत अपच रूप में पड़ी रहती है। ....यदि आपने पाँच विचारों को पढ़कर अपने जीवन–चरित्र में उतार लिया तो आप उस व्यक्ति से ज्यादा शिक्षित हैं, जिसने पूरी लाइब्रेरी रट रखी हो– यथा "खरश्वंदनभारवाही भारस्य वेत्ता न तु चंदनस्य"। चंदन के बोझ से लदे गधे को केवल उसका भार पता होता है, न कि मूल्य। यदि शिक्षा सूचनाओं का संग्रहण है तो पुस्तकालय दुनिया के सबसे बड़े मनीषी होते और विश्वकोश सबसे बड़े ऋषि।"[3]

इसी तरह का मत वे 23 दिसंबर, 1898 को देवघर (वैद्यनाथ) से मृणालिनी बोस को लिखे पत्र 'आवर प्रेजेंट सोशल प्रॉब्लम्स' में व्यक्त करते हैं–

"शिक्षा क्या है? क्या यह किताब याद करना है? नहीं। क्या यह ज्ञान की विविधता है? यह भी नहीं। यह एक ऐसा अभ्यास है जिसके द्वारा संकल्प के आवेग और अभिव्यक्ति को नियंत्रित कर उन्हें उपयोगी बनाया जा सके, वह शिक्षा है। अब तक की शिक्षा में, पीढ़ियों से संकल्प को बलपूर्वक खत्म किया गया ....और मनुष्य धीरे–धीरे मशीन बनता चला गया।"[4]

ये दोनों अभिव्यक्तियाँ बताती हैं कि 'शिक्षा क्या नहीं है'। दुर्भाग्य से इन्हें ही शिक्षा का असली अर्थ मान लिया गया। ऐसे में हमारे लिए शिक्षा का सही अर्थ जानना बेहद जरूरी है और यह भी कि हमें "किस प्रकार की शिक्षा की जरूरत है"। शिक्षा के वास्तविक लक्ष्य की व्याख्या करते हुए 24 जनवरी, 1898 को एक प्रश्न–उत्तर के दौरान विवेकानंद कहते हैं–

"हमें ऐसी शिक्षा चाहिए, जिससे चरित्र का निर्माण हो, मस्तिष्क की शक्ति में वृद्धि हो, बुद्धि का विस्तार हो और जिससे व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो सके।"[5]

इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए विवेकानंद शिक्षकों की भूमिका पर बहुत ज़ोर देते हैं क्योंकि शिक्षक के कार्य– व्यवहार युवा मस्तिष्क पर बहुत गहरा असर डालते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में इस तथ्य पर विशेष ज़ोर देते हुए कहा गया है कि "शिक्षा–व्यवस्था में किए जा रहे बुनियादी बदलावों के केंद्र में शिक्षक होने चाहिए। शिक्षा की नई नीति को निश्चित तौर पर, हर स्तर पर शिक्षकों को समाज के सर्वाधिक सम्मानीय और अनिवार्य सदस्य के रूप में पुनः स्थान देने में सहायता करनी होगी क्योंकि शिक्षक ही नागरिकों की अगली पीढ़ी को सही मायनों में आकार देते हैं।"[6] यह शिक्षक ही हैं जो विद्यार्थियों को किताबी और अकादमिक ज्ञान के अलावा जीवन के कुछ बेहतरीन मूल्य बहुत सहज तरीके से सिखा सकते हैं, जो उन्हें जीवनपर्यंत याद रहते हैं, न कि केवल परीक्षा के समय तक। इसके लिए शिक्षक का चरित्र भी उतना ही महत्वपूर्ण है, जितनी कि उसकी बौद्धिक प्रवीणता। जैसा कि भक्ति–योग में वे 'क्वॉलिफ़िकेशंस ऑफ द ऐसपिरेंट एंड द टीचर' के अंतर्गत लिखते हैं–

"अक्सर यह सवाल पूछा जाता है हम शिक्षक के चरित्र और व्यक्तित्व को क्यों देखते हैं? हमें तो केवल यह देखना चाहिए कि वह क्या कहता है। यह दृष्टिकोण सही नहीं है ...एक शिक्षक को पूर्णतः शुद्ध होना चाहिए, तभी उसके शब्दों का कोई मूल्य होगा।"[7]

फ़रवरी 1897 को 'मद्रास टाइम्स' में दिए एक साक्षात्कार में वे कहते हैं कि मूल्य आधारित शिक्षा के लिए शिक्षक की चारित्रिक उत्कृष्टता बहुत जरूरी है। उनका मत है–

"शिक्षा की मेरी अवधारणा शिक्षक के साथ व्यक्तिगत संपर्क रखना है ...शिक्षक की व्यक्तिगत सत्यनिष्ठा के बिना कोई शिक्षा नहीं हो सकती। अपने विश्वविद्यालयों को देखिए। अपने पचास साल के जीवन में उन्होंने क्या किया? वे केवल परीक्षण करने वाले यंत्र बन गए। आम आदमी के दुख के लिए त्याग की भावना अभी भी हमारे देश में विकसित नहीं हो पाई है।"[8]

इसी बात का समर्थन करते हुए महात्मा गांधी ने भी कहा था कि एक शिक्षक का शिक्षण–कार्य उसके नैतिक–आचरण से अनिवार्यतः जुड़ा होता है। एक कायर शिक्षक अपने विद्यार्थियों को साहस का और एक अनियमित शिक्षक कभी भी समयबद्धता

का महत्व नहीं सिखा पाएगा। अपनी आत्मकथा में वे लिखते हैं–

"मेरे विचार में बच्चों को कभी भी साधारण शिक्षकों के हवाले नहीं करना चाहिए। उनका पुस्तकीय ज्ञान उनके नैतिक मूल्य जितना महत्वपूर्ण नहीं है।"[9]

22 अक्तूबर, 1925 को 'यंग इंडिया' में गांधी ने जिन सात सामाजिक पापों की चर्चा की थी उसमें एक पाप 'चरित्र के बिना ज्ञान' भी है। इसी से हम समझ सकते हैं कि मानव जीवन में चरित्र की क्या महत्ता है। अपनी आत्म–कथा के खंड 'ऐज़ स्कूलमास्टर' में वे लिखते हैं– "मैंने हृदय के स्वभाव या चरित्र –निर्माण को सदैव पहला स्थान दिया है ...मैं चरित्र–निर्माण को शिक्षा की बुनियाद मानता हूँ और यदि बुनियाद पक्की रख दी जाए तो अन्य बातें या तो बच्चे खुद या फिर अपने मित्रों से सीख लेंगे।"[10]

शिक्षा का स्वरूप विस्तृत होना चाहिए, तभी वह जन–सामान्य की उन्नति में महत्वपूर्ण कारक सिद्ध होगा। यही कारण है कि विवेकानंद शिक्षा के लोकतंत्रीकरण के बहुत बड़े हिमायती थे। उनके अनुसार शिक्षा केवल कुछ समृद्ध लोगों के अपने ही स्वार्थ की पूर्ति का साधन न बने अपितु इसका एक सामाजिक सरोकार होना चाहिए, जिसमें वंचित वर्ग का विकास जरूर शामिल हो। इसका उद्देश्य बिना किसी भेदभाव के समूची मानव–जाति का उत्थान हो। जैसा कि 1896 में लंदन के एक साक्षात्कार में वे कहते हैं–

"बोद्धिकता केवल कुछ सुसंस्कृत लोगों का एकाधिकार नहीं होना चाहिए, इसका प्रसार ऊपर से नीचे की ओर जरूर होना चाहिए।"[11]

इस पवित्र उद्देश्य की पूर्ति के लिए विवेकानंद शिक्षित– वर्ग की जवाबदेही निर्धारित करना चाहते हैं। उनके अनुसार ये शिक्षित लोग, अशिक्षित और वंचित वर्ग के कल्याण के लिए कार्य करें, उनके पिछड़ेपन को दूर करके उन्हें समाज की मुख्य धारा में शामिल करें अन्यथा शिक्षा का पूरा उद्देश्य ही निष्फल हो जाएगा। नवंबर, 1894 को शिकागो से दीवान जी को लिखे पत्र में वे कहते हैं–

"मैं ऐसे व्यक्ति को विश्वासघाती कहूँगा जो शिक्षित होने के बाद, लाखों पीड़ित गरीबों के श्रम से विलासिता में पोषित होता है किंतु उनके बारे में एक बार भी नहीं सोचता।"[12]

वस्तुतः हमारे देश की एक जो निरंतर समस्या रही है, उसमें हमने शिक्षा को कुछ अभिजात्य लोगों तक ही सीमित कर दिया और उनके लिए यह एक 'स्टेटस सिंबल' बन गया। इन अभिजात्य लोगों ने अशिक्षित और गरीब लोगों को तिरस्कार की दृष्टि से देखा। यह मानसिकता मूल्य– आधारित शिक्षा के उस आदर्श के विपरीत है जो हर मनुष्य को समान दृष्टि से देखती है, जिसमें राजा–प्रजा, अमीर–गरीब, जाति, लिंग, संप्रदाय, धर्म का कोई विभेद नहीं होता। इस बात पर चिंता व्यक्त करते हुए उन्होंने 24 अप्रैल, 1897 को 'भारती' के संपादक सरला घोषाल को 'द एजुकेशन दैट इंडिया नीड्स' शीर्षक से दार्जिलिंग से लिखा–

"भारत की बर्बादी का एक प्रमुख कारण अहंकार और राजकीय सत्ता द्वारा ज्ञान और बौद्धिकता की इस धरती को कुछ मुट्ठी भर लोगों के हाथों में सीमित कर देना था। यदि हमें दुबारा उठना है ...तो शिक्षा का प्रसार जन–सामान्य तक करना होगा।"[13]

शिक्षा के संदर्भ में यह विभेदीकरण किसी भी सभ्य समाज के लिए एक लांछन की तरह है। इसलिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की पहली पंक्ति में ही कहा गया है "शिक्षा पूर्ण मानव क्षमता को प्राप्त करने, एक न्यायसंगत और न्यायपूर्ण समाज और राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिए मूलभूत जरूरत है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुँच प्रदान करना, सामाजिक न्याय और समानता, वैज्ञानिक उन्नति, राष्ट्रीय एकीकरण और सांस्कृतिक संरक्षण के संदर्भ में सतत प्रगति, आर्थिक विकास तथा वैश्विक मंच पर भारत को नेतृत्व प्रदान करने की कुंजी है। सार्वभौमिक उच्च–स्तरीय शिक्षा वह माध्यम है, जिससे देश की समृद्ध प्रतिभा और संसाधनों का सर्वोत्तम विकास और संवर्धन व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व की भलाई के लिए किया जा सकता है।"[14]

स्पष्ट है कि शिक्षा कुछ विशिष्ट लोगों की निजी स्वार्थपूर्ति तक ही सीमित नहीं होनी चाहिए अपितु इसका उद्देश्य जन–कल्याण होना चाहिए, इसे विचारों का संग्रह–मात्र नहीं अपितु जीवंत भी होना चाहिए, जिससे हर व्यक्ति का जुड़ाव हो। निश्चित रूप से बौद्धिकता और अच्छी नौकरी शिक्षा के महत्वपूर्ण पक्ष हैं लेकिन ये अनिवार्य पक्ष नहीं हैं। इसलिए इनकी प्राप्ति मनुष्यता और नैतिक मूल्यों की कीमत पर नहीं होनी चाहिए। मानवता का दर्ज़ा हमेशा निजी धन–अर्जन और बौद्धिकता से ऊपर रहेगा। इतिहास साक्षी है कि जिन लोगों ने भी राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विकास के नए प्रतिमान गढ़े हैं वे बौद्धिक रूप से भले ही औसत रहे हों लेकिन नैतिक मूल्य और सत्यनिष्ठा की दृष्टि से उच्चकोटि के इनसान थे। अल्बर्ट आइंसटीन ने ज़ोर देकर कहा था– "अधिकांश लोग कहते हैं कि महान वैज्ञानिक बुद्धि से बनते हैं। वे लोग गलत हैं। यह काम चरित्र से संभव है।" प्रसिद्ध मानव–परोपकारी और व्यवसायी वारेन बुफ़े ने इस संबंध में बहुत महत्वपूर्ण बात कही है–

"किसी व्यक्ति में तीन चीज़ें देखो– बुद्धि, ऊर्जा और सत्यनिष्ठा। यदि उसमें सत्यनिष्ठा नहीं है तो पहले दो पर ध्यान ही मत दो।"[15]

यह एक स्थापित तथ्य है कि पढ़ा–लिखा किंतु मूल्यविहीन व्यक्ति एक अनपढ़ किंतु नैतिक व्यक्ति की तुलना में समाज के लिए ज्यादा खतरनाक है। हम लोगों को स्कूल के दिनों में पढ़ाया गया था कि एक भूखा और अनपढ़ व्यक्ति मालगाड़ी से केवल कुछ किलोग्राम अनाज चुराएगा लेकिन नैतिकता से रहित विश्वविद्यालय का टॉपर पूरी मालगाड़ी ही उड़ा देगा। शिक्षित व्यक्ति की इस विरोधी प्रवृत्ति के संबंध में मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने 1948 में अपनी स्नातक की पढ़ाई के समय, मोरहॉउस कॉलेज, अटलांटा के 'स्टूडेंट पेपर' में 'द पर्पज़ ऑफ एजुकेशन' शीर्षक से लिखा था–

"शिक्षा का उद्देश्य लोगों को गहन और आलोचनात्मक चिंतन के लिए तैयार करना है। लेकिन ऐसी शिक्षा जो कार्य–कुशलता के साथ समाप्त हो जाए वह समाज के लिए एक बहुत बड़ा खतरा सिद्ध होगी। नैतिकता के अभाव में बुद्धि से श्रेष्ठ व्यक्ति खतरनाक अपराधी हो सकता है। ...हमें यह अवश्य ध्यान रखना होगा कि बुद्धि ही पर्याप्त नहीं है। सच्ची शिक्षा का उद्देश्य है– बुद्धि और चरित्र।"[16]

संदेश साफ है ! यह मूल्य आधारित शिक्षा ही है जो समाज से अनैतिक और भ्रष्ट मूल्यों को दूर कर एक बेहतरीन समाज का निर्माण कर सकती है। हम सभी जानते हैं कि आज के समय का संकट केवल पैसे या प्राकृतिक संसाधनों का ही नहीं है अपितु मूल्यों की विकृति का भी संकट है। और इससे निपटने में मूल्य– आधारित शिक्षा ही सबसे कारगर हथियार है। यह मूल्य आधारित शिक्षा ही है जो 'स्व' और 'पर' में भेद करना नहीं सिखाती तथा व्यक्ति के व्यक्तित्व के सभी पक्षों– नैतिक, भावनात्मक और बौद्धिक को समान महत्व देती है। दूसरे शब्दों में हृदय की पवित्रता मस्तिष्क की कुशाग्रता जितनी ही महत्वपूर्ण है। जैसा कि 27 अक्तूबर, 1896 को लंदन के अपने व्याख्यान में स्वामी जी कहते हैं–

"हम मस्तिष्क और हृदय का संयोजन चाहते हैं। अवश्य ही हृदय महान है ; हृदय के माध्यम से जीवन की महत्वपूर्ण प्रेरणाएँ आती हैं। मैं हज़ार बार एक छोटे हृदय और बिना मस्तिष्क वाला व्यक्ति होना पसंद करूँगा बजाय हृदय–रहित एक विशाल मस्तिष्क के। जीवन, प्रगति उसी के लिए संभव है जिसके पास हृदय है, जो बिना हृदय केवल मस्तिष्क वाला है, वह शुष्कता में ही मर जाता है।"[17]

इसलिए सच्ची शिक्षा का अर्थ मानव–जीवन का सर्वांगीण–शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास है। एक आदर्श शिक्षा व्यवस्था इनमें से किसी की भी उपेक्षा नहीं कर सकती। एक बेहतरीन शिक्षा मन, शरीर और आत्मा में एक बेहतरीन सामंजस्य की प्रस्तावना करती है। आधुनिक मनोविज्ञान भी इस तथ्य को मानता है कि मनुष्य एक समग्र प्राणी है, उसके जीवन में किसी एक पक्ष पर जरूरत से ज्यादा ध्यान देने और दूसरे की

उपेक्षा करने से उसका व्यक्तित्व विखंडित हो जाता है। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का जोर विद्यार्थियों के समग्र विकास पर है। इसके लिए उसमें इस बात की अनुसंशा की गई है कि बचपन से लेकर उच्चतर शिक्षा तक सीखने के प्रत्येक चरण में कौशल और मूल्यों का एक निश्चित प्रक्रम शामिल किया जाए।[18]

यहाँ एक स्पष्टीकरण आवश्यक है। किसी को यह गलतफहमी नहीं होनी चाहिए कि विवेकानंद वैज्ञानिक और तकनीकी शिक्षा के विरोधी थे और मूल्य आधारित शिक्षा के लिए उन्होंने इनकी तिलांजलि दे दी। वे वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान के महत्व को बखूबी जानते थे। उनकी चिंता केवल इस बात को लेकर थी कि इन्हें पाने के प्रयास में मनुष्य कहीं मानवीय अस्मिता को ही न खो दे।[19] यदि हम आज के शैक्षणिक संस्थानों पर नज़र डालें तो पाएँगे कि वे बहुत बड़ी संख्या में सॉफ्टवेयर इंजीनियर, अधिकारी, डॉक्टर, प्रोफेसर, वकील, फिल्मकार, खिलाड़ी, खेल–विशेषज्ञ, सीए, सीएस, मीडिया–विशेषज्ञ इत्यादि पैदा कर रहे हैं। लेकिन विडंबना देखिए कि अच्छी आर्थिक स्थिति होने के बावजूद इनमें से ज़्यादातर लोग अपने गलत जीवन–मूल्य, उपभोक्तावादी जीवन–शैली के कारण एक मानसिक त्रासदी से गुजर रहे हैं। वे अपनी योग्यता के कारण अपने–अपने क्षेत्र में अच्छे सिद्ध हो रहे हैं, लेकिन क्या वे अच्छे इनसान हैं? यही वह प्रश्न है जिसका जवाब हमारे शैक्षणिक संस्थानों, नीति–निर्माताओं और परिवार के सदस्यों को सोचना है। पैकेज आधारित शिक्षा–व्यवस्था ने उनकी नैतिक अंतः चेतना को खोखला कर दिया है। ये अपने पारिवारिक जीवन में बिखरे और मानसिक सुकून को तरसते हुए लोग हैं। निश्चित रूप से वे अपने पूर्वजों की तुलना में ज़्यादा 'बुद्धिमान' और 'आत्म–विश्वासी' हैं, लेकिन समस्या यह है कि इतनी प्रतिभा और आर्थिक–आत्मनिर्भरता के बावजूद अपने चरित्रबल में वे बहुत कमजोर हैं। विवेकानंद की दूरदृष्टि ने इस समस्या को 130 साल पहले ही पहचान लिया था, इसलिए उन्होंने धन–अर्जन के बजाय चरित्र–निर्माण को शिक्षा का उद्देश्य माना था। अपने व्याख्यान 'द फ्यूचर ऑफ इंडिया' में वे कहते हैं–

"हमें जीवन का निर्माण करने वाले, मनुष्यता को बनाने वाले और चरित्र–सृजन करने वाले विचारों की अत्यंत आवश्यकता है।"[20]

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि आज के शिक्षा–तंत्र की सबसे बड़ी समस्या इसका मनुष्य के बौद्धिक विकास पर अत्यधिक ज़ोर देना है, यहाँ तक कि मानवीय मूल्यों की कीमत पर। हम इस बात को नहीं समझ पाए और न ही दूसरों को समझा पाए कि एक 'अच्छा मनुष्य' होना एक 'शिक्षित व्यक्ति' होने की तुलना में ज्यादा आवश्यक है। अशिक्षित होना, एक व्यक्ति विशेष के लिए समस्या हो सकती है किंतु अनैतिक होना तो पूरी दुनिया के लिए एक त्रासदी है। आज का हर समझदार व्यक्ति शिक्षा के इस विपथगमन से बहुत चिंतित है। आधुनिक विज्ञान और तकनीक के विकास ने ज़्यादातर मनुष्यों को संवेदनशून्य बना दिया। उपभोक्तावाद के अति–लोभ ने अधिकांश लोगों को भौतिक वस्तु में रूपांतरित कर दिया, तभी तो ए. पी. जे. कलाम को कहना पड़ा कि "वी हैव गाइडेड मिसाइल्स बट मिस्गाइडेड ह्यूमन बीइंग्स"। व्यक्ति की आजीविका के लिए नौकरी शिक्षा का एक पक्ष थी, लेकिन विडंबना देखिए कि उसे ही शिक्षा का अंतिम लक्ष्य मान लिया गया। अपना पारखी दृष्टि से विवेकानंद इन समस्याओं को वर्षों पहले ही समझ गए थे, इसलिए अपने लेखों व व्याख्यानों के माध्यम से उन्होने इस खतरनाक प्रवृति पर नियंत्रण लगाकर मनुष्य के समग्र विकास की बात की। उनके अनुसार "सभी मनुष्य इस तरह से संरचित हैं कि उनके मन में दर्शनशास्त्र, रहस्यवाद, भावना और कर्म सभी समान रूप से विद्यमान हैं। यही लक्ष्य है, यही मेरे पूर्ण मनुष्य का लक्ष्य है।"[21] उल्लेखनीय है कि 1972 में प्रकाशित यूनेस्को की रिपोर्ट 'लर्निंग टू बी' में शिक्षा के उद्देश्य के संबंध में जो रूपरेखा तैयार की गई थी, वह विवेकानंद के इसी 'पूर्ण मनुष्य' की प्रतिध्वनि थी। रिपोर्ट में कहा गया कि 'शिक्षा

के आधारभूत लक्ष्य की व्यापक परिभाषा के अनुसार एक व्यक्ति के भौतिक, बौद्धिक, भावनात्मक और नैतिक रूप से पूर्ण मनुष्य में समन्वीकृत होना ही शिक्षा है।"[22] राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में इन सभी पक्षों का समावेश है। दिसंबर 2020 में ग्लोबल टीचर पुरस्कार से सम्मानित रंजीत सिंह दिसाले ने एक साक्षात्कार में कहा कि नई शिक्षा नीति देश में शिक्षा के क्षेत्र में आमूल परिवर्तन लाएगी क्योंकि विद्यार्थी–केंद्रित यह नीति विद्यार्थियों के संबंध में अध्यापकों की सोच–समझ पर भी ध्यान दे रही है, जिसमें शिक्षक का काम विद्यार्थी को उसके रुचि के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ करने हेतु प्रेरित करना है, न कि समाज और अभिभावक के दवाब में कुछ करना।[23] अब जवाबदेही हम सभी पर है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति और विवेकानंद की मूल्य–परक शिक्षा के इस लक्ष्य को साकार करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची एवं टिप्पणियाँ

1. नेशनल एजुकेशन पॉलिसी 2020, मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, पृ. 4–5

2. शंकर, द मांक ऐज़ मैन, पृ. 237, पेंगुईन बुक्स, नई दिल्ली, 2011

3. स्वामी विवेकानंद, द कंप्लीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानंद, खंड–3, पृ. 302, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 2015, आगे से सी डब्लू एस वी के रूप में उद्धृत

4. सी डब्लू एस वी, खंड–4, पृ. 505, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 2013

5. सी डब्लू एस वी, खंड–5, पृ. 342, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 2015

6. नैशनल एजुकेशन पॉलिसी 2020, मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, पृ. 4

7. सी डब्लू एस वी, खंड–3, पृ. 50, वर्ष 2001 में दिल्ली विश्वविद्यालय के डी एस कोठारी हॉस्टल में एक कार्यक्रम के दौरान विश्व–प्रसिद्ध शहनाई वादक बिस्मिल्लाह खान साहब ने एक बहुत महत्वपूर्ण बात बताई, जो हम सभी के लिए बेहद प्रासंगिक है। खान साहब ने कहा कि बेटा यदि तुम्हारा अंतर्मन दूषित है तो तुम्हारी शहनाई से अच्छी धुन निकल ही नहीं पाएगी। हममें से बहुत लोगों को यह बात आसानी से समझ में नहीं आएगी, लेकिन बात सौ फीसदी सच है कि एक अच्छे कार्य के लिए हमारे मन का पवित्र होना बहुत जरूरी है। चरित्र और प्रतिभा में बहुत गहरा संबंध है। दुर्भाग्यवश आज के 'प्रतिभाशाली लोग' इसे समझ नहीं पा रहे हैं।

8. सी डब्लू एस वी, खंड–5, पृ. 224, वर्ष 1897 में, जब विवेकानंद ने यह व्याख्यान दिया था तो उस समय देश में केवल चार विश्वविद्यालय थे– कलकत्ता, बॉम्बे, मद्रास और इलाहाबाद। यह विवेकानंद की दूरदृष्टि थी कि उन्होंने भारत की शिक्षा–व्यवस्था की विसंगति को इतनी जल्दी भांप लिया था।

9. गांधी, महात्मा, द स्टोरी ऑफ माइ एक्सपेरीमेंट्स विथ ट्रुथ, पृ. 470, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 2006

10. द स्टोरी ऑफ माइ एक्सपेरीमेंट्स विथ ट्रुथ, पृ. 373–374

11. सी डब्लू एस वी, खंड–5, पृ. 199

12. सी डब्लू एस वी, खंड–8, पृ. 329–30, कोलकाता, 1964

13. सी डब्लू एस वी, खंड–4, पृ. 497

14. नेशनल एजुकेशन पॉलिसी 2020, मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, पृ. 3

15. plymouthministorage.com. 10 फरवरी, 2019 को उदधृत

16. https://www.brainyquote.com/quotes/martinlutherkingjr402936, 05 जुलाई 2020 को उद्धृत। सी एस लेविस ने भी स्पष्ट रूप से कहा था कि "मूल्यों के बिना शिक्षा देना मनुष्य को चालक दैत्य बनाने के समान है।"

17. सी डब्लू एस वी, खंड–2, पृ. 145, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 1968

18. नेशनल एजुकेशन पॉलिसी 2020, मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, पृ. 33

19. श्री प्रिया नाथ सिन्हा के साथ एक वार्तालाप के दौरान स्वामी जी कहते हैं कि बेहतर होगा यदि लोग तकनीकी ज्ञान सीख लें जिससे उन्हें आजीविका के लिए कुछ काम मिल जाए।

इसके लिए उन्होंने कुछ स्नातक विद्यार्थियों को जापान भेजने की भी योजना बनाई थी। सी डब्लू एस बी, खंड–5, पृ. 367–372

20. सी डब्लू एस वी, खंड–3, पृ. 302। शिक्षा के संबंध में स्वामी विवेकानंद के दृष्टिकोण पर स्वामी तथागतनंद लिखते हैं– "शिक्षा चरित्र का रूपांतरण करती है। यदि कोई थोड़ी सी भी कमजोरी दिखाता, तो स्वामी जी आदेशात्मक स्वर में कहते 'कमजोरी पाप है; कमजोरी मृत्यु है। यह एक महान तथ्य है : शक्ति जीवन है।' ...उन्होंने सही शिक्षा के माध्यम से चरित्र के रूपांतरण की सशक्त योजना बनाई।" फियर नॉट, बी स्ट्राग, पृ. 42 से उद्धृत, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, 2014

21. सी डब्लू एस वी, खंड–2, पृ. 388

22. www.un.unesco.com. 10 फ़रवरी 2017 को उद्धृत

23. योजना, पृ. 64–67, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, जनवरी 2021

– सहायक प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग, हंस राज कॉलेज, दिल्ली

❑❑❑

मातृभाषा में शिक्षा–नवीन संघर्षों का कंटकपथ

अंतरा करवड़े

'शिक्षा' अपने आप में एक व्यापक धारणा है। किसी विशेष पाठ्यक्रम को पूर्ण कर लेना अथवा किसी विशेष अवधि तक कुछ विषयों का अध्ययन कर संबद्ध परीक्षा में विशिष्ट अंक ले आना, यह कदापि व्यक्ति के शिक्षित होने का प्रमाण नहीं हो सकता। यह सही है कि प्रातिनिधिक रूप से हमें अपने जीवन पथ पर चलकर सत्य की खोज और वास्तविक विषयांतर्गत तथ्यों को पाने की प्रक्रिया की जानकारी अवश्य इससे प्राप्त हो सकती है।

शिक्षा प्राप्त करना किसी भी व्यक्ति को एक बेहतर मनुष्य बनाता है, उसे जानकारी का भंडार न बनाकर उसे निर्णयक्षम बनाता है कि वह किस अनुभव के आधार पर वास्तविक रूप से किसी तथ्य की आधारशिला रखे। शिक्षा शब्द की अवधारणा को लेकर हमेशा से ही पारिभाषिक भेद रहे हैं। वर्तमान में चूँकि परिवर्तन की गति में अभूतपूर्व तेजी देखी जा रही है, यह विचार करना तार्किक है कि क्या किसी भी पाठ्यक्रम में, वर्तमान बदलाव के साथ कदम मिलाकर चल पाने की शक्ति मौजूद है?

यह देखा गया है कि अनुभव के आधार पर, संघर्षों के आधार पर और स्वयं की विकसित सोच के आधार पर ही व्यक्ति किसी क्षेत्र में अपनी सफलता सुनिश्चित करता है। परंतु जिस प्रकार केवल श्वास चलने, हृदय के सुचारू रूप से कार्य करने अर्थात् केवल जीवित भर रहने को ही स्वस्थ व सफल जीवन जीना नहीं कहा जा सकता है, उसी प्रकार केवल शिक्षा के आधारभूत ढाँचे को मातृभाषा के माध्यम से सामने रख देने से परिवर्तन की सकारात्मकता को लेकर आश्वस्त नहीं हुआ जा सकता ।

शिक्षा प्रणाली का ढाँचा समरूप नहीं

वर्तमान शिक्षा प्रणाली को यदि प्रादेशिक स्वरूप में भी देखा जाए तब भी इसमें समरूपता दिखाई नहीं देती है। तथ्यों को किस स्वरूप में नवीन पीढ़ी के समक्ष रखा जा रहा है, इसमें बाल मानसशास्त्र के साथ ही प्रायोगिक रूप से उनके उपयोग को लेकर भी चिंतन आवश्यक है। बदलाव की जो गति वर्तमान में देखी जा रही है ऐसे में शिक्षा प्रणाली में केवल पाठ्यक्रम ही नहीं उसके प्रस्तुतिकरण और संबंधित संवाद में भी निरंतर बदलाव किया जाना समय की माँग है।

इसमें न केवल शिक्षण सामग्री वरन् शिक्षकों को लेकर सही प्रशिक्षण, नवीन तकनीक के साथ जुड़ाव और प्राप्त शिक्षा का दैनंदिन जीवन में उपयोग सिद्ध किया जाना आवश्यक है। कुछ प्रश्न जो मातृभाषा में शिक्षण को बढ़ावा दिए जाने की स्थिति आने से पूर्व स्वाभाविक रूप से हमारे सामने आते हैं, वे हैं, क्या हमारी पाठ्य पुस्तकें मातृभाषा शिक्षण के लिए तैयार हैं? क्या हमारे शिक्षक इस बदलाव को लेकर सहमत हैं साथ ही क्या वे सही प्रशिक्षण प्राप्त हैं? क्या पालकों को इस संबंध में अपनी राय रखने का अवसर मिल रहा है? मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त पीढ़ी और उससे दो या चार वर्ष पूर्व वर्तमान शिक्षा पद्धति से

शिक्षण प्राप्त पीढ़ी के मध्य टकरावों की स्थिति से कैसे निपटा जा सकता है?

यह सही है कि वृहद जनसंख्या और भौगोलिक रूप से असीमित विविधता वाले भारत जैसे देश में किसी भी एक निर्णय के सूत्र में संपूर्ण जनसामान्य को बांध पाना मुश्किल है। परंतु बिना तैयारी के किसी निर्णय के क्रियान्वयन और उससे मिलने वाले लाभों को लेकर प्रश्न उठना स्वाभाविक ही है।

स्वशिक्षा का प्रचलन बढ़ा और प्रतिभाओं को मार्ग मिला

पिछले कुछ वर्षों के प्रयोगवादी पालकों पर दृष्टि डालने पर, हमें अनेक स्वशिक्षा को अपनाने वाले माता–पिता मिलते हैं। उन्होंने वर्तमान शिक्षा पद्धति से असंतुष्ट होकर या स्वयं शिक्षा देने के तरीके को इससे बेहतर मानते हुए, परंपरागत स्कूली शिक्षा से अपने बच्चों को अलग रखकर, उन्हें विविध कौशल, जीवनोपयोगी शिक्षण और उनकी प्रतिभा के अनुरूप विषय में विशिष्ट अध्ययन की सुविधा मुहैया करवाई।

यह जानते हुए, कि आने वाले प्रतिस्पर्धात्मक समय में स्वशिक्षा प्राप्त करने वाले बच्चों के लिए अवसर अत्यंत सीमित रहेंगे, बावजूद इसके उन्होंने एक बेहतर मानव निर्मिति की ओर ध्यान दिया और हम अनेक उदाहरणों के माध्यम से इस प्रयोगवाद को सकारात्मक स्वरूप लेता हुआ देख सकते हैं। एक ओर वर्तमान शिक्षा प्रणाली में बेहतर आजीविका और भौतिक स्वरूप में स्वयं को उच्च स्थान पर स्थापित करने हेतु ध्येयप्राप्ति को मूल में रखा जाता है, ऐसे में कला, आत्मपरीक्षण, एक स्वतंत्र इकाई के रूप में मानव का विकास और जीवन की ओर देखने की अलग दृष्टि विकसित होने की स्थिति लगभग शून्य हो चली है।

वर्तमान युवाओं के समक्ष कोई संपूर्ण आदर्श नहीं है जिसके विचारों का अनुसरण कर अपने जीवन में बदलाव लाया जाए। मातृभाषा अवश्य ही हमें तथ्यों की बेहतर समझ, उन्हें जीवन में उतारने का साहस और कम समय में अधिक कुशल होने में मदद कर सकती है परंतु उसका प्रचलन, प्रसार और स्वीकार्यता का माहौल जब तक नहीं बनेगा, यह एक प्रयोग ही बनकर रहेगा, इसे व्यवहार में लाना कठिन पथ पर चलने के समान होगा।

मातृभाषा में शिक्षितों के लिए आजीविका संबंधी अवसर

तकनीकी शिक्षा से लेकर पर्यावरण और वाणिज्य से लेकर कला तक की शिक्षा को आधार बनाकर आजीविका प्राप्ति के पथ को सुगम बनाने की आवश्यकता है। सबसे महत्वपूर्ण तो वह अंतर है जो इससे पूर्व व पश्चात् के छात्रों के मध्य उत्पन्न होगा और इसके सही प्रबंधन के अभाव में यह प्रयोग मात्र बनकर न रह जाए, इसकी ओर ध्यान देना जरूरी है।

कला के क्षेत्र में अब तक मातृभाषा अपने अस्तित्व को बनाए हुए थी परंतु साहित्य से लेकर संगीत तक और चित्रकारी से लेकर सामाजिक अध्ययन तक में अब मातृभाषा के द्वारा अंतरराष्ट्रीय पथ पर चलने के लिए एक बेहतर ढाँचा होने की आवश्यकता है। एक शिक्षित युवा यदि आजीविका के अवसरों के आधार पर अपना मूल्यांकन करता है, तब जो बदलाव हमें शिक्षा के क्षेत्र में पूर्व व पश्चात् मातृभाषा शिक्षितों में दिखाई देगा, उसका एक वृहद व वैविध्यपूर्ण स्वरूप आजीविका, स्वरोजगार, व्यवसाय और नौकरी के क्षेत्र में दिखाई देगा। क्या हम इस बदलाव के साथ आगे बढ़ने के लिए अपने साथ नवीन अवसरों को सृजित करने का सामान साथ लेकर चल रहे हैं?

प्राथमिक शिक्षा से लेकर अनुसंधान तक फैले हुए, जीवन के इस सर्वाधिक महत्वपूर्ण व उर्वर समय में हम जिस सृजन को, मानवीयता को, सभ्यता को बोना चाहते हैं, उसके लिए सही मिट्टी की तैयारी आवश्यक है। मात्र आत्मसात् करना ही महत्वपूर्ण नहीं है, उसके वास्तविक उपयोग को भी सहज और सरल बनाना हमारे प्रमुख कर्तव्यों में शामिल है।

कुछ विशेष बिंदु महत्वपूर्ण है, जैसे हमारी मातृभाषा की सामाजिक और वैश्विक स्वीकार्यता का माहौल जब तक तैयार नहीं किया जाता, हमारी अभिव्यक्ति, शिक्षा का जीवन में उपयोग और उससे संबंधित हमारा आत्मविश्वास भी प्रभावित होगा। यह केवल एक निर्णय नहीं मिशन हो

सकता है जिसमें भाषा स्वीकार्यता को बढ़ावा दिया जाना आवश्यक है।

हम एक वैश्विक नागरिक के रूप में सुविधा, आधुनिकता और पहुँच की लालसा रखते हैं और यह वर्तमान तकनीकी प्रगति को देखते हुए अस्वाभाविक नहीं है। एक वैश्विक नागरिक की भाषा भी वैश्विक होनी चाहिए और यहाँ पर आवश्यकता है हमारी प्रत्येक अपनी भाषा को, मातृभाषा को वैश्विक स्वरूप में सम्मान दिलाने की और उसे व्यवहार में उतारने की। जिस प्रकार से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मौजूद भाषा के स्वरूप और उसके प्रचलन को लेकर सुविधाएँ और ढाँचागत विकास के बेहतर मापदंड मौजूद हैं, उन्हें हमें अपनी मातृभाषा के लिए तैयार करने की आवश्यकता है।

मातृभाषा में शिक्षा संबंधी प्रयासों और निर्णयों का निसंदेह स्वागत होना चाहिए परंतु यहाँ पर केवल हमारे अच्छे निर्णयों से पूर्व, उन निर्णयों की भाव भूमि को परखना, उसकी तैयारी वास्तव में उसके क्रियान्वयन से अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। क्या हम सभी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अस्तित्व में रहने वाली भाषाओं के समान ही, अपनी मातृभाषा को भी व्यक्तिगत रूप से सम्मानित कर पाएँगे? एक व्यक्ति के मन में सम्मान के बीज बोने पर निश्चय ही हमारी मातृभाषा धीरे–धीरे सामाजिक और आगे चलकर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार्य और सम्मानित हो पाएगी। परंतु शिक्षा के साथ ही इसकी स्वीकार्यता और सम्मान के लिए समानांतर प्रयत्न आवश्यक है।

इसके अलावा मातृभाषा में शिक्षण सामग्री की गुणवत्ता और उसकी उपलब्धता भी एक महत्वपूर्ण विषय है, जिसपर काम किया जाना आवश्यक है। संदर्भ ग्रंथ, प्रासंगिक साहित्य व अन्य सहायक सामग्री का निर्माण और उसकी उपलब्धता हमारे वैविध्यपूर्ण व विविध भाषाओं से समृद्ध देश के लिए एक ही समय में अवसर भी है और चुनौती भी। इसके अलावा अनुवाद और स्थानीयकरण के द्वारा मातृभाषा में शैक्षणिक सामग्री की निर्मिति, यह एक वृहद प्रकल्प है जिसे अनुभवी, प्रवीण व पूर्वाग्रह से मुक्त प्रकार से पूर्ण किए जाने की आवश्यकता है।

न केवल वैश्विक स्तर के कौशल व विकास का पथ हमारी मातृभाषा से होकर जा सकता है, हम कला, विज्ञान, धर्म, आध्यात्म, तकनीक से लेकर वैश्विक ज्ञान के क्षेत्र में अग्रणी हो सकते हैं। यहाँ पर भाषा के रक्षण के लिए कार्य करने के स्थान पर उसके पोषण की ओर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। संभव है कि कुछ विशेष पाठ्यक्रम निर्मित करने की आवश्यकता हो, कुछ विशेष प्रशिक्षणों के द्वारा वर्तमान कार्यपद्धति के सांचे में हमारे शिक्षक और विद्यार्थी भी शामिल हो सके। परंतु नवाचार और प्रयोग को लेकर पूर्वाग्रह मुक्त और वैश्विक सोच रखना प्रथम क्रमांक पर है।

यह हम सभी जानते हैं कि शिक्षा हमें मुक्त करती है, यह जीवन का और मानवीय सभ्यता का आधार है। जब हमारे समय का इतिहास लिखा जाए, उसमें यह बदलाव का अध्याय सबसे चमकीला हो सकता है यदि हम अपने समर्पण, पूर्ण तैयारी, सम्मान और स्वीकार्यता के साथ ही अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हमारी भाषा को स्थापित करने के लिए अग्रसर हो सके।

मातृभाषा में शिक्षा की सोच सकारात्मक है, संपूर्ण ढाँचे के विकास के साथ और हमारा वैश्विक विकास भी सरल है, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्थानीय सोच को सम्मान देते हुए।

– अनुध्वनि 117, श्रीनगर एक्स्टेंशन, इंदौर

❑❑❑

शिक्षण संस्थानों की बढ़ती बेचैनी का परिणाम है नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

डॉ. हरेंद्र सिंह

देश के शिक्षण संस्थानों में पिछले कई वर्षों से उथल–पुथल मची हुई है। जब से भारतीय लोकतंत्र ने उदारवादी और बाजारवाद को अपनाया तभी से इस बेचैनी का बीजारोपण प्रारंभ हो गया था। हमने अपनी आजादी के साथ अपना शिक्षा तंत्र खड़ा नहीं किया। जब हमने ब्रिटिश शासन तंत्र को बदल दिया तो उनकी शिक्षा पद्धति को भी बदलना चाहिए था। हमने शासन तो नया किया लेकिन शिक्षा वही रहने दी जिसका परिणाम यह हुआ कि हम नए शासन के अनुकूल नई शिक्षा के अभाव में भटकते चले गए। ये उसी भटकाव के कारण उपजा आक्रोश है। हम देश को लोकतांत्रिक बनाना चाहते हैं और शिक्षा को ब्यूरोक्रेटिक। बाजार को उदारवादी बनाना चाहते हैं और शिक्षा को कंज़रवेटिव, लोकतंत्र में चुने हुए प्रतिनिधियों को बेतहाशा सुविधाएँ देना चाहते हैं और सर्व–शिक्षा, शोध और विचार–विमर्श को बंद करना चाहते हैं।

नई शिक्षा नीति 2020

29 जुलाई, 2020 का दिन देश के लिए एक ऐतिहासिक दिन है। जब भारत सरकार की कैबिनेट ने प्रधानमंत्री के नेतृत्व में नई शिक्षा नीति को पास कर दिया। देश जब आजाद हुआ तब हमारे नीति निर्धारकों के पास शिक्षा की सुविचारित कोई नीति नहीं थी। विभाजन का दंश इतना बड़ा था कि उसमें शिक्षा की बुनियाद पर सोचने का अवसर ही नहीं मिला। जो लोग शिक्षित थे वे चाहते भी नहीं होंगे कि उनके वर्चस्व पर आँच आए। हम मैकाले के शिक्षा तंत्र को ही आगे चलाते रहे। जो गंभीर मंथन होना चाहिए था वह नहीं हो सका। देश आजाद हुआ लेकिन देश के पास संसाधनों की कमी थी। भारत से अंग्रेज़ 45 ट्रिलियन डॉलर की अकूत संपदा दो सौ वर्षों में लूट कर ले जा चुके थे। हमारे पास आज़ादी के रूप में सिर्फ सत्ता का हस्तांतरण हुआ वह भी विभाजित और सांप्रदायिक दंगों से ग्रसित। ऐसे समय में पुरानी शिक्षा नीति को ही अपना लिया गया। लेकिन पिछले सत्तर वर्षों में देश ने जब भी शिक्षा की बात की तो वह समेकित रूप से नहीं की। शिक्षा को राज्य सूची में डालकर उस पर कोई राष्ट्रीय बहस भी नहीं हुई। 1966 में शिक्षा पर 6 प्रतिशत सकल घरेलू उत्पाद का ख़र्च करने का प्रावधान रखा गया। कोठारी आयोग (1964–66) ने इस बात की सिफ़ारिश की थी। 1986 में भी इस बात को दुहराया गया। बाद में फिर कुछ फेर बदल किया गया लेकिन कभी भी 3 प्रतिशत से ज्यादा उस पर ख़र्च नहीं हुआ। शिक्षा को संवैधानिक संशोधन से समवर्ती सूची में डालने के बाद भी देश में शिक्षा नीति को लेकर जिस तरह से गंभीर बहस और परिवर्तन की ज़रूरत थी वह फिर भी नहीं हुई। मोदी सरकार ने अपने पहले कार्यकाल में भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान केंद्र के अध्यक्ष प्रोफ़ेसर कस्तूरीरंगन के नेतृत्व में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का गठन किया। आयोग ने गहन देशव्यापी विचार विमर्श करके जो रिपोर्ट

भाषा ISSN 0523-1418

तैयार की, उसे आम जनता के बहस और विचार के लिए सार्वजनिक किया गया। जनता ओर विशेषज्ञों ने जो सुझाव और चिंताएँ व्यक्त की उनका समाधान करने के बाद सरकार ने उसे संसद में रखा। संसद के दोनों सदनों ने उस पर अपनी राय के बाद पास किया। पहली बार संपूर्ण रूप से देश की शिक्षा नीति पर पिछले छह वर्षों के दौरान एक राष्ट्रीय विमर्श के परिणामस्वरूप जो शिक्षा नीति बनी, उसको भारत सरकार ने स्वीकार किया और प्रधानमंत्री ने उसे लागू करने की स्वीकृति प्रदान कर दी। यह एक ऐतिहासिक काम है जिसे ज़मीन पर उतारने का काम सारे देशवासियों को करना चाहिए। यह सिर्फ एक राजनैतिक फ़ैसला नहीं। इस फ़ैसले से हमारे देश का भविष्य जुड़ा हुआ है। इसे अब किसी राजनैतिक चश्मे से देखने की बजाय राष्ट्रीय विजन और विवेक से देखना होगा।

इस शिक्षा नीति की पहली विशेषता यह है कि यह प्राथमिक स्कूल से परिवर्तन की आकांक्षी है। हम बच्चे को किस तरह का भविष्य देना चाहते हैं? ये इस बात पर निर्भर है कि हम उसे किस तरह की शिक्षा देना चाहते हैं?

अब तक जो शिक्षा हम दे रहे थे वह मैकाले की शिक्षा पद्धति थी जिसका उद्देश्य अंग्रेज़ी हुकूमत को मज़बूत करना था। जिसका उद्देश्य था हमारे संसाधनों की लूट, भारत को अपना उपनिवेश बनाए रखना, हमारे पारंपरिक ज्ञान और इतिहास को समाप्त करना, जिसका उद्देश्य था हमें गुलाम बनाए रखना और हमें अपने इतिहास संस्कृति मान्यताओं, भाषाओं, रीति–रिवाजों, धार्मिक अनुष्ठानों से दूर रखना ही उनकी शिक्षा नीति का केंद्रीय भाव था। लेकिन आजाद भारत में वही कब तक चलता रहेगा? अब हमने इस पर सोचना शुरू किया। पिछले छह वर्षों से इस पर व्यापक देशव्यापी चर्चा हुई, पाँच हजार पृष्ठों की प्रोफेसर कस्तूरी रंगन की रिपोर्ट को अंतिम रूप देकर सरकार ने उसे अमली जामा पहनाया है। इस सागर मंथन से जो कुछ निकला वही नई शिक्षा नीति है। अब हम यह कह सकते हैं हमारे पास एक राष्ट्रीय शिक्षा नीति है। यह आजाद भारत की पहली समग्र शिक्षा नीति है। अब भी बहुत से लोग उसे नकार सकते हैं लेकिन यह तो हम गर्व से कह सकते हैं कि हमारी एक राष्ट्रीय शिक्षा नीति है जो अब तक नहीं थी।

इसी में नया क्या है पहला सवाल यही उठता है?

1. प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा में ही मिले, यह क्रांतिकारी है।

2. शिक्षा में एकरूपता हो।

3. शिक्षा को देश काल और परिस्थितियों के अनुरूप बनाने का प्रयास किया गया है।

4. शिक्षा को क्षेत्रीय भाषा और संसाधनों के अनुरूप ढालकर क्षेत्रीय विकास का ढाँचा खड़ा करना।

5. शिक्षा को ज्ञान, परंपरा और रोजगार से जोड़ना।

6. छात्रों की रुचि और कुशलता का लगातार अवलोकन, मूल्यांकन करना, जिससे अपनी रुचि के अनुरूप वह भविष्य तय कर सकें।

7. विज्ञान और कला संकाय की दूरी को कम करना।

8. शिक्षा को बीच में विराम देकर पुनः वापस शिक्षा को पूरा करने का अवसर देना।

9. वोकेशनल कोर्स पर ज़ोर देकर रोजगार के लायक प्रशिक्षण देना।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, एक नए राष्ट्र के निर्माण की नीति है। अब तक हम इस देश को बाहरी आक्रमणकारियों के चश्मे से देख रहे थे, उन्हीं के मानदंडों से अपनी संस्कृति और इतिहास का मूल्यांकन कर रहे थे। इतिहास को यदि उसके सही परिप्रेक्ष्य में समझना है तो हमें अपने मानदंड और कसौटियों का निर्माण करना होगा। ये तभी संभव है जब हम अपनी शिक्षा, संस्कृति और इतिहास की धारणाओं को भारतीय संदर्भों में समझने का प्रयास करें। दुनिया की सबसे प्राचीन संस्कृति वाला देश कब तक विदेशी सांस्कृतिक गुलामी को ढोता रहेगा? यह हमारी राष्ट्रीय शिक्षा

नीति है जिसका उद्देश्य लोक कल्याण के माध्यम से राष्ट्र निर्माण से जुड़ा है। अब इस नीति में पहले से अलग क्या है?

इसमें 5+3+3+4 का प्रावधान किया गया है। बेसिक शिक्षा पाँच साल तय है इसे फ़ाउंडेशन कह सकते हैं। माध्यमिक शिक्षा दो भागों में विभक्त है 3+3 अर्थात् पहले तीन साल छात्रों की शिक्षा उसके सामान्य व्यवहार के आधार पर निरंतर अवलोकन और मूल्यांकन द्वारा होगी। इसके आधार पर अगले तीन वर्ष की शिक्षा तय होगी, जिससे छात्रों की रुचि और कुशलता (एबिलिटी) के आधार पर उसकी आगे की शिक्षा तय होगी। अगले 4 वर्ष उच्च शिक्षा के होंगे। इनमें भी छात्रों को अपने मनोनुकूल क्षेत्र चुनने की आज़ादी होगी। पहले साल में यदि कोई बाहर निकलना चाहता है तो उसे सर्टिफिकेट कोर्स का नाम दिया गया, दो साल में डिप्लोमा, चार साल में डिग्री पूरी होगी। जो छात्र बीच में जाना चाहें वे जा सकते हैं और यदि कुछ समय बाद वापस अपनी पढ़ाई पूरी करना चाहते हैं वे पुनः वापस आ सकते हैं। एम फ़िल का प्रावधान समाप्त कर दिया गया है। सीधे पी एच डी की जा सकेगी।

इसी शिक्षा आयोग ने जो सबसे महत्वपूर्ण बदलाव किया वह भारतीय भाषाओं के माध्यम से शिक्षा की शुरुआत है। अपनी मातृभाषा में शिक्षा से जो अनावश्यक दबाव छात्रों और परिजनों पर पड़ता है वे उससे मुक्त हो जाएँगे। अगर सरकार विदेशी भाषा की जगह मातृभाषा में शिक्षा देने में सफल हो गई तो हम अपने देश, अपनी संस्कृति, अपने समाज, अपने संसाधन और अपने विकास के सारे मानक पुनः प्राप्त कर सकते हैं। यह बड़ी चुनौती तो है लेकिन ऐसी भी नहीं जिस पर विजय न पाई जा सके। हम सब को साथ मिलकर प्रधानमंत्री के इस भगीरथ प्रयत्न को, सफल बनाने में जुट जाना चाहिए। यह हमारे भविष्य के निर्माण का ऐतिहासिक दस्तावेज है।

– एसोसियेट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, ज़ाकिर हुसैन दिल्ली कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

❑❑❑

गुणवत्तापूर्ण और सर्व–समावेशी शिक्षा का दृष्टिपत्र : राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

प्रो. रसाल सिंह

पिछले दिनों केंद्रीय मंत्रिमंडल ने भारत की तीसरी शिक्षा नीति का अनुमोदन कर दिया है। इससे पहले सन् 1968 और सन् 1986/92 में क्रमशः पहली और दूसरी शिक्षा नीति लागू की गई थीं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इस अर्थ में विशेष महत्व रखती है कि इस नीति को अंतिम रूप देने में 6 साल से अधिक का समय लगा और उस पर व्यापक विचार–विमर्श हुआ। विद्यार्थी, शिक्षक, कर्मचारी, अभिभावक, प्रशासक, बुद्धिजीवी आदि वर्गों और ग्राम पंचायतों, सामाजिक संस्थाओं और संगठनों से संबंधित 5 लाख से अधिक स्टेकहोल्डर्स ने इस विचार–विमर्श में भागीदारी की और अपने बहुमूल्य सुझाव देकर इसे अधिक प्रभावी, समावेशी और दूरदर्शितापूर्ण बनाने में अपना सक्रिय सहयोग दिया।

जैसा कि हम जानते हैं कि परिवार बच्चे की प्रथम पाठशाला होता है और माँ उसकी प्रथम और सर्वाधिक प्रभावी शिक्षक होती है। माँ और परिवार के वातावरण से अर्जित गुण और संस्कार बालक के चरित्र और व्यक्तित्व की आधारशिला होते हैं। इस नींव की मजबूती से बालक के भविष्य की दिशा तय होती है। इसके बाद ही विद्यालयी शिक्षा और उच्च शिक्षा का महत्व होता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 उपरोक्त सभी शिक्षण सोपानों को समुचित महत्व देते हुए उनमें आमूल–चूल बदलावों की प्रस्तावना करती है।

21वीं सदी की आवश्यकताओं और चुनौतियों के मद्देनज़र यह शिक्षा नीति छात्र–छात्राओं के समग्र और सर्वांगीण विकास की चिंता करती है। यह शिक्षा नीति छात्रों को शिक्षा व्यवस्था का सर्वप्रमुख हितधारक मानती है। उच्चतम गुणवत्तायुक्त शिक्षण अधिगम प्रक्रियाओं के लिए जीवंत, गतिशील, आनंदमयी और सर्व–सुविधायुक्त (आवासीय) परिसर की अनिवार्यता को पहचानती है। समाज के वंचित तबकों तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की पहुँच और उसकी वहनीयता (एफोर्डेबिलिटी) इसकी मूल चिंता है। यह शिक्षा नीति पूर्व–विद्यालय से पीएच.डी. तक के शिक्षार्थी के लिए क्रमबद्ध ढंग से सीखने के लिए संस्कारों, जीवन–मूल्यों और रोजगारपरक और जीवनोपयोगी कौशलों का निर्धारण करती है। युवा पीढ़ी द्वारा अर्जित ये मूल्य और कौशल भारत को सच्चे अर्थों में एक लोकतांत्रिक, न्यायपूर्ण, समरस, समतामूलक और जनकल्याणकारी राष्ट्र के रूप में विकसित होने में मदद करेंगे। ये गुण भारतीय अर्थव्यवस्था को ज्ञान–आधारित अर्थ–व्यवस्था के रूप में विकसित होने में भी सहायक होंगे। शिक्षार्थी आजीविका के प्रति आश्वस्त होकर देश की आर्थिक–सांस्कृतिक प्रगति में अपना अधिकतम योगदान दे सकेगा। यह शिक्षा नीति तथाकथित विशेषज्ञता के नाम पर अब तक ग्लोरिफाइड 'कूप मंडूकता' को अपदस्थ करते हुए शिक्षार्थी के बहुमुखी विकास की चिंता करती है। एकांगिकता के बरक्स बहुलता और बहु–विषयकता इस नीति का केंद्रीय चिंता बिंदु है।

यह शिक्षा नीति सर्वप्रथम वर्तमान उच्च शिक्षा तंत्र की खामियों की पहचान करती है। उच्च शिक्षा

की वर्तमान पारिस्थितिकी गंभीर रूप से विभाजित और विखंडित है। काफी शुरुआती स्तर से ही विषयों का अत्यंत जटिल विभाजन/वर्गीकरण शिक्षार्थी के दृष्टिकोण को सीमित और संकीर्ण कर देता है। इसमें कौशल विकास और अधिगम परिणामों की चिंता लगभग अनुपस्थित है। वर्तमान उच्च शिक्षा की पहुँच समाज के अत्यंत सीमित हिस्से तक ही है। दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक, महिलाएँ, मातृभाषा–भाषी समुदाय, ग्रामीण समुदाय और आर्थिक रूप से असमर्थ समुदाय इसके दायरे से अभी तक भी बाहर ही हैं। शिक्षकों और संस्थाओं की स्वायत्तता सीमित है। शिक्षण व्यवसाय या शिक्षा क्षेत्र में योग्य व्यक्तियों को आकर्षित करने, उन्हें कैरियर में उचित प्रोत्साहन देने और संस्थागत नेतृत्वकर्ता तैयार करने का कोई पारदर्शी और विश्वसनीय तंत्र अभी तक विकसित नहीं हो सका है। लगभग सभी महाविद्यालयों और अधिकांश विश्वविद्यालयों में साधनों, संसाधनों और शोध–ढाँचे और निधियों का जबर्दस्त अभाव है। अनेक (सैकड़ों) महाविद्यालयों की एक ही विश्वविद्यालय से संबद्धता के कारण उन महाविद्यालयों में स्नातकस्तरीय शिक्षा का स्तर प्रायः बहुत ख़राब और डिग्री बाँटने तक सीमित होता है। संस्थाओं के नेतृत्व और प्रबंधन कर्ताओं में पेशेवर दक्षता और नेतृत्व/प्रबंधन–क्षमता का घोर अभाव है। विनियामक संस्थाएँ और प्रणाली भ्रष्टाचार अव्यवस्था की गिरफ़्त में हैं। वे अपने घोषित/नियत उद्देश्य की प्राप्ति में अक्षम और अकुशल हैं। साथ ही, पाठ्य सामग्री का औपनिवेशिक ढाँचा और उसका अधुनातन न होना भी एक बड़ी समस्या है। यह शिक्षा नीति वर्तमान उच्च शिक्षा क्षेत्र की उपरोक्त तमाम सीमाओं के प्रति सचेत होते हुए भी नियुक्ति–प्रक्रिया में व्याप्त भ्रष्टाचार और अनीति के बारे में स्पष्ट तौर पर कुछ नहीं कहती। जबकि सच्चाई यह है कि उच्च शिक्षा क्षेत्र की वर्तमान दुर्दशा की एक बड़ी वजह नियुक्ति–प्रक्रिया में पारदर्शिता और वस्तुनिष्ठता का अभाव और पेशेवर दक्षता और योग्यता का कोई मूल्य या महत्व न होना भी है। वर्तमान नियुक्ति–प्रक्रिया प्रतिभा पलायन या ब्रेनड्रेन का बड़ा कारण है। योग्यतम प्रतिभाएँ शिक्षा क्षेत्र से अघोषित निर्वासन के लिए अभिशप्त हैं।

उच्च शिक्षा के बारे में इस नीति का सर्वाधिक बलाघात उच्च शिक्षा संस्थानों को बड़े–बड़े बहु–विषयक महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों या उच्च शिक्षण संस्थानों के क्लस्टर या ज्ञान केंद्रों में परिवर्तित करने पर है। यह शिक्षा नीति प्रत्येक जिले में कम–से–कम एक ऐसे नए बहु–विषयक महाविद्यालय/विश्वविद्यालय की स्थापना या वर्तमान संस्थान के उन्नयन की प्रस्तावना करती है। बाणभट्ट ने कादंबरी में समग्र शिक्षा को 64 कलाओं के ज्ञानार्जन के रूप में परिभाषित किया है। इसमें गणित, रसायन शास्त्र, औषधि, अभियांत्रिकी, गायन, नृत्य, नाट्य, साहित्य, वाक्पटुता, भावना–प्रबंधन, सिलाई–कढ़ाई, लकड़ी की कारीगरी, मिट्टी से बर्तन बनाना आदि विविध प्रकार के शिक्षा रूप शामिल हैं। आजकल इन विविध शिक्षा रूपों में कठोर विभाजन (कंपार्टमेंटलाइजेशन) हो गया है। इन नए बनने वाले संस्थानों में विषयों का जटिल विभाजन या विखंडन न होकर समग्रतावादी दृष्टिकोण से अध्ययन–अध्यापन पर जोर दिया जाएगा। इससे विभिन्न विषयों के बीच बेहतर संवाद और संपर्क हो सकेगा और विद्यार्थी अपनी रुचि और क्षमता के अनुसार विविध विषयों का चयन कर सकेंगे। उनके पास बहुत व्यापक और वैविध्यपूर्ण विकल्प होंगे। यह विभिन्न विषयों की आपसी खाई को पाटने के साथ–साथ समाज के विभिन्न व्यवसायों और व्यक्तियों को भी एक–दूसरे के निकट लाने की कोशिश है। भारत के प्राचीन और गौरवशाली विश्वविद्यालयों–तक्षशिला, नालंदा, वल्लभी और विक्रमशिला आदि में बहु–विषयक वातावरण में ही शिक्षा–दीक्षा दी जाती थी। सभी उच्च शिक्षा संस्थान सन् 2030 तक स्वयं को बहु–विषयक संस्थान के रूप में विकसित करेंगे। अपेक्षित बुनियादी ढाँचे, सुविधाओं और संसाधनों का विकास करते हुए सन् 2040 तक लक्षित नामांकन संख्या प्राप्त करेंगे। सन् 2018 में सकल नामांकन अनुपात 26.3 प्रतिशत है। इसे सन् 2035

तक 50 प्रतिशत करने का महत्वाकांक्षी लक्ष्य है। इसके लिए वंचित क्षेत्रों और तबकों तक उच्च शिक्षा की पहुँच सुनिश्चित करनी होगी और इन क्षेत्रों में सार्वजनिक वित्त पोषण वाले उच्च स्तरीय उच्च शिक्षा संस्थान पर्याप्त संख्या में खोलने होंगे। वंचित वर्गों के लिए निजी और सार्वजनिक, दोनों ही प्रकार के संस्थानों में भारी संख्या में छात्रवृत्तियाँ और निःशुल्क शिक्षा देने का प्रावधान किया गया है, ताकि कोई भी शिक्षार्थी संसाधनों के अभाव में उच्च शिक्षा से वंचित न रह जाए। राष्ट्रीय छात्रवृत्ति पोर्टल का व्यापक विस्तार करने का भी प्रस्ताव है। सरकार की ओर से आई.आई.टी और आई. आई.एम. की तर्ज पर उच्च स्तरीय बहु–विषयक शिक्षा और शोध विश्वविद्यालय स्थापित किए जाएँगे। सभी बहु–विषयक उच्च शिक्षण संस्थानों में स्टार्ट अप, इंक्यूबेशन सेंटर, प्रौद्योगिकी विकास केंद्र आदि की स्थापना की जाएगी। ये संस्थान अकादमिक–उद्योग जुड़ाव और अकादमिक–सामाजिक जुड़ाव पर अधिकतम ध्यान केंद्रित करते हुए अनुसंधान और नवाचार में प्रवृत्त होंगे। भारत की वर्तमान उच्च शिक्षा और अनुसंधान अभी तक इससे लगभग वंचित रहे हैं। इसलिए अनुसंधान से उद्योग और समाज लाभान्वित नहीं हो पाते। यह अनुसंधान की एक बड़ी सीमा है।

स्थानीय/भारतीय भाषाओं को माध्यम के रूप में चुनते हुए बहु–विषयक स्नातक शिक्षा की ओर बढ़ने का संकल्प इस नीति में अभिव्यक्त होता है। उल्लेखनीय है कि अभी तक भारत में उच्च शिक्षा क्षेत्र में शिक्षा–माध्यम के रूप में भारतीय भाषाओं की घोर उपेक्षा होती रही है। इस उपेक्षा ने न सिर्फ अधिगम परिणामों को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया है बल्कि वंचित वर्गों को उच्च शिक्षा से विरत भी किया है। यह शिक्षा नीति माध्यम के रूप में संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं को अपनाने पर बल देती है। यह नीति पाठ्यचर्या, शिक्षण–पद्धतियों, मूल्यांकन–प्रक्रियाओं में आमूल–चूल परिवर्तन की हामी है। इन संस्थानों में पठन–पाठन के अलावा सामुदायिक सहभागिता और सेवा, पर्यावरण चेतना, शारीरिक स्वास्थ्य और सांस्कृतिक विकास पर बराबर बल होगा। यह शिक्षा नीति महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों को शोध केंद्रित संस्थान, शिक्षण केंद्रित संस्थान तथा शोध और शिक्षण केंद्रित संस्थान के रूप में चिह्नित करने की बात करती है; ताकि शोध या शिक्षण पर फोकस होने के बावजूद वे एक–दूसरे को समृद्ध और विकसित करने में सहायक हों। इनके अलावा ऐसे भी संस्थान होंगे जो केवल स्नातक स्तरीय डिग्री देने वाले बहु–विषयक संस्थान होंगे।

इन नीति की एक अन्य प्रमुख बात यह है कि इसमें निरंतर अच्छा प्रदर्शन करने वाले, बेहतरीन रैंक प्राप्त करने वाले और उच्च स्तरीय मानकों को पूरा करने वाले कॉलेजों को 'ग्रेडेड ऑटोनोमी' देने का प्रावधान किया गया है। ऑटोनोमी प्राप्त करने वाले ये कॉलेज स्वयं डिग्री देने वाले स्वायत्त कॉलेज बन सकते हैं या विश्वविद्यालय विशेष के अविभाज्य अंग के रूप में विकसित हो सकते हैं या धीरे–धीरे स्वयं विश्वविद्यालय के रूप में भी विकसित हो सकते हैं। यह ऑटोनोमी बाह्य–हस्तक्षेप को न्यूनतम करने की पहल है; ताकि इन उच्च प्रदर्शन करने वाले संभावनाशील संस्थानों की सांस्थानिक विकास योजनाओं और नवाचार में लालफीताशही अड़ंगा न लगाए और उसके विश्वस्तरीय संस्थान बनने की ओर आगे बढ़ने में किसी भी प्रकार की अड़चन न आए। बेहतरीन प्रदर्शन करने वाले संस्थान विनियामक संस्थाओं की 'अड़ंगेबाजी' से मुक्त रहेंगे और उन्हें सरकार से मिलने वाला अनुदान और आर्थिक सहयोग उनकी प्रगति और प्रदर्शन के अनुपात में क्रमशः बढ़ता जाएगा। इन संस्थानों का संचालन बाह्य हस्तक्षेप से मुक्त 'बोर्ड ऑफ़ गवर्नर्स' द्वारा किया जाएगा। उसके द्वारा गठित विशेषज्ञ समिति द्वारा निर्दिष्ट योग्यतम और पेशेवर व्यक्तियों में से सर्वश्रेष्ठ को संस्थान प्रमुख का दायित्व सौंपा जाएगा। 'बोर्ड ऑफ़ गवर्नर्स' को निर्णय लेने की पूरी स्वतंत्रता रहेगी और संस्थान के बेहतरीन प्रदर्शन और उच्च मानकों पर खरा उतरने की जवाबदेही उनकी ही

होगी। 'ग्रेडेड ऑटोनोमी' को लेकर तमाम शिक्षक संगठन आंशकित हैं कि यह शिक्षा के निजीकरण का प्रवेश द्वार है। जबकि वास्तविकता यह है कि 'परफोर्मिंग इंस्टिट्यूशंस' को विशिष्ट दर्जा, विशेष सहूलियतें और आवश्यक आर्थिक सहयोग देकर ही भारत में कुछ विश्वस्तरीय संस्थान बनाए जा सकते है। वस्तुतः, बेहतर प्रदर्शन करने हेतु प्रोत्साहन और पुरस्कार की नीति है।

यह शिक्षा नीति उच्च शिक्षा क्षेत्र में अंतरराष्ट्रीयता का महत्व स्वीकार करती है। भारत के विश्वस्तरीय संस्थान विदेशों में अपने परिसर स्थापित करें और कुछ प्रतिष्ठित विदेशी संस्थान भारत में अपने परिसर स्थापित करें या भारतीय संस्थानों के साथ 'कोलेबोरेट' करें। यह नीति भारत को पुनः विश्वगुरु या वहनीय शिक्षा का अंतरराष्ट्रीय केंद्र बनाने के स्वप्न से संचालित है। यह नीति विभिन्न देशों के छात्र–छात्राओं और शोधार्थियों को भारत आकर अध्ययन और शोध करने के लिए आकर्षित करने योग्य संस्थान, वातावरण, पाठ्यचर्या, शिक्षण पद्धतियों और संकाय आदि के निर्माण से उत्प्रेरित है। भारतीय और अंतरराष्ट्रीय छात्रों के पारस्परिक संवाद और आवागमन से ही भारत की पहचान एक तेजी से उभरती हुई ज्ञानशक्ति के रूप में बनेगी। इस परियोजना को साकार करने के लिए ही देशी–विदेशी संस्थानों से पाठ्यक्रम विशेष करने पर उसके क्रेडिट ट्रांसफर करने का भी प्रावधान किया गया है।

'अंडर परफोर्मिंग संस्थानों के ऊपर विनियामक संस्थाओं की कड़ी निगरानी रहेगी; ताकि वे बेहतर प्रदर्शन करने वाले संस्थानों की 'गुड प्रेक्टिसेज' को अपनाकर और उनकी 'हैंड होल्डिंग' का लाभ उठाते हुए अपनी स्थिति में निरंतर सुधार करें। यह क्रमिक सुधार ही उनको मिलने वाले आर्थिक सहयोग का आधार होगा। उल्लेखनीय है कि अभी उच्च शिक्षा के अधिसंख्य संस्थान सफ़ेद हाथी बन चुके हैं। उनमें पठन–पाठन के वातावरण और आधारभूत सुविधाओं का घोर अभाव है। देश में बड़ी संख्या में कागजी कॉलेज हैं, जहाँ छात्र–छात्राएँ नामांकन कराते हैं, शिक्षक मोटी तनख्वाहें लेते हैं; किंतु पढ़ने–पढ़ाने की चिंता और फुर्सत किसी को नहीं है। प्रकारांतर से ये कॉलेज डिग्री बाँटने/बेचने की दुकानें बने हुए हैं। यहाँ के डिग्रीधारी संस्कारवान, कौशलयुक्त और रोजगार–क्षम नहीं हैं। ये कॉलेज 'शिक्षित किंतु बेरोजगार नौजवानों' की फेक्ट्रियाँ हैं। इन सफ़ेद हाथी बन चुके कॉलेजों को पटरी पर लाना एक बड़ी चुनौती है। नई शिक्षा नीति इन कॉलेजों को पेशेवर और प्रदर्शनकारी बनाकर बेहतरी की दिशा में अग्रसर करने की चिंता करती है। इस शिक्षा नीति में आगामी 15 वर्ष में धीरे–धीरे संबद्ध कॉलेजों की व्यवस्था को समाप्त करने का प्रावधान है; ताकि संस्थान अपनी–अपनी आवश्कताओं और क्षमताओं का आकलन करके अपना अबाध विकास कर सकें। एक–एक विश्वविद्यालय के साथ सैकड़ों (कई बार तो हजारों) कॉलेज संबद्ध होते हैं। इससे उनकी प्रशासनिक और प्रबंधनात्मक व्यवस्थाएँ बड़ी लचर होती हैं। निगरानी और निर्णय–प्रक्रिया भी बुरी तरह से प्रभावित होती है।

इस नीति में मुक्त दूरस्थ शिक्षा और ऑनलाइन शिक्षा पर भी खासा ज़ोर है। हालाँकि, ये दोनों ही प्रकार के पाठ्यक्रम और शिक्षण पद्धतियाँ पहले से ही प्रचलन में हैं। किंतु नई शिक्षा नीति में इन पाठ्यक्रमों के मानक और स्तर पर विशेष ध्यान देते हुए उन्हें परिसरों में संचालित पाठ्यक्रमों के समतुल्य बनाने का लक्ष्य है। साथ ही, परिसर में संचालित पाठ्यक्रमों और इन पाठ्यक्रमों के क्रेडिट परस्पर मान्य होंगे। इसके लिए 'अकेडमिक क्रेडिट बैंक' बनाने का भी प्रस्ताव है। शिक्षार्थी डिग्री विशेष के लिए निर्धारित क्रेडिट अपनी सुविधानुसार कभी भी और किसी भी संस्थान (दूरस्थ, ऑनलाइन या नियमित) से अर्जित करके डिग्री प्राप्त करने के लिए पात्र होंगे। वर्तमान चॉइस बेस्ड क्रेडिट सिस्टम (CBCS) को संशोधित करते हुए और भी अधिक लचीला और नवाचारी बनाया जाएगा ताकि शिक्षार्थी अपनी रुचि के अनुसार पाठ्यचर्या का चयन करके लचीलेपन के साथ क्रेडिट अर्जित करते हुए अपना कार्यक्रम पूरा कर सकें। आनंदप्रद, व्यावहारिक, बंधनमुक्त और कौशल आधारित अधिगम इस शिक्षा

नीति की बड़ी चिंता है। इसीलिए शिक्षार्थी पर भयावह दबाव बनाने वाली परीक्षाओं की जगह सतत, समग्रतावादी और व्यापक मूल्यांकन वाली पद्धतियों के विकास पर बल दिया गया है।

इस शिक्षा नीति में पाठ्यक्रमों/संस्थानों में प्रवेश और निकास के कई विकल्प होंगे। यह समयावधि की सीमाओं से मुक्ति प्रदान करते हुए आजीवन सीखने की संभावनाओं को प्रोत्साहित करने वाली पहल है। हम जानते हैं कि भारत जैसे विकासशील देश में स्कूली शिक्षा हो या उच्च शिक्षा; संसाधनों के अभाव में शिक्षार्थियों का 'ड्रॉपआउट रेट' बहुत ज्यादा है। अनेक सर्वेक्षणों में यह भी उभरकर सामने आया है कि 'ड्रॉपआउट' होने वाले शिक्षार्थियों में वंचित वर्गों–दलित, आदिवासी, महिलाएँ, अल्पसंख्यक, ग्रामीण, भारतीय भाषा–भाषी आदि सर्वाधिक हैं। यह नीति लैंगिक संतुलन और संवेदनशीलता के प्रति विशेष रूप से सजग है। इन वंचित वर्गों को अकादमिक सहयोग और आवश्यक परामर्श देने के लिए 'सहायता केंद्र' खोलने का भी प्रावधान किया गया है। ये सहायता केंद्र इन वंचित वर्गों की न सिर्फ गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षण संस्थानों में पहुँच सुनिश्चित करेंगे; बल्कि उनका सफल और सुखद 'रिटेंशन' भी उन्हीं का दायित्व होगा। संस्थानों द्वारा वंचित वर्गों के छात्र–छात्राओं के लिए 'ब्रिज कोर्स' भी संचालित किए जाएँगे; ताकि उनके और सुविधासंपन्न छात्र–छात्राओं के बीच की खाई को पाटा जा सके। 'ड्रॉपआउट' की समस्या का समाधान खोजने के लिए और वंचित वर्गों को एकाधिक अवसर देने के लिए यह प्रावधान किया गया है।

स्नातक उपाधि 3 या 4 वर्ष की होगी। 1 साल पूरा करने पर सर्टिफिकेट, 2 साल पूरा करने पर डिप्लोमा, 3 साल के बाद स्नातक की डिग्री देने का प्रस्ताव है। 4 वर्षीय स्नातक कार्यक्रम करने पर मेजर और माइनर विषयों के चयन की सुविधा होगी तथा रिसर्च प्रोजेक्ट करने का अवसर भी होगा और 'शोध सहित स्नातक डिग्री' देने का विकल्प होगा। 3 वर्षीय स्नातक करने वालों के लिए स्नातकोत्तर 1 साल का होगा। उल्लेखनीय है की 12वीं पंचवर्षीय योजना की शुरुआत में दिल्ली विश्वविद्यालय में 4 वर्षीय स्नातक कार्यक्रम प्रारंभ किया गया था। किंतु छात्र–छात्राओं, शिक्षकों और अभिभावकों के भारी विरोध के मद्देनज़र हस्तक्षेप करते हुए सरकार ने उसे बंद कर दिया था। अब उसी प्रकार के 4 वर्षीय स्नातक कार्यक्रम को पूरे देश में लागू किए जाने की योजना है। वस्तुतः 4 वर्षीय स्नातक कार्यक्रम करने की वजह 'ड्रॉपआउट' होने वाले छात्र–छात्राओं को उनकी अध्ययन अवधि के अनुसार कोई–न–कोई सर्टिफिकेट/डिप्लोमा/डिग्री प्रदान करके उनकी इस समयावधि को बर्बाद होने से बचाया जा सकेगा। ये प्रमाण–पत्र और इस अवधि में अर्जित कौशल उन्हें रोज़गार–प्राप्ति में भी सहायता करेंगे। इसके अलावा अपने स्नातक कार्यक्रम को बीच में छोड़ने वाले शिक्षार्थी परिस्थितियाँ अनुकूल होने पर आगे की पढ़ाई पूरी करते हुए अपना कार्यक्रम सफलतापूर्वक संपन्न कर सकेंगे। इस प्रावधान से वंचित वर्गों के शिक्षार्थियों को सर्वाधिक लाभ होगा। 4 वर्षीय स्नातक कार्यक्रम लागू करने के पीछे एक अन्य कारण विकसित देशों के स्नातक कार्यक्रमों से अपने यहाँ के कार्यक्रमों की समकक्षता स्थापित करना भी है ताकि भारतीय और विदेशी छात्रों की अबाध आवाजाही सुनिश्चित की जा सके। यह निर्णय भारत में अंतर्निहित अंतरराष्ट्रीय शैक्षणिक पर्यटन केंद्र बनने की अपार संभावनाओं को फलीभूत करने में सहायक होगा। इसके अलावा 5 वर्षीय एकीकृत स्नातक/स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम की सुविधा भी यथावत् रहेगी। शोध सहित 4 वर्षीय स्नातक या फिर स्नातकोत्तर करने वाले छात्र पीएचडी डिग्री में प्रवेश के पात्र होंगे। एमफिल कार्यक्रम को बंद करने का प्रस्ताव है, क्योंकि उसकी उपयोगिता और उपादेयता क्रमशः कम हुई है।

इस शिक्षा नीति में शिक्षण व्यवसाय में योग्यतम प्रतिभाओं को आकर्षित करने पर भी बल है। अधिगम प्रक्रिया को पूर्ण फलागम तक ले जाने में सुयोग्य, समर्पित, कर्मठ, स्वयंप्रेरित और प्रतिभासंपन्न शिक्षकों की सबसे बड़ी भूमिका होती है। वे ही उत्कृष्टता और नवोन्मेष के सच्चे सूत्रधार होते हैं।

वे छात्र–छात्राओं के रोल मॉडल होते हैं, और उन्हें निरंतर प्रभावित और प्रेरित करते हैं। यह शिक्षा नीति लगातार बेहतरीन प्रदर्शन करने वाले शिक्षकों को अनुकूल कार्य–वातावरण, उच्च वेतन और अन्य सुविधाओं के साथ कैरियर में आगे बढ़ने के अपार अवसर और स्वायत्तता प्रदान करने के बारे में आश्वस्त करती है। योग्यता, गुणवत्ता और निरंतर बेहतर प्रदर्शन सुनिश्चित करने के लिए इस नीति में 'टेन्योर ट्रैक सिस्टम' और 'फास्ट–ट्रैक प्रमोशन' का भी प्रावधान है। यह नीति शिक्षकों के अंदर सांस्थानिक जुड़ाव और लगाव पैदा करने के लिए उनके स्थानांतरण का भी निषेध करती है। हालाँकि, शिक्षकों की नियुक्ति–प्रक्रिया को दुरुस्त करने का कोई ठोस और विश्वसनीय रोडमैप इस शिक्षा नीति में दिखाई नहीं पड़ता है, जो कि प्रतिभाओं के पलायन और योग्यतम अभ्यर्थियों की हताशा की बड़ी वजह है। वर्तमान नियुक्ति–प्रक्रिया भ्रष्टाचार, भाई–भतीजावाद और राजनैतिक हस्तक्षेप की शिकार है। नियुक्ति प्रक्रिया में 'नॉन–अकेडमिक' कारकों का ही बोलबाला है। इस समस्या को संबोधित करने की दिशा में यह नीति ज्यादा मुखर नहीं है।

इस ऐतिहासिक विज़न डॉक्यूमेंट में गुणवत्तापूर्ण और अंतर–अनुशासनिक शोध के संरक्षण, संवर्धन और निरंतर विकास के लिए 'राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन' की स्थापना का प्रावधान है। अमरीका, जर्मनी, इजराइल, जापान, चीन, दक्षिण कोरिया आदि विकसित अर्थ–व्यवस्थाओं का आधार उनका उच्च गुणवत्ता वाला अधुनातन शोध है। इस फाउंडेशन की स्थापना का मंतव्य शोध की सभी अड़चनों को दूर करते हुए संसाधनों और सुविधाओं की अबाध और अपार उपलब्धता सुनिश्चित कराना है; ताकि भारत भी अनुसंधान और ज्ञान–सृजन में अग्रणी देश बनकर अपनी अर्थव्यवस्था का व्यापक विकास कर सके और अपने देशवासियों के जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार कर सके।

उच्च शिक्षा की नियामक प्रणाली में भी परिवर्तन का प्रस्ताव है। यू.जी.सी., ए.आई.सी.ई.टी., एन.सी.टी.ई. जैसी तमाम विनियामक संस्थाओं के स्थान पर एक सर्व–सक्षम भारतीय उच्चतर शिक्षा आयोग बनाया जाएगा। यह राजनैतिक हस्तक्षेप से मुक्त एक पूर्णरूपेण स्वतंत्र निकाय होगा और उसका नेतृत्व और संचालन ख्यातिलब्ध विशेषज्ञ करेंगे। उसकी चार प्रमुख शाखाएँ होंगी जो विनियमन (राष्ट्रीय उच्चतर शिक्षा विनियामक परिषद्), प्रत्यायन (राष्ट्रीय प्रत्यायन परिषद्), अनुदान (उच्चतर शिक्षा अनुदान परिषद्) और अपेक्षित मानक निर्धारण (सामान्य शिक्षा परिषद्) जैसे विशेष कार्यों के लिए उत्तरदायी होंगी। अन्य व्यावसायिक विनियामक संस्थाओं का पुनर्गठन करते हुए उन्हें भ्रष्टाचारमुक्त, पेशेवर और कार्यदक्ष बनाने का भी प्रस्ताव है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 सकल घरेलू उत्पाद का 6 प्रतिशत शिक्षा पर व्यय करने का संकल्प व्यक्त करती है। हालाँकि, सन् 1968 की शिक्षा नीति और सन् 1986/92 की शिक्षा नीति में भी इस बात की अनुशंसा की गई थी। अभी शिक्षा पर कुल व्यय सकल घरेलू उत्पाद के 4.43 प्रतिशत के आसपास है। संयुक्त राज्य अमरीका, जापान, चीन, दक्षिण कोरिया, जर्मनी जैसे अनेक देशों में शिक्षा पर व्यय सकल घरेलू उत्पाद का 10 प्रतिशत तक है। भारत सरकार द्वारा सार्वजनिक शिक्षा में पर्याप्त निवेश करके ही भारतीय समाज को एक ज्ञान समाज और भारत को एक अंतरराष्ट्रीय ज्ञान केंद्र बनाया जा सकता है। यह शिक्षा नीति भारत को एक विकसित राष्ट्र बनाने के स्वप्न को साकार करते हुए उसे विश्वशक्ति बनाने की महत्वाकांक्षी परियोजना सार्वजनिक शिक्षा में पर्याप्त निवेश करके ही शिक्षा के निजीकरण और व्यवसायीकरण की आशंकाओं पर भी पूर्ण विराम लगाया जा सकता है। इस नीति में शिक्षा के ढाँचे में जिन आमूल–चूल बदलावों और नवाचारों की परिकल्पना की गई है, उनके लिए पर्याप्त आर्थिक संसाधनों की आवश्यकता होगी। यह नीति शिक्षा क्षेत्र में समाज, सामाजिक संस्थाओं और निजी क्षेत्र की रचनात्मक भूमिका तो स्वीकार करती है; लेकिन शिक्षा के व्यवसायीकरण और बाजारीकरण के प्रति विशेष सचेत और सतर्क है और उसकी संभावनाओं और आशंकाओं को निरस्त करती है।

भारतीय ज्ञान–परंपरा के नवसंधान द्वारा भारतीय समाज का नवजागरण इस नीति का ध्येय है। उच्च शिक्षा को अंग्रेजी और औपनिवेशिकता की जकड़न से बाहर निकालकर यह नीति हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं को ज्ञान–सृजन और अनुसंधान की माध्यम भाषा के रूप में प्रतिष्ठापित करने की प्रस्तावना भी करती है। गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षा तक सबकी पहुँच सुनिश्चित करना भी इस शिक्षा नीति का उद्देश्य है। अभी देश की लगभग तीन–चौथाई युवा पीढ़ी उच्च शिक्षा के दायरे से बाहर है। इसमें सबसे बड़ी संख्या दलितों, आदिवासियों, महिलाओं, अल्पसंख्यकों, ग्रामीणों, देशज भाषा–भाषियों की है। इन सबको उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए प्रेरित करना और उत्प्रेरित समूहों और समुदायों के लिए गुणवत्तापूर्ण और वहनीय सार्वजनिक शिक्षा की उपलब्धता और पहुँच सुनिश्चित करना इस शिक्षा नीति की सबसे बड़ी चुनौती होगी। यदि यह शिक्षा नीति यथा–प्रस्तावित धरातल पर लागू हो पाती है और स्व–घोषित लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल होती है तो इक्कीसवीं सदी भारत और भारतवासियों की सदी होगी।

– अधिष्ठाता, छात्र कल्याण, जम्मू केंद्रीय विश्वविद्यालय, जम्मू

❑❑❑

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भाषा

डॉ. बनवारी लाल मीना

भारत विविध भाषाओं, बोलियों, उप–बोलियों, संस्कृतियों, धर्मों, संप्रदायों, देवी–देवताओं को मानने वाला देश है। ये सारी विविधताएँ यदि हमें एक–दूसरे से अलग दिखाती हैं तो राष्ट्रीय स्तर पर एकता को भी प्रतिबिंबित करती हैं। जब हमने पहले ही समझ लिया कि यहाँ कई बोलियों और भाषाओं को बोलने वाले लोग हैं तो हमें यह भी समझना चाहिए कि हमें विभिन्न भाषाओं आदि के माध्यम से शिक्षा प्रदान करनी होगी।

पूरे भारत में शिक्षा का एक ही पैटर्न हो, इस बिंदु को दृष्टिगत रखते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति की कल्पना की गई। हमें यह मालूम होना चाहिए कि वर्तमान में शिक्षा की जो व्यवस्था दिख रही है वह सदैव से ऐसी ही नहीं थी। वैदिककाल, उत्तर वैदिककाल, बौद्धकाल, मुगलकाल आदि में शिक्षा के पैटर्न व तरीके अलग थे। अंग्रेजों के जमाने में धीरे–धीरे कई सारी समितियाँ, आयोग इत्यादि बनाए जाते रहे जिससे धीरे–धीरे शिक्षा में सुधार व बदलाव होता रहा।

यदि हम देखें तो हमें मैकाले का विवरण पत्र (1835) दिखता है जिसमें अंग्रेजी माध्यम से पढ़ाई पर जोर रहा। इसके साथ विज्ञान व पाश्चात्य साहित्य को बढ़ावा देने पर बल रहा। वहीं वुड के आदेश पत्र (1854) की बात करें तो माध्यमिक विद्यालयों में आर्थिक सहायता हेतु अनुदान प्रणाली का सुझाव, अंग्रेजी शिक्षा पाने वालों को सरकारी नौकरी देने पर बल रहा। भारतीय शिक्षा आयोग (हंटर कमीशन–1882) ने माध्यमिक शिक्षा में विविधीकृत पाठ्यक्रम, एकेडमिक व व्यावसायिक पाठ्यक्रम अलग–अलग लागू करने का सुझाव दिया। विश्वविद्यालय आयोग (लार्ड कर्जन 1902) ने इंटरमीडिएट कक्षाएँ तोड़ने और मान्यता प्राप्त माध्यमिक विद्यालयों को ही मैट्रिकुलेशन परीक्षा में सम्मिलित होने की अनुमति दी।

सैडलर आयोग (1917) ने माध्यमिक शिक्षा को विश्वविद्यालय के अधिकतर क्षेत्र से बाहर रखकर इंटर कॉलेजों की स्थापना तथा प्रत्येक प्रांत में माध्यमिक शिक्षा की स्थापना की बात की। हर्टांग समिति (1929) ने माध्यमिक शिक्षा में बच्चों के फेल होने के फलस्वरूप व्यावसायिक विषयों को स्थान दिए जाने का सुझाव दिया। वुड एक्ट रिपोर्ट (1936) में कक्षा 10 तक सभी कक्षाओं में भारतीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाने पर बल दिया। सर्जेंट रिपोर्ट (1944) ने साहित्यिक व प्राविधिक दोनों तरह के विद्यालयों की स्थापना किए जाने की बात की। इसके साथ–साथ यह भी कहा कि योग्य विद्यार्थियों को अगली कक्षा में प्रवेश दिया जाए।

हमारा भारत देश 1947 ई. में स्वतंत्र हुआ। फिर ताराचंद समिति (माध्यमिक शिक्षा समिति–1948) बनी। इस समिति ने माध्यमिक शिक्षा को 12 वर्ष करने, विद्यालयों को बहूद्देश्यीय विद्यालयों में बदलने तथा माध्यमिक शिक्षा की जाँच हेतु एक आयोग के गठन की बात की। राधाकृष्णन आयोग (विश्वविद्यालय आयोग–1948) उच्च शिक्षा हेतु गठित किया गया। लेकिन इसने माध्यमिक शिक्षा

भाषा ISSN 0523-1418

के संबंध में भी सुझाव देते हुए माध्यमिक स्कूलों के शिक्षकों हेतु रिफ्रेशर कोर्स चलाने, माध्यमिक स्तर पर अंग्रेजी शिक्षा अनिवार्य करने पर जोर दिया।

मुदलियार आयोग (माध्यमिक शिक्षा आयोग–1952) ने 12वीं कक्षा को विश्वविद्यालय से जोड़ने व बहूद्देश्यीय विद्यालय बनाने पर जोर दिया। आचार्य नरेंद्र देव समिति (1953) ने विशेष रूप से उत्तर प्रदेश में माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन हेतु सुझाव दिया लेकिन ये अन्य राज्यों हेतु भी उपयोगी हैं। श्रीमाली समिति (1954) ने ग्राम विद्यापीठों को प्रोत्साहन देने के साथ सरकारी अनुदान दिए जाने पर भी बल दिया। कोठारी आयोग (शिक्षा आयोग–1964) ने कहा कि उच्च माध्यमिक शिक्षा केवल चयनित विद्यार्थियों को ही दी जाए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) ने व्यापक स्तर पर विचार–विमर्श कर विभिन्न स्तरों पर सुझाव दिए। वर्तमान शिक्षा पद्धति पर इस नीति का प्रभाव साफतौर पर देखा जा सकता है। आचार्य राममूर्ति समिति (1990) ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति की समीक्षा की। नवोदय विद्यालय को आदर्श विद्यालय, व्यावसायिक शिक्षा को बढ़ावा देने पर बल दिया। विद्यालय पाठ्यक्रम पुनरावलोकन समिति (1993) ने विद्यालय स्तर पर पाठ्यक्रम का बोझ कम करने, शिक्षा को तर्कसंगत व व्यावहारिक बनाने पर जोर दिया। उच्च शिक्षा व शोध विकास समिति (2005–यशपाल) ने उच्च शिक्षा एवं शोध के लिए राष्ट्रीय आयोग के गठन का प्रस्ताव दिया। वर्तमान में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 पर काफी विचार–विमर्श हो रहा है।

अब प्रश्न यह उठता है कि आखिर शिक्षा नीति का क्या तात्पर्य है? तो शिक्षा नीति का तात्पर्य है– "शिक्षा प्रणाली को नियंत्रित करने वाले सभी सिद्धांत तथा नियम व कानूनों का समुच्चय।" यदि हम राष्ट्रीय शिक्षा नीति की बात करें तो राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा प्रणाली को नियंत्रित करने के लिए बनाए गए सिद्धांतों, नियमों, कानूनों का समुच्चित रूप ही राष्ट्रीय शिक्षा नीति है।

हम यहाँ पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भाषा के संदर्भ में विचार करेंगे। हमें यह भी समझ लेना चाहिए कि भाषा क्या है? विचारों का आदान–प्रदान करने के लिए हमें कोई न कोई साधन तो चाहिए ही ताकि हम अपने हृदय के उद्गार अन्य लोगों तक पहुँचा सकें। भोलानाथ तिवारी लिखते हैं– "भाषा वह साधन है जिसके माध्यम से हम सोचते हैं तथा अपने विचारों को व्यक्त करते हैं।"[2] यहाँ यह भी विचारणीय बिंदु है कि हम अपने हृदय के उद्गार बिल्कुल अभीष्ट तरीके से तभी पहुँचा सकते हैं जब कि श्रोता भी उस भाषा को जानता हो। यदि पूरी भाषा नहीं जानता तो कम से कम सामान्य सी बातें संदर्भ के साथ अवश्य ही जानता हो।

पढ़ाई–लिखाई के संदर्भ में भाषा का अपना विशिष्ट महत्व है। भाषा शिक्षण तो अपने आप में एक कौशल ही है। भाषा के संदर्भ व उसके शिक्षण में तारतम्यता बनाकर चलना अध्यापक के लिए नितांत आवश्यक होता है। भाषा शिक्षण के संदर्भ में मनोरमा गुप्त लिखती हैं– "भाषा शिक्षण से तात्पर्य है छात्र में भाषाई दक्षता उत्पन्न करना, उसको भाषा के व्यवहार की क्रिया से परिचित कराना तथा उसमें अध्येय भाषा के व्यवहार की कुशलता उत्पन्न कराना।"[3] तो जब हमें भाषा की बात करनी है तो हमें यह भी पता होना चाहिए कि भाषा के कई रूप होते हैं। कोई भाषा या बोली किसी की मातृभाषा होती है जैसे– हिंदी को ही ले लें तो हिंदी उत्तर प्रदेश के व्यक्ति के लिए मातृभाषा है लेकिन तमिलनाडु के व्यक्ति के लिए यह मातृभाषा नहीं है। हिंदी उसके लिए द्वितीय भाषा है और तमिल मातृभाषा। अब हिंदी को भी देखें तो उसमें भी अवधी, ब्रज, बुंदेली आदि बोलियाँ हैं। पहले अवधी व ब्रज भाषाएँ थीं लेकिन वर्तमान में ये बोली हैं। ये एक अलग विषय है। इस पर फिर कभी विचार–विमर्श किया जाएगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को गौर से देखें तो इसमें भाषा के संदर्भ में विभिन्न प्रकार से उनको प्रोत्साहन देने आदि के संदर्भ में विचार किया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 कहती है कि "जहाँ तक संभव हो, कम से कम ग्रेड 5 तक लेकिन बेहतर यह होगा कि यह ग्रेड 8 और उससे आगे तक भी हो, शिक्षा का माध्यम, घर की भाषा/मातृभाषा/स्थानीय भाषा या क्षेत्रीय भाषा होगी।

सार्वजनिक और निजी दोनों तरह के स्कूल इसकी अनुपालना करेंगे।"[4] वर्तमान में देखें तो स्थिति थोड़ी अलग है। अंग्रेजी माध्यम स्कूलों की तरफ जोर अधिक है। एक समस्या हमारे सामने यह भी आती है कि विज्ञान व गणित जैसे विषयों के संदर्भ में क्या किया जाए? उनकी पुस्तकें किस भाषा में हों? इस संदर्भ में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का कहना है कि "विज्ञान सहित सभी विषयों में उच्चतर गुणवत्ता वाली पाठ्य पुस्तकों को घरेलू भाषाओं/मातृभाषा में उपलब्ध कराया जाएगा।"[5] इस बात का ध्यान अवश्य होना चाहिए कि जहाँ यह न संभव हो पा रहा हो तो कम से कम "द्विभाषी शिक्षण–अधिगम सामग्री सहित द्विभाषी एप्रोच का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।"[6] बाल्यकाल में बच्चों को मातृभाषा में सिखाने से बच्चे तेजी से सीखते हैं। इस बिंदु को भी दृष्टिगत रखते हुए बहुभाषिकता को एक समस्या नहीं बल्कि एक शक्ति के रूप में प्रोत्साहन देने पर बल है।

भारत में अहिंदी प्रदेश विशेष रूप से तमिलनाडु आदि की तरफ से यह आरोप बराबर लगाया जाता है कि हम पर हिंदी को थोपा जा रहा है। इस बिंदु को भी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने अपने मद्देनजर रखा है। इसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि किसी भी राज्य पर किसी भाषा को थोपा नहीं जाएगा। "त्रिभाषा फार्मूले को लागू किया जाना जारी रहेगा। हालाँकि, तीन भाषा के इस फार्मूले में काफी लचीलापन रखा जाएगा और किसी भी राज्य पर कोई भाषा थोपी नहीं जाएगी। बच्चों द्वारा सीखी जाने वाली तीन भाषाओं के विकल्प राज्यों, क्षेत्रों और निश्चित रूप से छात्रों के स्वयं के होंगे, जिनमें कम से कम तीन में दो भाषाएँ भारतीय हों।"[7] यह शिक्षा नीति वसुधैव कुटुंबकम के मार्ग पर चलते हुए केवल भारतीय भाषा ही नहीं, अंग्रेजी ही नहीं बल्कि विदेशी भाषाओं की सामग्री भी माध्यमिक स्तर पर उपलब्ध कराने पर बल देती है ताकि विद्यार्थी विश्व संस्कृति से परिचित हो सकें।

यह शिक्षा नीति भाषाओं के संरक्षण व संवर्धन पर भी बल देती है। कारण यह है कि भाषाओं में संस्कृतियाँ बसती हैं। उन संस्कृतियों के संरक्षण के लिए उन संस्कृतियों से संबंधित भाषाओं का संरक्षण करना नितांत आवश्यक है। इसके लिए अनुवाद कार्य करने के साथ–साथ वेब आधारित तरीके से दस्तावेजीकरण किया जाना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 कहती है "भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में उच्चतर गुणवत्ता वाली अधिगम सामग्री और अन्य महत्वपूर्ण लिखित एवं मौखिक सामग्री उपलब्ध हो सके। इसके लिए एक इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ ट्रांसलेशन एंड इंटरप्रिटेशन (आई आई टी आई) की स्थापना की जाएगी।"[8] यह हमारे लिए दुख का विषय है कि विश्व की बात नहीं हमारे भारत ने भी अपनी कई भाषाओं को खो दिया। विगत 50 वर्षों में 220 भाषाओं को हमने खो दिया है। यूनेस्को ने तो 197 भारतीय भाषाओं को लुप्तप्राय घोषित कर दिया है। इसका एक कारण है सरकार की तरफ से इन्हें बचाने के लिए गंभीर प्रयास का न किया जाना। वे भाषाएँ जिनकी लिपि नहीं है उनके खोने की संभावनाएँ अधिक हैं क्योंकि उस भाषा को बोलने–समझने वाले बुजुर्ग की मृत्यु के बाद उस भाषा का प्रयोग नहीं किया जाता है। इससे वह भाषा समाप्त हो जाती है। भाषाओं को बचाने के लिए उन भाषाओं को व्यापक रूप से बोलने व शिक्षण में उन भाषाओं को लाने, उनकी मदद लेने का प्रयास किया जाना चाहिए ताकि वे भाषाएँ और उनके शब्द प्रचलन में बने रहें।

आदिवासी भी हमारे अपने भाई हैं। उनकी संस्कृति भी उनकी अपनी भाषाओं में संरक्षित है। उनकी भाषाओं के साथ धीरे–धीरे उनकी संस्कृति भी समाप्त होती जा रही है। यह शिक्षा नीति इस संदर्भ में भी सजग है। "शास्त्रीय, आदिवासी और लुप्तप्राय भाषाओं सहित सभी भारतीय भाषाओं को संरक्षित और बढ़ावा देने के प्रयास नए जोश के साथ किए जाएँगे। प्रौद्योगिकी एवं क्राउडसोर्सिंग, लोगों की व्यापक भागीदारी के साथ इन प्रयासों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएँगे।"[9] यह शिक्षा नीति भाषाओं के विकास के लिए छात्रवृत्ति व पुरस्कार इत्यादि देने पर भी बल देती है और आठवीं अनुसूची में शामिल सभी 22 भाषाओं के लिए अकादमी खोलने

की भी बात करती है। भारतीय भाषाओं से संबंधित विभागों व उनके कार्यक्रमों को देशभर में शुरू करने व उनको विकसित करने पर बल दिया गया है।

भाषा को केवल प्राथमिक, माध्यमिक तक ही नहीं अपितु, उच्चतर शिक्षाओं में भी बढ़ावा दिया जाएगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 कहती है कि– "अधिकांश उच्चतर शिक्षण संस्थानों तथा उच्चतर शिक्षा के और अधिक कार्यक्रमों में मातृभाषा/स्थानीय भाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप में उपयोग किया जाएगा और या कार्यक्रमों को द्विभाषित रूप में चलाया जाएगा ताकि पहुँच और सकल नामांकन अनुपात दोनों में बढ़ोतरी हो सके। इसके साथ ही सभी भारतीय भाषाओं की मजबूती, उपयोग एवं जीवंतता को प्रोत्साहन मिल सके। मातृभाषा/स्थानीय भाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप में इस्तेमाल करने और/या कार्यक्रमों को द्विभाषित रूप में चलाने के लिए निजी प्रशिक्षण संस्थानों को भी प्रोत्साहित किया जाएगा एवं बढ़ावा दिया जाएगा।"[10] इसके साथ–साथ 'एक भारत–श्रेष्ठ भारत' के तहत देश के 100 पर्यटन स्थलों की पहचान कर शिक्षण संस्थानों द्वारा वहाँ विद्यार्थियों को भेजा जाएगा ताकि वे वहाँ की सामान्य भाषा, स्वदेशी साहित्य आदि से अवगत हो सकें।

भाषा के संदर्भ में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 किसी मील के पत्थर से कम नहीं है। हाँ यह अवश्य है कि इनके क्रियान्वयन के संदर्भ में सच्चे मन से काम किए जाने की जरूरत है। यह सत्य है कि इसमें कुछ राजनैतिक सहयोग की भी जरूरत होगी। हम सबको इस संदर्भ में सहयोगात्मक रुख अपनाना चाहिए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में विप्रा अग्रवाल लिखती हैं– "शिक्षा की पिछली नीतियों का जोर मुख्य रूप से शिक्षा तक पहुँच के मुद्दों पर था। 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति, जिसे 1992 में संशोधित किया गया 1986, के अधूरे कार्य को इस नीति के द्वारा पूरा करने का प्रयास किया गया है।"[11] इस शिक्षा नीति पर बहुत ही गंभीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है। यह एक मार्गदर्शक की तरह है। हम इस पर आगे कितना बढ़ पाते हैं यह देखने का विषय है। हो सकता है कि सरकार/सरकारों (राज्य सरकार) द्वारा कुछ आमूल–चूल परिवर्तन भी किया जाए लेकिन इसकी मूल आत्मा बनी रहनी चाहिए। इसका कारण यह है कि भाषा का प्रश्न बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. विकिपीडिया hi.m.wikipedia.org, दिनांक 31.12.2020, समय 1.50 अपराह्न
2. भाषाविज्ञान, भोलानाथ तिवारी, पुनर्मुद्रण 2015, पृ.सं. 1, किताब महल, 22ए, सरोजनी नायडू मार्ग, इलाहाबाद
3. भाषा–शिक्षणः सिद्धांत और प्रविधि, मनोरमा गुप्त, पुनर्मुद्रण 2010, पृ.सं. 35, केंद्रीय हिंदी संस्थान, हिंदी संस्थान मार्ग, आगरा
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, पृ.सं. 19
5. वही, पृ.सं. 19
6. वही, पृ.सं. 20
7. वही, पृ.सं. 20
8. वही, पृ.सं. 89–90
9. वही, पृ.सं. 91
10. वही, पृ.सं. 89
11. शिविरा मासिक पत्रिका– शिक्षक दिवस विशेषांक, वर्ष 61, अंक 03, सितंबर 2020, सं. मुकेश व्यास, पृ.सं.7, माध्यमिक शिक्षा राजस्थान बीकानेर

– असिस्टेंट प्रोफेसर (शिक्षा), मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

❑❑❑

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और साहित्य में शिक्षा के प्रश्न

डॉ. नृत्य गोपाल

भारत सरकार की 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' प्रस्तुत है। इसे 29 जुलाई, 2020 को अंतरिक्ष विज्ञानी के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता वाली शिक्षा समिति की रिपोर्ट के आधार पर प्रस्तुत किया गया है। इसे प्रस्तावित करते हुए शिक्षा मंत्री ने कहा– "मुझे लगता है कि यह दुनिया का सबसे बड़ा परामर्श वाला नवाचार का विमर्श है। इसमें लगभग सवा लाख पंचायत समितियों की सहभागिता रही है। सवा दो लाख सुझाव आए हैं।. ....हमने मानव संसाधन विकास मंत्रालय से अलग शिक्षा मंत्रालय दिया है। इसमें हमने नाम ही नहीं नीति भी बदली है। कार्य प्रणाली में आमूल–चूल परिवर्तन हुआ है। इससे नया भारत बनाने में मदद मिलेगी।"[1]

7 अगस्त, 2020 को नई शिक्षा नीति पर प्रधानमंत्री जी ने कहा कि– "हमारे सामने सवाल था कि क्या हमारी नीति युवाओं को अपने सपने पूरा करने का मौका देती है? क्या हमारी शिक्षा व्यवस्था युवाओं को सक्षम बनाती है? नई शिक्षा नीति को बनाते समय इन सवालों पर गंभीरता से काम किया गया है। दुनिया में आज एक नई व्यवस्था खड़ी हो रही है, ऐसे में उसके हिसाब से एजुकेशन सिस्टम में बदलाव जरूरी है, अब 10+2 को भी खत्म कर दिया गया है, हमें विद्यार्थी को ग्लोबल सिटीजन बनाना है, लेकिन हम चाहते हैं कि वे अपनी जड़ों से जुड़े रहें।"[2] आगे उन्होंने कहा था कि– "देश का एजुकेशन सिस्टम अपनी वर्तमान और आने वाली पीढ़ी का फ्यूचर रेड्डी रखे। 'नई शिक्षा नीति 2020' 21वीं सदी के भारत का फाउंडेशन तैयार करने वाली है।"[3]

नई शिक्षा नीति में बड़ा बदलाव भारत को पहली बार शिक्षा मंत्रालय मिलना है। इससे पूर्व शिक्षा मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अधीन थी। संभवतः मंतव्य यही रहा होगा कि शिक्षा मानव के विकास का संसाधन है। यों राज्य सरकारों में शिक्षा मंत्रालय आरंभ से है। इस प्रकार केंद्र और राज्यों के बीच बने आ रहे शिक्षा संबंधी पार्थक्य को समाप्त करना व्यवस्थागत रूप में उठाया गया सही कदम कहा जाएगा।

'शिक्षा और 'शिक्षा नीति' दो भिन्न प्रकार की अवधारणाएँ और प्रक्रियाएँ हैं। शिक्षा के महत्व और आवश्यकता पर चर्चाएँ मानव सभ्यता के विकास के साथ जुड़ी हुई हैं। 'शिक्षा' पर कोई नीति, प्रतिबंध या व्यवस्था का स्वाभाविक प्रश्न दिखाई नहीं पड़ता। जिज्ञासा, प्राप्ति और अधिगम शिक्षा के मूलभूत तत्व कहे जा सकते हैं। शिक्षा विहीन जीवन को अभिशाप माना जाता रहा है।

शिक्षा नीति एक सरकारी दस्तावेज है। इसके प्रस्तावों के प्रति सरकार जिम्मेदार है। इनके क्रियान्वयन का दायित्व सरकार या सरकारों का है। संवैधानिक प्रावधानों के अधीन समाज की दशा एवं दिशा से नीति निर्माण का संकल्प आकार

ग्रहण करता है। नीति प्रावधानों में भूत, वर्तमान और भविष्य का आकलन महत्वपूर्ण है। शिक्षा नीति कोई सामान्य प्रस्ताव नहीं है इसमें न केवल विद्यार्थियों का हित जुड़ा होता है वरन् वैश्विक शिक्षा और समाज व्यवस्था में हमारी भूमिका भी तय होती है। नई शिक्षा नीति 2020 भारत की जनता के लिए भारत सरकार द्वारा प्रस्तावित नीति है। इसके समग्र क्रियान्वयन के लक्ष्य तय किए गए हैं। सभी को शिक्षा सुलभ हो यह संकल्प है। प्राथमिक स्तर पर इसके प्रभाव पूर्व की शिक्षा नीति में भी दिखाई पड़ते हैं। हम भारत को साक्षर बनाने में कई कदम आगे बढ़े हैं पर शिक्षित करने में इतने आगे नहीं आए हैं। प्राथमिक शिक्षा के बाद उच्च शिक्षा के लिए हम विद्यार्थियो को सहेज नहीं पाते। नई शिक्षा नीति में बड़ा लक्ष्य है वर्ष 2030 तक सकल नामांकन अनुपात 'Ggross Enrolment Ratio -GER' को 100 प्रतिशत तक लाना।

देश की शिक्षा नीति का संबंध देश की अर्थ व्यवस्था से भी है। नई शिक्षा नीति के अंतर्गत शिक्षा क्षेत्र पर सकल घरेलू उत्पाद के 6 प्रतिशत हिस्से के सार्वजनिक व्यय का लक्ष्य रखा गया है। लंबे समय तक यह हिस्सेदारी 3 प्रतिशत के आसपास बनी रही है। बड़ी जनसंख्या वाले देश में इस हिस्सेदारी के अपने मायने हैं। निश्चित रूप में इससे शिक्षा के क्षेत्र में आधारभूत ढाँचागत सुधार संभव हो पाएगा। भवन के रूप में किसी विद्यालय का खड़ा होना एक बात है, पर वह शिक्षा नहीं है शिक्षा केंद्र है। शिक्षा केंद्र का अपना महत्व है पर हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि भवन विहीन अर्थात् जंगल में या वृक्षों के नीचे भी भारत की शिक्षा व्यवस्था यशस्वी रही है। इसलिए नई शिक्षा नीति में आकलन सुधार का प्रावधान कहता है कि– "एनईपी 2020 में योगात्मक आकलन के बजाय नियमित एवं रचनात्मक आकलन को अपनाने की परिकल्पना की गई है, जो अपेक्षाकृत अधिक योग्यता आधारित है, सीखने के साथ–साथ अपना विकास करने को बढ़ावा देता है, और उच्चस्तरीय कौशल जैसे कि विश्लेषण क्षमता, आवश्यक चिंतन मनन करने की क्षमता और वैचारिक स्पष्टता का आकलन करता है।"[4] इसके लिए एक नया राष्ट्रीय आकलन केंद्र 'परख' (समग्र विकास के लिए कार्य प्रदर्शन आकलन, समीक्षा और ज्ञान का विश्लेषण) एक मानक निर्धारक निकाय के रूप में स्थापित किया जाएगा।

भारतीय शिक्षा व्यवस्था में सर्वपल्ली राधाकृष्णन जी का योगदान अविस्मरणीय है। वर्ष 1948 में आपकी अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का गठन हुआ था। भारत में शिक्षा नीति के निर्धारण का यह महत्वपूर्ण पड़ाव था। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 'क' में यह प्रावधान है कि–"राज्य, छह से चौदह वर्ष तक की आयु वाले सभी बालकों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का, ऐसी रीति में, जो राज्य विधि द्वारा अवधारित करे, उपबंध करेगा।'[5] भारत की आधारभूत शिक्षा नीति कि संकेत करती है कोठारी आयोग की सिफारिशों पर 1968 में शिक्षा के क्षेत्र में कई बदलाव हुए। सन् 1986 में 'नई शिक्षा नीति 1986' का प्रारूप प्रस्तुत किया गया। इसकी एक विशेषता पूरे देश में एक समान शिक्षा तंत्र 10+2+3 की संरचना को अपनाया गया था। अब प्रस्तावित शिक्षा नीति में इसे 5+3+3+4 के रूप में लाया गया है। नई शिक्षा नीति 2020 का यह बड़ा बदलाव है। इसके क्रियान्वयन का मंतव्य और भी महत्वपूर्ण है जिसमें कहा गया है कि–"एनसीईआरटी 8 वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए प्रारंभिक बचपन देखभाल और शिक्षा (एनसीपीएफईसीसीई) के लिए राष्ट्रीय पाठ्यक्रम और शैक्षणिक ढाँचा विकसित करेगा। एक विस्तृत और मजबूत संस्थान प्रणाली के माध्यम से प्रारंभिक बचपन देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) मुहैया कराई जाएगी।"[6]

वर्ष 1986 से 2020 तक शिक्षा का क्षेत्र नितांत नीति विहीन रहा हो ऐसा नहीं है। पर, विधिवत् और व्यापक शिक्षा नीति जिसे कहा जा सके वह 2020 में प्रस्तावित हुई है। लगभग 3 दशक का यह अंतराल कम नहीं है। इसके राजनैतिक मंतव्य जो भी हों शिक्षा व्यवस्था के लिए कोई बेहतर संकेत तो नहीं कहे जा सकते। अब जबकि

नई शिक्षा नीति व्यापक विचार–विमर्श के बाद प्राप्त हुई है तो आशा की जा सकती है कि भारत में शिक्षा के आधारभूत ढाँचे को वह ऊर्जा मिलेगी जिसकी इस क्षेत्र को बहुत आवश्यकता है।

साहित्य और शिक्षा– साहित्य और शिक्षा का संबंध अविच्छिन्न है। ऋग्वेद के दशम मंडल में जब वाक्सूक्त उद्धृत हुआ उसी के साथ साहित्य और शिक्षा का संबंध स्थापित हो गया। साहित्य और शिक्षा का एक रस संबंध इतना गहरा है कि उस पर चिंतन अथाह है। 20वीं शती के हिंदी साहित्य से कुछ चिंतन बिंदु उद्धृत किए जा रहे हैं जिनका सीधा संबंध नई शिक्षा नीति में बताए गए उद्देश्यों से है। यहाँ दो उदाहरण स्वतंत्रता पूर्व तथा दो स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य से लिए जा रहे हैं।

'भारत भारती' 20वीं शती के आरंभ में लिखी गई वह काव्य कृति है जिसने अपने रचनाकाल में जितनी ख्याति प्राप्त की आज भी उसका महत्व उतना ही बना हुआ है। मैथिलीशरण गुप्त जी द्वारा रचित इस कृति में भारत के अतीत, वर्तमान और भविष्य का वर्णन किया गया है। एक बड़े साहित्यकार की दृष्टि की व्यापकता इस कृति में दिखाई पड़ती है। सन् 1912–13 में प्रकाशित इस कृति में शिक्षा के प्रति जो प्रश्न गुप्त जी ने उठाए थे वे आज भी ज्यों के त्यों दिखाई पड़ते हैं। हाँ कुछ के उत्तर नई शिक्षा नीति 2020 में अवश्य देखे जा सकते हैं।

भारत का अतीत विद्यापूरित और गौरवशाली रहा है। इतिहास साक्षी है कि इस देश में ज्ञान की विभिन्न धाराएँ पूर्ण विकसित रूप में उपस्थित रही हैं। गुप्त जी लिखते हैं–

पांडित्य का इस देश में सब ओर पूर्ण विकास था,
बस, दुर्गुणों के ग्रहण में ही अज्ञता का वास था।
सब लोग तत्व ज्ञान में संलग्न रहते थे यहाँ –
हाँ, व्याध भी वेदांत के सिद्धांत कहते थे यहाँ!

भारत का विद्याध्ययन भी एकांगी या एकमार्गी नहीं था। इसमें विद्याओं का वैविध्य था। गुप्त जी इस क्रम में लिखते हैं कि –

हम वेद, वाकोवाक्य विद्या, ब्रह्मविद्या विज्ञ थे,
नक्षत्र –विद्या, क्षत्र– विद्या, भूत–विद्याभिज्ञ थे।
निधि–नीति–विद्या, राशि–विद्या, पितृ–विद्या में बढ़े,
सर्पादि–विद्या, देव–विद्या, दैव–विद्या थे पढ़े।

भारत में विद्याध्ययन बहुमुखी था। दिग्दिगांत का ज्ञान हमारे पूर्वजों को था। संसार का संपूर्ण ज्ञान हमारे पास था ऐसा तो नहीं है, पर हम पर्याप्त ज्ञान संपन्न थे। दुनिया हमारे पास शिक्षा के लिए आ रही थी। पर, यह अतीत की बात थी। भारत भारती के वर्तमान खंड में गुप्त जी जिस शिक्षा व्यवस्था की बात कह रहे थे वह अभी भी बनी हुई है। नई शिक्षा नीति उससे बाहर निकलने का प्रयास करती दिखाई पड़ती है। लगता है जैसे जो प्रश्न गुप्त जी ने उठाए थे उनका समाधान इस शिक्षा नीति में मिल रहा है। गुप्त जी लिखते हैं कि आज शिक्षा का अर्थ नौकरी हो गया है। समाज का जो वर्ग साधन संपन्न है वह इसलिए नहीं पढ़ना चाहता कि इस शिक्षा से मात्र नौकरी मिलती है इसलिए हमें पढ़कर क्या करना है। दूसरा वर्ग है जो नौकरी प्राप्त करने तक ही पढ़ना चाहता है। यदि कोई पिता अपने पुत्र को शिक्षा के कुछ सिद्धांत सिखाए तो रईस सपूत की माता कहती है कि इसे पढ़कर क्या करना है?

श्रीमान शिक्षा दें उन्हें तो श्रीमती कहती वहीं–
घेरो न लल्ला को हमारे, नौकरी करनी नहीं।
शिक्षे! तुम्हारा नाश हो, तुम नौकरी के हित बनी,
लो मूर्खते! जीती रहो, रक्षक तुम्हारे हैं धनी।

नई शिक्षा नीति 2020 जब उद्यमशील और आत्मनिर्भर शिक्षा की बात करती है तो लगता है कि हम शिक्षा के क्षुद्र उद्देश्य (नौकरी) से बाहर

आने का प्रयास कर रहे हैं। नए भारत के लिए यह महत्वपूर्ण बदलाव होगा।

1947 से पूर्व की भारतीय शिक्षा का एक चित्र मुंशी प्रेमचंद ने अपनी कहानी 'बड़े भाई साहब' में अंकित किया है। इसका रचनाकाल सन् 1930 के आसपास का होगा। बड़ा भाई नौवीं कक्षा का छात्र और छोटा भाई पाँचवीं कक्षा में पढ़ता है। बड़ा भाई दिन–रात किताबों में उलझा रहे और छोटा खेलकूद के साथ व्यवहार बुद्धि से काम ले। परीक्षा का परिणाम किताब के विरुद्ध और व्यवहार के पक्ष में खड़ा दिखाई पड़ा। बड़े भाई ने कहा –"महज इम्तिहान पास कर लेना कोई चीज नहीं, असल चीज है बुद्धि का विकास। जो कुछ पढ़ो उसका अभिप्राय समझो।"[10] भारतीय शिक्षा पद्धति में किताब का महत्व बढ़ गया है। व्यवहार ज्ञान हमसे दूर हो चला है। प्रेमचंद गणित और इतिहास की शिक्षा के माध्यम से लिखते हैं–"जामैट्री तो बस, खुदा ही पनाह। अ ब ज की जगह अ ज ब लिख दिया और नंबर कट गए। कोई इन निर्दयी मुमतहिनों से नहीं पूछता कि आखिर अ ब ज और अ ज ब में क्या फर्क है, और व्यर्थ की बात के लिए क्यों छात्रों का खून करते हो। दाल–भात–रोटी खाई या भात–दाल–रोटी खाई, इसमें क्या रखा है, मगर इन परीक्षकों को क्या परवाह। वह तो वही देखते हैं जो पुस्तक में लिखा है। चाहते हैं कि लड़के अक्षर–अक्षर रट डालें और इसी रटंत का नाम शिक्षा रख छोड़ा है और आखिर इन बेसिर पैर की बातों के पढ़ने से फायदा?"[11] इतिहास शिक्षा के स्वरूप पर प्रेमचंद लिखते हैं कि–"बादशाहों के नाम याद रखना आसान नहीं। आठ–आठ हेनरी हो गुजरे हैं। कौन सा कांड किस हेनरी के समय में हुआ, क्या यह याद कर लेना आसान समझते हो? हेनरी सातवें की जगह हेनरी आठवाँ लिखा और सब नंबर गायब। सफाचट। सिफर भी न मिलेगा, सिफर भी। हो किस ख्याल में। दरजनों तो जेम्स हुए हैं, दरजनों विलियम, कोडियों चार्ल्स। दिमाग चक्कर खाने लगता है।"[12]

भारत में मैकाले की शिक्षा पद्धति की जो आलोचना होती है उसमें यह व्यवस्था थी। जहाँ रटंत को ही शिक्षा कह छोड़ा था। नई शिक्षा नीति 2020 को प्रस्तुत करते हुए शिक्षा मंत्री ने कहा था कि– "मेरा मानना है कि नई शिक्षा नीति 2020 के माध्यम से हम भारत को गुणवत्तापरक, नवाचार युक्त, प्रौद्योगिकी युक्त और भारत केंद्रित शिक्षा दे पाने में सफल होंगे।"[13] इस शिक्षा नीति के स्कूली शिक्षा भाग में स्पष्ट कहा गया है कि "एक्स्ट्रा कैरिकूलम एक्टिविटिज मेन कैरिकूलम में शामिल होंगे।"[14] साथ ही यह प्रावधान भी है कि– "रिपोर्ट कार्ड में लाइफ स्किल्स शामिल होंगे।"[15] लगता है प्रेमचंद ने दो बालकों के माध्यम से शिक्षा के जिस स्वरूप को समाज के सामने लाने का प्रयास किया था नई शिक्षा नीति में उन दोनों को सम्मान देने का प्रावधान हुआ है।

शिक्षा का बजट अब सकल घरेलू उत्पाद का 6 प्रतिशत किया गया है। इसका सीधा सा असर शिक्षा के आधारभूत ढाँचे के विकास पर पड़ेगा। स्वतंत्र भारत की शिक्षा व्यवस्था पर विचार करते हुए जनकवि नागार्जुन ने कविता लिखी थी 'मास्टर'। इस कविता में दुखरन मास्टर की परिस्थितियों और संवेदनाओं के माध्यम से स्कूलों की दशा, शिक्षा नीति का खोखलापन और प्रजातंत्र में दिखावे की प्रवृत्ति पर तीखा व्यंग्य किया गया है। यहाँ स्वतंत्र भारत का शिक्षक, विद्यालय, विद्यार्थी और शिक्षा मंत्री एक साथ मौजूद हैं और बाबा नागार्जुन इस दुर्दशा की शिनाख्त इस कविता में करते हैं। नागार्जुन विद्यालय की दशा का वर्णन करते हुए लिखते हैं–

घुन–खाए शहतीरों पर की बाराखड़ी विधाता बाँचे
फटी भीत है, छत चूती है, आले पर बिसतुइया नाँचे
बरसाकर बेबस बच्चों पर मिनट–मिनट में पाँच तमाचे
दुखरन मास्टर गढ़ते रहते किसी तरह आदम के साँचे।[16]

भारत स्वतंत्र हुआ। रातों–रात चाँद तारे धरती पर आ जाएँ ऐसा तो नहीं था। पर, सद्प्रयास का उपक्रम हमारे हाथ में था हम वह नहीं कर पाए। नई शिक्षा नीति 2020 उस सद्प्रयास का आभास करा रही है। यहाँ विद्यालय, विद्यार्थी, अभिभावक और शिक्षक की दशा सुधारने का प्रावधान दिखाई पड़ रहा है। यहाँ व्यवस्था की गई है कि शिक्षक पेशेवर मानकों का पालन करें। पारदर्शी प्रक्रिया के माध्यम से उनकी भर्ती की जाएगी। योग्यता आधारित पदोन्नति होगी। समय–समय पर कार्य प्रदर्शन का आकलन होगा जिसके माध्यम से वे शैक्षणिक प्रशासक भी बन पाएँगे।

अस्पष्ट शिक्षा नीति के दंश ने भारत की शिक्षा व्यवस्था का दम फुला दिया है। साहित्य में अनेकानेक दृष्टियों से इसका विवेचन विश्लेषण हुआ है। सभी की चर्चा करना न तो हमारे लिए संभव है और न ही अपेक्षित। एक और कृति के उल्लेख के साथ इस चर्चा को अंतिम पड़ाव की ओर अग्रसर किया जा रहा है। कृति है श्री लाल शुक्ल की कालजयी रचना 'राग दरबारी'। हिंदी साहित्य का प्रत्येक अध्येता इस रचना के प्रभाव से परिचित है। इसमें ग्रामीण भारत का सजीव चित्रण सभी को अपने भीतर झाँकने के लिए विवश करता है। इस कृति में भारत की झाँकी है, जहाँ बड़े पर्दे के पीछे शिक्षा दर्शन केंद्र में दिखाई पड़ता है। 1968 में प्रकाशित राग दरबारी उपन्यास भारत की शिक्षा व्यवस्था का चित्रण प्रस्तुत करता है। सनद रहे कि राग दरबारी उपन्यास उसी वर्ष प्रकाशित होता है जिस वर्ष कोठारी आयोग शिक्षा में सुधार के सुझाव देता है। शिवपाल गंज का छंगामल इंटर कॉलेज भारत की शिक्षा व्यवस्था को तार–तार करता दिखाई पड़ता है। लगातार प्राईवेट क्षेत्र की ओर बढ़ती शिक्षा व्यवस्था किस ओर जाएगी इसको राग दरबारी के वैद्य जी से सीखना होगा। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में शोध की दुर्गति पर व्यंग्य करते हुए रिसर्च स्कॉलर रंगनाथ के माध्यम से लेखक जो कहता है उस पर ध्यान देने की आवश्यकता थी। जो इस शिक्षा नीति में दिखाई पड़ती है। ट्रक ड्राइवर रंगनाथ से पूछता है– "श्रीमान जी, आजकल क्या कर रहे हैं? इस पर वह जवाब देता है कि घास खोद रहा हूँ। ड्राइवर कहता है– "क्या बात कही है, जरा खुलासा कर समझाइए।" रंगनाथ कहता है– "कहा तो, घास खोद रहा हूँ। इसी को अंग्रेजी में रिसर्च कहते हैं। परसाल एम.ए.किया था। इस साल से रिसर्च शुरू की है।"[17] शिक्षा के क्षेत्र की महान उपलब्धि का उल्लेख करते हुए उपन्यासकार कहता है– "शिक्षा के क्षेत्र में पिछली शताब्दी की यह असाधारण उपलब्धि है कि हम इतनी जल्दी जान गए कि हमारी शिक्षा पद्धति खराब है।"[18]

शिक्षा पद्धति खराब है तो ठीक भी हो जाएगी। उसका एक ही माध्यम है ईमानदारी से खराबी को स्वीकार करने और उसे दूर करने की। नई शिक्षा नीति इसे दूर करने में सक्षम है। प्रथम दृष्टया यही दिखाई पड़ता है। हम भारत के सभी नागरिक कितनी ईमानदार कोशिश करेंगे यह देखना है। लोकनीति के प्रसिद्ध कवि वृंद ने लिखा था–

विद्या धन उद्यम बिना, कहौ सु पावै कौन।
बिना डुलाए न मिलै, ज्यौं पंखा कौ पौन।।[19]

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शिक्षा मंत्री, भारत सरकार, प्रेस कांफ्रेस अंश 29.7.2020
2. प्रधानमंत्री भारत सरकार का उद्बोधन, 7.8.2020
3. प्रधानमंत्री भारत सरकार का उद्बोधन, 7.8.2020
4. नई शिक्षा नीति 2020 का मसौदा, ई वर्जन
5. भारत का संविधान एक परिचय, डॉ. दुर्गादास बसु, पृ.180
6. नई शिक्षा नीति 2020 का मसौदा, ई वर्जन
7. मैथिलीशरण गुप्त, भारत भारती, अतीत खंड, 75
8. मैथिलीशरण गुप्त, भारत भारती, अतीत खंड, 78
9. मैथिलीशरण गुप्त, भारत भारती, वर्तमान खंड, 125

10. प्रेमचंद, कहानी : बड़े भाई साहब
11. प्रेमचंद, कहानी : बड़े भाई साहब
12 प्रेमचंद, कहानी : बड़े भाई साहब
13. शिक्षा मंत्री, भारत सरकार, प्रेस कांफ्रेस अंश 29.7.2020
14. नई शिक्षा नीति 2020 का मसौदा, ई वर्जन
15. नई शिक्षा नीति 2020 का मसौदा, ई वर्जन
16. नागार्जुन, कविता : मास्टर
17. श्री लाल शुक्ल, राग दरबारी, पृ.7
18. श्री लाल शुक्ल, राग दरबारी, पृ.157
19. कवि वृंद, वृंद सतसई

– हिंदी विभाग, हंसराज कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–110007

❑❑❑

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भारतीय भाषाओं की पुनर्स्थापना

संजय चौधरी

वर्ष 1943 में महापंडित राहुल सांकृत्यायन का एक लेख 'मातृभाषाओं का प्रश्न' इलाहाबाद से निकलने वाली पत्रिका 'हंस' में प्रकाशित हुआ था। शिक्षा के लिए मातृभाषा के महत्व और उसकी उपयोगिता के संदर्भ में अपने लेख में उन्होंने एक घटना का विवरण दिया था। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भारतीय भाषाओं को प्राथमिकता के साथ शामिल करने का जो प्रयास किया गया है, उसके संदर्भ में इस घटना को जानना महत्वपूर्ण हो जाता है।

सन् 1917 की राज्यक्रांति के बाद लेनिन ने शिक्षाविदों की बैठक बुलाई और कहा कि ज्ञान विज्ञान की विरासत पर मनुष्य–मात्र का अधिकार है और यह विरासत सब के पास उसकी बोली में अविलंब पहुँचानी होगी। उपस्थित शिक्षाविदों से उन्होंने पूछा कि इसके लिए आपको कितना समय चाहिए?

शिक्षाविदों ने कहा कि 'दस वर्ष'।

लेनिन ने सबको सफेद कागज दिया और कहा कि मैं इतनी प्रतीक्षा नहीं कर सकता, मुझे आपकी सेवाओं की आवश्यकता नहीं है, आप इस्तीफा लिख जाइए। मैं चाहता हूँ कि कल सवेरे से प्रत्येक स्कूल में तुर्कमानी, किर्गिज, कजाकी और उजबेकी जैसी अविकसित बोली और लोकभाषाओं में ज्ञान, विज्ञान और तकनीक की शिक्षा प्रारंभ हो जाए!

सोवियत संघ की जनपदीय भाषाओं में ज्ञान–विज्ञान की लहर दौड़ गई और सोवियत संघ देखते–देखते महाशक्ति बन गया। जबकि भारत में ऐसा नहीं हुआ। 1947 में अंग्रेज हमें आजाद करके चले गए लेकिन मैकाले ने अंग्रेजी भाषा की पोषक जिस शिक्षा नीति का सूत्रपात किया था, वह शिक्षा नीति वैसी ही बनी रही जिसके परिणामस्वरूप परतंत्रता की प्रतीक अंग्रेजी भाषा को इस देश में अपनी जड़ें मजबूत करने का मौका मिल गया।

स्वतंत्र भारत में भारतीय भाषाओं के प्रति उपेक्षा की प्रवृत्ति का ही यह परिणाम हुआ है कि विगत पाँच दशकों में देश ने 220 भाषाओं को खो दिया है। यूनेस्को ने 197 भारतीय भाषाओं को लुप्तप्राय घोषित कर दिया है। यह सत्य है कि भाषाओं के लोप होने का दूरगामी परिणाम होता है। लेकिन किसी भी देश के लिए सबसे अधिक विध्वंसक और दुखद होता है विदेशी भाषा के दुष्प्रभावों को झेलते हुए अपने आत्मबोध, अपनी संस्कृति एवं विरासत को तिरोहित होते हुए देखना।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आने से पूर्व भारत कुछ ऐसे ही दौर से गुजरा है।

भारत में शिक्षा का क्षेत्र और शिक्षण का माध्यम

भारतीय संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में कहा गया है कि 4–14 वर्ष के बच्चों के लिए अनिवार्य व निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाए। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 350(अ) के अनुसार यह प्रावधान है कि हर राज्य प्रयास करे कि वहाँ के भाषाई अल्पसंख्यक समूह को प्राथमिक शिक्षा

भाषा ISSN 0523-1418

मातृभाषा में दी जाए। शिक्षा का अधिकार अधिनियम के अनुभाग 29(2) के अनुसार शैक्षणिक संस्थाओं से अपेक्षा की जाती है कि शिक्षण का माध्यम यथासंभव बच्चे की मातृभाषा में हो। अतः विद्यालयों में शिक्षण की भाषा का निर्णय लेने में राज्य सरकारों को स्वतंत्र अधिकार दिए गए।

प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री प्रोफेसर यशपाल के नेतृत्व में निर्मित विद्यालयी शिक्षा के लिए अब तक के नवीनतम दस्तावेज़ 'राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005' के खंड 3.1.1 के अनुसार विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होना चाहिए क्योंकि मातृभाषा में ही छात्र अपने घर, आस–पास तथा सामाजिक वातावरण की गतिविधियों को स्वाभाविक रूप से सीख पाते हैं।

यहाँ तक कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 के खंड 4(3) के अनुसार शिक्षा के स्तर में सुधार और ज्ञान के विस्तार हेतु भारतीय भाषाओं एवं साहित्य को सशक्त रूप से विकसित करना आवश्यक बनाया गया। यूनेस्को की 2003 की रिपोर्ट 'बहुभाषी विश्व में शिक्षा' के दिशानिर्देश के अनुसार मातृभाषा में शिक्षण से शैक्षणिक गुणवत्ता में बढ़ोतरी होती है तथा ज्ञान और अनुभव की वृद्धि में सहायता मिलती है।

शिक्षा का क्षेत्र और स्थानीय भाषाओं का संवर्धन

भारत में शिक्षा की दशा एवं दिशा सुधारने के लिए अब तक गठित लगभग सभी आयोगों ने अंग्रेजी के वर्चस्व को समाप्त करने की संस्तुति की ताकि शिक्षा के लिए भारतीय भाषाओं के माध्यम को अपनाया जा सके और इन भाषाओं का संरक्षण किया जा सके। हालाँकि पूरी दुनिया में भाषाओं के संरक्षण का प्रश्न गंभीर होता जा रहा है लेकिन विश्व के इतिहास पर दृष्टि डालें तो गुलामी से आजाद होने के बाद दुनिया के प्रायः सभी देशों ने अपनी भाषा में अपनी प्रगति का मार्ग चुना।

लेनिन के ऊपर दिए गए उदाहरण के अलावा ऐसे कई नेता हुए हैं जिन्होंने नव–स्वतंत्र अपने राष्ट्र में स्वभाषा को ही सभी स्तरों पर लागू करवाया। इजराइल ने अपनी मृतप्राय हो चुकी हिब्रू भाषा को राष्ट्रभाषा बनाकर इसे शिक्षा का माध्यम बनाया। इसी प्रकार, रूस ने रूसी, चीन ने चीनी और जापान ने जापानी भाषा को अपनी शिक्षा–दीक्षा तथा राजकाज की भाषा बनाया। हमारे पड़ोसी नेपाल ने भी अपनी भाषा नेपाली को ही अपनाया।

भारत के संविधान ने हिंदी को राजभाषा और कुछ प्रमुख भारतीय भाषाओं को संवैधानिक मान्यता प्राप्त भाषा का दर्जा दिया लेकिन कालांतर में अंग्रेजी भाषा ने अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया। यहाँ तक कि आठवीं अनुसूची की 22 भाषाएँ भी कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना कर रही हैं। शिक्षा के लिए भारतीय भाषाओं के माध्यम को न अपनाना इसका एक प्रमुख कारण माना जा सकता है। भारत की भाषाई समस्या पर विचार करते हुए महात्मा गांधी, महर्षि अरविंद, स्वामी विवेकानंद जैसे अनेक बड़े महापुरूषों और शिक्षाशास्त्रियों ने शिक्षा के लिए भारतीय भाषाओं को माध्यम बनाना आवश्यक बताया था।

हम जानते हैं कि मातृभाषा सिर्फ एक भाषा नहीं है, बल्कि एक व्यक्ति के लिए एक भावना है। स्थानीय भाषा में सीखना हमारी सांस्कृतिक जड़ों को संरक्षित करने और हमारी विरासत को समझने में हमारी मदद करता है। यह भी एक स्थापित सत्य है कि स्थानीय भाषा में सीखने से बच्चों का आत्मविश्वास बढ़ता है और वे बिना किसी हिचकिचाहट के खुद को बेहतर ढंग से व्यक्त कर पाते हैं। विभिन्न देशों का अनुभव बताता है कि छोटी कक्षा में ही पढ़ाई छोड़ देने की प्रवृत्ति को भी मातृभाषा या स्थानीय भाषाओं के उपयोग से कम किया जा सकता है।

भारतीय भाषाओं की दृष्टि से राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

भारत में शिक्षा के माध्यम को लेकर आजादी के बाद से ही विचार–विमर्श होता रहा है। स्कूलों में 'शिक्षा का माध्यम' नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 की एक प्रमुख विशेषता है। स्कूली बच्चों के भीतर भाषा, कला और संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए उपाय सुझाए गए हैं। बहुभाषिकता को प्रोत्साहित करने के लिए त्रिभाषा

फार्मूला के क्रियान्वयन, मातृभाषा/स्थानीय भाषा में शिक्षण, अधिक अनुभव आधारित भाषा शिक्षण, कलाकारों व लेखकों को स्थानीय विशेषज्ञता के विभिन्न विषयों में विशिष्ट प्रशिक्षक के रूप में स्कूलों से जोड़ने पर बल दिया गया है।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इस शिक्षा नीति में पहली बार शिक्षा में भाषा तथा भाषा की शिक्षा पर पूरा जोर दिया गया है। शिक्षा नीति में सिफारिश की गई है कि, जहाँ तक संभव हो शिक्षा के माध्यम के रूप में 5वीं कक्षा तक मातृभाषा/घर की भाषा/स्थानीय भाषा/क्षेत्रीय भाषा का प्रयोग किया जाए और 8वीं कक्षा व उसके बाद की शिक्षा में भी इसकी पूरी कोशिश की जाए। यह सुझाव पिछली दो शिक्षा नीतियों में अपनाई गई बातों का ही ज्यादा परिष्कृत रूप है।

नई शिक्षा नीति में बच्चों की सृजनात्मक क्षमता को विकसित करने पर सबसे अधिक बल दिया गया है। इतना ही नहीं, भाषा को शिक्षा में मूल्य बोध, दृष्टिकोण और सृजनात्मक कल्पना को प्रोत्साहित करने का साधन भी माना गया है। नई शिक्षा नीति में किशोरावस्था तक सुपरिचित भाषा में शिक्षा की व्यवस्था की गई है और इस बात पर जोर दिया गया है कि मौलिक विचार अपनी मातृभाषा में ही आते हैं, इसलिए उच्च शिक्षा और अनुसंधान के लिए भी मातृभाषा का ही प्रयोग होना चाहिए।

यह एक ज्ञात तथ्य है कि भारत में अंग्रेजी के ज्ञान की कमी के कारण, कई माता–पिता अपने बच्चे की स्कूली शिक्षा में प्रभावी रूप से भाग नहीं ले पाते हैं। मातृभाषा को शामिल करने से होने वाला बदलाव इस चुनौती को खत्म करेगा जिससे घर–स्कूल की साझेदारी मजबूत होने की संभावना है।

स्थानीय भाषा का माध्यम लागू होने से स्थानीय शिक्षकों के लिए भी रोजगार का एक बड़ा अवसर उत्पन्न होगा। जमीन पर यथार्थवादी स्थिति यह है कि 'अंग्रेजी माध्यम' स्कूलों में कई शिक्षक वास्तव में अंग्रेजी में धाराप्रवाह नहीं हैं। इस प्रकार, नई व्यवस्था के अनुसार एक स्वदेशी और सुपरिचित भाषा का उपयोग नाटकीय रूप से स्थिति को बदल सकता है।

शिक्षा के क्षेत्र में भाषाई माध्यम की चुनौतियाँ

उच्च शिक्षा के संस्थानों में माध्यम के रूप में मातृभाषा या स्थानीय भाषा को शामिल करना एक बहुत बड़ी चुनौती है। वर्ष 1964–66 में दौलत सिंह कोठारी आयोग ने भी अपनी मुख्य अनुशंसा में यही कहा था कि न केवल स्कूली शिक्षा, बल्कि उच्च शिक्षा भी अपनी भाषा में दी जानी चाहिए। इसको लेकर हमारा संसद भी सहमत था और देश के तमाम बुद्धिजीवी भी, परंतु धरातल पर कोई परिवर्तन नहीं हुआ। अब इंजीनियरिंग और मेडिकल कॉलेज में हिंदी एवं अन्य स्वदेशी भाषाओं की शुरुआत संबंधी घोषणा का स्वागत किया जाना चाहिए। लेकिन इसके लिए जरूरी है कि भारतीय भाषाएँ प्रासंगिक और जीवंत बनी रहें।

नई शिक्षा नीति में सभी भारतीय भाषाओं के संवर्धन को ध्यान में रखते हुए सुझाव दिया गया है कि भाषाओं के शब्द भंडार लगातार अपडेट होते रहें। इन भाषाओं में उच्चतर गुणवत्तापूर्ण अधिगम एवं प्रिंट सामग्री का सतत प्रवाह बनाए रखने की आवश्यकता होगी। कविता, उपन्यास, पत्र–पत्रिकाओं के प्रवाह को बनाकर रखना भी अपेक्षित होगा। उनका व्यापक प्रसार, समसामयिक मुद्दों, अवधारणाओं और नवीनतम तकनीक पर भाषाओं में चर्चा हो, तभी भाषाओं का संरक्षण हो सकता है।

विदेशी भाषा–अंग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन, हिब्रू, कोरियाई में यह क्रम चल रहा है, किंतु भारतीय भाषाओं को जीवंत और प्रासंगिक बनाए रखने के मामले में अभी तक भारत की गति काफी धीमी रही है। इसके लिए भाषा शिक्षकों की कमी दूर करने के साथ ही भाषाओं को अधिक व्यापक रूप में बातचीत और शिक्षण अधिगम के लिए प्रयोग में लाए जाने की आवश्यकता प्रतिपादित की गई है।

विभिन्न भारतीय भाषाओं में उच्चतर गुणवत्ता वाली सामग्री विकसित करने का संकल्प लिया गया है। सबकी आवश्यरकताओं को पूरा करने वाली ऐसी अधिगम सामग्री उपलब्ध कराने के लिए अनुवाद को बढ़ावा देने पर भी बल दिया गया है। इसके लिए एक इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ ट्रांसलेशन एंड इंटरप्रिटेशन की स्थापना का भी प्रस्ताव है। अनुवाद की गुणवत्ता और सार्थकता सुनिश्चित करने के लिए जरूरी है कि विषयों के अनुसार अनुवादकों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए।

यह एक अच्छी बात है कि इंटरनेट पर भारतीय भाषाओं में विषय सामग्री की बाढ़ आई हुई है, लेकिन छात्रों के लिए अध्ययन सामग्री, संदर्भ साहित्य, ज्ञानवर्धक सामग्री आदि तैयार करने में हम पीछे हैं। यही कारण है कि मीडिया और समाज का प्रभावशाली वर्ग भारतीय भाषाओं के प्रति संदेह व्यक्त करता है। नई शिक्षा नीति की सफलता के लिए अंग्रेजी का वर्चस्व तोड़ना होगा जिसके लिए जरूरी है कि भारतीय भाषाओं में जो वाङ्मय, ज्ञान–विज्ञान और साहित्य है, उसका संरक्षण किया जाए। यह भी जरूरी है कि इन भाषाओं को आधुनिक ज्ञान की हर शाखा की अभिव्यक्ति के लिए पूरी तरह से सक्षम बनाया जाए।

वर्तमान विश्व जिस वर्चुअल संस्कृति में प्रवेश कर रहा है, देश की अधिकतम जनसंख्या उससे अवगत नहीं है। वर्चुअल व्यवस्था या डिजिटल अर्थव्यवस्था आज की अनिवार्यता बन गई है। नई शिक्षा नीति की सफलता इसी तथ्य में निहित है कि वंचित वर्गों को भी मुख्यधारा में लाया जाए क्योंकि समाज में व्याप्त 'डिजिटल डिवाइड' से निपटना एक बहुत बड़ी चुनौती होगी। समावेशी और आत्मनिर्भर भारत का संकल्प भारतीय भाषाओं के माध्यम से ही पूरा किया जा सकता है।

शिक्षा संसाधनों को विकसित करने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति में एक अलग प्रौद्योगिकी इकाई के विकास की बात कही गई है जो डिजिटल बुनियादी ढाँचे, सामग्री और क्षमता निर्माण हेतु समन्वयन का कार्य करेगी। लेकिन भारतीय भाषाओं में शिक्षण, प्रशिक्षण, कौशल विकास के कार्यक्रमों आदि पर पर्याप्त ध्यान दिए बिना यह प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा। इन सबमें विश्वस्तरीय गुणवत्ता सुनिश्चित करना एक बड़ी चुनौती हो सकती है।

भारत में शिक्षा एक समवर्ती विषय है जहाँ अधिकांश राज्यों के अपने स्कूल बोर्ड हैं। इसलिए राज्यों के साथ नीति के वास्तविक कार्यान्वयन हेतु समन्वय एवं सहयोग की आवश्यकता होगी। विभिन्न स्थानीय भाषाओं और बच्चों की मातृभाषा के अनुसार प्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति करना कई राज्यों के लिए इतना सुगम नहीं होगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शामिल 'त्रि–भाषा' सूत्र के बारे में दक्षिण भारतीय राज्यों का यह आरोप भी रहता है कि सरकार शिक्षा का संस्कृतिकरण करने का प्रयास कर रही है।

नई शिक्षा नीति ने जिस तरह विदेशी विश्वविद्यालयों के प्रवेश का मार्ग प्रशस्त किया है, उससे भारतीय शिक्षण व्यवस्था के महँगी होने की आशंका है। विभिन्न शिक्षाविदों के अनुसार विदेशी विश्वविद्यालयों के आने से निम्न वर्ग के छात्रों के लिए उच्च शिक्षा प्राप्त करना चुनौतीपूर्ण हो सकता है। एक अन्य व्यावहारिक समस्या कुशल जनशक्ति की कमी से संबंधित है। वर्तमान में प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में कुशल शिक्षकों का अभाव है, ऐसे में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत प्रारंभिक शिक्षा हेतु प्रस्तावित व्यवस्था का क्रियान्वयन करना भी एक चुनौती है।

नई शिक्षा नीति : सुनहरे अध्याय

उच्च शिक्षा के सत्र पर भारतीय भाषाओं के माध्यम को अपनाने की दिशा में तेजी से काम हो रहा है। सरकार ने निर्णय लिया है कि भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) और राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान (एनआईटी) अगले शैक्षिक सत्र से छात्रों को उनकी मातृभाषा में इंजीनियरिंग की पढ़ाई कराएँगे। इसके लिए कुछ आईआईटी और एनआईटी को चुना जा रहा है। यह भी तय किया गया है कि राष्ट्रीय परीक्षा एजेंसी (एनटीए) स्कूली शिक्षा बोर्ड से जुड़ी समकालीन परिस्थितियों

का आकलन करने के बाद प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए पाठ्यक्रम लाएगी।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को निर्देश दिया गया है कि वह सभी छात्रवृत्तियों, फेलोशिप आदि को समय पर दिया जाना सुनिश्चित करे और इस संबंध में हेल्पलाइन शुरू करके छात्रों की सभी समस्याओं का तुरंत समाधान करें। एनटीए ने हिंदी और अंग्रेजी के अलावा नौ क्षेत्रीय भाषाओं में जेईई की मुख्य परीक्षा कराने की घोषणा भी की है। अगले दशक में भारत दुनिया का सबसे युवा जनसंख्या वाला देश होगा और इन युवाओं को उच्चतर गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराने की दिशा में यह एक ठोस कदम है।

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भारतीय भाषाओं में प्रामाणिक पुस्तकों के उपलब्ध न होने का भ्रामक प्रचार लंबे समय से किया जाता रहा है और अंग्रेजी की प्रामाणिक पुस्तकों का स्तरीय अनुवाद उपलब्ध न होने की बात कही जाती रही है। लेकिन देश के तमाम प्रांतों में पिछली सदी के आठवें–नवें दशक तक हिंदी प्राध्यापकों ने तमाम बेहतरीन किताबें लिखी हैं। इसी प्रकार, इग्नू और दिल्ली विश्वविद्यालय ने कई विषयों की तमाम किताबों के अच्छे अनुवाद कराए हैं तथा वर्तमान में कई गैर–सरकारी संगठन और विशेषज्ञ इस कार्य को पूरी निष्ठा से कर रहे हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इस सत्य को स्वीकार करती है कि देश के पास वैज्ञानिक–प्रतिभा की कमी न कल थी और न आज है; कमी है तो केवल राष्ट्रीय संकल्प की। प्रत्येक शिक्षार्थी में राष्ट्रीय संकल्प को सुदृढ़ करने के लिए भारतीय भाषाओं में सहेजा गया साहित्य और संस्कृति की धरोहर को सुरक्षित रखने का मार्ग प्रशस्त किया जा रहा है। भाषाई आधार पर बने अधिकांश भारतीय राज्यों ने भी इस दिशा में कई सकारात्मक पहल की है और सबसे प्रमुख बात है कि सदियों से अपनी निज भाषा और निज संस्कृति में रमती आई देश की बहुसंख्यक जनता को भी इस नई शिक्षा नीति में आशा की एक किरण नज़र आ रही है।

हाल ही में घोषित देश के आम बजट 2021 में भी शिक्षा एवं कौशल विकास के क्षेत्र को महत्व दिया गया है। वित्त वर्ष 2020–21 में शिक्षा क्षेत्र के लिए 99,300 करोड़ रुपए और कौशल विकास के लिए 3000 करोड़ रुपए आवंटित किए गए हैं। नई शिक्षा नीति की जरूरतों के अनुसार देशभर में 15 हजार स्कूलों को सुदृढ़ बनाने की योजना है जहाँ उनकी गुणवत्ता बढ़ाने पर जोर दिया जाएगा। आम बजट में 100 नए सैनिक स्कूल खोले जाने की घोषणा भी की गई है। वहीं पर, आदिवासी क्षेत्रों में 750 एकलव्य आदर्श आवासीय विद्यालयों की स्थापना की जाएगी।

शोध एवं नवाचार के महत्व को देखते हुए देश में शोध को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय शोध प्रतिष्ठान (नेशनल रिसर्च फाउंडेशन) की स्थापना एक ऐतिहासिक कदम है। इसके लिए 50 हजार करोड़ रुपए आवंटित किए गए हैं। लेह में नया केंद्रीय विश्वविद्यालय खोले जाने की घोषणा भी की गई है। सरकार अप्रेंटिसशिप एक्ट में संशोधन कर रही है। पढ़ाई पूरी करने के बाद इंजीनियरिंग में ग्रेजुएशन व डिप्लोमा करने वाले छात्रों को अप्रेंटिसशिप ट्रेनिंग दी जाएगी। योजना के अनुसार लगभग 150 उच्च शिक्षण संस्थान मार्च 2021 तक अप्रेंटिसशिप युक्त डिग्री/डिप्लोमा पाठ्यक्रम शुरू कर देंगे।

इसके अलावा उच्च शिक्षा आयोग (हायर एजुकेशन कमीशन) के गठन के लिए प्रावधान प्रस्तावित किए गए हैं ताकि उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में हर स्तर पर भारतीय भाषाओं में अध्ययन और अध्यापन को संभव बनाया जा सके। स्वाभाविक है कि ये सभी उद्यम भारतीय भाषाओं को शिक्षा के क्षेत्र में पुनर्स्थापित करने में योगदान देंगे।

निष्कर्ष

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के द्वारा भारतीय शिक्षा संरचना को अधिक गतिशील, लचीला व प्रासंगिक बनाया गया है। शिक्षा नीति में इस सुचिंतित मान्यता को स्वीकृति दी गई है कि भारत की गौरवमयी ज्ञान–विज्ञान की परंपरा को आगे बढ़ाने की आवश्यकता है जिसे भारतीय भाषाओं के माध्यम से ही पूरा किया जा सकता है। इसने भारत और विश्व में फैले हुए ज्ञान भंडार को भारतीय भाषाओं के माध्यम से विद्यार्थी समुदाय

के बीच में लाने का मार्ग प्रशस्त किया है। भारतीय भाषाओं में पारंगत युवाओं की सृजनात्मक क्षमता में वृद्धि करने के लिए दृढ़ इच्छाशक्ति और संकल्प का स्पष्ट भाव इस शिक्षा नीति में दिखता है।

निश्चित रूप से ज्ञान की विविध विधाओं का अध्ययन अपनी भाषा में करने के फलस्वरूप शिक्षा में उत्कृष्टता आएगी तथा ऐसी युवा पीढ़ी का निर्माण हो सकेगा जो पूर्ण रूप से भारतीय मूल्यों एवं परंपराओं के प्रति समर्पित होगी। ऐसे समर्थ युवाओं के निर्माण से निस्संदेह ज्ञानवान, सशक्त और आत्मनिर्भर भारत के निर्माण की संकल्पना साकार हो सकेगी। प्राचीन भारत में सबके लिए गुणवत्तापूर्ण एवं विश्वस्तरीय शिक्षा व्यवस्था उपलब्ध थी। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति से भी आशा की जा रही है कि एक बार फिर हमारा देश पूरी दुनिया में अपनी अलग पहचान स्थापित कर पाएगा।

जो सपने देखे हैं हमने,
उनको पूरा करने की क्षमता है,
गौरवशाली अतीत हमारा,
जिसकी नहीं कोई समता है।
माना कि वर्तमान की राह अंधेरी,
बाधाओं और दुविधाओं से भरी।
लेकिन वैभवशाली भविष्य का सपना करता है प्रेरित
ये अनवरत साधना फहराएगी कीर्ति पताका सुनहरी।।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शिक्षा के लिए भारतीय भाषाओं का माध्यम–एक विचारणीय प्रश्न, संजय चौधरी, ज्ञान गरिमा सिंधु, अंक 13–14, जनवरी 2007, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग

2. भारतीय संदर्भ में शिक्षा का वास्तविक अर्थ, संजय चौधरी, ज्ञान गरिमा सिंधु, अंक 49, जनवरी–मार्च 2016, पृष्ठ सं. 16–26, आई एस एस एनः 2321–0443

3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 दस्तावेज, https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_final_HINDI_0.pdf

4. मातृभाषा में शिक्षण क्यों राष्ट्रीय शिक्षा नीति का एक ऐतिहासिक और क्रांतिकारी प्रयास, प्रो. रमाशंकर दूबे, अगस्त 2020 https://hindi.swarajyamag.com/ideas/national-education-policy-mother-tongue/

5. https://www.jagran.com/editorial/apnibaat-indian-languages-should-be-base-of-higher-education-fulfillment-of-resolve-of-self-reliant-india-possible-only-with-indian-languages-21141355.html

6. Language vitality and endangerment, International Expert Meeting on the UNESCO Programme Safeguarding of Endangered Languages, Paris, 2003, https://unesdoc.unesco.org/ark:/48223/pf0000183699

7. 'नई शिक्षा नीति 2020 : 'शिक्षण का माध्यम' क्या हो? कुछ महत्वपूर्ण बिंदु', लीना चंद्रन वाडिया, 10 सितंबर, 2020, https://www.orfonline.org/hindi/research/new-education-policy-2020/

– संपादक, 'सड़क दर्पण', कमरा नं. 301, केंद्रीय संड़क अनुसंधान संस्थान, दिल्ली–मथुरा मार्ग, नई दिल्ली–110025

❑❑❑

लिबरल आर्ट्स की ओर

गोपाल शर्मा

विश्व के प्रत्येक प्रतिष्ठित देश की अपनी एक शिक्षा नीति (विजन स्टेटमेंट / विजन डॉक्यूमेंट) होती है। आज का विश्व प्रतिस्पर्धात्मक है। इस प्रतिस्पर्धा में भारत अमरीका और अन्य देशों से आगे निकलकर विश्व गुरु तभी बन सकता है जब आर्थिक समृद्धि के साथ–साथ ही शिक्षा के क्षेत्र में लोग उसकी गुणवत्ता का लोहा मानें। भारत की लगभग आधी आबादी अभी स्कूलों और कॉलेजों में है। उनको विश्व स्तरीय शिक्षा प्रदान करने के समुचित प्रबंध किए जाएँगे तो बात बनेगी। इसी उद्देश्य को लेकर भारत में पहले भी शिक्षा नीति के दस्तावेज प्रस्तुत किए गए थे। 1968 में डी एस कोठारी की अध्यक्षता में पहली नीति बनी, फिर 1986 में दूसरी नीति आई जिसे 1992 में संशोधित किया गया। अब 2020 में यह तीसरी शिक्षा नीति आई है। यह कोई मामूली बात नहीं है। यह कोई मामूली दस्तावेज भी नहीं है। स्कूल से लेकर उच्च शिक्षा तक बदलाव प्रस्तावित हैं और इन बदलावों का कारण यही है कि अब फिर से नया दौर आया है और हम सबको मिलकर नई कहानी लिखनी प्रस्तावित है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र को ही लें तो अब 'रन ऑफ द मिल' अर्थात् बने बनाए ढर्रे पर बी. ए. करने की प्रवृत्ति से जल्दी ही छुटकारा मिलने वाला है, मिलने वाला क्या है, मिल गया है। अब लिबरल आर्ट्स का जमाना आया है। नई शिक्षा नीति में जो–जो नया है उसमें यह विचार नया होते हुए भी भारतीय मनीषा का पुनराख्यान है।

यदि लिबरल आर्ट्स का हिंदी में अनुवाद उसी प्रकार से किया जाए जैसा शिक्षा नीति के अनूदित दस्तावेज में दिया गया है तो वह 'कलाओं का एक उदार नजरिया' होगा। इस उदार नज़रिए का ख़्याल करके इस पद को ज्यों का त्यों रखते हुए इसके उपयोग और महत्व की ओर ध्यान देना होगा। किसी विदेशी विद्वान ने सही कहा है, "उदार शिक्षा का अर्थ है अपने आप को पूरी तरह से बदल डालना। लिबरल आर्ट्स की शिक्षा मस्तिष्क को न सिर्फ पूरी तरह से आज़ाद करती है बल्कि उन बिंदुओं को जोड़ने में मदद करती है जिनकी तरफ पहले आपका ध्यान ही नहीं गया था। इसकी वजह से ही इनसान किसी विषय पर अपनी सोच बना पाता है।" लिबरल आर्ट्स के बैनर तले यानी इस नाम से 4 वर्षीय स्नातक उपाधि की व्यवस्था का प्रस्ताव करके अतीत की गौरवशाली शिक्षा दृष्टि को वर्तमान की वैश्विक आवश्यकताओं के अनुरूप ढालकर उसे भविष्य को सजाने–सँवारने के निमित्त प्रस्तुत कर दिया गया है।

"समग्र और बहु–विषयक शिक्षा की ओर" (शिक्षा नीति का बिंदु 11.1 पृष्ठ 57) देखते हुए यह कहा गया है कि विभिन्न कलाओं के ज्ञान के इस विचार, या जैसा कि आधुनिक युग में जिसे 'लिबरल आर्ट्स' (कलाओं का एक उदार नजरिया) कहा जाता है, को भारतीय शिक्षा में पुनः शामिल करना ही होगा, चूँकि यह वही शिक्षा है जिसकी 21वीं शताब्दी में आवश्यकता होगी। पाश्चात्य दृष्टि से आतंकित कुछ विद्वान इस अवधारणा को पश्चिम

भाषा ISSN 0523-1418

के विश्वविद्यालयों में दशकों से देखते चले आने के कारण आयातित घोषित करें तो उनसे कहना होगा कि भारतीय शिक्षा परंपरा में यह उदारता युगों से रही है। अंग्रेजी शिक्षा की प्रस्तावना से इस परंपरा को 19वीं शताब्दी में तब धक्का लगा था जब चार्ल्स ग्रांट आदि ने विदेशी भाषा और शिक्षण पद्धति का पौधा यहाँ रोपा। आज जब यह पौधा जड़ पकड़ चुका है तो उसको न तो कहीं प्रतिरोपित किया जा सकता है और न ही उसे उखाड़ फेंकना संभव है। स्वतंत्रता प्राप्ति के तत्काल बाद यह संभव था किंतु तब से लेकर अब तक उसका पोषण ही हुआ। तीन दशकों के पश्चात् प्रस्तुत हुई नई शिक्षा नीति से अब कुछ आशा बंधी है क्योंकि इसके केंद्र में 'भारत' है, 'इंडिया' नहीं।

शिक्षा नीति के दस्तावेज के अनुसार "भारत में समग्र एवं बहु–विषयक तरीके से सीखने की एक प्राचीन परंपरा है, तक्षशिला और नालंदा जैसे विश्वविद्यालयों से लेकर ऐसे कई व्यापक साहित्य हैं जो विभिन्न क्षेत्रों में विषयों के संयोजन को प्रकट करते हैं। प्राचीन भारतीय साहित्य जैसे बाणभट्ट की कादंबरी शिक्षा को 64 कलाओं के ज्ञान के रूप में परिभाषित/वर्णित करती है; और इन 64 कलाओं में न केवल गायन और चित्रकला जैसे विषय शामिल हैं, बल्कि वैज्ञानिक क्षेत्र जैसे रसायनशास्त्र और गणित, व्यावसायिक क्षेत्र जैसे बढ़ई का काम और कपड़े सिलने का कार्य जैसे औषधि तथा अभियांत्रिकी और साथ ही संप्रेषण , चर्चा और वाद–संवाद करने के व्यावहारिक कौशल (सॉफ्ट स्किल्स) भी शामिल हैं। यह विचार कि इनसानी सृजन के सभी क्षेत्रों (जिसमें गणित, विज्ञान, पेशेवर और व्यावसायिक विषय और व्यावहारिक कौशल शामिल हैं) को 'कलाओं' के रूप में देखा जाना चाहिए भारतीय चिंतन की देन है।" (शिक्षा नीति का बिंदु 11.1 पृष्ठ 57)।

'चौसठ कला संपूर्ण' कहना और 'सोलह कला निष्णात' कहना इसी परंपरा का निर्वाह करता प्रतीत होता है। शिक्षा जगत में 'ग्रेजुएट' होना महत्वपूर्ण माना और कहा जाता है। इसका अनुवाद 'निष्णात' सा होगा। आप इसे 'निपुणता' भी कह सकते हैं।

शिक्षा नीति के दस्तावेज़ के संकेत निहितार्थ को अच्छी प्रकार से आत्मसात् करने के लिए 64 और 16 कलाओं के विवरण पर दृष्टिपात करना ठीक रहेगा। कादंबरी और कामसूत्र में जिन 64 कलाओं का वर्णन है वे सब यजुर्वेद के तीसवें अध्याय में पहले से ही वर्णित हैं। इस अध्याय में कुल 22 मंत्र हैं जिनमें से चौथे मंत्र से लेकर बाईसवें मंत्र तक इन कलाओं का उल्लेख है। इसके अतिरिक्त 'प्रबंध कोश' तथा 'शुक्र नीति सार' में भी कलाओं की संख्या 64 ही है। 'ललित विस्तार' में 86 कलाएँ गिनाई गई हैं। शैव तंत्रों में भी चौंसठ कलाओं का उल्लेख मिलता है। पहले इन 64 कलाओं का नाम आदि जान लें:गान विद्या, वाद्य कला, नृत्य, नाट्य, चित्रकारी, बेल बूंटे बनाना, चावल और पुष्प आदि से पूजा के उपहार की रचना करना, फूलों की सेज बनाना, दाँत, वस्त्र और अंगों को रंगना, मणियों का फर्श बनाना, शय्या सज्जा करना, जल को बाँध देना, विचित्र सिद्धियाँ दिखलाना, हार–माला आदि बनाना, कान और चोटी के फूलों के गहने बनाना, फूलों के आभूषणों से शृंगार करना, कानों के पत्तों की रचना करना, सुगंध वस्तुएँ–इत्र, तैल आदि बनाना, इंद्रजाल–जादूगरी, वेश धारण करना, हाथ की सफाई, भोजन बनाने की कला, पेय पदार्थ बनाना, सुई का काम, कठपुतली बनाना–नचाना, पहेली कला, प्रतिमा निर्माण, कूटनीति, ग्रंथों के पठन पाठन का चातुर्य, नाटक–उपन्यास लेखन कला, समस्या पूर्ति और काव्य रचना कला, पट्टी, बेंत बाण आदि निर्माण कला, गलीचे, दरी आदि बनाना, बढ़ई साजी, गृह निर्माण कला, स्वर्णाभूषण आदि निर्माण और रत्नादिक परीक्षा, सोना–चाँदी जैसी धातु निर्माण, मणियों की रंग परीक्षा, खानों की पहचान–परीक्षा, वनस्पति और वृक्ष चिकित्सा, घरेलू पशु आदि का मनोरंजन के लिए प्रशिक्षण, पशु–पक्षी की बोलियों की समझ, उच्चाटन विधि, केश विन्यास और रखरखाव कौशल, वशीकरण, तर्क–कुतर्क कौशल, विदेशी भाषा ज्ञान, शकुन–शुभाशुभ विचार, मातृकायंत्र निर्माण, रत्न आदि की कटाई और सफाई कौशल, सांकेतिक और कूट भाषा निर्माण कौशल, कटक रचना कौशल, छंद निर्माण कौशल,

वस्त्राधारित छल क्रीडा कौशल, दयूत क्रीडा, वशीकरण और आकर्षण कौशल, बाल कला कौशल, मंत्र विद्या, वाक विजय कौशल और बेताल आदि वशीकरण कौशल।

राम 12 कलाओं के ज्ञाता थे और श्री कृष्ण 16 कलाओं के। कहना न होगा कि 16 कलाओं से युक्त व्यक्ति ईश्वर तुल्य हो जाता है 16 कलाएँ उपनिषदों के अनुसार ये हैं– श्री धन संपदा, भू अचल संपत्ति, कीर्ति यश प्रसिद्धि, इला वाणी की सम्मोहकता, लीला आनंद उत्सव, कांति सौंदर्य और आभा, विद्या मेधा बुद्धि, विमला पारदर्शिता, उत्कर्शिनी प्रेरणा और नियोजन, ज्ञान नीर क्षीर विवेक, क्रिया कर्मण्यता, योग चित्तलय, प्रहवि अत्यंतिक विनय, सत्य यथार्थ, इसना आधिपत्य, अनुग्रह उपकार।

इस तरह लंबी सूची को देखने से ज्ञात होता है कि भारत में कम से कम दो हजार वर्षों से 'लिबरल आर्ट्स' का विचार विकसित होना प्रारंभ हुआ और इन कौशलों में समय की माँग के अनुरूप कई नई विद्याएँ और कौशल जुडते चले गए। बाणभट्ट अपनी आख्यायिका 'कादंबरी' में जो विस्तृत उल्लेख करते हैं वह उसी ओर संकेत करता है। यदि इन कलाओं की नामावली पर ही गौर किया जाए तो कई कलाएँ आज दुर्बोध लगेंगी। कई समकालीनता की दृष्टि से अनावश्यक भी प्रतीत होंगी, होनी भी चाहिए। उदाहरण के लिए अंतिम कला को आप समयानुकूल न समझेंगे। 'बेताल' किसी को 'बे–ताल' लग सकता है। पर इसी कौशल को जे. के. रोलिंग ने ऐसा साध लिया कि हैरी पोटर की सृष्टि कर दी। इसी प्रकार से 'म्लेक्षित विकल्प' के सिद्धांत को तब तक नहीं समझा जा सकता जब तक इसे आधुनिक बीजलेखन (क्रिप्टोग्राफी) की पुरानी पद्धति के रूप में स्वीकार न कर लिया जाए। डेविड कान (1930–) ने 1967 में लिखित अपनी पुस्तक 'द कोड–ब्रेकर्स : द स्टोरी ऑफ सीक्रेट राइटिंग' में भारतीय बीजलेखन की अनेक प्रचलित विधियों को आधार माना और कौटिलीयं, मूलदेवीयं, गूढयोज्य आदि के द्वारा लिपि निर्माण की भारतीय विधियों की चर्चा की है। उन्हें 1971 में इस लेखन के लिए ऑक्सफोर्ड ने डी.फिल. की उपाधि दी थी।

प्राचीन भारतीय ज्ञान परिपाटी और शिक्षण प्रविधियाँ इस बात पर बल देती रही हैं कि इन 64 या 84 या इनसे भी अधिक कौशल–केंद्रित व्यवसायोन्मुख विस्तृत सूचियों से शिक्षार्थी को ही नहीं समाज को भी लाभ होता रहा है। व्यवसाय को जीवन और समाज से प्रभावशाली रूप से जोड़ते हुए शिक्षण की ओर उन्मुख करना भारतीय–शिक्षा नीति की अनूठी पहल है। लिबरल आर्ट्स की अवधारणा के भारतीय स्वरूप का संधान करने के लिए यह स्मरण रखना आवश्यक है कि यहाँ पहले से ही शिक्षार्थी को अनेक विकल्पों में से कुछ का चुनाव स्वतः करने की स्वतंत्रता रही है। आचार्य स्तर पर व्याकरण, साहित्य या दर्शन आदि में विशेषज्ञता प्राप्त करना आगे की बात है । यहाँ तो शास्त्री, प्रथमा और मध्यमा के स्तर पर भी विषय चयन की सुलभता रही है।

वर्तमान में पाश्चात्य शिक्षण पद्धति के अनुसार उच्च शिक्षा में चली आ रही परिपाटी के अपने गुण दोष हैं। यदि देखा जाए तो कई बार ऐसा होता है कि विज्ञान और गणित आदि पढ़ने वाला और 99 प्रतिशत अंक लेकर पास होने वाला भी कॉलेज में इन विषयों को अपने स्वभाव और रुझान के अनुरूप नहीं पाता। माता–पिता के सपने पूरे करने के लिए छात्र मन मारकर पढ़ते तो रहते हैं पर निखर नहीं पाते। दूसरी ओर 'आर्ट साइड' को कमजोर विद्यार्थियों का बसेरा माना जाता है। अभी तक तो यही राय रही है कि आर्ट विकल्पहीनों के लिए एक मात्र विकल्प है। आर्ट साइड के अध्यापकों का स्तर भी कोई खास नहीं माना जाता।

नई शिक्षा नीति के इस प्रस्ताव से यह पुरानी विचार धारा बदलेगी। विदेशों में लिबरल आर्ट्स पढ़ने वाले भी इसके गुण गाते हैं। अमरीका की उपराष्ट्रपति कमला हैरिस की माता श्रीमती श्यामला गोपालन 1958 में लेडी इरविन कॉलेज दिल्ली से 19 वर्ष की उम्र में होम साइंस की डिग्री लेकर अमरीका गईं और वहाँ ब्रेस्ट कैंसर के क्षेत्र में

अनुसंधान करके पी एच डी प्राप्त कर प्रखर वैज्ञानिक के रूप में विख्यात हुईं। हमारे यहाँ अब तक गृह विज्ञान को बहुत से लोगों द्वारा 'चूल्हे–चक्की' से जोड़कर देखा जाता रहा है।

आज के युवक–युवतियाँ और उनके माता–पिता अपने बाल–बच्चों की पढ़ाई के लिए हद से गुजर जाते हैं । वे यह जान गए हैं कि पढ़ाई पर किए गए उनके निवेश का उनको समुचित लाभ मिले। इसलिए वे व्यवसायोन्मुख शिक्षा के हिमायती हैं। विज्ञान, टेक्नोलोजी, इंजीनियरिंग और गणित पर इतना बल इसीलिए है। अंग्रेजी का दबदबा भी इसी कारण लोग मानते हैं कि इसका माध्यम उनको आशा बँधाता है। कला–विषयों की पूछ कम होती है।

इस बात में भी दम है कि केवल विज्ञान आदि विषयों की पढ़ाई से विद्यार्थी केवल तकनीक का जानकार होकर रह जाता है। वह मानवता, जीवन मूल्य, रचनात्मकता और व्यक्तित्व विकास के अन्य गुणों से रहित और वंचित हो सकता है। वे एकनिष्ठ से होकर रह जाते हैं। उन्हें मिल–जुलकर काम करना सीखना–सिखाना पड़ता है। वे यह जान ही नहीं पाते कि भावना और संवेदना भी कोई अनिवार्य गुण है। जैसे–जैसे कृत्रिम मेधा (आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस) और रोबोट आदि हमारे जीवन में दखल देने लग जाएँगे, हमें समझ आ जाएगा कि लिबरल आर्ट्स हमारे लिए नैतिकता आधारित जीवन जीने की कला सीखने के लिए वांछनीय बन जाएगी। इस डिग्री का लाभ यह होगा कि रोजगार के लिए तो यह सामान्य आर्ट्स डिग्री के सामने बेहतर होगी ही, यह डिग्रीधारी को पहले से अधिक चिंतनशील, विवेकशील और रचनाशील बनाएगी। अंग्रेजी में एक किताब है, 'यू कैन डू एनी थिंग : द सरप्राइजिंग पावर ऑफ ए यूजलेस लिबरल आर्ट्स एजुकेशन' (2017)। इस पुस्तक के शीर्षक का शाब्दिक अर्थ है– आप कुछ भी कर सकते हैं "बेकार समझी जाने वाली लिबरल आर्ट्स शिक्षा की आश्चर्यजनक शक्ति"। पुस्तक के लेखक जॉर्ज एंडर्स का कहना है कि लोगों के साथ संवाद स्थापित करने की अनुभूत कला और दूसरों के मन में क्या चल रहा है इसे समझने का कौशल भी दूसरे कौशलों की तरह महत्वपूर्ण है। लिबरल आर्ट्स हमें परस्पर सहयोग करने की कला सिखाती है। मिलनसार होना भी उतना ही जरूरी है जितना रॉकेट विज्ञान। तीन गुण इस विषय से अपने आप विकसित हो जाते हैं– जिज्ञासा, रचनात्मकता और संवेदना।

लोग बताते हैं कि कुछ वर्ष पहले आई सी आई सी आई बैंक के पूर्व प्रमुख के वी कामथ से बिजनेस स्टैंडर्ड के संवाददाता ने एक सवाल पूछा था, "आप किसी चीज में अपने आपको कम पाते हैं?" कामथ ने तब जवाब दिया था, "मैं शायद बहुत टेक्निकल इनसान हूँ। ट्रेनिंग से मैं एक इंजीनियर हूँ जिसने एम.बी.ए. भी किया है। लेकिन काश मुझे लिबरल आर्ट्स का भी अनुभव मिला होता। अगर ऐसा हो पाता तो मैं शायद बेहतर इनसान और बेहतर लीडर होता।"

कुछ वर्षों पहले नेशनल एसोसिएशन ऑफ कॉलेजेज एंड एंपलॉयर्स ने नियोक्ताओं के बीच एक सर्वेक्षण किया था जिसमें ये बात निकलकर सामने आई कि नियोक्तागण डिग्री से अधिक निपुणता को प्रमुखता देते हैं। सच ही है। आज प्रायः हर युवक और युवती का यह स्वप्न रहता है कि वह शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् कम से कम एक बार तो अवश्य ही भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई ए एस आदि) के लिए समुचित तैयारी करे। फिर परीक्षा दे और हो सके तो पास होकर देश और समाज की सेवा करे। प्रायः सभी विषयों के छात्र ऐसा सोचते हैं पर सफलता वे ही पाते हैं जो डिग्रीधारी मात्र न होकर जीवन और जगत के प्रति एक समग्र, सहज और संतुलित दृष्टिकोण विकसित करने के साथ ही अभिव्यक्ति कुशलता के द्वारा उसका प्रकाशन भी कर पाते हैं। लिबरल आर्ट्स के माध्यम से युवा वर्ग ऐसी समेकित योग्यता अनायास और सायास प्राप्त करते चला जाता है। यह हमारे सोचने–समझने के तरीकों को उदार बनाता है, लचीला और व्यवस्थित करता है।

इक्कीसवीं सदी में एक ओर दुनिया बदल रही है, ज्ञान के नित नवीन आयाम प्रस्तुति पा रहे

हैं दूसरी ओर नई शिक्षा नीति की बदौलत हम उसे अपनी पारंपरिक और शोधित परंपरा से भी जोड़ने के अवसर प्राप्त कर सकेंगे। आज कौशल ग्रहण (स्किल डेवलपमेंट) के लिए बहुत कुछ शिक्षण होने लगा है। नई सूचनाओं के साथ अपनी निधि का तालमेल करते हुए 'भारतीयता' को केंद्र में रखकर 'लिबरल आर्ट्स' के विचार को आगे बढ़ाने की जरूरत है। एक तो इसमें कला, विज्ञान, कॉमर्स आदि के बँधे–बँधाए विकल्प लचीले होंगे, दूसरे इसके केंद्र में शिक्षण और शिक्षक के स्थान पर 'शिक्षार्थी' आ जाएगा। विज्ञान, तकनीक, इंजीनियरिंग और गणित आदि के साथ मानविकी तथा कला और सामाजिक विषयों, भाषाओं आदि को एकीकृत करके प्रस्तुत करना आज पश्चिम में 'लिबरल' (उदार) कहकर संबोधित किया जा रहा है। भारत में यह उदारता पहले से ही मौजूद है। अंग्रेजी–ढंग की थोपी गई शिक्षा का उद्देश्य दूसरा था। उन्हें अपने राज–काज के लिए 'क्लर्क' की दरकार थी। किंतु स्वतंत्र भारत में आज हमें चिंतन और विचारधारा से समग्र भारतीय की आवश्यकता है जो भारत के शाश्वत जीवन–मूल्यों को आत्मसात् करके "स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः" उक्ति को सत्य चरितार्थ कर सकें। शिक्षा के क्षेत्र में 'उदारता' और 'विशालहृदयता' इस विचारधारा का मूल और आधार है। अब औपनिवेशिक विरासत को ढोए चले जाने की किट–किट से छुटकारा मिल गया है। वर्तमान अंडर ग्रैजुएट शिक्षा पद्धति औपनिवेशिक विरासत है, जिसे पूरी तरह से बदले जाने की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए लिबरल आर्ट्स ऑफ एजुकेशन व्यवस्था लागू होने के बाद साइंस या आर्ट्स में स्वतः समाप्त हो जाएगा। पूर्व प्रचलित लीक से हटकर एक उदारवादी रुख अपनाते हुए अब एक साल पूरा होने पर छात्रों को सर्टिफिकेट, दो साल पूरा होने पर डिप्लोमा, तीन साल के बाद डिग्री और चौथा साल पूरी तरह से रिसर्च आधारित होगा, जिसे पूरा करने के बाद छात्रों को बैचलर ऑफ लिबरल आर्ट्स (ऑनर्स) की उपाधि मिलेगी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति समिति के एक प्रतिष्ठित सदस्य प्रो. एम. श्रीधर के शब्दों में "किसी भी प्रशासनिक व्यवस्था के पास एक से ज्यादा काम नहीं रहेगा। सब एक ही काम करेंगे, ताकि एक सफल शैक्षिक प्रक्रिया चलाई जा सके। इस नीति में लिबरल आर्ट्स ऑफ एजुकेशन व्यवस्था को भी लागू किया गया है, ताकि शिक्षा का स्तर और बेहतर हो सके। डिग्री देने वाले स्वायत्त महाविद्यालयों की व्यवस्था भी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में रहेगी।" (आज तक, 27 जून, 2019)

लिबरल आर्ट्स के अंतर्गत शिक्षा प्राप्त करने का सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि शिक्षार्थी भाषा के प्रमुख कौशलों (लेखन, श्रवण, वाचन, पठन) के साथ ही 'मनन' को भी साधने लगता है। यह मस्तिष्क के दोनों पक्षों(रचनात्मक और विश्लेषणात्मक) का विकास करता है। जैसा प्रधानमंत्री मोदी ने कहा है कि जब शिक्षा को आस–पास के परिवेश से जोड़ दिया जाता है तो उसका प्रभाव विद्यार्थी के पूरे जीवन पर पड़ता है, पूरे समाज पर पड़ता है। प्रधानमंत्री द्वारा प्रस्तावित पंच –इकार का मंत्र (इनगेज, इक्स्प्लोर, इक्सपिरियंस, इक्स्प्रेस और इक्सेल) इस 'मनन' को सर्वाधिक महत्व देता है। 29 जुलाई, 2020 को जब प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू करने का प्रस्ताव पारित हुआ तब यह 33–34 वर्ष के पश्चात् आने वाला परिवर्तन मात्र न था, यह अंग्रेजी शिक्षा पद्धति की 185 के वर्चस्व वर्ष पर प्रहार भी था। 'सा विद्या या विमुक्त्ये' शायद इसी को कहा गया है।

जिसे कलाओं का एक उदार दृष्टिकोण कहकर प्रस्तुत किया गया है वह निश्चय ही ज्ञान को अलग–अलग खाँचों में रखकर देखने की पुरानी दृष्टि को बदलकर समस्त शिक्षणतंत्र को समग्रता से देखते हुए एक ऐसे दृष्टिकोण को विकसित करता है जो विद्यार्थी को उसकी संज्ञा के अनुरूप और अनुकूल बनाती है।

इस उदारवादी दृष्टि से भारत और इंडिया का अंतर अपने आप प्रायः समाप्त हो जाता है। बल्कि एक ऐसा संतुलन कायम हो जाता है कि शिक्षार्थी 'वसुधैव कुटुंबकम' का हामी होता चला जाता है। भारत में लिबरल आर्ट्स के लिए विख्यात कुछ विश्वविद्यालय पहले से हैं, पर वे निजी क्षेत्र में हैं और उनका शिक्षण शुल्क लाखों में है। उच्च

शिक्षा के लिए प्रस्तावित कुछ विश्वविद्यालयों को जब आई वी लीग के अमेरिकी विश्वविद्यालयों के समान विकसित किया जाएगा तब समस्त भारत में उच्च शिक्षा के लिए उच्चतम मानक तो स्थापित हो ही जाएँगे, इस कोर्स की उपलब्धता आम विद्यार्थी के लिए सहज हो जाएगी। आई. आई. टी. और आई. आई. एम. में लिबरल आर्ट्स पाठ्यक्रम जब प्रारंभ हो जाएँगे तब इसकी गुणवत्ता का पैमाना भी उच्च होता चलेगा। भाषा, साहित्य, संगीत, दर्शन, इंडोलोजी, कला, नृत्य, रंगमंच, शिक्षा, गणित, सांख्यिकी, विज्ञान, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि विषयों को एक ही संकाय के अंतर्गत उपलब्ध कराकर नई शिक्षा नीति ने एकल विधा के उच्च शिक्षा संस्थानों को बहु–विधा संस्थान बनाने का उपक्रम किया है। इसके परिणाम दूरगामी होंगे। 'पश्चिमी शिक्षा' का अनुकरण न करके अपने द्वारा स्वयं निर्धारित किए गए 'आत्मनिर्भर भारत' के लक्ष्य को साधने के लिए यह बदलाव देश दुनिया के समक्ष देश की भावी पीढ़ी को विश्व के समकक्ष रख सकेगा।

– 6–3–120–23 एन पी ए कॉलोनी, शिवरामपल्ली, हैदराबाद

❑❑❑

शिक्षा का मर्म और नई शिक्षा नीति

डॉ. शशिकांत मिश्र

नैसर्गिक प्रकृति में ज्ञान या शिक्षा ही वह स्रोत है, जिसकी धारा से अपनी जिज्ञासा की प्यास को बुझाते हुए कितने ऋषि–मनीषियों ने अपने जीवन को दिव्यता प्रदान की है। अतः सत् शिक्षा या सद्ज्ञान ही किसी के जीवन को दिव्यता और सुंदरता प्रदान करने का एक मात्र साधन है। यही ज्ञान ही संसार में मनुष्य को अन्य प्राणियों से अलग पहचान दिलाता है। इसलिए 'हितोपदेश' में बताया गया है कि "आहार–निद्रा–भय–मैथुनानि समान्यम् एतत् पशुभिर् नराणाम्/ ज्ञानम् नराणाम् अधिको विशेषो ज्ञानेन हीनाः पशुभिः समानाः।" कहा जाता है कि ईश्वर ने संसार के हर मनुष्य को ज्ञान प्रदान किया है। यह ज्ञान हमें जन्म के साथ प्राप्त होता हैं, किंतु बाद में कई संस्कारों के माध्यम से यह ईश्वर प्रदत्त ज्ञान मार्जित होकर दिव्य बन जाता है। इस ज्ञान को मार्जित करने में गुरु तथा गुरुकुल की अहम् भूमिका होती है। शुरू–शुरू में जब लिखित पुस्तकें नहीं थीं तो गुरु ज्ञान का एक मात्र स्रोत था, इसलिए प्राचीन ग्रंथों में गुरु की बड़ी महिमा बताई गई है। 'अथर्ववेद' के ब्रह्मचर्य सूक्त के अनुसार गुरु शिष्य को नया जन्म देता है। दूसरी बात इस संदर्भ में यह कही जा सकती है कि संस्कार के माध्यम से जन्म से मिले इस ज्ञान को जितना मार्जित कर दिव्य बनाया जा सकता है, बाद में निरंतर अभ्यास से इस दिव्यता को बचाया जा सकता है। अतः ज्ञान को मार्जित करने तथा दिव्यता प्रदान करने में गुरु का अहम् योगदान होता है। जब हम शिक्षा के संदर्भ में गुरु की बात करते हैं, यह गुरु दो प्रकार के हो सकते हैं और ये हैं दीक्षा गुरु और शिक्षा गुरु। जहाँ दीक्षा गुरु कई दीक्षाओं से हमें दीक्षित कर संस्कार प्रदान करते हैं, वहीं शिक्षा गुरु अपने अध्यापन से उस संस्कार को और शुद्धता प्रदान करने के साथ–साथ जीवन को सार्थक बनाने में सहायक होते हैं।

भारत में विद्या तथा ज्ञान की खोज केवल ज्ञान प्राप्ति के लिए ही नहीं, अपितु उसका विकास धर्म के एक आवश्यक अंग के रूप में हुआ। वह धर्म के मार्ग पर चलकर मोक्ष प्राप्ति या आत्मज्ञान का एक क्रमिक प्रयास माना गया। अतः इस प्रकार जीवन के चरम उद्देश्य प्राप्ति का माध्यम बन गए और यह उद्देश्य था मोक्ष या मुक्ति। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए शिक्षा के अंतर्गत शिक्षा के विभिन्न व्रतों का पालन, नियमित संध्या एवं धार्मिक उत्सवों का आयोजन किया जाता था। इस समय तक आर्य आर्थिक विचारधारा के थे तथा वे ब्रह्मा की सत्ता में विश्वास करते थे। गुरु अपने शिष्यों को प्रार्थना करना, यज्ञ करना, वेद मंत्रों का उच्चारण करना आदि नियम विधिवत बताते थे।

यह भी स्वीकार किया जाता है कि माता–पिता ही बच्चे के पहले गुरु होते हैं और वे उसे संस्कार प्रदान कर आदर्श बनाने में सहयोग देते हैं। इसीलिए कहा यह भी जाता है कि परिवार बच्चे की पहली पाठशाला होता है। इसी पाठशाला से ही बच्चे को संस्कार के माध्यम से आत्मज्ञान प्रदान किया जाता

है तथा उसमें सच्ची वीरता के गुण भर दिए जाते हैं। सच्ची वीरता की बात हमने इसीलिए भी कि जब बच्चे में वीरता के गुण आ जाते हैं, तो वह सत्य, प्रेम और निष्ठा का मार्ग चुन लेता है। उसमें अपने निर्धारित लक्ष्य के मार्ग पर अकेले आगे बढ़ने का अदम्य साहस आ ही जाता है। तब वह सही मायने में अपने जीवन संघर्ष में जीत हासिल कर सकता है। विश्वकवि रवींद्रनाथ टैगोर ने इसलिए कहा था कि "जोदि तोर डाक सुने केऊ ना आसे तबे एकला चोलो रे"। भारतीय साहित्य ने हर भारतीय को जीवन के रास्ते पर हमेशा अकेला चलने को प्रेरित किया है। भारतीय संस्कृति में प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में चार लक्ष्य माने गए हैं, जिन्हें पुरुषार्थ की संज्ञा दी जाती है। ये हैं धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इन चारों में से मोक्ष सबसे अधिक पवित्र एवं महत्वपूर्ण माना जाता है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का चरम उद्देश्य मोक्ष प्राप्ति होता है। अतः शिक्षा ही मोक्ष प्राप्ति का एकमात्र साधन माना गया है। 'कठोपनिषद' ने हमें यह शिक्षा दी है कि 'उतिष्ठितः जाग्रतः प्राप्य वरान्निवोधत।' इसका उपयोग स्वामी विवेकानंद ने लौकिक अर्थ में करते हुए भारतीय युवाओं का आह्वान किया था कि उठो, जागो, जब तक आपको अपनी मंजिल नहीं मिली है, तब तक चलते रहो यानी कर्म करते रहो। कहने का अभिप्राय यह है कि शिक्षा ही सभी को जागरूक बनाती है और जागरूक व्यक्ति ही अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है।

वीरों के बारे में यह कहा जाता है कि वीर भले ही युद्ध भूमि पर प्राण त्याग देता है, किंतु वह रण क्षेत्र छोड़ भागता नहीं है और जो भागता है वह वीर नहीं होता है। हमारा भारतीय इतिहास कई महान वीर सपूतों की कहानियों से भरा पड़ा है। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद, सुखदेव आदि ने हँसते–हँसते फाँसी की सजा को स्वीकार कर लिया था। यह है हमारी भारतीय शिक्षा, जिसने उन्हें अन्याय–अत्याचार का विरोध करना सिखाया तथा उनमें अदम्य साहस भर दिया था।

अगर हम वेदकालीन शिक्षा का विहंगावलोकन करेंगे, तो हमें यह मिलेगा कि वैदिक कालीन शिक्षा का अर्थ अत्यधिक व्यापक था। वह शिक्षा जीवन से संबंधित थी और व्यक्ति को सभ्य तथा उन्नत बनाने में सहायक मानी जाती थी। हमने पहले बताया कि विद्या के अभाव में व्यक्ति केवल पशु मात्र ही रह जाता है। ईश्वर भक्ति तथा धार्मिकता की भावना, चरित्र निर्माण, व्यक्ति का विकास नागरिक तथा सामाजिक कर्तव्यों का पालन सामाजिक कुशलता की उन्नति तथा राष्ट्रीय संस्कृति का संरक्षण और प्रसार प्राचीन भारत में शिक्षा के उद्देश्य एवं आदर्श थे।

वैदिक कालीन शिक्षा का उद्देश्य धार्मिकता के अतिरिक्त चरित्र का निर्माण, व्यक्ति का सर्वांगीण विकास, नागरिक और सामाजिक कर्तव्यों पर बल, सामाजिक सुख और कौशल की उन्नति तथा राष्ट्रीय संस्कृति का संरक्षण और प्रसार रहा। बाद में समय के साथ–साथ शिक्षा के उद्देश्यों में भी परिवर्तन होता रहा। वैदिक काल में जहाँ शिक्षा अध्यात्म, संगीत, वेद–उपनिषद, राजनीति, रण–कौशल, आदि पर आधारित हुआ करती थी, वहीं मध्यकाल में शिक्षा का उद्देश्य धर्म के प्रचार–प्रसार के लिए हो गया। आधुनिक काल में शिक्षा का उद्देश्य पुनः बालक के सर्वांगीण विकास पर आधारित हो गया। इस शिक्षा में बालक के मस्तिष्क के विकास की ही नहीं, अपितु उसके शारीरिक विकास पर भी ध्यान दिया जाता है। आधुनिक पाठ्यक्रम में बालक की हर एक रुचि को ध्यान में रखा जाता है अथवा उसके सर्वांगीण विकास पर विशेष बल दिया जाता है। वैदिक काल की शिक्षा गुरुकुल में दी जाती थी। गुरु अपने शिष्य को उपनयन संस्कार के माध्यम से अपने शरण में लेते थे और गुरुकुल में विद्यार्थियों को रखकर उनके लिए उचित विद्या का प्रबंध करते थे। शिष्य अपने गुरु का सान्निध्य पाकर उच्च शिक्षा को ग्रहण करता था। इतना ही नहीं, वैदिक काल में शिक्षा को मोक्ष का साधन माना जाता था। वैदिक काल में शिक्षा धर्म से जुड़ी हुई थी। विद्यार्थियों को धर्म की शिक्षा विशेष रूप से दी जाती थी, जिसके माध्यम से विद्यार्थी अपने धर्म, ईश्वर की भक्ति आदि शिक्षा के माध्यम से कर सकता था, ताकि किसी भी कठिन परिस्थिति में

वह व्याकुल ना हो और संयम अथवा धैर्य से उस परिस्थिति का सामना कर सके। विद्यार्थी के आत्मसम्मान को बढ़ाने के लिए शिक्षा के माध्यम से उसे इस तथ्य की स्पष्ट जानकारी दे दी जाती थी कि वह देश की संस्कृति का रक्षक है। आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए शिक्षा के क्षेत्र में प्रवेश करने के समय ही अर्थात् उपनयन संस्कार के समय ही उसे बता दिया जाता था कि उसके सभी अच्छे कर्मों में दिव्य शक्तियाँ उसकी सहायता करेंगी, वह सदैव निर्भीक रूप से कार्य कर सकता है। शिक्षा प्राप्ति के बाद विद्यार्थी में वह दिव्य अनुभूति होती है जो साधु अथवा महात्मा में देखने को मिलती है। एक शिक्षित मनुष्य के मस्तिष्क पर हमेशा तेज रहता है। कठिन समय में भी शिक्षित मनुष्य अपना धैर्य नहीं खोता, वह संयम के साथ कठिन परिस्थितियों का सामना करता है और उसका निवारण करता है।

शिक्षा के उद्देश्य का पहला उल्लेख ऋग्वेद के 10वें मंडल में पाया जाता है। इस मंडल के एक सूक्त में कहा गया है कि विद्या का उद्देश्य वेदों तथा कर्मकांड के ज्ञान के अतिरिक्त समाज में सम्मान प्राप्त करना, सभा–समिति में बोलने में सक्षम होना, उचित–अनुचित का बोध आदि है। इससे प्रतीत होता है कि पूर्व वैदिक युग में शिक्षा के उद्देश्य व्यावहारिक थे। बाद में उपनिषद काल में ज्ञान का उद्देश्य अधिक सूक्ष्म हो गया। विद्या को दो भागों में बाँटा गया–परा विद्या और अपरा विद्या। अपरा विद्या में प्रायः समस्त पुस्तकीय तथा व्यावहारिक ज्ञान आ गया। केवल ब्रह्म विद्या को परा विद्या माना गया। परा विद्या श्रेष्ठ मानी गई, क्योंकि उससे मोक्ष प्राप्त होता है। मोक्ष शिक्षा का अंतिम उद्देश्य हो गया, लेकिन यह लक्ष्य आदर्श ही रहा होगा, न कि व्यावहारिक, क्योंकि मोक्ष सभी के लिए साध्य नहीं हो सकता।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह समाज में ही रहता है। मानव जब समाज में रहता है तो उसे अपने स्वयं के स्वार्थ को त्याग कर समाज के कल्याण अथवा उसकी उन्नति का ध्यान रखना शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य हो जाता है। शिक्षा का उद्देश्य व्यावहारिक क्षेत्र में कुशल नागरिकों का निर्माण करना होता है। प्राचीन भारतीय समाज में श्रम विभाजन के सिद्धांत पर निर्मित था। अतः प्रत्येक विद्यार्थी को इस दृष्टिकोण से शिक्षा दी जाती थी कि वह भावी जीवन में समाज के इस प्रकार के ढाँचे में पूरी तरह अपने लिए स्थान बना सके। इस प्रकार की व्यावहारिक शिक्षा द्वारा यह अध्ययन के उपरांत व्यावहारिक जीवन यापन में कठिनता अनुभव नहीं करता था। पूरी तरह सामाजिक सुख का उपयोग करता था, साथ ही व्यावहारिक क्षेत्र में शिक्षित होने के कारण अपने अध्यवसाय में भी कुशलता से काम कर पाता था। भारतीयों के लिए 'ज्ञान' शब्द का कोई सीमित अर्थ नहीं था। शिक्षा के द्वारा वे केवल सांसारिक ज्ञान की ही नहीं, अपितु परलोक संबंधी ज्ञान को भी प्राप्त करने का प्रयत्न करते थे। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपनी आत्मकथा में एक स्थल पर स्पष्ट रूप से इस तथ्य का उल्लेख किया है कि भारतीय संस्कृति का उद्देश्य ज्ञान की खोज है। इसी दृष्टि से प्राचीन भारतीयों ने शिक्षा प्रणाली का विकास किया था। महात्मा गांधी ने भी यह बताया है कि शिक्षा से मेरा तात्पर्य बालक और मनुष्य के शरीर, मन तथा आत्मा के सर्वांगीण एवं सर्वोत्कृष्ट विकास से है। स्वामी विवेकानंद के अनुसार मनुष्य की अंतर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है। उधर, पाश्चात्य विद्वान जॉन डयूवी बताते हैं कि शिक्षा व्यक्ति के उन सभी भीतरी शक्तियों का विकास है, जिससे वह अपने वातावरण पर नियंत्रण रखकर अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर सकें। हरबर्ट स्पेंसर ने भी शिक्षा का अर्थ अंतः शक्तियों का बाह्य जीवन से समन्वय स्थापित करना बताया है। पेस्टालॉजी ने शिक्षा को मानव की संपूर्ण शक्तियों का प्राकृतिक प्रगतिशील और सामंजस्यपूर्ण विकास के लिए जरूरी माना है।

शिक्षा का सर्वप्रमुख उद्देश्य चरित्र का निर्माण करना ही है। शिक्षा प्राप्ति के उपरांत विद्यार्थी के चरित्र में बदलाव शिक्षा प्राप्ति की सफलता है। शिक्षा के बिना मनुष्य पशु के समान माना जाता है। शिक्षा की प्राप्ति के उपरांत विद्यार्थी एक चिंतक की भाँति स्वयं अथवा परिवार और समाज

के विषय में सोचता है। शिक्षा ही एक ऐसा साधन है जो मनुष्य और मनुष्य में भिन्नता उत्पन्न करती है। गुरुकुल में रहते–रहते विद्यार्थी गुरुकुल के समाज से विशेष प्रकार से जुड़ जाता था। गुरुकुल में इस प्रकार के प्रयोग किए जाते थे कि विद्यार्थी में आत्मविश्वास, आत्मबल का विकास हो सके। गुरुकुल में विद्यार्थी अपने निजी स्वार्थ को भूलकर वहाँ के समाज के विषय में सोचता और उसके वातावरण में रम जाता। उसमें कार्य क्षमता का अद्भुत विकास होता, विद्यार्थी स्वयं भिक्षा माँगकर अपना और अपने गुरुओं के भोजन की व्यवस्था करते स्वयं साफ–सफाई का ध्यान रखते अथवा शिक्षा के विभिन्न आयामों को ग्रहण करते उनसे परिचित होते। शिक्षा के द्वारा मनुष्य मोक्ष की प्राप्ति करता था, अतः शिक्षा मानव को महान बनाती है। एक शिक्षित मनुष्य अपने देश के प्रति निष्ठावान होता है। वह अपने देश में बने कर्तव्य अथवा नियमों का पालन बिना किसी विरोध के ससम्मान करता है। अध्ययन काल में ही विद्यार्थी को उसके नागरिक और सामाजिक कर्तव्यों से अवगत कराया जाता है, उसे भावी राष्ट्र का निर्माता समझा जाता है। अतः स्वार्थपरकता से दूर रहने की शिक्षा दी जाती है। पहले यह बताया गया है कि शिक्षा एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य में भेद उत्पन्न करती है। एक शिक्षित मनुष्य अपना नहीं अपने समाज के हित की बात सोचता है। व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य है। शिक्षा के द्वारा शारीरिक और बौद्धिक योग्यता का समान रूप से विकास किया जाता है। मानसिक शक्तियों के विकास के लिए स्वस्थ शरीर का अत्यधिक महत्व है। माना जाता है कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का वास होता है। विद्यार्थी में इंद्रियों को वश में करना, आत्मसंयम और आत्मविश्वास की भावना को अधिक से अधिक बढ़ाने का प्रयत्न किया जाता है। वैदिक शिक्षा व्यापक सांस्कृतिक दृष्टि पर बल देती थी। शिक्षित व्यक्ति को साहित्य, कला, संगीत आदि की समझ होनी चाहिए। उसे जीवन के उच्च आदर्शों का ज्ञान भी होना चाहिए। मात्र जीविकोपार्जन शिक्षा का उद्देश्य नहीं है। कालिदास ने कहा है कि जो विद्या का उपयोग केवल कमाई के लिए करते हैं, वे विद्या के व्यापारी हैं, जिनकी विद्या बिकाऊ माल भर है।

वैदिक काल के उपरांत भारत में मिले जैन व बौद्धकालीन शिक्षा में भी गुरु की महिमा अपरंपार रही है। इस काल में भी वैदिककालीन आदर्श को बरकरार रखते हुए शिक्षा दी गई है। बौद्धकालीन शिक्षा का अंतिम उद्देश्य निर्वाण प्राप्ति है। निर्वाण की स्थिति में आसक्ति, अज्ञान और तृष्णा का विलय हो जाता है और मनुष्य दुख से मुक्त हो जाता है। बौद्ध धर्म एक व्यावहारिक धर्म है, क्योंकि उसका उद्देश्य मानव जीवन के दुख को दूर करना है। व्यावहारिकता पर बल देने के कारण इस धर्म में आचरण का बड़ा महत्व है। बौद्ध शिक्षा का उद्देश्य धर्म के अनुयायियों में नैतिक आचरण का विकास करना है। बाद में महावीर जैन ने भी अपनी शिक्षा में सम्यक दृष्टि, सम्यक ज्ञान एवं सम्यक चरित्र की बात की है। सम्यक ज्ञान का अर्थ आत्मा और अनात्म का पूर्ण ज्ञान है। ज्ञान का उद्देश्य आत्मा के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करके कर्म–बंधन से मुक्ति प्राप्त करना है। सम्यक आचार में विभिन्न प्रकार के नैतिक आचरण शामिल हैं। सम्यक चरित्र में सत्य, अहिंसा, अस्तेय (चोरी न करना), अपरिग्रह (संग्रह न करना) एवं ब्रह्मचर्य (आत्म–निग्रह) को शामिल किया गया है।

यहाँ यह बता देना जरूरी है कि वैदिककालीन शिक्षा से लेकर जैन व बौद्धकालीन शिक्षा तक शिक्षा ग्रहण की भाषा हमारी भारतीय भाषा रही। बाद में जैसे ही भारत पर ब्रिटिश शासन शुरू हो गया और लोगों को अंग्रेजी शिक्षा के लिए प्रेरित किया गया, तभी शिक्षा में खास बदलाव दिखाई दिया और एक खास षडयंत्र के तहत शिक्षा का उद्देश्य धीरे–धीरे गायब होता गया। भारत में ब्रिटिश शासन का एक महत्वपूर्ण पक्ष था कि भारत के समाज में एक वर्ग विशेष को मनोवैज्ञानिक शिक्षा देना एवं उसे आदर्श ब्रिटिश प्रजा बनाना। भारतीय समाज के इस अंग्रेजी पढ़े वर्ग को अपने आपके और अपनी जन्मभूमि के मूल्यों और सिद्धांतों को अवशोषित करने के लिए चतुराई से उत्साहित

करना जो भारत में ब्रिटिश कब्जे के लिए प्रेरक हो और भारत की वास्तविक संपदा की लूट और उसके मेहनतकशों के शोषण करने में सहायक हो। 1835 में, थॉमस मैकॉले ने बहुत बढ़िया ढंग से ब्रिटिश औपनिवेशिक साम्राज्यवाद के उद्देश्यों को स्पष्ट किया कि एक ऐसे वर्ग को बनाने की भरसक कोशिश करनी चाहिए जो हमारे और जिन पर हम शासन करते हैं, उन लाखों लोगों के बीच दुभाषिया हो सके, एक वर्ग जो खून और रंग में भारतीय हो परंतु स्वाद में, राय में, भाषा और बुद्धिमानी में, अंग्रेज हो। इतने पर भी, अंग्रेजी में लिखीं किताबों के माध्यम से भारतीय सोच को प्रभावित करने से ब्रिटिश संतुष्ट नहीं थे। इस भय को समझते हुए कि भारतवासी संस्कृत के माध्यम से अपनी सही धरोहरें खोज लेंगे, विलियम करे जैसे क्रिश्चियन मिशनरियों ने ब्रिटिश अध्यापकों को संस्कृत सीखने तथा औपनिवेशिक हितों के अनुकूल ग्रंथों की व्याख्या और प्रतिलिपि बनाने की जरूरत का अनुमान कर लिया था। उधर, कुछ कथित भारतीयों ने अंग्रेजी भाषा को अपने लिए सर्वोत्तम मानते हुए इसे प्रधानता देना शुरू कर दिया था। किंतु लोगों में अंग्रेज बनने और अंग्रेजियत के माध्यम से दौलत और शोहरत सब कुछ हासिल कर लेने की लालच इस कदर भड़क उठी थी कि लोग अपने बच्चों को अंग्रेजी पद्धति से ही नहीं, बल्कि अंग्रेजी माध्यम से ही पढ़ाने–पढ़वाने लगे, ताकि बच्चे की अंग्रेजी ऐसी हो जाए जैसे उसकी मातृभाषा ही हो। इसी उद्देश्य से प्रेरित होकर माता–पिता अपने दुधमुँहें बच्चों को भाषा–ज्ञान का श्रीगणेश 'क' से 'कन्हैया' के बजाय 'ए' से 'एपल' का रट्टा पिलाते हुए करने लगे। मातृभाषा, देशीय भाषा और राष्ट्रभाषा की उपेक्षा वहीं से शुरू हो गई, जो हमारी भारतीय शिक्षा व्यवस्था व संस्कृति के लिए अधःपतन के कारण बने। अंग्रेजी एक लाचार व कामचलाऊ भाषा है। उसमें शब्दों की संख्या भारतीय भाषाओं की अपेक्षा बहुत ही कम है। शब्द–सृजन की क्षमता तो और भी कम है। अंग्रेजी के एक विद्वान के अनुसार– कुल पंद्रह हजार शब्दों में पूरी अंग्रेजी और उसका सारा साहित्य समाया हुआ है, जबकि संस्कृत की तो छोड़िए, संस्कृत से निकली हुई हिंदी अथवा अन्य भारतीय भाषाओं में शब्दों की संख्या लाख से भी अधिक है। संस्कृत में तो कोई सीमा ही नहीं है, क्योंकि उसमें शब्द–निर्माण की क्षमता असीम है। शब्दों की ऐसी दरिद्रता के कारण अंग्रेजी में एक ही शब्द का कई भिन्न–भिन्न अर्थों में उपयोग होता है। फलतः इस भाषा में भावनाओं और विचारों की सटीक अभिव्यक्ति संभव ही नहीं है। इसके बावजूद हमारे देश के कर्णधारों ने इसी भाषा को न केवल शिक्षा–विद्या, बल्कि शोध–अनुसंधान का भी माध्यम बना रखा है, जिसके कारण शिक्षार्थियों–विद्यार्थियों, शोधार्थियों व अनुसंधानकर्ताओं में अपनी मातृभाषा, देशीय भाषा और राष्ट्रभाषा के प्रति उदासीनता होना अपरिहार्य ही है।

दरअसल हुआ यह कि ब्रिटिश शासकों ने भारत को लंबे समय तक अपने औपनिवेशिक साम्राज्यवाद का गुलाम बनाए रखने के लिए थॉमस मैकॉले की तत्संबंधी षडयंत्रकारी अंग्रेजी शिक्षण पद्धति को हमारे ऊपर थोप कर इसके पक्ष में देशभर में ऐसी मान्यता कायम कर दी कि अंग्रेजी मान–सम्मान, पद–प्रतिष्ठा, रोजी–रोजगार की ही नहीं, ज्ञान–विज्ञान और प्रगति–उन्नति व समृद्धि हासिल करने की भाषा मानी जाने लगी। तब हमारे देश का लालची और एक हद तक लाचार जन–मानस अंग्रेजी पढ़ने–लिखने–सीखने का ही नहीं, बल्कि अंग्रेज ही बन जाने का प्रयत्न करने लगा। अंग्रेजों के चले जाने के बाद देश की राज–सत्ता उन्हीं के सरपरस्तों द्वारा उन्हीं की रीति–नीति से संचालित होती रही, जिसके कारण देशवासियों की वह प्रयत्नशीलता उसी दिशा में जारी रही।

कुल मिलाकर इस संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि हमारे देश में भाषा हमारी शिक्षा प्रणाली का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जो सामान्य रूप से सामाजिक ताने–बाने को मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। देश के विभिन्न क्षेत्रों में कई भाषाएँ बोली जाती हैं। लेकिन मौजूदा संघीय ढाँचे और भाषा में विविधता के कारण, किसी भी स्थानीय या क्षेत्रीय भाषाओं ने भारत में

अन्य भाषाओं पर महत्व या वर्चस्व स्थापित नहीं किया है। शिक्षा नीति के दस्तावेज़ में त्रि–भाषा सूत्र निश्चित रूप से हमारी शिक्षा प्रणाली को बढ़ावा देंगे और सामाजिक विषमता को दूर करेंगे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में अधिकांश सुधार बहुत सराहनीय हैं। समय की आवश्यकता के साथ चीजें बदलनी चाहिए जो समाज के कल्याण के लिए होनी चाहिए।

भारत के सांस्कृतिक और सामाजिक वैभव की स्थापना का प्रथम पायदान निज भाषा यानी मातृभाषा में शिक्षा में ही निहित हैं। बिना मातृभाषा के ज्ञान और अध्ययन के सब व्यवहार व्यर्थ ही माने गए हैं। इसमें हिंदी समेत तमाम भारतीय भाषाओं को महत्व दिया गया है। इस दस्तावेज में बहुमत तथा गणतंत्र को सम्मान दिया गया है। भारतवर्ष के इतिहास में पहली बार ऐसा हुआ कि शिक्षा नीति बनाने के लिए देश की लगभग 2.5 लाख ग्राम पंचायतें, 6600 ब्लॉक और 650 जिलों से विचार लिए गए। यह शिक्षा नीति मातृभाषा और भारतीय भाषाओं को सशक्त बनाने का जीवंत दस्तावेज है। इसमें शिक्षाविदों, अध्यापकों, अभिभावकों, जनप्रतिनिधियों एवं व्यापक स्तर पर छात्रों से भी सुझाव लेकर उनका मंथन किया गया। जन आकांक्षाओं के अनुरूप एवं राष्ट्रीय आवश्यकता और चुनौतियों के अनुरूप राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की घोषणा की गई है।

जहाँ तक वर्तमान की नई शिक्षा नीति की बात है, यह नई शिक्षा नीति भारत के स्वतंत्र होने के बाद से चौथी प्रस्तावित शिक्षा नीति है। अगर हम स्वतंत्र भारत में प्रस्तावित नई शिक्षा नीति की बात करें तो सबसे पहले 1968 में डीएस कोठारी द्वारा पेश किया गया शिक्षा नीति प्रस्ताव में मुख्यतः राष्ट्रभाषा और भारतीय भाषाओं को महत्व दिया गया था तथा तत्कालीन भारत सरकार ने इस पर कुछ परिमाण में अमल किया था तथा बाद में लोक सेवा की परीक्षाओं में भारतीय भाषा वालों को कुछ स्थान मिलना शुरू हुआ था तथा इसी कारण से ग्रामीण एवं कस्बाई क्षेत्रों में विशेष तौर पर हिंदी और अन्य भारतीय भाषा वाले प्रत्यायिशों की हिस्सेदारी बढ़ी। यह कहा जा सकता है कि इस शिक्षा नीति पर 60 के दशक में डॉ. लोहिया के अंग्रेजी हटाओ आंदोलन का अप्रत्यक्ष और अघोषित प्रभाव था। डॉ. लोहिया का नारा था– 'की है अभिलाषा, चले देश में देशी भाषा।' डॉ. लोहिया यह चाहते थे कि राज्यों में क्षेत्रीय भाषाएँ चलें और केंद्र में हिंदी। उसके बाद 1986 में भी एक शिक्षा नीति का दस्तावेज प्रस्तुत हुआ, जबकि तत्कालीन सरकार द्वारा इस पर कोई ठोस कदम नहीं उठाए गए। 1992 में और कुछ संशोधन के साथ शिक्षा नीति का प्रस्ताव सामने आया, परंतु वह भी लागू नहीं हो सका। किंतु 2020 में भारत के श्रेष्ठ वैज्ञानिक कस्तूरीरंगन कमेटी द्वारा प्रस्तावित नई शिक्षा नीति में समय की माँग को ध्यान में रखते हुए प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च से उच्चतर शिक्षा के लिए कई दिशा–निर्देश दिए गए हैं, जो काबिले तारीफ हैं। इसमें जहाँ एक ओर भारतीय भाषाओं में शिक्षा दान को प्रमुखता दी गई है, वहीं शिक्षा को कौशल आधारित करने पर भी जोर दिया गया है। इस शिक्षा नीति में मल्टी डिसिप्लिनरी शिक्षा ग्रहण करने पर विशेष ध्यान दिया गया है। इससे जहाँ शिक्षा ग्रहण के बाद युवा स्व–रोजगार सक्षम बन पाएगा, वहीं देश में बेरोजगारों की संख्या में कमी आ सकेगी। इससे वर्तमान की सरकार के आत्मनिर्भर भारत का सपना भी साकार हो पाएगा।

इस नई शिक्षा नीति में खासकर मातृभाषा में शिक्षा तथा कौशल आधारित शिक्षा को प्रधानता दी गई है। जहाँ तक मातृभाषा में शिक्षा की बात है, एक बच्चा जितना बढ़िया अपनी मातृभाषा में सोच सकता है तथा अभिव्यक्त कर सकता है, उतनी बढ़िया विदेशी भाषा में नहीं। इसलिए नई शिक्षा नीति में प्राइमरी तक की पढ़ाई मातृभाषा में करने पर जोर दिया गया है। नई शिक्षा नीति में मुख्य रूप से मातृभाषा के प्रभाव को समायोजित करके हिंदी भाषा के महत्व को भी शामिल किया गया है। नई शिक्षा नीति, भारतीय जीवन मूल्यों पर आधारित होने के साथ–साथ भारतीय परंपराओं, भारतीय संस्कृति और भारतीय भाषाओं के प्रचार, बहाली और प्रसार पर जोर देती है, जिससे यह भारत को सक्षम, गौरवशाली, आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण

भूमिका निभाती है। सभी समृद्ध भाषा विचारकों का मानना है कि देश की समृद्धि के लिए मूल भाषा का वातावरण बनाना आवश्यक है, जिसमें उच्च गुणवत्ता की शिक्षा सभी भाषाओं में समान रूप से उपलब्ध होनी चाहिए। इस आधार पर एक मजबूत लोकतांत्रिक भारत का निर्माण किया जा सकता है। कुल मिलाकर, हम इसे भारत केंद्रित शिक्षा नीति कह सकते हैं। नई शिक्षा नीति का मुख्य उद्देश्य लोगों को इस बात से अवगत कराना है कि वे तब तक विकास नहीं कर सकते जब तक वे हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं का पूरी तरह से उपयोग नहीं करते। सच्चाई तो यह है कि भारत को आत्मनिर्भर बनाने के लिए कौशल आधारित शिक्षा होनी चाहिए तथा शिक्षा प्राप्ति में मातृभाषा या भारतीय भाषाओं को प्रधानता दी जानी चाहिए।

सर्वविदित है कि शिक्षा मानव जीवन और सामाजिक परिवर्तन की कुंजी है। शिक्षा में परिवर्तन समाज के विकास के लिए अच्छा होना चाहिए, इसलिए अपनी नई दृष्टि के साथ प्रस्तावित नई शिक्षा नीति निश्चित रूप से हमारी शिक्षा प्रणाली में अच्छे बदलाव लाएगी। भारतीय समाज के सर्वांगीण विकास को सुनिश्चित करने की दिशा में यह शिक्षा नीति एक महत्वपूर्ण पहल है। इसका उद्देश्य सभी भारतीय भाषाओं के संरक्षण और विकास को बढ़ावा देना है। नई शिक्षा नीति–2020 का उद्देश्य भारत को एक ज्ञान आधारित समाज में विकसित करना है। दूसरी बात इस लेख के माध्यम से इस ओर भी ध्यान आकृष्ट करना चाहते हैं कि इस शिक्षा नीति में शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण बनाने के लिए हर प्रकार की बात तो की गई है, किंतु पाँचवीं कक्षा तक की शिक्षा मातृभाषा में देने का प्रावधान है, परंतु ध्यातव्य है कि यहाँ सिर्फ भाषा का प्रावधान है, मीडियम का नहीं। हमारे देश में इस कदर निजी शिक्षानुष्ठान कुकुरमुत्ते की तरह फैल गए हैं कि उनके शिक्षादान का माध्यम अंग्रेजी ही है। सच्चाई तो यह है कि देश में जब तक शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही रहेगी, तब तक यहाँ अंग्रेज़ीयत की गुलामी ही रहेगी। 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' की तरह जेबों में नोटों का बंडल रख सकने वाले अभिभावकों के बच्चे ही इससे ज्यादा सफल हो सकेंगे। शिक्षा नीति कुछ भी बनाई जाए, जब तक इसमें भारतीय संवेदना को शामिल नहीं किया जाएगा, तब तक यह नीति सिर्फ कागजी दस्तावेज ही बन कर रह जाएगी। सही मायने में हमारी भारतीय ऋषि परंपरा में शिक्षा का जो उद्देश्य है, उसे अगर हमारे देश के राजनीतिक कर्णधार प्राप्त करना चाहते हैं, तो उन्हें इस पर और सोच विचार करना होगा।

उपरोक्त चर्चा के उपरांत निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि शिक्षा का उद्देश्य वर्तमान समय में शिक्षार्थी के सर्वांगीण विकास पर केंद्रित है। आज के शिक्षाविद मानते हैं कि एक शिक्षार्थी की अंतर्निहित शक्तियों को उजागर करना उसको बाहर निकालना और शिक्षार्थी का सर्वांगीण विकास अर्थात मानसिक, शारीरिक, भौतिक आदि सभी प्रकार से शिक्षार्थी को संपन्न, सशक्त बनाना ही शिक्षा का उद्देश्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

2. नई शिक्षा नीति : एक विश्लेषण, रघु ठाकुर, स्वतंत्र वार्ता, 2 सितंबर, 2020

3. www-hindivibhag-com से प्राप्त जानकारी के आधार पर

– अध्यक्ष, हिंदी विभाग, एवी कॉलेज ऑफ आर्ट्स, साइंस एंड कॉमर्स, दोमलगुड़ा, हैदराबाद–500029

❑❑❑

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का भाषाई संदर्भ

डॉ. जयंत कर शर्मा

ज्ञान प्राप्त करने का माध्यम भाषा ही होती है। ज्ञान और शिक्षा सह–संबंधित हैं। शिक्षा के लिए उचित योजना और नीति की आवश्यकता होती है। शिक्षा वह है जो बहुभाषी राष्ट्र में बहुभाषावाद और राष्ट्रीय एकता को ले जाने का एक अच्छा साधन है। भारत जैसे एक बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक देश में मुख्य समस्या यह तय करना है कि किस भाषा को अनुदेश के माध्यम के रूप में इस्तेमाल किया जाए। शिक्षा नीति किसी भी राष्ट्र की बुनियादी आवश्यकता है, जो अतीत के विश्लेषण, वर्तमान की आवश्यकता और भविष्य की संभावनाओं को संज्ञान में रखकर तय की जाती है। भारतीय समाज के सर्वांगीण विकास को सुनिश्चित करने की दिशा में शिक्षा नीति एक महत्वपूर्ण पहल है। इसका उद्देश्य सभी भारतीय भाषाओं के संरक्षण और विकास को बढ़ावा देना है। यह पहली बार हुआ कि शिक्षा नीति में भारतीय लोगों के हितों को ध्यान में रखते हुए प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम चुना गया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुच्छेद 4.11 से 4.22 तक भाषा के मुद्दों को इस दस्तावेज़ के शीर्षक 'बहुभाषिकता और भाषा की शक्ति' के तहत बहुत सावधानी से प्रस्तुत किया गया है। शिक्षा में विलक्षणता का समावेश लुप्तप्राय भाषाओं को नया जीवन देगा और बच्चों को उनकी संस्कृति से जोड़े रखने में मदद करेगा। बेशक, इससे छात्रों की रचनात्मक क्षमता में गुणात्मक वृद्धि होगी। भारत की सांस्कृतिक और सामाजिक भव्यता मूल भाषा यानी मातृभाषा में निहित है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में प्राथमिक शिक्षा के माध्यम के लिए मातृभाषा या वर्नाक्यूलर के उपयोग पर जोर दिया गया है, जिसका उद्देश्य बच्चों को उनकी मातृभाषा और संस्कृति से जोड़कर शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ाना है। इस बहुभाषी समाज को संरक्षित करने के लिए यह आवश्यक है कि बच्चों को स्कूली शिक्षा से लेकर कॉलेज और विश्वविद्यालय की शिक्षा तक बहुभाषिक दक्षता सीखने का अवसर मिले। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में स्कूल स्तर से बहुभाषिकता को बढ़ावा देने के लिए तीन–भाषा के फार्मूले को जल्द लागू करने का प्रस्ताव है। यह शिक्षा नीति मातृभाषा और भारतीय भाषाओं को सशक्त बनाने के लिए एक जीवंत दस्तावेज है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की घोषणा सार्वजनिक आकांक्षाओं और राष्ट्रीय आवश्यकताओं और चुनौतियों के अनुसार की गई है। देश में पहली बार मशीन डॉक्यूमेंटेशन, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और अनुवाद में तकनीक के इस्तेमाल पर जोर दिया गया है तथा भारतीय भाषाओं, शास्त्रीय भाषाओं और संस्कृत के अध्ययन पर भी जोर दिया गया है। यह एक सुविचारित और सुनियोजित नीति है। शिक्षा प्रणाली के चार प्रमुख आयाम–छात्र, शिक्षक, पाठ्यक्रम और ढाँचागत सुविधाएँ, इन चारों को ध्यान में रखते हुए, नई शिक्षा नीति व्यापक संभावनाओं के साथ दिखाई देती है। यदि हम नीतिगत स्तर पर

समग्रता में समझने की कोशिश करते हैं, तो भाषा–बहुभाषावाद, भाषा–शिक्षा–शिक्षण आदि पर विशेष जोर दिया गया है। भारत में कुछ किलोमीटर पर भाषाई विविधताओं के दर्शन होते हैं। इस बहुभाषी समाज को बचाए रखने के लिए ज़रूरी है कि बच्चों को स्कूली शिक्षा से लेकर कॉलेज और विश्वविद्यालयी शिक्षा में बहुभाषाई दक्षता को सीखने का अवसर मिले। राष्ट्रीय शिक्षा नीति से आत्मनिर्भर भारत के विकास में सुधार करने में मदद मिलेगी।

केंद्र सरकार ने डॉ. के. कस्तूरीरंगन के नेतृत्व में गठित कमेटी की अनुशंसा पर 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020' को स्वीकार करते हुए प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्चतर शिक्षा तक में बड़े बदलाव का रोडमैप प्रस्तुत किया है। इस नीति के संदर्भ में केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने आरंभ में ही भारत द्वारा 2015 में अपनाए गए "सतत विकास एजेंडा 2030" के लक्ष्य–4 (एसडीजी–4) में परिलक्षित वैश्विक शिक्षा विकास एजेंडा के अनुसार विश्व में 2030 तक 'सभी के लिए समावेशी और समान गुणवत्तायुक्त शिक्षा सुनिश्चित करने और जीवनपर्यंत शिक्षा के अवसरों को बढ़ावा दिए जाने' का लक्ष्य निर्धारित किया है।" (राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 पृष्ठ सं.3) यह शिक्षा नीति 34 वर्षों के लंबे इंतजार के बाद आई है। स्वभावतः इसे लेकर लोगो में कुछ अधिक उम्मीदें हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 पिछली दो नीतियों की तुलना में अत्यंत महत्वाकांक्षी व दूरगामी परिणामों की सफलता की उम्मीदें लेकर आई है। आज़ादी के बाद यह पहला राष्ट्रीय प्रयास है, जिसमें भारतीय भाषाओं के बारे में समग्रता से विचार किया गया है तथा भाषा की शक्ति को अहमियत दी गई है। नीति में भाषा की प्रमुखता को इस बात से समझा जा सकता है कि 66 पृष्ठ के इस प्रारूप में 206 बार भाषा शब्द आया है, जिनमें से 126 बार बहुवचन के रूप में और 80 बार एकवचन के रूप में। बहुवचन से यहाँ इस बात का द्योतक है कि इस प्रारूप में किसी एक भाषा और संस्कृति की बात न करके सभी भारतीय भाषाओं पर केंद्रित बहुलता पर ज़ोर दिया गया है। भाषाएँ हमारे समाज को जोड़ने में एक मजबूत सूत्र के रूप में अपनी भूमिका निभाती हैं। अध्ययन–अध्यापन की प्रक्रिया में भाषा का विशेष महत्व होता है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था अंग्रेजी के वर्चस्व को बढ़ावा देती है, जिससे बालक के व्यक्तित्व का विकास बाधित होता है और उसके सीखने की गति भी धीमी रहती है। मनोविज्ञान के अनुसार बालक अपनी मातृभाषा अथवा क्षेत्रीय भाषा में सरलता एवं शीघ्रता से सीखता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए नई शिक्षा नीति में भाषाई विविधता को बढ़ावा और संरक्षण देने की बात कही गई है। नई शिक्षा नीति में निचले स्तर की पढ़ाई के माध्यम के लिए मातृभाषा अथवा स्थानीय भाषा के प्रयोग पर ज़ोर दिया गया है जिसका उद्देश्य बच्चों को उनकी मातृभाषा और संस्कृति से जोड़े रखते हुए उन्हें शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ाना है। छोटे बच्चे घर में बोली जाने वाली मातृभाषा (घर की भाषा) या स्थानीय भाषा में जल्दी सीखते हैं, यदि स्कूल में भी मातृभाषा का प्रयोग होगा तो इसका ज़्यादा प्रभाव होगा और वे जल्दी सीख पाएँगे और उनका ज्ञान भी बढ़ेगा।

भारत सरकार द्वारा प्रस्तुत राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 सभी भारतीय भाषाओं के लिए उम्मीद की किरण लेकर आई है। इस दस्तावेज के 'बहुभाषावाद और भाषा की शक्ति' शीर्षक के अंतर्गत पैरा 4.11 से 4.22 तक भाषा के मुद्दे को बहुत ही सावधानी से प्रस्तुत किया गया है। इसके अंतर्गत पैरा 4.11 में इस बात को स्वीकार किया गया है कि छोटे बच्चे घर की भाषा/मातृभाषा में सार्थक अवधारणाओं को अधिक तेजी से सीखते हैं और समझ लेते हैं। अतः जहाँ तक संभव हो, कम से कम ग्रेड 5 तक लेकिन बेहतर यह होगा कि यह ग्रेड 8 और उससे आगे तक भी, शिक्षा का माध्यम घर की भाषा/मातृभाषा/स्थानीय भाषा/क्षेत्रीय भाषा होगी। इसके बाद, घर/स्थानीय भाषा को जहाँ भी संभव हो भाषा के रूप में पढ़ाया जाता रहेगा। सरकारी और निजी दोनों तरह के स्कूल इसका अनुपालन करेंगे। यह नई शिक्षा नीति की सबसे बड़ी उपलब्धि है। यही वह अवस्था होती है जब बच्चों में ग्रहण क्षमता सर्वाधिक होती है। इस दौरान शिक्षा का माध्यम मातृभाषा अर्थात

घर की भाषा या स्थानीय भाषा अथवा क्षेत्रीय भाषा में निर्धारित किया है। इसके दूरगामी परिणाम होगें एवं हमारी राष्ट्रीय भावना भी मजबूत होगी। आज अंग्रेजी सीखने में जो वक्त लग रहा है वह वक्त ज्ञान के विस्तार में विनियोग किया जा सकेगा। अतः आरंभिक दौर में सरकारी व निजी विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम बदलने से बहुत ही सकारात्मक परिणाम निकलेगें। पैरा 4.13 में यह पुनः स्पष्ट कर दिया गया है कि किसी भी राज्य पर कोई भाषा थोपी नहीं जाएगी। शिक्षा–मनोविज्ञान और भाषाई संवर्धन की दृष्टि से मातृभाषा या प्रथम भाषा में न्यूनतम कक्षा पाँच तक की पढ़ाई का प्रस्ताव, सन् 2030 तक समावेशी और समान गुणवत्ता वाली शिक्षा सुनिश्चित करना और सभी के लिए आजीवन सीखने के अवसरों को बढ़ावा देना; जैसे लक्ष्यों को पाने के लिए ऐसे प्रस्ताव महत्वपूर्ण हो सकते हैं। नीति के प्रारूप में भाषा शिक्षण, सीखने–सिखाने और बहुभाषा को संरक्षित करने पर जोर दिया गया है। बच्चों में भाषाई कौशल ख़ासकर मौखिक और लिखित संवाद दक्षता को विकसित करने के लिए स्कूलों में साल भर मेले का आयोजन करने का प्रस्ताव है ताकि बच्चों में भाषा और साहित्य के प्रति रुचि बढ़ सके। भाषा के चुनाव में लचीलापन रखा गया है। बच्चों को भाषा सीखने–सिखाने के लिए भाषाई माहौल प्रदान करने के लिए भी प्रारूप में प्रावधान है।

बहुभाषी समाज में हमारी मातृभाषा के अलावा क्षेत्र और राज्य की भाषाएँ भी शामिल हैं, जिसके अभाव में हम एक बेहतर भाषाई परिवार की कल्पना नहीं कर सकते। देश में भाषाओं के भी कई स्तर हैं, जिसमें राजभाषा, शास्त्रीय भाषा, आठवीं अनुसूची की भाषाएँ आदि। लेकिन संकटग्रस्त भाषा की बात समेकित रूप में नीतिगत दस्तावेज़ में पहली बार सामने आई है, जिसमें यूनेस्को द्वारा घोषित 197 भाषाओं की चर्चा के साथ लिपिहीन और संकटग्रस्त भाषाओं के संरक्षण एवं संवर्धन की चिंता भी शामिल है। वस्तुतः भारत सरकार का यह पहला नीतिगत दस्तावेज है जिसमें संकटग्रस्त भाषाओं की बात इतनी गंभीरता से उठाई गई है। इस शिक्षा नीति में इस बात का स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि सरकार विलुप्त हो रही भाषाओं के प्रति तो चिंतित है ही, साथ ही साथ वह उन भाषाओं के प्रति भी संवेदनशील है जिनको संकटापन्न भाषा की श्रेणी में तो नहीं रखा जा सकता लेकिन उनकी भी कम समस्याएँ नहीं हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के पैरा 22.4 में भाषा को कला एवं संस्कृति से जोड़ते हुए भाषाओं के महत्व पर चर्चा की गई है। साथ ही संस्कृति के सरंक्षण, संवर्धन एवं प्रसार के लिए बल दिया जाना एक सराहनीय कदम है। पैरा 22.5 में भारत में भाषाओं के विलुप्त होने पर चिंता व्यक्त की गई है। प्रसन्नता की बात है कि आठवीं अनुसूची सहित सभी भाषाओं को शिक्षण एवं अध्ययन की दृष्टि से विकसित किए जाने पर इस शिक्षा–नीति में प्रावधान हैं। इसमें उच्च गुणवत्ता की मुद्रण–सामग्री के निर्माण के साथ पाठ्य .पुस्तकें, वीडियो–निर्माण, नाटक, कहानी, कविताएँ, कोश, उपन्यास, पत्रिकाएँ, वेब–सामग्री आदि के सृजन एवं प्रसार पर ज़ोर दिया गया है, साथ ही शब्द–संपदा को अनवरत अद्यतन करने और उनके प्रसार का प्रस्ताव है। इस दस्तावेज़ के अध्याय 22 में तय किया गया है कि भाषा–शिक्षकों को विशेष प्रशिक्षण प्रदान किया जाएगा। इस अध्याय में जिक्र है कि उच्च शिक्षा संस्थानों में भाषा–संकाय की स्थापना की जाएगी जिनकी जिम्मेदारी होगी कि भाषा–शिक्षकों को प्रशिक्षण प्रदान करें। यहाँ प्रशिक्षित शिक्षक देश के विभिन्न स्कूलों में अपनी सेवाएँ देंगे। भाषा शिक्षकों की पेशेवर माँग का भी इस दस्तावेज़ में उल्लेख किया गया है। भारतीय भाषाओं के शिक्षकों की माँग देशभर में बढ़ेगी। इससे शिक्षकों को रोजगार भी मिलेगा। बच्चों में भाषाई कौशल ख़ासकर मौखिक और लिखित संवाद दक्षता को विकसित किया जा सकेगा। इस दस्तावेज़ के अनुसार तमाम भारतीय भाषाओं के विकास और संरक्षण को बढ़ावा दिया जाएगा। इसके तहत उच्च शिक्षा संस्थानों में शास्त्रीय भारतीय भाषाओं और साहित्य को आगे बढ़ाने के लिए विशेष योजनाएँ बनाई जाएँगी। पालि, प्राकृत व फारसी भाषाओं के लिए एक राष्ट्रीय संस्थान स्थापित किया जाएगा। समग्रता में समझने की कोशिश करें तो नीति के स्तर पर बहुभाषिकता,

भाषा–शिक्षा–शिक्षण आदि पर विशेष बल दिया गया है। योजना, नीति आदि के स्तर पर देखें तो यह दस्तावेज़ एक सकारात्मक स्वरूप में नज़र आता है। बालक जिस भाषा के माध्यम से सबसे पहले अपनी माता, परिवार और परिवेश से संवाद करता है उसी में यदि वह पहले कुछ वर्षों तक शिक्षा प्राप्त करे तो उसका मानसिक विकास बेहतर होगा। शिक्षण के संदर्भ में 'माध्यम' और 'विषय' दो अलग–अलग मुद्दे हैं। नई शिक्षा नीति ने प्राथमिक शिक्षा के लिए मातृभाषा के माध्यम का प्रावधान किया है और एक विषय के रूप में 'अंग्रेजी' का पठन–पाठन त्याज्य नहीं माना है। सोशल मीडिया और ई–लर्निंग के युग में यह संभव भी नहीं कि कोई अंग्रेजी से बिलकुल अछूता रह जाए। आगे जाकर वह अपनी आवश्यकतानुसार इसे सीख सकता है। इसकी व्यवस्था का दायित्व भी शिक्षा–नीति में यथास्थान कर दिया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में बहुभाषिकता पर जोर देने के साथ ही स्कूली शिक्षा प्रणाली में जिस किस्म के बदलाव प्रस्तावित हैं, उसमें विद्यार्थियों के बहुआयामी व्यक्तित्व के उभरने की संभावना है। इस संदर्भ में यह दस्तावेज आधुनिक भारत के नव निर्माण तथा इक्कीसवीं सदी के अनुरूप भारतीय शिक्षा प्रणाली के उन्नयन की दिशा में एक व्यवस्थित एवं व्यावहारिक प्रयास है। प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा बच्चों के सर्वांगीण विकास को ध्यान में रखकर शिक्षा नीति में शामिल किया गया है। प्राथमिक स्तर की शिक्षा के माध्यम के रूप में अंग्रेज़ी की अनिवार्यता को खत्म करने तथा भारतीय भाषाओं के व्यापक प्रयोग से बुनियादी शिक्षा में दूरगामी परिणाम देखने को मिलेंगे। इससे देशी भाषाओं की उन्नति का मार्ग प्रशस्त होने के साथ–साथ भारतीयता व राष्ट्रीय एकता की भावना के विकास में काफी मदद मिलेगी। मातृभाषा और भारतीय भाषाओं के जरिए शिक्षा प्राप्ति से जीविकोपार्जन की संभावनाएँ बढ़ेगी तथा आत्मविश्वास से संपन्न भावी पीढ़ी के निर्माण में हम सफल होंगे।

मातृभाषा अथवा क्षेत्रीय भाषा ही अपने सामाजिक मूल्यों तथा ज्ञान को प्रारंभिक शिक्षा के माध्यम से नई पीढ़ी के समक्ष संपूर्ण गूढ़ता में व्यक्त कर सकती है। इस प्रकार अगर कोई भाषा किसी क्षेत्र अथवा समाज विशेष का प्रतिनिधित्व करती है तो उस समाज की पृष्ठभूमि से आए किसी भी बच्चे के लिए अपनी भाषा में बुनियादी शिक्षा को नवीनता से समझने में आसानी होगी। विश्व के कई प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक, शिक्षाविद् तथा मनोवैज्ञानिकों ने, जैसे स्टीवन पिंकर, नोआम चोमस्की, पिटर ट्रडगिल आदि ने अपने शोध के माध्यम से यह स्पष्ट कर दिया है कि मातृभाषा अथवा विद्यार्थी के समाज की सबसे निकटतम भाषा ही प्रारंभिक शिक्षा के लिए सबसे उपयुक्त है। परंतु इन भाषाओं को शिक्षानुकूल बनाने के लिए संरचनात्मक एवं संकल्पनात्मक स्तर पर सुदृढ़ करने की नितांत आवश्यकता है। इसके साथ ही भारतीय भाषाओं के शैक्षणिक प्रयोग के साथ ही शिक्षण की गुणवत्ता को सुधारने हेतु नई शिक्षा नीति ने कई उपाय सुझाए हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 स्कूल स्तर से "बहुभाषावाद को बढ़ावा देने के लिए तीन–भाषा के फार्मूले के शीघ्र कार्यान्वयन" का प्रस्ताव करता है। दस्तावेज़ में कहा गया है कि तीन–भाषा फार्मूले को "संवैधानिक प्रावधानों, लोगों, क्षेत्रों और संघ की आकांक्षाओं को ध्यान में रखते हुए, और बहुभाषावाद को बढ़ावा देने के साथ–साथ राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने की आवश्यकता" पर लागू किया जाएगा। हालाँकि, दस्तावेज यह भी कहता है, तीन–भाषा फॉर्मूला में अधिक लचीलापन होगा, और किसी भी राज्य पर कोई भाषा थोपी नहीं जाएगी। शिक्षा नीति यह भी बताती है कि कई छात्र दूसरे राज्यों से आते हैं और क्षेत्रीय या स्थानीय भाषा नहीं जानते हैं। ऐसे में भाषा की विविधता और बहुसंस्कृतिवाद को बढ़ावा देने के लिए इसका प्रयास निरर्थक हो सकता है। तीन भाषाओं में से कम से कम दो भारतीय मूल की होनी चाहिए। पहली भाषा मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा होगी। दूसरी भाषा हिंदी भाषी राज्यों में यह अन्य आधुनिक भारतीय भाषा या अंग्रेज़ी होगी। गैर–हिंदी भाषी राज्यों में यह हिंदी या अंग्रेज़ी होगी। तीसरी भाषा हिंदी भाषी राज्यों में यह अंग्रेज़ी

या एक आधुनिक भारतीय भाषा होगी। गैर–हिंदी भाषी राज्य में यह अंग्रेज़ी या कोई एक आधुनिक भारतीय भाषा होगी। उदाहरण के तौर पर यदि ओड़िशा में एक विद्यार्थी ओड़िया और अंग्रेजी सीख रहा है, तो उसे दूसरी भारतीय भाषा सीखने के लिए चुनना होगा। मसौदा यह भी बताता है कि तीन भाषाओं के फॉर्मूले के तहत, उन राज्यों में हिंदी पढ़ाना/सीखना अनिवार्य होगा, जहाँ आमतौर पर हिंदी नहीं बोली जाती है। तमिलनाडु जैसे गैर–हिंदी भाषी राज्यों के विरोध के बाद, केंद्र ने हिंदी के अनिवार्य सीखने के संदर्भ को छोड़ दिया। भाषाओं की पसंद राज्य और छात्रों पर निर्भर करेगी। हालाँकि, देश के मूल निवासी होने के लिए तीन भाषाओं में से कम से कम दो का होना अनिवार्य है– जिनमें से एक स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा होने की सबसे अधिक संभावना है। दस्तावेज भारत की भाषाई विविधता को मान्यता देता है। बहुभाषावाद और द्विभाषी शिक्षा के महत्व और भारतीय भाषाओं में क्षमता निर्माण की आवश्यकता को स्वीकार करता है। घर की भाषा, मातृभाषा और स्थानीय भाषा आदि शब्दों का उपयोग इसीलिए रखा गया है ताकि बदली जा सके। तीनों, वास्तव में, एक–दूसरे के समान या विकल्पों के रूप में देखे जाते हैं। घर की भाषा, या किसी बच्चे के घर पर जो बोली जाती है, वह 'मातृभाषा' या 'स्थानीय भाषा' में रूपांतरित हो जाती है, क्योंकि नीति उन्हें अलग करने के लिए कोई प्रयास नहीं करती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति बहुभाषिक संस्कृति को बढ़ावा देती है। यह बहुभाषावाद को एक वरदान और एक बोझ के बजाय एक क्षितिज को सीखने और विस्तारित करने का अवसर मानता है। नई शिक्षा नीति–2020 का उद्देश्य भारत को एक ज्ञान आधारित समाज में विकसित करना है। समिति की रिपोर्ट के अनुसार, भाषा सीखना बच्चे के संज्ञानात्मक विकास का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। इसका प्राथमिक उद्देश्य बहुभाषिकता और राष्ट्रीय सद्भाव को बढ़ावा देना है।

नई शिक्षा नीति भारतीय अनुवाद और व्याख्या संस्थान की संकल्पना को लेकर आई है, जिसके तहत ज्ञान–विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों से अनुवाद और उनकी नई व्याख्या करने का कार्य सुगमता से हो सके। नई शिक्षा नीति में इस बात पर भी जोर दिया गया है कि सभी भाषाओं के शिक्षण को नवीन और अनुभवात्मक विधियों के माध्यम से समृद्ध किया जाएगा और भाषाओं के सांस्कृतिक पहलुओं जैसे कि फिल्म, थिएटर, कथावाचन, काव्य और संगीत को जोड़ते हुए इन्हें सिखाया जाएगा। अधिक उच्चतर शिक्षण संस्थानों तथा उच्च शिक्षा के स्तर पर विविध कार्यक्रमों में माध्यम के रूप में मातृभाषा/स्थानीय भाषा का उपयोग किया जाए अथवा इन कार्यक्रमों को द्विभाषिक रूप में चलाया जाए यह निर्देश भी अपने आप में एक बड़ा कदम है। इससे भारतीय भाषाओं को मजबूती मिल सकेगी। इसके लिए 'इंस्टिट्यूट ऑफ ट्रांसलेशन और इंटरप्रीटेशन (आई आई टी आई)' की स्थापना की बात भी कही गई है। देश के कला, इतिहास एवं परंपरा आदि पर बेहतर शिक्षण एवं शोध की संभावना को देखते हुए भारतीय शास्त्रीय भाषाओं {तमिल(2004), संस्कृत(2005), कन्नड(2008), तेलुगु (2008), मलयालम(2013), एवं ओड़िया(2014)} से जुड़ीं संस्थाओं को विभिन्न विश्वविद्यालयों से जोड़ने का सुझाव दिया गया है। इसके अलावा पालि, प्राकृत एवं फारसी भाषाओं के लिए नए संस्थान बनाने पर भी ज़ोर दिया गया है 'फारसी, पालि और प्राकृत के लिए राष्ट्रीय संस्थान (या संस्थान)' स्थापित करने के साथ उच्च शिक्षण संस्थानों में भाषा विभाग को मज़बूत बनाने एवं उच्च शिक्षण संस्थानों में अध्यापन के माध्यम के रूप में मातृभाषा/ स्थानीय भाषा को बढ़ावा दिए जाने का सुझाव दिया है। भाषा और कला संस्कृति आदि को इस तरह से इस नई शिक्षा नीति में समावेशित किया गया है कि विद्यार्थी स्वयं के सृजनात्मक, कलात्मक, सांस्कृतिक एवं अकादमिक आयामों का विकास कर सकें। यदि भाषा संबंधी इन संकल्पों और प्रावधानों को आने वाले समय में प्रामाणिकता के साथ लागू किया गया तो भारतीय भाषाओं को अपने खोये हुए गौरव के चिह्नों और सूत्रों को समेटने में बड़ी सहायता मिलेगी। भारत द्वारा लागू की गई नई शिक्षा नीति में दुनिया की संस्कृति को सीखने के इच्छुक विद्यार्थी कोरियन,

जापानी, थाई, फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश, पुर्तगाली और रूसी भाषा में से किसी का भी चुनाव कर सकते हैं।

भारत सरकार की नई शिक्षा नीति 2020 में संस्कृत को विशेष महत्व दिया गया है। संस्कृत, जिसे कुछ लोग मृत मानते हैं, भारत की क्षेत्रीय भाषाओं में आज भी उसके शब्द तत्सम/तद्भव और अपभ्रंश रूप में जीवित है। संस्कृत स्वयं में समृद्ध भाषा है, जिसे जन–जन तक पहुँचाने की आवश्यकता है। संस्कृत के उज्ज्वल भविष्य के लिए केंद्र सरकार के उठाए गए महत्वपूर्ण कदम सराहनीय हैं। भारत में जितनी भी मातृभाषाएँ हैं, सभी में संस्कृत का कुछ न कुछ अंश अवश्य पाया जाता है। हम विभिन्न भाषाओं में संस्कृत शब्दों का प्रयोग करते हैं। संस्कृत और अन्य क्लासिकल भाषाओं को हाशिए से केंद्र में लाकर इस नीति ने 'भारतीय लिंगुइस्टिक एरिया' को नई अर्थवत्ता प्रदान की है। दस्तावेज़ के अनुसार, "संस्कृत, भारत की संविधान की आठवीं अनुसूची में उल्लिखित एक महत्वपूर्ण आधुनिक भाषा, के पास एक शास्त्रीय साहित्य है, जो लैटिन और ग्रीक की तुलना में मात्रा में अधिक है, जिसमें गणित, दर्शन, व्याकरण, संगीत के विशाल खजाने हैं। राजनीति, चिकित्सा, वास्तुकला, धातु विज्ञान, नाटक, कविता, कहानी, और अधिक ('संस्कृत ज्ञान प्रणाली' के रूप में जानी जाती है), विभिन्न धर्मों के लोगों के साथ–साथ गैर–धार्मिक लोगों द्वारा और जीवन के सभी क्षेत्रों के लोगों द्वारा लिखित और हजारों वर्षों में सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि की एक विस्तृत शृंखला है"। भाषाएँ ही नहीं, इस नीति में बोलियों को भी महत्व दिया गया है। इन्हें शिक्षण का माध्यम बनाने पर भी बल है। समृद्ध मौखिक और लिखित साहित्य, सांस्कृतिक परंपरा और ज्ञान रखने वाली सभी भारतीय भाषाओं के लिए इसी तरह के प्रयास किए जाएँगे। बधिर छात्रों के लिए राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर पाठ्यक्रम सामग्री विकसित की जाएगी तथा भारतीय संकेत भाषा को पूरे देश में मानकीकृत किया जाएगा।

भाषा और संस्कृति का चोली दामन का साथ है। भाषा जब आती है तो अपनी संस्कृति साथ लेकर आती है और जब जाती है तो अपनी संस्कृति भी साथ लेती जाती है। भारतीय संस्कृति एवं संस्कारों के अनुरूप नई शिक्षा नीति की आवश्यकता लंबे समय से महसूस की जा रही थी और इस बात की भी आवश्यकता महसूस की जा रही थी कि इस शिक्षा में भारतीय भाषाओं और विशेषतः हिंदी को महत्व मिले। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, भारतीय जीवन मूल्यों पर आधारित होने के साथ–साथ, भारतीय परंपराओं, भारतीय संस्कृति एवं भारतीय भाषाओं को प्रोत्साहन, पुनर्स्थापन एवं प्रसार पर जोर देती है, जिससे यह भारत को समर्थ, गौरवशाली, आत्मनिर्भर बनाने में निश्चय ही प्रमुख भूमिका निभाएगी। भारत की आत्मनिर्भरता में सबसे बड़ी बाधा अंग्रेज़ी है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मुख्य उद्देश्य लोगों को इस बात से रूबरू कराना है कि जब तक वे हिंदी समेत सभी भारतीय भाषाओं का उपयोग पूरी तरह से नहीं करेंगे तब तक उनका विकास नहीं हो सकता है, उसे राष्ट्रीय गौरव प्राप्त नहीं हो सकेगा। भारतीय राष्ट्रीयता का आधार इसकी सामासिक संस्कृति है जिसकी निरंतरता भारत की भाषाओं से है। इसलिए संघ व राज्यों की भाषाओं का अनिवार्य शिक्षण देश की एकता अखंडता की दृष्टि से भी आवश्यक है। देश–दुनिया के सभी विचारकों व शिक्षाविदों का यह मानना है कि मातृभाषा में शिक्षा व्यक्ति के विकास के लिए सर्वश्रेष्ठ है। सभी समृद्ध भाषा विचारकों ने यह माना है कि देश की समृद्धि हेतु देशी भाषा का वातावरण तैयार करना आवश्यक है जिसमें सभी को उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा स्वभाषा में समान रूप से उपलब्ध होनी चाहिए। मातृभाषा का इसमें अप्रतिम महत्व है। एक मजबूत लोकतांत्रिक भारत इसी आधार पर निर्मित हो सकता है। कुल मिलाकर इसे हम भारत केंद्रित शिक्षा नीति कह सकते हैं ।

भाषाई विमर्श कहीं न कहीं हमें अपनी भाषा–बोली–बानी से जोड़ती है। हमें एक ऐसे बहुभाषी समाज का हिस्सा बनाती है जहाँ भाषाओं की छटाएँ पग–पग पर सुनने, बोलने और पढ़ने को मिलती हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि बहुभाषी समाज में जीने वाले व्यक्ति की अभिव्यक्ति क्षमता

उसके जीवन के हर क्षेत्र में देखी और सुनी जा सकती है। इस बहुभाषी समाज को बचाए रखने के लिए ज़रूरी है कि बच्चों को स्कूली शिक्षा से लेकर कॉलेज और विश्वविद्यालयी शिक्षा में बहुभाषाई दक्षता को सीखने का अवसर मिले। समग्रता में समझने की कोशिश करें तो नीति के स्तर पर भाषा–बहुभाषिकता, भाषा–शिक्षा–शिक्षण आदि पर विशेष बल दिया गया है। हालाँकि भाषा–शिक्षण इस नीति का एक पक्ष है। इसके अलावा पेशेवर शिक्षक तैयार करना और उन्हें अपने पेशे में आगे ले जाने, उनकी कार्य–दक्षता, प्रोफेशनल डेवलपमेंट जिसे सतत पेशेवर विकास कार्यक्रम से जोड़कर और बेहतर शिक्षक बनाने की योजनाएँ हैं। योजना, नीति आदि के स्तर पर यह दस्तावेज पूर्ण नज़र आता है।

शिक्षा मानव जीवन और सामाजिक परिवर्तन की कुंजी है। शिक्षा में परिवर्तन समाज के विकास के लिए अच्छा होना चाहिए, इसलिए अपनी नई दृष्टि के साथ राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 निश्चित रूप से हमारी शिक्षा प्रणाली में अच्छे बदलाव लाएगी। भारतीय समाज के सर्वांगीण विकास को सुनिश्चित करने की दिशा में शिक्षा नीति एक महत्वपूर्ण पहल है। भारतीय भाषाओं को शामिल करने का एक उद्देश्य उन्हें बचाना और मजबूत करना भी है। शिक्षा में विलक्षणता का समावेश लुप्तप्राय भाषाओं को नया जीवन देगा और बच्चों को उनकी संस्कृति से जोड़े रखने में मदद करेगा। नई शिक्षा नीति आत्मनिर्भर भारत के विकास में योगदान करने में मदद करेगी। प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा पर नीति का जोर सामाजिक कार्य और मानव एजेंसी के बीच संबंध को मजबूत करने में मदद करना है। एक व्यक्ति जो अपनी मातृभाषा से जुड़ा रहता है, वह स्थानीय उत्पादों के महत्व को भी महसूस कर सकता है। वास्तव में, आत्मनिर्भर भारत के निर्माण का मूल घटक पूरी तरह से जागरूक होने और स्वदेशी संस्कृति और समाज की सराहना करने में निहित है जिसे हमारी अपनी भाषा के साथ रिश्तों को फिर से बनाने से प्राप्त किया जा सकता है। भारत एक बहुभाषिक देश है और इस बहुभाषिकता से न्याय करना इस राष्ट्रीय नीति का एक बहुत बड़ा उद्देश्य है। शिक्षा नीति भारतीय समाज का चतुर्दिक् विकास सुनिश्चित करने की दिशा में महत्वपूर्ण पहल है। इसका उद्देश्य सभी भारतीय भाषाओं के संरक्षण और विकास को बढ़ावा देना है। ऐसा पहली बार हुआ कि शिक्षा नीति में भारतीय जन की अभिरुचिओं को ध्यान में रखकर प्राथमिक स्तर पर शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को बनाया गया। इसके साथ ही शिक्षा प्रणाली में भारतीय भाषाओं को शामिल करने का एक उद्देश्य उन्हें सहेजना और मजबूत बनाना है। शिक्षा में स्थानीय भाषा शामिल करने से लुप्त हो रही भाषाओं को नया जीवनदान मिलेगा और बच्चों को अपनी संस्कृति से जोड़े रखने में मदद मिलेगी। निस्संदेह, इससे विद्यार्थियों की सृजनात्मक क्षमता में गुणात्मक अभिवृद्धि होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020; एक सिंहावलोकन, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार , नई दिल्ली

3. National Education Policy 2020, Ministry Of Human Resource Development, Government of India, New Delhi- 2020

– एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, गवर्नमेंट विमेंस कॉलेज, संबलपुर, ओड़िशा

❑❑❑

आखिर पूर्व प्राथमिक शिक्षण में सिखाना क्या है?

हरिराम

जो देश जितना विशाल होता है उस देश का भौगोलिक, सामाजिक व आर्थिक परिवेश उतना ही विस्तृत और बहुसंख्यक होता है। अतः एक विशाल देश को सुदृढ़ बनाने और भविष्योन्मुखी विकास करने हेतु शिक्षा की महती आवश्यकता होती है। भारत भी एक विशाल देश है, विश्व में बढ़ती तकनीक और विज्ञान की इस 21वीं सदी में हमने अपनी शिक्षा की नीति को बदलने की महती आवश्यकता महसूस की है। नई शिक्षा नीति पूर्व प्राथमिक स्तर पर बच्चों के सर्वांगीण विकास पर ध्यानाकर्षण करते हुए बच्चों की एकाग्रता की अवधि और खेल–खेल में शिक्षण को प्रभावी बनाए जाने पर केंद्रित है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का भारत सरकार की ओर से ड्राफ्ट प्रस्तुत किया गया जिसमें 27 अध्यायों की सूची शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण शिक्षण और बालकों के उत्तम उन्नत भविष्य को स्वर्णिम बनाए रखने हेतु प्रस्तुत की गई है। जिसके प्रथम अध्याय के शीर्ष में लिखा गया है–"शिक्षा पूर्ण मानव क्षमता को प्राप्त करने, एक न्याय संगत और न्याय पूर्ण समाज के विकास और राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने की मूलभूत आवश्यकता है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सार्वभौमिक पहुँच प्रदान करना, वैश्विक मंच पर सामाजिक न्याय और समानता, वैज्ञानिक उन्नति, राष्ट्रीय एकीकरण और सांस्कृतिक संरक्षण के संदर्भ में भारत की सतत प्रगति और आर्थिक विकास की कुंजी है.... भारत दुनिया का सबसे युवा जनसंख्या वाला देश होगा और इन युवाओं को उच्च गुणवत्तापूर्ण शिक्षण अवसर उपलब्ध कराने पर ही भारत का भविष्य निर्भर करेगा।"

बच्चों के मस्तिष्क का 85 प्रतिशत विकास 6 वर्ष पूर्व की अवस्था में ही हो जाता है। और बच्चे इसी अवस्था में अधिक से अधिक सीखने, जानने और समझने में रुचि दिखाते हैं। अतः बच्चों की बाल्यावस्था में अधिक रुचि खेल की विभिन्न गतिविधियों को स्वतंत्र रूप से खेलने में होती है, प्रत्येक बच्चा स्वतंत्र रूप से बिना किसी हस्तक्षेप के खेलना पसंद करता है। उम्र और स्वभाव से यह अवस्था जितनी जटिल होती है परंतु सीखने में उतनी ही उत्साहित होती है। अर्थात् इस अवस्था में बच्चा किसी भी अनजानी या अनजान विषय वस्तु को पूरे ध्यान से देखता है उसे समझने की पूरी कोशिश करता है। वह अपने माता–पिता अपने अभिभावक से उस विषय वस्तु के बारे में जानना चाहता है। पूछता है कि वह क्या है? बच्चे के मानसिक संवेग को नई शिक्षा नीति में शामिल करते हुए बच्चे की आकांक्षा/उत्सुकता पर ही पूर्व विद्यालय आँगनबाड़ी में 3 वर्ष का समय बच्चे की विभिन्न उत्सुकता को समझने, जानने और पहचानने का अवसर प्रदान करता है। उदाहरणार्थ– एक छोटा बालक प्रारंभिक अवस्था में किसी जानवर का चित्र अपने अभिभावक या आँगनबाड़ी शिक्षक के माध्यम से किसी मोबाइल, टेलीविजन या किसी फोटो में देखता है तो वह पूछना चाहता है कि वह

क्या है? बच्चे को यदि ऊँट का चित्र दिखाएँ तो उक्त जानवर की कल्पना करेगा, उसके बारे में गहनता से और अधिक जानना भी चाहेगा और वह अपने खेल में भी उसे शामिल करेगा। इसी प्रकार अपने खेल में ऊँट की लंबी गर्दन को दर्शाने का प्रयास करेगा। बालक ऊँट जैसा ऊँचा दिखने का प्रदर्शन करने की कोशिश करेगा। अतः नई शिक्षा नीति बच्चे की इसी बाल सुलभ चेष्टाओं को, इंगित करते हुए बनाई गई है, जिसमें बच्चों के प्राथमिक स्तर पर खेल कौशल से ही शैक्षणिक सुविधाएँ मुहैया करवाकर बालकों के ज्ञान की एकता, एकाग्रता, अखंडता और उनके अंतर्मन वेदना को, कौशल को, शैक्षणिक पटल पर उतारकर बालकों के ज्ञान को एकत्र कर शिक्षा की ओर अग्रसर करवाना है।

पूर्व विद्यालय में बालकों के सर्वांगीण विकास के शिक्षण को ध्यान में रखते हुए एनसीईआरटी के विभिन्न कौशल कार्यक्रमों में विद्यालय से पूर्व बालकों के शैक्षणिक ज्ञान हेतु अनेक कार्यक्रम आयोजन करने की महती आवश्यकता है। एक मुख्य प्रश्न पर एनसीईआरटी ने अपने अनेक प्रशिक्षणों में शिक्षकों को एक विशेष प्रश्न पर केंद्रित किया और उस प्रश्न को अनेक संगोष्ठियों में भी शामिल किया। वह प्रश्न है– "पूर्व प्राथमिक स्तर पर बच्चों को सिखाने का तरीका क्या होना चाहिए?" एनसीईआरटी के द्वारा आयोजित अनेक कौशलों में इस प्रश्न के उत्तर को गंभीरता से स्पष्ट भी किया गया कि बालक एकीकृत दृष्टिकोण का अनुसरण करता है वह खेल आधारित गतिविधियों पर ही अपनी रुचि दिखाता है। इसलिए एनसीईआरटी ने बालकों के शिक्षण को प्रभावी बनाने के लिए पूर्व प्राथमिक शिक्षण में तीन घटक सम्मिलित किए हैं–

(I) खेल (II) परस्पर प्रक्रिया (III) पर्यावरण।

(I) खेल– बालक अपने स्वभाव के अनुसार स्वतंत्र खेलना और देखा देखी करते हुए नाट्य रूपांतरण करते हुए खेलते हैं। यह बच्चों के लिए स्वाभाविक है, परंतु वह अपने खेल में अपने द्वारा देखी गई विषय वस्तुओं को भी अपने खेल में प्रदर्शित करते हैं, दर्शाते हैं। जिसका वर्णन हमने पूर्व में ऊँट के उदाहरण में स्पष्ट किया है।

(II) परस्पर प्रक्रिया– बालक अपने सहयोगी बालकों के साथ या अपने अभिभावकों के साथ अनेक क्रियाएँ करते हैं। नवीन शब्दों का उनसे समय–समय पर ज्ञानार्जन करते हैं और ज्ञान की वृद्धि प्राप्त करते हैं। उदाहरणार्थ– परस्पर खेलते समय बालक एक दूसरे को संबोधन करते हुए आपसी संवाद करेंगे और अपने खेल की सामग्री को, खेल के खिलौनों के बारे में अपनी–अपनी खूबियों को गिनाएँगे और स्वयं के खिलौनों को प्रतिभावान सिद्ध करने का भी प्रयास करेंगे। यही प्रतिभा बालकों को मनोवैज्ञानिक तरीके से शिक्षण की ओर तैयार करती है। बालकों की खेल सामग्री में बच्चों के पास पालतू जानवरों के खिलौने होंगे तो अपने–अपने खिलौने को अपने घरेलू पशुओं की तरह जीवंत बताते हुए उनकी विशेषता सिद्ध करने का प्रयास भी सहपाठियों से करेंगे। यही पूर्व प्राथमिक शिक्षण का सुदृढ़ आधार हो सकता है। इस प्रकार सामान्यतः कौन–कौन से पशु घरों में पाले जाते हैं और कौन–कौन से खतरनाक जंगली जानवर जो जंगलों में रहते हैं इत्यादि का संज्ञान बालक खेल–खेल में सीख लेंगे। इसी प्रकार विभिन्न रंगों की तस्तरी या खिलौने के माध्यम से अपने कपड़ों का रंग जानना, दूसरे के कपड़ों के रंगों पर प्रतिक्रिया देना बालकों को कला, संगीत इत्यादि रचनात्मक गतिविधियों के माध्यम से बच्चों में सुंदर पोशाक में तैयार होना, कपड़ों के रंग का चुनाव करना, दूसरे के प्रति प्रतिस्पर्धा जैसी विचारधारा उन्हें सीखने की ओर आगे बढ़ाती है। बालकों को यही शिक्षण, पूर्व प्राथमिक शिक्षण आँगनबाड़ी में अधिगम होगा।

(III) पर्यावरण– पर्यावरण का तात्पर्य बालकों की अभिक्रियाएँ पर्यावरण जनित हो ताकि बालक बौद्धिक ज्ञान के साथ शारीरिक वृद्धि कर सके। अर्थात् बालक आँगनबाड़ी में खेल–खेल में फलों के माध्यम से फलों के बारे में जानकारी प्राप्त करेगा। वहीं खट्टा–मीठा स्वाद को भी जानने और उस पर प्रतिक्रिया भी सहपाठियों से करेगा।

परंतु पर्यावरण का मुख्य तात्पर्य है कि खिलौने के माध्यम से वह सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास को भी बढ़ावा देगा जैसे हाथी एक ताकतवर जानवर है बालक हाथी का खिलौना देखकर ताकतवर होने को प्रदर्शित करेगा, शेर शक्तिशाली व खतरनाक का प्रतीक, घोड़ा तेज दौड़ने का प्रतीक और किसान, मजदूर, शिक्षक, डॉक्टर, पोस्टमैन, एंबुलेंस, पुलिस इत्यादि के खिलौने के माध्यम से बालक इनकी कार्यशैली को जानने का ज्ञान भी प्राप्त कर सकेंगे। इसके साथ–साथ चित्रों में कुआँ, तालाब, बादल, बिजली, पानी, बावड़ी इत्यादि के चित्रों के माध्यम से सामाजिक व सांस्कृतिक विकास करेंगे। अतः बच्चों के पूर्व प्राथमिक शिक्षण गतिविधियाँ आँगनबाड़ी में होगीं, जिनमें बालकों के तीन वर्ष का समय इसी सामाजिक व भावनात्मक विकास को ध्यान में केंद्रित रखते हुए दिया गया है। एनसीईआरटी शिक्षा शास्त्र और विकास के आयाम संदर्भ लेख में कहा गया है कि "पूर्व प्राथमिक वर्षों के दौरान बच्चे अपनी भावनाओं को नियंत्रित करना सीखते हैं और आम बच्चों के साथ मेल–जोल बढ़ाते हैं, खेलते हैं और एक साथ सीखते हैं। बच्चों के सहयोग, सहानुभूति आदि स्वतंत्र आदतें विकसित होती हैं। बच्चे निर्णय लेना शुरू करते हैं, नेतृत्व गुणों का प्रदर्शन करते हैं और दूसरों के अधिकारों और संस्कृति को समझना शुरू करते हैं। रचनात्मक कला और अभिव्यक्ति की गतिविधियाँ बच्चों को सुंदरता, रंग अभिव्यक्ति इत्यादि की सराहना करने का अवसर प्रदान करती हैं।"

एनसीईआरटी पूर्व प्राथमिक स्तर पर तीन वर्षों में बच्चों को कक्षा में सीखने के विभिन्न अवसर प्रदान करता है।

(1) पढ़ने/किताबों का क्षेत्र
(2) गुड़िया/खेल खेलने का क्षेत्र
(3) डिस्कवरी या विज्ञान का क्षेत्र
(4) ब्लॉक बिल्डिंग का क्षेत्र
(5) गणित से संबंधित क्षेत्र
(6) चित्रकला/कला के क्षेत्र
(7) संगीत क्षेत्र इत्यादि

प्राथमिक शिक्षण में मातृभाषा का महत्व– बालक अपने परिवेश में मातृभाषा को बखूबी से बोलना व समझना जानते हैं। अतः जब बच्चे को अपनी पूर्व प्राथमिक कक्षा में अपनी मातृभाषा को चुनने का अवसर प्राप्त होता है, तो बालक पूर्ण रुचि के साथ अपनी मातृभाषा में अपने शिक्षक से, अपने सहपाठियों से संवाद करने में आगे आता है अतः वह अपने विद्यालयी वातावरण से परे घर जैसा माहौल समझते हुए बिना किसी हिचकिचाहट के अपनी इच्छानुसार क्रिया करेगा और संवाद भी बोलेगा। नई शिक्षा नीति में प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा पर ध्यानाकर्षण करते हुए बालकों को राजकीय भाषा या फिर केंद्र की भाषा की जगह मातृभाषा में शिक्षण प्रदान करने की पहल की गई है। उदाहरणार्थ हम कह सकते हैं कि वर्तमान युग में अंग्रेजी का प्रभुत्व है, जो बच्चों के लिए अनजान भाषा है जिसे आसानी से बालक नहीं समझ पाते हैं। क्योंकि अंग्रेजी बच्चों के सामाजिक परिवेश व बोलचाल की भाषा नहीं है, जबकि बच्चे अपनी मातृभाषा में बड़ी रुचि से और उत्साहित होकर सीखना चाहेंगे, समझेंगे और जानेंगे, और अपनी मातृभाषा में खुलकर संवाद करना पसंद भी करेंगे। मुख्यतः देश के महानगरों को छोड़ दें तो ग्राम्य क्षेत्रों के बालकों के लिए अंग्रेजी एक बोझ के बराबर है। नई शिक्षा नीति 2020 में इस बोझ को दूर किया गया है जिसमें बच्चों को प्रारंभिक 5 वर्ष तक मातृभाषा में सीखने का अच्छा अवसर दिया गया है। 5 वर्ष के बाद कक्षा 6 से कक्षा 8 तक की कक्षाओं में शिक्षण में बच्चे अपनी इच्छानुसार किसी भी भाषा का चयन कर सकते हैं। अतः बालकों पर भाषा स्तर पर मानसिक दबाव नहीं रहेगा वहीं बालकों का किताब का बोझ भी कम होगा। क्योंकि प्रत्येक बच्चा अपने आप को मातृभाषा में निपुण मानता है, वह अपनी मातृभाषा में अधिक रुचि रखता है। यही भाषा उसके अध्ययन में जब उन्हें मिलती है, तो वह उसी भाषा में प्रवीण होने की दक्षता सिद्ध करने का प्रयास करेगा और प्रोत्साहित करने पर मातृभाषा में विभिन्न योजनाओं, अभिक्रियाओं और प्रशिक्षणों में भी बढ़–चढ़कर हिस्सा लेगा, नेतृत्व कर सकने में सक्षम बनेगा। वह कक्षा–कक्ष

वातावरण में बोल पाने में संकोच भी नहीं करेगा। अतः इस प्रकार पूर्व प्राथमिक स्तर का यह अधिगम बालकों के लिए ऊर्जावान भी साबित होगा। इससे भविष्योन्मुखी अध्ययन हेतु बालक को अपनी भाषा के प्रति रुचि उन्हें नई–नई शब्दावली, नई विचारधारा, अपनी निजी वैचारिक भावनाएँ व्यक्त करने में भी मदद करती है। अतः बालकों के शैक्षणिक विकास हेतु राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में प्राथमिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा सीखने की नींव (1.5) में स्पष्ट कहा गया है– कि "प्राथमिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) की सार्वभौमिक पहुँच के लिए आँगनबाड़ी केंद्रों में उच्चतर गुणवत्ता के बुनियादी ढाँचे, खेलने के उपकरण और पूर्ण रूप से प्रशिक्षित आँगनबाड़ी कार्यकर्त्ता, शिक्षकों के साथ सशक्त बनाया जाएगा। प्रत्येक आँगनबाड़ी में समृद्ध शिक्षा के वातावरण के साथ अच्छी तरह से डिजाइन किया हुआ हवादार, बाल सुलभ और निर्मित भवन होगा। आँगनबाड़ियों को स्कूल परिसरों / समूहों को पूरी तरह से एकीकृत किया जाएगा और आँगनबाड़ी में माता–पिता और शिक्षकों को स्कूल के विभिन्न कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया जाएगा।

अतः निष्कर्ष में स्पष्ट है कि बच्चे की विशिष्ट क्षमताओं को स्वीकार करते हुए बालकों की बाल–सुलभ जिज्ञासा की पहचान और उनकी इच्छाओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षा नीति को बनाया गया है। बुनियादी साक्षरता में संख्या ज्ञान को ध्यान में रखते हुए आँगनबाड़ी में विभिन्न शैक्षणिक कौशलों की आवश्यकता बच्चों के शिक्षण को रुचिपूर्ण बनाए जाने हेतु रखी गई है। नई शिक्षा नीति में मातृभाषा शिक्षण के संदर्भ में दिल्ली की साहित्यकार और हिंदी प्रवक्ता मीनाक्षी डबास 'मन' ने नई शिक्षा नीति पर परिचर्चा में कहा– राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने कहा था–"हृदय की कोई भाषा नहीं है, हृदय–हृदय से बातचीत करता है और हिंदी हृदय की भाषा है।" गांधी जी के इस कथन से हम स्पष्ट कह सकते हैं कि "बालकों की हृदय की भाषा उसकी मातृभाषा होती है, यदि बालक मातृभाषा में शिक्षण प्राप्त करते हैं तो उनमें दुगुना उत्साह होता है। अतः नई शिक्षा नीति में इसी उत्साह को ध्यान में रखते हुए बाल मन की संवेदना को उकेरा गया है। बालकों का यह उत्साह उसे आँगनबाड़ी की ओर अग्रसर करेगा और शिक्षण में रुचि पैदा करेगा। यही बालक जब विद्यालय में आएँगे तो उन्हें विद्यालय के वातावरण में हिचकिचाहट नहीं होगी क्योंकि सभी आँगनबाड़ियाँ भी विद्यालय से जुड़ी रहेंगी जिससे आँगनबाड़ियों के बालकों को विद्यालय के विभिन्न बाल आयोजनों में समय–समय पर आमंत्रित किया जाएगा, जिससे वे विद्यालय के शिक्षकों और बालकों से मिलते रहेंगे। विद्यालय में बालकों को कक्षा 3 से कक्षा 5 तक अध्ययन में भी उनकी मातृभाषा का शिक्षण उन्हें प्रोत्साहित करेगा। अतः बालक का भविष्य उन्नत व स्वर्णिम होगा।" नई शिक्षा नीति में आँगनबाड़ी शिक्षण को मातृभाषा से जोड़ते हुए लचीला बनाया गया है ताकि बालक अधिक से अधिक शिक्षण के प्रति रुचि ले सके और अपनी प्रतिभा को आगे ला सके। क्योंकि अपनी मातृभाषा से अलग अन्य भाषा में यदि बालक पढ़ता है तो वह उस भाषा के प्रति इतनी रुचि नहीं दिखा पाता है, जितना उसके अंतर्मन की प्रतिभा मातृभाषा में संवाद करने में होती है। इस कारण वह अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन नहीं कर सकता जबकि नई शिक्षा नीति में मातृभाषा में शिक्षण प्राप्त करता हुआ बालक बिना किसी अवरोध या हिचकिचाहट के अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करेगा। इस दिशा में नई शिक्षा नीति एक मील का पत्थर साबित होगी। इसके साथ–साथ यह शिक्षण पद्धति केवल परीक्षा के लिए पढ़ाई या रटन प्रणाली जैसी धारणा को खत्म करती है। नई शिक्षा नीति के अनुसार छोटे बच्चे जो सीधे स्कूल आ रहे थे अब वे आँगनबाड़ी के माध्यम से स्कूल से जुड़ जाएँगे। उन्हें आँगनबाड़ी के माध्यम से स्कूलों में शिक्षकों और बालकों से मिलने का अवसर प्राप्त होगा, जिससे उसे नैतिकता, मानवीय गुण और जीवन कौशल के विभिन्न अनुशासन को भी सीखने का अवसर प्राप्त होगा। इसके साथ–साथ अध्ययन अध्यापन में भाषा संबंधी जो बाधाएँ थी अब उनके बीच नहीं रहेगी। बच्चे सभी से संवाद करने में भी आगे रहेंगे और सभी

से तालमेल भी बिठा सकेंगे। बालकों में अखंडता, एकाग्रता, कुशलता और गुणवत्ता का निखार होगा। जब बच्चे कक्षा एक में प्रवेश करेंगे तब वे एक संपूर्ण अनुशासित विद्यार्थी के रूप में सम्मिलित होंगे और वहीं कक्षा छह में प्रवेश के समय उसे विद्यालय के नियमों का भली–भाँति ज्ञान होगा। नई शिक्षा नीति बालकों में एक नई शक्ति का संचार करेगी। नई शिक्षा नीति भारत की समृद्ध और प्राचीन संस्कृति को आधुनिक प्रणालियों से जोड़ती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा (प्रस्तुत रिपोर्ट)

2. डी एन ए–नई शिक्षा नीति का संपूर्ण विश्लेषण द्वारा जी न्यूज, 29 जुलाई, 2020

3. नीति कहाँ है नई शिक्षा नीति की?– एनडीटीवी

4. बदल जाएगा एजुकेशन सिस्टम हो जाएँगे कई बदलाव–आज तक

5. दीक्षा ऐप शैक्षणिक कार्यक्रम– नैशनल इनिशिएटिव फॉर स्कूल हेड्स एंड टीचर्स होलिस्टिक अडवांसमेंट (निष्ठा)

6. द डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर फॉर नॉलेज शेयरिंग– दीक्षा ऐप के शैक्षणिक प्रशिक्षण कार्यक्रम, दिल्ली और सीबीएसई

– हिंदी शिक्षक, सर्वोदय बाल विद्यालय पूठकलां, (शिक्षा निदेशालय राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र)
दिल्ली–110086

❑❑❑

नई शिक्षा व्यवस्था 2020 : वर्तमान शिक्षा व्यवस्था के सवाल तथा भारत सरकार की समाधान की रणनीतियाँ

डॉ. संजय कुमार

क्या 1986 की शिक्षा नीति हमारे नागरिकों की उन सभी जरूरतों को पूरा कर रही है, जिसके द्वारा व्यक्ति या नागरिक समाज में अपनी कार्यशीलता या सृजनात्मकता से समाज को लाभान्वित करता है, क्या 34 साल से चल रही वर्तमान शिक्षा व्यवस्था 21वीं शताब्दी की चुनौतियों का समाधान देश, समाज और राष्ट्र के सामने प्रस्तुत कर पा रही है। क्या शिक्षा व्यवस्था ने देश की सामाजिक असमानता को खत्म करने में भूमिका अदा की है। 34 साल से चल रही शिक्षा व्यवस्था क्या भारत के युवाओं को रोजगार प्रदान करने में सफलतापूर्वक भूमिका अदा कर रही है, क्या देश के 134 करोड़ नागरिकों के सामाजिक और राजनैतिक तथा सांस्कृतिक विकास में शिक्षा व्यवस्था सकारात्मक भूमिका अदा कर रही है, यदि ऐसे हजारों सवालों का जवाब नहीं है तो केंद्र सरकार के द्वारा नई शिक्षा नीति के बदलाव में सही समय पर सही तरीके से फैसला लिया है, तो नई शिक्षा नीति 2020 में प्रस्तुत सुझावों, दृष्टिकोण तथा बदलावों को देश के शिक्षाविदों को सकारात्मक दृष्टिकोण से समझने का प्रयास तथा राजनीति से ऊपर उठकर सभी राजनैतिक दलों, राज्य और स्थानीय सरकारों को करना होगा। शिक्षा व्यवस्था का बदलाव देश और भावी पीढ़ियों के लिए यदि समय रहते नहीं किया गया तो देश की भावी पीढ़ियाँ तथा वर्तमान पीढ़ियों के विकास में हम सभी पीछे छूट जाएँगे। यह शिक्षा नीति 134 करोड़ भारतीयों के लिए भविष्य निर्माण करेगी, इसलिए पार्टी हितों से ऊपर उठकर बदलावों को सकारात्मक दृष्टिकोण से अपनाते हुए शिक्षा नीति पर चर्चा करनी होगी, तभी हम सक्षम मजबूत शिक्षा नीति बना पाएँगें।

समय–समय पर देशभर के शिक्षाविदों, राज्य और केंद्र सरकारों के द्वारा भी वर्तमान शिक्षा व्यवस्था पर महत्वपूर्ण सवाल वर्तमान में खड़े किए गए हैं। क्या वर्तमान शिक्षा व्यवस्था इन सभी सवालों का जवाब देने में सक्षम है जो वर्तमान में समाज और देश के सामने खड़े हैं।

1. क्या हमारी शिक्षा व्यवस्था हमारे युवाओं को क्रिएटिव, क्यूरियोसिटी और कमिटमेंट ड्रिवेन लाइफ के लिए प्रेरित करती है?

2. हमारे सामने दूसरा सवाल था कि क्या हमारी शिक्षा व्यवस्था, हमारे युवाओं को सशक्त करती है, देश में एक सशक्त समाज के निर्माण में मदद करती है?

3. वर्तमान शिक्षा व्यवस्था से स्नातक करने के बाद युवा वर्ग उस स्नातक डिग्री को किस प्रकार से अपने नौकरी पाने के संदर्भ में तथा अपने जीवन में, समाज में और राष्ट्र की सेवा में किस प्रकार से योगदान कर रहा है।

4. क्या स्नातक डिग्री व्यवस्था करने के बाद छात्र में इतनी क्षमता पैदा हो रही है कि वह अपने पैरों पर स्वयं खड़े होने के काबिल हो सकता है

या डिग्री उसकी किसी भी प्रकार से मदद करने में सक्षम है।

इस लेख में सरकार की शिक्षा नीति, किए गए प्रयासों तथा घोषणाओं का सकारात्मक दृष्टिकोण से विश्लेषण किया गया है।

नई शिक्षा नीति के संदर्भ में टी एन नायनन ने अपने एक लेख में 1 अगस्त 2020 को कहा कि "मोदी सरकार की नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) कोठारी की रिपोर्ट से कहीं ज्यादा महत्वाकांक्षी दस्तावेज है। इसमें कई सकारात्मक बातें भी हैं– (टी एन नायनन आर्टिकल 'द प्रिंट', 1 अगस्त, 2020)। नई शिक्षा नीति के ड्राफ्ट में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले मानव संसाधन विकास मंत्रालय के सचिव श्री अमित खरे द्वारा कहा गया कि "उच्च शिक्षा में कई सुधार किए गए हैं। सुधारों में ग्रेडेड अकैडमिक, प्रशासनिक और वित्तीय स्वायत्तता आदि शामिल हैं।

महत्वपूर्ण तथ्य

• वर्तमान नीति अंतरिक्ष वैज्ञानिक के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता वाली समिति की रिपोर्ट पर आधारित है।

• नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के तहत वर्ष 2030 तक सकल नामांकन अनुपात को 100% लाने का लक्ष्य रखा गया है।

• नई शिक्षा नीति के अंतर्गत केंद्र व राज्य सरकार के सहयोग से शिक्षा क्षेत्र पर जीडीपी के 6% हिस्से के सार्वजनिक व्यय का लक्ष्य रखा गया है।

• नई शिक्षा नीति की घोषणा के साथ ही मानव संसाधन विकास मंत्रालय का नाम परिवर्तित कर शिक्षा मंत्रालय कर दिया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रमुख बिंदु

1. स्कूली शिक्षा संबंधी प्रावधान

नई शिक्षा नीति में 5+3+3+4 पैटर्न वाले शैक्षणिक संरचना का प्रस्ताव किया गया है जो 3 से 18 वर्ष की आयु वाले बच्चों को शामिल करता है।

• पाँच वर्ष की फाउंडेशनल स्टेज– 3 साल का प्री–प्राइमरी स्कूल और ग्रेड 1, एवं 2

• तीन वर्ष का प्रीपरेट्री स्टेज

• तीन वर्ष का मध्य (या उच्च प्राथमिक) चरण – ग्रेड 6, 7, 8 और

• 4 वर्ष का उच्च (या माध्यमिक) चरण – ग्रेड 9, 10, 11, 12

2. भाषाई विविधता का संरक्षण

एनईपी–2020 में कक्षा–5 तक की शिक्षा में मातृभाषा/स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा को अध्ययन के माध्यम के रूप में अपनाने पर बल दिया गया है। साथ ही इस नीति में मातृभाषा को कक्षा–8 और आगे की शिक्षा के लिए प्राथमिकता देने का सुझाव दिया गया है

3. शारीरिक शिक्षा

विद्यालयों में सभी स्तरों पर छात्रों को बागवानी, नियमित रूप से खेल–कूद, योग, नृत्य, मार्शल आर्ट को स्थानीय उपलब्धता के अनुसार प्रदान करने की कोशिश की जाएगी ताकि बच्चे शारीरिक गतिविधियों एवं व्यायाम संबंधी गतिविधियों में भाग ले सकें।

4. पाठ्यक्रम और मूल्यांकन संबंधी सुधार

इस नीति में प्रस्तावित सुधारों के अनुसार, कला और विज्ञान, व्यावसायिक तथा शैक्षणिक विषयों एवं पाठ्यक्रम व पाठ्येतर गतिविधियों के बीच बहुत अधिक अंतर नहीं होगा। कक्षा–6 से ही शैक्षिक पाठ्यक्रम में व्यावसायिक शिक्षा को शामिल कर दिया जाएगा और इसमें इंटर्नशिप की व्यवस्था भी की जाएगी। छात्रों की प्रगति के मूल्यांकन के लिए मानक–निर्धारक निकाय के रूप में 'परख' नामक एक नए 'राष्ट्रीय आकलन केंद्र' की स्थापना की जाएगी। छात्रों की प्रगति के मूल्यांकन तथा छात्रों को अपने भविष्य से जुड़े निर्णय लेने में सहायता प्रदान करने के लिए 'कृत्रिम बुद्धिमत्ता' आधारित सॉफ्टवेयर का प्रयोग किया जाएगा।

5. शिक्षण व्यवस्था से संबंधित सुधार

शिक्षकों की नियुक्ति में प्रभावी और पारदर्शी प्रक्रिया का पालन तथा समय–समय पर किए गए कार्य–प्रदर्शन आकलन के आधार पर पदोन्नति। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद द्वारा वर्ष 2022

तक 'शिक्षकों के लिए राष्ट्रीय व्यावसायिक मानक' का विकास किया जाएगा।

वर्ष 2030 तक अध्यापन के लिए न्यूनतम डिग्री योग्यता 4–वर्षीय एकीकृत बी.एड. डिग्री का होना अनिवार्य किया जाएगा।

6. उच्च शिक्षा से संबंधित प्रावधान

नई शिक्षा नीति–2020 के तहत उच्च शिक्षण संस्थानों में 'सकल नामांकन अनुपात'को 26.3% (वर्ष 2018) से बढ़ाकर 50% तक करने का लक्ष्य रखा गया है, इसके साथ ही देश के उच्च शिक्षण संस्थानों में 3.5 करोड़ नई सीटों को जोड़ा जाएगा।

नई शिक्षा नीति–2020 के तहत स्नातक पाठ्यक्रम में मल्टीपल एंट्री एंड एक्जिट व्यवस्था को अपनाया गया है, इसके तहत 3 या 4 वर्ष के स्नातक कार्यक्रम में छात्र कई स्तरों पर पाठ्यक्रम को छोड़ सकेंगे और उन्हें उसी के अनुरूप डिग्री या प्रमाण–पत्र प्रदान किया जाएगा (1 वर्ष के बाद प्रमाण–पत्र, 2 वर्ष के बाद एडवांस डिप्लोमा, 3 वर्ष के बाद स्नातक की डिग्री तथा 4 वर्ष के बाद शोध के साथ स्नातक)।

7. भारतीय उच्च शिक्षा आयोग

नई शिक्षा नीति में देश भर के उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए एक एकल नियामक अर्थात् भारतीय उच्च शिक्षा परिषद की परिकल्पना की गई है जिसमें विभिन्न भूमिकाओं को पूरा करने हेतु कई कार्यक्षेत्र होंगे। भारतीय उच्च शिक्षा आयोग चिकित्सा एवं कानूनी शिक्षा को छोड़कर पूरे उच्च शिक्षा क्षेत्र के लिए एक एकल निकाय के रूप में कार्य करेगा।

8. देश में आईआईटी और आईआईएम के समकक्ष वैश्विक मानकों के 'बहुविषयक शिक्षा एवं अनुसंधान विश्वविद्यालय' की स्थापना की जाएगी।

9. विकलांग बच्चों हेतु प्रावधान

इस नई नीति में विकलांग बच्चों के लिए क्रास विकलांगता प्रशिक्षण, संसाधन केंद्र, आवास, सहायक उपकरण, उपयुक्त प्रौद्योगिकी आधारित उपकरण, शिक्षकों का पूर्ण समर्थन एवं प्रारंभिक से लेकर उच्च शिक्षा तक नियमित रूप से स्कूली शिक्षा प्रक्रिया में भागीदारी सुनिश्चित करना आदि प्रक्रियाओं को सक्षम बनाया जाएगा।

10. डिजिटल शिक्षा से संबंधित प्रावधान

एक स्वायत्त निकाय के रूप में 'राष्ट्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी मंच' का गठन किया जाएगा जिसके द्वारा शिक्षण, मूल्यांकन योजना एवं प्रशासन में अभिवृद्धि हेतु विचारों का आदान–प्रदान किया जा सकेगा।

11. पारंपरिक ज्ञान–संबंधी प्रावधान

भारतीय ज्ञान प्रणालियाँ, जिनमें जनजातीय एवं स्वदेशी ज्ञान शामिल होंगे, को पाठ्यक्रम में सटीक एवं वैज्ञानिक तरीके से शामिल किया जाएगा। आकांक्षी जिलेजैसे क्षेत्र जहाँ बड़ी संख्या में आर्थिक, सामाजिक या जातिगत बाधाओं का सामना करने वाले छात्र पाए जाते हैं, उन्हें 'विशेष शैक्षिक क्षेत्र' के रूप में नामित किया जाएगा। देश में क्षमता निर्माण हेतु केंद्र सभी लड़कियों और ट्रांसजेंडर छात्रों को समान गुणवत्ता प्रदान करने की दिशा में एक 'जेंडर इंक्लूजन फंड' की स्थापना करेगा। (नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 दस्तावेज के केंद्रीय बिंदु)

7 अगस्त 2020, प्रधानमंत्री के द्वारा दिया गया संबोधन––

प्रधानमंत्री के द्वारा शिक्षा नीति 2020 दस्तावेज पर कहा गया कि आज मुझे संतोष है कि भारत की नेशनल एजुकेशन पॉलिसी–राष्ट्रीय शिक्षा नीति को बनाते समय, इन सवालों पर गंभीरता से काम किया गया। और अब सरकार के सामने सबसे बड़ी चुनौती और कार्य शिक्षा नीति को लागू करना है।

देश के शिक्षा मंत्रालय के द्वारा जारी दस्तावेज पर आयोजित 7 अगस्त 2020 के कार्यक्रम में देश के प्रधानमंत्री के द्वारा महत्वपूर्ण बिंदुओं को रखा गया। 7 अगस्त 2020 को प्रधानमंत्री के द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा नीति सम्मेलन में बताए गए महत्वपूर्ण अंश के द्वारा ही हम यह समझ सकते हैं कि सरकार इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर किस प्रकार से कार्य योजना बना रही है।

प्रधानमंत्री के दिए गए भाषणों के प्रमुख केंद्रीय बिंदु:

बीते अनेक वर्षों से हमारी शिक्षा प्रणाली में बड़े बदलाव नहीं हुए थे। परिणाम ये हुआ कि हमारे समाज में उत्सुकता और कल्पना के मूल्यों को प्रमोट करने के बजाय भेड़ चाल को प्रोत्साहन मिलने लगा था। कभी डॉक्टर बनाने के लिए होड़ लगी, कभी इंजीनियर बनाने की होड़ लगी, कभी वकील बनाने की होड़ लगी। Interest, ability और Demand की Mapping किए बिना होड़ लगाने की प्रवृत्ति से शिक्षा को बाहर निकालना जरूरी था। हमारे विद्यार्थियों में, हमारे युवाओं में क्रिटिकल थिंकिंग और इनोवेटिव थिंकिंग विकसित कैसे हो सकती है, जब तक हमारी शिक्षा में पैशन ना हो, फिलोसॉफी ऑफ एजुकेशन ना हो, परपज ऑफ एजुकेशन ना हो। (speech-pmindia.gov.in 07–08–2020)

निश्चित तौर पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति का बृहद लक्ष्य इसी से जुड़ा है। इसके लिए टुकड़ों में सोचने के बजाय एक होलिस्टिक अप्रोच की जरूरत थी, जिसको सामने रखने में राष्ट्रीय शिक्षा नीति सफल रही है। अभी तक जो हमारी शिक्षा व्यवस्था है, उसमें व्हॉट टू थिंक पर फोकस रहा है। जबकि इस शिक्षा नीति में हाऊ टू थिंक पर बल दिया जा रहा है (speech-pmindia.gov.in 07–08–2020)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में प्रयास किया गया है कि जो पढ़ाई के लिए लंबा–चौड़ा Syllabus होता है, ढेर सारी किताबें होती हैं, उसकी अनिवार्यता को कम किया जाए। अब कोशिश ये है कि बच्चों को सीखने के लिए इंक्वायरी बेस्ड, डिस्कवरी बेस्ड, डिस्कशन बेस्ड और अनालिसिस बेस्ड तरीकों पर जोर दिया जाए। इससे बच्चों में सीखने की ललक बढ़ेगी और उनकी क्लास में उनकी प्रतिभागिता भी बढ़ेगी। (speech-pmindia.gov.in 07–08–2020)

उच्च शिक्षा को स्ट्रीम्स से मुक्त करने के लिए मल्टीपल एंट्री और एग्जिट, क्रेडिट बैंक नीति बनेगी।

हम उस युग की तरफ बढ़ रहे हैं जहाँ कोई व्यक्ति जीवन भर किसी एक प्रोफेशन में ही नहीं टिका रहेगा, रि–स्किल और अप–स्किल करते रहना होगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में इसका भी ध्यान रखा गया, कि ऊँच–नीच का भाव, मेहनत–मजदूरी कार्य को हीन भाव से देखने का भाव कैसे आया। इसकी एक बड़ी वजह रही कि हमारी शिक्षा की समाज के इस तबके के साथ एक दूरी रही। श्रम का सम्मान हमारी पीढ़ी को सीखना ही होगा। इसलिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति में श्रम सम्मान पर बहुत ध्यान दिया गया है। (speech-pmindia.gov.in 07–08–2020)

भारत का सामर्थ्य है कि वो टैलेंट और टेक्नॉलॉजी का समाधान पूरी दुनिया को दे सकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में जो भी समाधान सुझाए गए हैं, उससे फ्यूचरिस्टिक टेक्नोलॉजी के प्रति एक माइंडसेट विकसित करने की भावना है।

शिक्षा संस्थानों को मजबूत करने की बात आती है, तो उसके साथ एक और शब्द चला आता है– स्वायत्तता, आप भी जानते हैं कि स्वायत्तता को लेकर हमारे यहाँ दो तरह के मत रहे हैं। एक कहता है कि सब कुछ सरकारी नियंत्रण से, पूरी सख्ती से चलना चाहिए, तो दूसरा कहता है कि सभी संस्थानों को बाई डिफॉल्ट आटोनॉमी मिलनी चाहिए। पहली अप्रोच में गैर सरकारी संस्थानों के प्रति मिसट्रस्ट दिखता है तो दूसरी अप्रोच में स्वायत्तता को इनटाइटलमेंट के रूप में ट्रीट किया जाता है। अच्छी गुणवत्ता वाली शिक्षा का रास्ता इन दोनों मतों के बीच में है। जो संस्थान क्वालिटी शिक्षा के लिए ज्यादा काम करे, उसको ज्यादा ऑटोनॉमी से रिवार्ड किया जाना चाहिए। इससे गुणवत्ता को प्रोत्साहन मिलेगा। (speech-pmindia.gov.in 07-08-2020)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति सिर्फ एक सर्कुलर नहीं है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति सिर्फ सर्कुलर जारी करके, नोटिफाई करके लागू नहीं होगी। इसके लिए मन बनाना होगा, सभी को दृढ़ इच्छाशक्ति दिखानी होगी।

प्रधानमंत्री ने शिक्षा नीति दस्तावेज पर चली तैयारियों के संदर्भ में भी स्पष्ट तौर पर सभी को

कहा कि 3–4 साल के व्यापक विचार–विमर्श के बाद, लाखों सुझावों पर लंबे मंथन के बाद राष्ट्रीय शिक्षा नीति को स्वीकृत किया गया है। आज देशभर में इसकी व्यापक चर्चा हो रही है। अलग–अलग क्षेत्र के लोग, अलग–अलग विचार–धाराओं के लोग, अपने विचार दे रहे हैं, राष्ट्रीय शिक्षा नीति को रिव्यू कर रहे हैं। ये एक स्वस्थ डिबेट है, ये जितनी ज्यादा होगी, उतना ही लाभ देश की शिक्षा व्यवस्था को मिलेगा। ये भी खुशी की बात है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति आने के बाद देश के किसी भी क्षेत्र से, किसी भी वर्ग से ये बात नहीं उठी कि इसमें किसी तरह का Bias है, या किसी एक ओर झुकी हुई है। ये एक Indicator भी है कि लोग बरसों से चले आ रहे एजुकेशन सिस्टम में जो बदलाव चाहते थे, वो उन्हें देखने को मिले हैं। (speech-pmindia.gov.in 07-08-2020)

प्रधानमंत्री ने इसको लागू करने के संदर्भ में उठ रहे कुछ सवालों तथा शंकाओं पर भी अपने भाषण में प्रमुख तौर पर विचार रखा और कहा कि कुछ लोगों के मन में ये सवाल आना स्वाभाविक है कि इतना बड़ा सुधार कागजों पर तो कर दिया गया, लेकिन इसे जमीन पर कैसे उतारा जाएगा। यानि अब सब की निगाहें इसके लागू करने की प्रक्रिया की तरफ हैं। इस चैलेंज को देखते हुए, व्यवस्थाओं को बनाने में जहाँ कहीं कुछ सुधार की आवश्यकता है, वो हमें सबको मिलकर ही करना है और करना ही है। आप सभी राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लागू करने की प्रक्रिया से सीधे तौर पर जुड़े हैं और इसलिए आपकी भूमिका बहुत ज्यादा अहम है। जहाँ तक राजनीतिक इच्छा शक्ति की बात है, मैं पूरी तरह कमिटेड हूँ, मैं पूरी तरह से आपके साथ हूँ। (7 अगस्त 2020 प्रधानमंत्री का राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर संबोधन के प्रमुख अंश)

प्रधानमंत्री द्वारा दिए गए इस पूरे वक्तव्य का विश्लेषण करें तो एक बात स्पष्ट तौर पर दिखाई देगी, सरकार तथा सरकार के सभी मंत्रालय देश की राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लागू करने के संदर्भ में बहुत स्पष्ट रूप से तैयारी कर रहे हैं। इनके पूरे संबोधन में सरकार ने अपनी तरफ से एक खुली चर्चा का आवाह्न किया तथा शिक्षा व्यवस्था से जुड़े हुए सभी स्टेकहोल्डर से सुझावों और आपत्तियों को आमंत्रित किया है। सरकार शिक्षा व्यवस्था की सभी कमजोरियों को एक साथ तथा बहुस्तरीय योजना के द्वारा समाधान करने की कार्य योजना पर कार्य कर रही है और इस समय देश की जिस प्रकार की जरूरत है और जो समस्याऐं उसके सामने खड़ी हुई है चाहे बेरोजगारी का सवाल हो, चाहे सामाजिक असमानता का सवाल हो, चाहे महिला शिक्षा का सवाल हो, दलित और पिछड़े वर्गों में निरक्षरता का सवाल हो, राजनीतिक जागरूकता का सवाल हो या देश के आर्थिक विकास का सवाल हो और कोरोना काल में घोषित आत्मनिर्भर भारत बनाने का महत्वपूर्ण उद्देश्य हो, इन सभी ज्वलंत सवालों और समस्याओं का समाधान नई शिक्षा नीति के द्वारा सरकार निकालना चाह रही है और एक महत्वपूर्ण तथा 20–30 सालों की योजना पर कार्य करने के प्रति वचनबद्ध दिख रही है।

2020–21 में प्रधानमंत्री द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों में दिए गए शिक्षा संबंधी संबोधनों तथा घोषणाओं का विश्लेषण–

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के संदर्भ में देश के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के द्वारा समय समय पर दिए गए वक्तव्य तथा भाषणों के माध्यम से हम यह तो स्पष्ट तौर पर समझ सकते हैं कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लागू करना सरकार का प्राथमिक एजेंडा बना हुआ है। सरकार के शिक्षा मंत्री के द्वारा दिए गए पिछले 2 सालों के वक्तव्य तथा भाषणों से भी हम यह बात समझ सकते हैं कि वर्तमान में शिक्षा मंत्रालय राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर पूरे देश में चर्चा, बहस तथा सुझावों के माध्यम से इसको लागू करने की योजना पर तेज गति से कार्य कर रहा है।

जिस प्रकार से शिक्षा नीति ने आमूल चूल परिवर्तन की व्यवस्था दस्तावेज में रखी है, स्कूल, कॉलेज तथा विश्वविद्यालय स्तर और उच्च शिक्षा के सभी क्षेत्रों में बदलाव की बात करने का फैसला

इस शिक्षा नीति में लिया गया है अब उसको लागू करने के लिए एकमात्र राजनीतिक इच्छाशक्ति की आवश्यकता रहेगी।

सरकार के सभी विभागों में यह बात स्पष्ट तौर पर दिखाई पड़ रही है कि देश के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक बदलाव के लिए नई शिक्षा नीति को लागू करना कितना आवश्यक है इसीलिए नई शिक्षा नीति के संदर्भ में शिक्षा मंत्रालय देश के कई मंत्रालयों से आपस में तालमेल बनाकर कार्य कर रहा है। महत्वपूर्ण विभागों में शिक्षा मंत्रालय, स्वास्थ्य मंत्रालय, सांस्कृतिक मंत्रालय, महिला और बाल विकास मंत्रालय, वित्त मंत्रालय, विदेश मंत्रालय, उद्योग मंत्रालय, नीति आयोग तथा देश के अन्य कई महत्वपूर्ण संस्थानों के साथ बातचीत, संवाद तथा तालमेल बनाकर कार्य को किया जा रहा है।

19 फरवरी 2021 प्रधानमंत्री मोदी जी ने विश्वभारती के दीक्षांत समारोह में नई शिक्षा नीति के संदर्भ में महत्वपूर्ण बात और सरकार की योजना को रखते हुए कहा कि गुरुदेव ने विश्वभारती में जो व्यवस्थाएँ विकसित कीं, जो पद्धतियाँ विकसित की, वो भारत की शिक्षा व्यवस्था को परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त करने, भारत को आधुनिक बनाने का एक माध्यम थीं। अब आज भारत में जो नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनी है, वो भी पुरानी बेड़ियों को तोड़ने के साथ ही, विद्यार्थियों को अपना सामर्थ्य दिखाने की पूरी आजादी देती है। ये शिक्षा नीति आपको अलग–अलग विषयों को पढ़ने की आजादी देती है। ये शिक्षा नीति, आपको अपनी भाषा में पढ़ने का विकल्प देती है। ये शिक्षा नीति उद्यमिता, स्व–रोजगार को भी बढ़ावा देती है। (pmindia.gov.in19–02–2021) ये शिक्षा नीति शोध तथा नवोन्मेष को बल देती है, बढ़ावा देती है। आत्मनिर्भर भारत के निर्माण में ये शिक्षा नीति भी एक अहम पड़ाव है। देश में एक मजबूत रिसर्च और इनोवेशन इकोसिस्टम बनाने के लिए भी सरकार लगातार काम कर रही है। हाल ही में सरकार ने देश और दुनिया की लाखों शोध पत्रिकाओं की फ्री एक्सेस अपने स्कॉलर्स को देने का फैसला किया है। इस साल बजट में भी रिसर्च के लिए नेशनल रिसर्च फाउंडेशन के माध्यम से आने वाले 5 साल में 50 हजार करोड़ रुपए खर्च करने का प्रस्ताव रखा है। (speech-pmindia.gov.in 19–02–2021)

भारत की आत्मनिर्भरता, देश की बेटियों के आत्मविश्वास के बिना संभव नहीं है। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में पहली बार जेडंर इंक्लूजन फंड की भी व्यवस्था की गई है। इस पॉलिसी में छठी क्लास से ही काष्ठकला से लेकर कोडिंग तक ऐसे अनेक स्किल सेट्स पढ़ाने की योजना है, जिन स्किल्स से लड़कियों को दूर रखा जाता था। शिक्षा नीति बनाते समय, बेटियों में ड्रॉप आउट रेट ज्यादा होने के कारणों को गंभीरता से स्टडी किया गया है। इसलिए, पढ़ाई में निरंतरता, डिग्री कोर्स में एंट्री और एग्जिट का ऑप्शन हो और हर साल का क्रेडिट मिले, इसकी एक नए प्रकार की व्यवस्था की गई। (Speech-Pmindia.gov.in 19–02–2021)

शिक्षा तथा इंडस्ट्री का संबंध– नई शिक्षा नीति में भारत की इंडस्ट्री को भी महत्वपूर्ण सहयोगी बनाने का एक विजन डॉक्यूमेंट तैयार किया गया है। आने वाले समय में देश का निजी क्षेत्र भी देश की उच्च शिक्षा तथा रिसर्च में योगदान करेगा। इस संबंध को समझने के लिए 17 फरवरी 2021 में प्रधानमंत्री के द्वारा दिए गए वक्तव्य से हम समझ सकते हैं कि सरकार निजी क्षेत्र को शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण पार्टनर बनाने जा रही है प्रधानमंत्री ने नई शिक्षा नीति तथा भारतीय इंडस्ट्री के आपसी सहयोग पर भी एक महत्वपूर्ण बात 17 फरवरी 2021 के नैस्कॉम के टेक्नोलॉजी और लीडरशिप फोरम पर कही तथा आपसी सहयोग के लिए नीति दस्तावेज पर सरकार की तरफ से किस प्रकार की उम्मीद इंडस्ट्री से की जा रही है उसका एक स्वरूप रखा,। शिक्षा और स्किल डेवलपमेंट को लेकर भी टैक–इंडस्ट्री को ऐसे समाधान देश को देने होंगे जो देश की बड़ी से बड़ी आबादी को सुलभ हों। आज देश में अटल टिंकरिंग लैब से लेकर अटल इंक्यूबेशन सेंटर तक, टेक्नॉलॉजी के लिए स्कूल–कॉलेज में ही माहौल बनाया जा रहा है। नई नेशनल एजुकेशन

पॉलिसी में शिक्षा के साथ–साथ स्किलिंग पर भी उतना ही जोर दिया गया है। ये प्रयास, इंडस्ट्री के सहयोग के बिना सफल नहीं हो सकते। एक बात मैं ये भी कहूँगा कि आप अपनी सीएसआर एक्टिविटीज के आउटकम पर फिर ध्यान दीजिए। अगर आपकी सीएसआर एक्टिविटीज का फोकस देश के पिछड़े क्षेत्रों के बच्चों पर होगा, आप उन्हें डिजिटल एजुकेशन से ज्यादा जोड़ेंगे, उनमें analytical thinking, lateral thinking डेवलप करेंगे, तो ये एक बहुत बड़ा गेम चेंजर होगा। सरकार अपनी तरफ से प्रयास कर रही है, लेकिन इसमें आपका साथ मिलेगा, तो बात कहाँ से कहाँ जा सकती है।(pmindia.gov.in 17'02-2021 speech)

केंद्रीय शिक्षा मंत्री के द्वारा किए गए कार्यों का विश्लेषण–

शिक्षा नीति पर विचार विमर्श करने के लिए सरकार विभिन्न प्लेटफार्म पर चर्चाओं का आयोजन तथा भागीदारी कर रही है। इसी भागीदारी के तहत 'न्यू एजुकेशन पॉलिसी 2020– एनईपी आउटरीच' विषय पर लंदन के नेहरू सेंटर ने नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया (शिक्षा मंत्रालय के तहत) के साथ मिलकर 18 जनवरी, 2021 को एक संवाद का आयोजन किया। जिसमे केंद्रीय शिक्षा मंत्री ने इस मौके पर कहा कि प्रधानमंत्री के नेतृत्व में राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 को एक भविष्यवादी सोच के साथ लागू किया गया है जिससे चुनौतियों को अवसरों में बदला गया है। यह भारत को अपनी पारंपरिक ज्ञान प्रणाली को बनाए रखने और विकसित करने के लिए बल देती है। साथ ही वैश्विक ज्ञान प्रणाली में भारत के लिए एक स्थान भी तैयार करेगी। शिक्षाविद् और यूके के पूर्व मिनिस्टर फॉर यूनिवर्सिटीज, साइंस रिसर्च एंड इनोवेशन श्री जो जॉनसन ने भारत की शिक्षा नीति की सराहना की। उनके अनुसार ये वो शिक्षा नीति है जो शिक्षा के प्रारंभिक वर्षों, शिक्षकों, सार्वभौमिक संख्याओं और साक्षरता आदि पर जोर देती है। उन्होंने यह भी उल्लेख किया कि इस नीति के बारे में एक रोमांचक तथ्य यह भी है कि इसमें मूल्यांकन के योगात्मक रूप की बजाए रचनात्मक रूप को ज्यादा तरजीह दी जाती है जहाँ विषयों के बारे में गहन सोच, विश्लेषण, वैचारिकता और स्पष्टता आदि को जाँचा जाता है।(PIB 19-01-2021 Education ministry statement)

बजट 2021 मे नई शिक्षा नीति के संदर्भ में घोषणाएँ––

1 फरवरी 2021 को बजट भाषण पर धन्यवाद व्यक्त करते हुए शिक्षा मंत्री ने कहा कि इस बार बजट में इंजीनियरिंग में डिप्लोमा तथा स्नातकोत्तर शिक्षा पूरी करने वाले छात्रों के लिए पढ़ाई पूरी करने के बाद प्रशिक्षण की व्यवस्था करने के लिए राष्ट्रीय अप्रेंटिसशिप प्रशिक्षण योजना के बजटीय प्रावधान को 175 करोड़ रुपए से बढ़ाकर 500 करोड़ रुपए कर दिया गया है। इस बार बजट में भारतीय भाषा विश्वविद्यालय और अनुवाद संस्थान खोलने, भारतीय ज्ञान प्रणाली, अकादमिक बैंक ऑफ क्रेडिट, पीएम ई–विद्या तथा तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में बहु–विषयक शिक्षा और अनुसंधान कार्यों को बढ़ावा देने जैसी पहल की गई है जिसे सक्षम अधिकारी की स्वीकृति के बाद नई शिक्षा नीति की सिफारिशों के अनुरूप लागू किया जाएगा।(PIB 1feb 2021 education ministry Statement)

बजट में की गई घोषणाएँ : उच्च शिक्षा के लिए एक शीर्ष निकाय के तौर पर उच्चतर शिक्षा आयोग की स्थापना जिसमें प्रमाणन, मानक तय किए जाने, नियमन और वित्त पोषण की व्यवस्था होगी। आयोग के गठन के लिए इस साल विधेयक लाया जाएगा। नौ ऐसे शहरों में जहाँ भारत सरकार द्वारा समर्थित संस्थान हैं जैसे कि हैदराबाद आदि उनकी आंतरिक स्वायत्तता को बरकरार रखते हुए बेहतर तालमेल के लिए एक तंत्र विकसित किया जाएगा। लेह में एक नया केंद्रीय विश्वविद्यालय खोला जाएगा। (PIB education ministry statement 1Feb 2021)

अंत में महत्वपूर्ण सवाल यह है नई संस्था का निर्माण शिक्षा व्यवस्था को चलाने के लिए किया तो जा रहा है लेकिन पुरानी संस्थाओं के अनुभव तथा फेल होने के कारणों का विश्लेषण करने की भी आवश्यकता है इस संदर्भ में आम

सहमति सभी राजनैतिक दलों में समय–समय पर रही है कि जो वर्तमान में यूजीसी तथा अन्य नियमित संस्थाएँ कार्य कर रही है वह अपने कार्य को करने में विफल हुई हैं। इन्हीं सब पक्षों को देखते हुए एक नई संस्था की कल्पना की गई है, ऐसे समय में हम यह महत्वपूर्ण बात भी करेंगे कि संस्थाएँ फेल नहीं हो रही हैं,संस्थाओं में जिस प्रकार के गैर शिक्षक विद तथा प्रशासनिक अधिकारियों को सरकारों के द्वारा समय–समय पर नियुक्त किया जाता है उनसे शिक्षा और संस्थाओं को भारी नुकसान होता रहा है। इसीलिए सरकार को इन संस्थाओं में नियुक्त व्यक्तियों के संदर्भ में भी चर्चा करनी होगी। इन शिक्षण संस्थानों को प्रशासनिक तरीके से चलाने की मानसिकता से बाहर निकलना होगा, सरकारों को इन संस्थाओं को शिक्षा, ज्ञान तथा रिसर्च के संबंध में फैसले लेने वाले व्यक्तियों के साथ तालमेल बनाकर ही संस्था को चलाना होगा। भारत के शिक्षण संस्थानों की वर्तमान में यही सबसे बड़ी समस्या है। शिक्षा व्यवस्था को एक प्रशासनिक कार्य समझकर उनको प्रशासनिक दृष्टिकोण के नजरिए से देखकर प्रशासनिक अधिकारियों के द्वारा ही किया जाता है। इसीलिए सरकार द्वारा इस दस्तावेज में किस प्रकार के व्यक्ति को नियुक्त किया जाएगा और किस प्रकार के व्यक्तियों को शिक्षा व्यवस्था से बिल्कुल दूर रखा जाएगा, इसकी व्याख्या लागू करने वाली प्रणाली के समय में करना होगा। हम कई बार यह देख चुके हैं भारत के रिटायर्ड आर्मी पर्सन या अधिकारी को विश्वविद्यालयों में उपकुलपति नियुक्त कर दिया गया,। नये नामकरण के साथ–साथ मंत्रालय की व्यवस्थाओं में भी शिक्षाविदों को प्रमुख पदों पर आगे लाना होगा जिससे कि शिक्षा के पक्ष में फैसले लिए जा सके। उदाहरण के तौर पर सीबीएसई , यूनिवर्सिटी रजिस्ट्रार पद, मंत्रालयों में प्रशासनिक अधिकारियों की नियुक्ति से सरकार को बचना होगा या ऐसे अधिकारियों की सहायता लेनी चाहिए, जिन्होंने उच्च शिक्षा या बड़े संस्थानों से सर्विस में आने के बाद या उससे पहले उच्च शिक्षा की डिग्री हासिल की हो तथा समय–समय पर शिक्षा के क्षेत्र में योगदान किया हो।

सबसे ज्यादा चर्चाएँ इस पर भी हो रही हैं कि शिक्षा का निजीकरण और प्राइवेट क्षेत्रों को ज्यादा से ज्यादा इस नई नीति में मौका मिलने वाला है उस पर किस प्रकार से नियंत्रण किया जाएगा,। विदेशी यूनिवर्सिटी को जिस प्रकार से इसमें आने की अनुमति मिली है वह अनुमति भारत के विश्वविद्यालयों की कीमत पर नहीं मिलनी चाहिए। कोचिंग संस्थानों के दुष्प्रभाव पर भी नई शिक्षा नीति में चर्चा सरकारों को करनी चाहिए। लाखों छात्र कोचिंग संस्थानों के भरोसे अपने जीवन का उद्देश्य प्राप्त करने में लगे हुए है। भारत की शिक्षा व्यवस्था में इन कोचिंग संस्थानों के दुष्प्रभावों की चर्चा भी करनी होगी ताकि सभी लोग बराबरी के स्तर पर स्कूल और कॉलेज की शिक्षा को प्राप्त करके अपने जीवन के उद्देश्य को पूरा कर सकें, कोचिंग संस्थानों ने भारत में सामाजिक–आर्थिक भेदभाव को पैदा किया है। नई शिक्षा नीति 2020 के मूल सिद्धांतों को यदि समय से लागू कर दिया गया तो भारत ज्ञान के क्षेत्र में विश्व गुरु अपने आप को स्थापित कर पाएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 दस्तावेज, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार।

2. 1986 शिक्षा नीति दस्तावेज, शिक्षा विभाग भारत सरकार।

3. सुमन मिश्रा आर्टिकल, 07–07–2020 The Print, "ऑनलाइन शिक्षा के सामने कई चुनौतियाँ लेकिन नई शिक्षा नीति इसके समाधान के रास्ते खोल सकती है" द प्रिंट हिंदी ऑनलाइन न्यूज पोर्टल

4. दिनेश सिंह आर्टिकल द प्रिंट, अगस्त, 2020 "भारतीय विश्वविद्यालयों में सुधार लाने के लिए एनईपी की जरूरत नहीं लेकिन यूजीसी राह में बाधा बनी हुई है"

5. टी एन नायनन आर्टिकल, 1 अगस्त 2020 "अंग्रेजी आकांक्षाओं का प्रतीक है और एनईपी के बावजूद वह दो में से एक राजभाषा बनी रहेगी" द प्रिंट हिंदी, 1 अगस्त, 2020

6. शिक्षा मंत्रालय द्वारा जारी नई शिक्षा नीति दस्तावेज पर 7 अगस्त 2020 को प्रधानमंत्री के द्वारा दिया गया भाषण, 07–08–2020 PIB प्रेस रिलीज education ministry, govt. of India, Speech-pmindia.gov.in

7. प्रधानमंत्री भाषण 19–02–2021, विश्व भारती विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह के अवसर पर संबोधन, speech-pmindia.gov.in

8. 17–02–2021 प्रधानमंत्री का भाषण नैसकॉम का टेक्नोलॉजी और लीडरशिप फोरम, Speech- pmindia.gov.in

9. 22–01–2021 Pmindia.gov.in, तेजपुर विश्वविद्यालय के 18वें दीक्षांत समारोह में प्रधानमंत्री का संबोधन स्पीच,

10. शिक्षा मंत्री, भारत सरकार,लंदन नेहरू सेंटर नेशनल बुक ट्रस्ट, 18 जनवरी 2021 पीआईबी प्रेस वक्तव्य

11. केंद्रीय शिक्षा मंत्री का संसद में बयान शिक्षा बजट प्रावधान, 01–02–2021– PIB प्रेस वक्तव्य, शिक्षा विभाग, भारत सरकार।

– राजनीति विज्ञान विभाग, असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, जाकिर हुसैन कॉलेज इवनिंग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

❑❑❑

नई शिक्षा नीति में शिक्षा और भारतीय संस्कृति की सार्वभौमिक पहल

हेतराम

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के परिचय में यह लिखा गया है कि यह राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, इक्कीसवीं सदी की पहली शिक्षा नीति है जिसका लक्ष्य हमारे देश के विकास के लिए अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करना है। यह नीति भारत की परंपरा और सांस्कृतिक मूल्यों के आधार को बरकरार रखते हुए, 21वीं सदी की शिक्षा के लिए आकांक्षात्मक लक्ष्यों जिनमें एसडीजी 4 शामिल है, संयोजन में शिक्षा व्यवस्था उसके नियमन और गवर्नेंस सहित सभी पक्षों के सुधार और पुनर्गठन का प्रस्ताव रखती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रत्येक व्यक्ति में निहित रचनात्मक क्षमताओं के विकास पर जोर देती है। यह नीति इस सिद्धांत पर आधारित है कि शिक्षा से न केवल साक्षरता और संख्यात्म ज्ञान जैसी बुनियादी क्षमताओं का विकास होना चाहिए बल्कि नैतिक, सामाजिक और भावनात्मक स्तर पर भी व्यक्ति का विकास होना आवश्यक है। इस प्रसंग से स्पष्ट है कि नई शिक्षा नीति भारतीय मूल्य और भविष्योन्मुखी विचारधारा के साथ देश के छात्रों की नींव मजबूत करती है। क्योंकि एक मजबूत जीवंत सार्वजनिक शिक्षा ही सामुदायिक भागीदारी और न्यायिक मूल्य को बनाए रखने में सक्षम व सिद्ध होती है। वर्तमान शिक्षा नीति 10+2 स्कूली व्यवस्था जो 3 वर्ष से 18 वर्ष तक सभी बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा की बात करती है, वहीं नई शिक्षा नीति 5+3+3+4 की नई पहल की बात करती है जिन्हें निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया गया है।

(1) फाउंडेशन स्टेज
(2) प्रीपरेटरी स्टेज
(3) मिडल स्टेज
(4) सेकेंडरी स्टेज

1. फाउंडेशन स्टेज– नई शिक्षा नीति के अनुसार बालक 3 वर्ष की आयु पूर्ण करके आँगनबाड़ी में प्रवेश करेगा और बालक आँगनबाड़ी में अपनी मातृभाषा से जनित शैक्षणिक परिवेश में अपना अध्ययन करेगा। यह अध्ययन केवल किताब या फिर स्कूली वातावरण से परे खेल–खेल में शिक्षा की ओर इंगित करता है, जिसमें बालक को अपने घर जैसा वातावरण होने के साथ–साथ उन्हें आँगनबाड़ी केंद्रों पर बाल सुलभ सह शैक्षणिक क्रियाएँ करवाए जाने हेतु आँगनबाड़ियों को सुचारू और सुंदर रूप से बाल सुलभ चित्रपट द्वारा सुसज्जित करवाया जाएगा। आँगनबाड़ी में विभिन्न खेलों के शिक्षण कौशल के खिलौने पर्याप्त व्यवस्था के साथ उपलब्ध करवाए जाएँगे। जिसमें बालक अपने सहपाठी बालकों के साथ खेल–खेल में खिलौनों के माध्यम से अपनी मातृभाषा में संवाद करेंगे और खेल–खेल में शिक्षण को प्राप्त करेंगे। वहीं दूसरी ओर आँगनबाड़ियों को स्कूलों से भी जोड़ा जाएगा, जिससे बालकों को अनेक आयोजनों में स्कूल जाने के अवसर प्राप्त होंगे और वे स्कूलों

भाषा ISSN 0523-1418

की शिक्षण प्रणाली, शिक्षक व स्कूली छात्रों के अनुशासन को देखकर सीखेंगे। आँगनबाड़ी में बालकों को स्वतंत्र रूप से खेल खेलने के साथ–साथ शिक्षण भी प्राप्त होगा। आँगनबाड़ी के 3 वर्ष पश्चात् बालकों को पहली कक्षा व दूसरी कक्षा में अध्ययन हेतु पाठ्यपुस्तक शब्दावली वाक्य और संख्यात्मक ज्ञान के अभ्यास के साथ–साथ सामाजिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक परिवेश जनित शिक्षण करवाया जाएगा। इसमें बालक अपने अध्ययन में एकाग्रता, एकता और कक्षा में बैठने का अनुशासन और स्कूली नियमों को सीखेगा। वहीं बालक का शिक्षण उसकी मातृभाषा से संबंधित होने के कारण अधिक से अधिक ज्ञानार्जन प्राप्त करने में सहायक सिद्ध होगा और बालक अपनी मातृभाषा की शब्दावली को ग्रहण करेगा। देश के त्योहारों, देश की भौगोलिक गतिविधियों, देश का पर्यावरण, मौसम इत्यादि का ज्ञान भी प्राप्त करेगा। इसके लिए तकनीकी संसाधनों के माध्यम से बालकों को डिस्कवरी या भौगोलिक स्तर पर वीडियो या फिल्में दिखाई जानी अपेक्षित है। क्योंकि विज्ञान या डिस्कवरी के वीडियो को बालक रुचि से देखते हैं और सीखते हैं, उसे आसानी से समझेंगे और बालकों में अध्ययन के प्रति एकाग्रता भी रहेगी। अतः नई शिक्षा नीति के लिए चुनौती भरा कदम है कि भारतवर्ष की आँगनबाड़ियों में वर्तमान परिदृश्य में नवीन तकनीकी संचार की व्यवस्था उपलब्ध नहीं है। हमें पहले अपने देश की आँगनबाड़ियों को नवीन तकनीक से सुसज्जित करना होगा और सभी आँगनबाड़ी कार्यकर्त्ता, शिक्षकों को नई शिक्षा नीति के नियमानुसार प्रशिक्षण देकर उन्हें नई शिक्षा नीति के लिए तैयार भी करना होगा।

2. प्रीपरेटरी स्टेज– प्रारंभिक कौशल जिसमें बालक कक्षा 3 से कक्षा 5 तक अध्ययन करेगा। इस नई शिक्षा नीति के प्रस्तुत ड्राफ्ट में उसके संबंध में लिखा गया है – "प्रीपरेटरी स्टेज 3 वर्ष की होगी जो फाउंडेशन स्टेज की खेलकूद और गतिविधि आधारित शिक्षण की शास्त्रीय शैली से आगे बढ़ेगी और इसमें कुछ हल्के–फुल्के पाठ्यक्रम आधारित शिक्षण को भी शामिल किया जाएगा और इस प्रकार ज्यादा औपचारिक लेकिन संवादात्मक कक्षा शैली के जरिए अध्ययन अध्यापन को आगे बढ़ाया जाएगा जिसमें पढ़ने, लिखने, बोलने, शारीरिक शिक्षा, कला, भाषा, विज्ञान और गणित भी शामिल होंगे।" अतः स्पष्ट है कि कक्षा 3 से कक्षा 5 तक के लिए शिक्षण को इस प्रकार प्रभावी बनाया जाएगा कि बालक भविष्य के लिए तैयार हो सकें। इन कक्षाओं में बालकों को विज्ञान, गणित और सामाजिक विज्ञान जैसे विषय नए रूप से पढ़ने को मिलेंगे। इन वर्षों में बालकों को मातृभाषा के साथ–साथ अपने राज्य की और केंद्र की भाषा से भी समझ और ज्ञान पैदा किया जाएगा जिसमें वह अपने राज्य की भाषा को और अपने केंद्र की भाषा को जाने। इस प्रकार उसका कक्षा 5 तक का शिक्षण पूर्ण होगा। आगामी कक्षा 6 से उसे वर्तमान शिक्षा पद्धति में त्रिभाषा सूत्र के अनुसार अध्ययन करना होगा। अतः बालक को अपनी मातृभाषा, अपने राज्य की भाषा से शिक्षण प्राप्त होने के साथ–साथ वह अब कक्षा 6 में प्रवेश करते समय अपनी मातृभाषा, केंद्र एवं राज्य की राज भाषा को समझने और पढ़ने में भी सक्षम होगा।

3. मिडिल स्टेज– मिडिल स्टेज में कक्षा 6 से कक्षा 8 तक शिक्षण करवाया जाएगा। जिसमें दूरदर्शन पर प्रसारित जी न्यूज की रिपोर्ट के अनुसार "कक्षा 6 से लेकर कक्षा 8 तक के छात्र शामिल होंगे इस फेज में पाठ्यक्रम के अनुसार पढ़ाया जाएगा।" अतः बच्चों की इस स्टेज में तय पाठ्यक्रम में एक्सपेरिमेंटल पढ़ाई पर अधिक ध्यान दिया जाएगा, जिसमें विज्ञान, गणित, आर्ट और सामाजिक विज्ञान में रट्टामार पद्धति की जगह क्रिटिकल थिंकिंग पर अधिक ध्यान दिया जाएगा। हम समझ सकते हैं कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली में बच्चों पर किताबों के बोझ के बारे में हमें समाचार पत्रों में भी पढ़ने को मिला, परंतु नई शिक्षा नीति 2020 में शिक्षण को क्रिटिकल बनाकर एक प्रायोगिक प्रशिक्षण करवाया जाएगा, जिसमें बच्चों का किताबी बोझ बहुत कम होगा और बच्चे अधिगम में रुचि लेकर सीखेंगे और विद्यालय से जुड़ेंगे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के ड्राफ्ट में प्रस्तुत रिपोर्ट में यह

स्पष्ट किया गया है कि "विषय विशेषज्ञों द्वारा विश्व की अमूर्त अवधारणाओं पर कार्य शुरू किया जाएगा और विद्यार्थियों को पर्याप्त शिक्षण प्रदान करवाया जाएगा। यह सर्वविदित है कि विश्व के अनेक देशों में अपने देश की राष्ट्रीय और राज्य भाषा को ही सर्वोपरि मानकर ही शिक्षण करवाया जाता है जबकि हमारे देश में आज अंग्रेजी का वर्चस्व स्थापित होता जा रहा है और हम अपनी मातृभाषा और अपनी शासकीय भाषा के प्रति इतना ध्यान नहीं दे पा रहे हैं। इस विषय को बड़ी गंभीरता से लेते हुए नई शिक्षा नीति में मातृभाषा अर्थात् हमारे देश की क्षेत्रीय भाषाएँ कन्नड, तमिल, तेलुगु, मलयालम, बांग्ला इत्यादि पर अधिक जोर दिया गया है ताकि प्रत्येक देश का युवा अपने देश की संस्कृति, अपने देश की मातृभाषा से जुड़ सके और वे अपने देश की विविधताओं को जानते हुए 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' को सिद्ध कर सके। इस पहल के अंतर्गत नई शिक्षा नीति 2020 में लिखित है "जैसा कि दुनियाभर में विकसित देशों में यह देखने को मिलता है कि अपनी भाषा संस्कृति और परंपराओं में शिक्षा होना कोई बाधा नहीं है बल्कि वास्तव में शैक्षिक, सामाजिक और तकनीकी प्रगति के लिए इसका बहुत बड़ा लाभ भी होता है।" चूँकि साहित्य संसार में भारतीय भाषाओं के विपुल व श्रेष्ठ साहित्य भंडार है इसे ध्यान में रखते हुए हमारे देश के नौनिहाल अपनी भाषा, देश का साहित्य सीखने, समझने में सक्षम हों इसलिए भारतीय साहित्यिक भाषाओं को अधिक महत्व दिया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ड्राफ्ट में आगे यह भी कहा गया है– "भारत की भाषाएँ दुनिया में सबसे समृद्ध, वैज्ञानिक सबसे सुंदर और सबसे अधिक अभिव्यंजित भाषाओं में से एक हैं जिनमें प्राचीन और आधुनिक साहित्य (गद्य और कविता दोनों) के विशाल भंडार हैं। इन भाषाओं में लिखी गई फिल्में, संगीत और साहित्य भारत की राष्ट्रीय पहचान और धरोहर हैं। संस्कृति और राष्ट्रीय एकीकरण की दृष्टि से सभी युवा भारतीयों को अपने देश की भाषाओं के विशाल और समृद्ध साहित्य भंडार के बारे में जागरूक होना चाहिए।" इस कथन से स्पष्ट है कि मिडिल स्टेज में बालकों को भाषा स्तर पर अपने देश की धरोहर भारतीय भाषाओं में अध्ययन करने की प्राथमिकता रहेगी। जबकि पूर्व या वर्तमान शिक्षा प्रणाली में अंग्रेजी हमारे देश में प्राथमिक भाषा या द्वितीय भाषा के स्तर पर स्थापित रही है, जबकि हमारी भारतीय भाषाओं की जननी 'संस्कृत' व अन्य भारतीय भाषाएँ हमेशा तृतीय स्थान पर ही रही हैं। नई शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं पर केंद्रित शिक्षण होने के साथ देश के युवा अपने देश की भाषा, अपने देश की संस्कृति, अपने देश के भौगोलिक परिवेश को जानने का अवसर प्राप्त करेंगे। भारतीय भाषाओं की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए नई शिक्षा नीति के ड्राफ्ट (4.18) में इसका पूर्ण विवेचन किया गया है। नई शिक्षा नीति के अनुसार "एक भारत श्रेष्ठ भारत" की सार्थकता सिद्ध होगी। अब नई शिक्षा नीति के अनुसार विद्यार्थी अपनी मातृभाषा को निकटता से समझते जानते हुए अपनी मातृभाषा की शब्दावली व व्याकरण का ज्ञान प्राप्त करेंगे। वहीं मिडिल स्टेज में प्रमुख भारतीय भाषाओं के बारे में शिक्षण प्राप्त करते हुए भारतीय भौगोलिक व सांस्कृतिक परिवेश को भाषा व साहित्य के माध्यम से जानेंगे जो वास्तव में द लैंग्वेज ऑफ इंडिया को जानने का अवसर, 'अनेकता में एकता' और 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' को सिद्ध करती है और इससे हम भारतीय गौरवान्वित भी होंगे। दूसरी ओर एक विश्व की ओर बढ़ते संसार और तकनीकी युग को देखते हुए शिक्षा नीति में विज्ञान व गणित पर ध्यान आकर्षित किया गया है और डाटा कम्प्यूटर में शिक्षण को भी प्रभावी बनाया गया है। नई शिक्षा नीति में मातृभाषा शिक्षण के संदर्भ में दिल्ली की साहित्यकार और हिंदी प्रवक्ता मीनाक्षी डबास 'मन' ने नई शिक्षा नीति पर एक परिचर्चा में कहा – 'नई शिक्षा नीति के अनुसार बालक आँगनबाड़ी में तीन वर्ष सहित कक्षा एक व दो के शिक्षण में मातृभाषा का शिक्षण करेगा, जिससे उसे अपनी क्षेत्रीय भाषा के प्रति लगाव और रुचि पैदा होगी और वह आँगनबाड़ी में नियमित आकर अनुशासन

भी सीखेगा और बालक अध्ययन करते हुए आगे बढ़ेगा। जब आँगनबाड़ी से निकलकर स्कूल में प्रवेश करेगा तो उसे विषयानुसार पाठ्यक्रमों की जानकारी प्राप्त होगी। यहाँ उसे पूर्ण स्कूली वातावरण मिलेगा। जिससे बालक पूर्वतः आँगनबाड़ी के माध्यम से परिचित होगा। अतः स्कूल आना बालकों के लिए एक रोचक स्थल होगा। नई शिक्षा नीति का प्रस्ताव देश की उन्नति और देश के भविष्य के बालकों के लिए वरदान साबित होगा। देश के भविष्य को 'द लैंग्वेज ऑफ इंडिया' जानने के अवसर प्राप्त होंगे।" वहीं दूसरी ओर नई शिक्षा नीति के तकनीकी संचार के शिक्षण के संदर्भ में दिल्ली, हिंदी के साहित्यकार व शिक्षक हरिराम भार्गव 'हिंदी जुड़वाँ' ने परिचर्चा में कहा – "मिडिल स्टेज पर छात्रों को तकनीकी संसार से जोड़ना और विश्व के बढ़ते तकनीकी कदम की होड़ भविष्य की आवश्यकता है। क्योंकि अब मनुष्य अपने कामकाज को अपने हाथों की जगह मशीनों से ही करेगा। इसके लिए तकनीकी व विज्ञान के इस युग में डाटा, साइंस, कम्प्यूटर की माँग बढ़ेगी। अतः नई शिक्षा नीति में मानविकी के विविध विषयों का शिक्षण दिया जाना भारतीय अर्थव्यवस्था को दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनाने के लिए भी स्वर्णिम अवसर है। अतः छात्रों के उन्नत भविष्य के लिए विद्यालय में अनिवार्य डेटा, कम्प्यूटर, विज्ञान व गणित के शिक्षण की शिक्षा भी करनी होगी, जो वर्तमान शिक्षण से प्रायोगिक शिक्षण पर अधिक केंद्रित होगी ताकि छात्र बढ़ते मशीनी युग में योग्य सिद्ध हो सके। बच्चों को किताबी ज्ञान की जगह व्यावहारिक ज्ञान का विपुल भंडार प्राप्त होगा।

4. सेकेंडरी स्टेज– सेकेंडरी स्टेज में कक्षा 9 से कक्षा 12 तक की पढ़ाई को दो चरणों में किए जाने का प्रावधान है, जिसमें विषय का गहन अध्ययन करवाया जाएगा और छात्रों को विषय को चुनने की आजादी होगी। कक्षा 9 से कक्षा 12 तक ट्यूशन पद्धति पर बच्चे अधिक ध्यान देते हैं अतः इस ट्यूशन पद्धति और रटंत विद्या को बिल्कुल खत्म करने के लिए इस नई शिक्षा नीति में शिक्षा प्रणाली में थोड़ा लचीलापन रखा गया है अतः शिक्षा नीति के अनुसार बोर्ड की परीक्षाएँ यथावत् रहेगी परंतु परीक्षा और प्रशिक्षण कौशलों में बहुविकल्पी प्रश्न और वर्णनात्मक दोनों प्रकार की परीक्षाएँ आयोजित की जाएगी। ताकि विद्यार्थी अपने शिक्षण के प्रति रुचि लें और अधिक से अधिक अपने विषय और भाषा स्तर को रुचि लेकर ग्रहण कर सकें। नई शिक्षा नीति के ड्राफ्ट (4.37) में कहा गया है – "कोई भी छात्र स्कूल की कक्षा में जाता है और अपनी ओर से एक बुनियादी प्रयास करता है वह आसानी से बिना किसी अतिरिक्त प्रयास के संबंधित विषय बोर्ड परीक्षा को पास कर सकेगा और अच्छा प्रदर्शन कर सकेगा।"

निष्कर्ष में स्पष्ट है कि देश को वैश्विक स्तर पर अपनी भाषा व संस्कृति की पहचान के साथ–साथ नई बड़ी अर्थव्यवस्था शिक्षा और तकनीकी संचार से ही मिल सकती है और नई शिक्षा नीति में इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए एनसीईआरटी के कार्यक्रम डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर नॉलेज शेयरिंग अर्थात् दीक्षा ऐप के माध्यम से शिक्षकों को, विद्यार्थियों को और आँगनबाड़ी कार्यकर्ताओं को समय–समय पर प्रशिक्षण दिया जाता रहेगा और इसके अतिरिक्त उन्हें समय–समय पर विभागीय गाइडलाइन भी दी जाती रहेगी। नई शिक्षा नीति के अनुसार आँगनबाड़ी में बच्चे को मातृभाषा से जोड़ना और मातृभाषा में शिक्षण बालकों को अपने परिवेश की संस्कृति से जोड़ता है। वहीं दूसरी और कक्षा 4 से कक्षा 6 तक बालक को भाषा, गणित, विज्ञान, कम्प्यूटर व डाटा जैसे शिक्षण करवाने पर उसे तकनीकी और आधुनिक युग में संचार की शिक्षा से लाभान्वित कर उसे विश्व स्तर पर योग्य बनाने की पहल है। क्योंकि आगे मशीनी युग है अतः इस तकनीकी और मशीनी युग में डाटा कम्प्यूटर विज्ञान प्रणाली का ज्ञान रखने वाले को ही उन्नत भविष्य मिलेगा और यही सोच बालकों को सक्षम व कर्मठ बनाएगी। भाषा के स्तर पर त्रिभाषा फार्मूला जो बच्चे को पढ़ने को मिलेंगे, उसमें वह आगे की पढ़ाई को जारी रखते हुए अपनी भारतीय भाषाओं को अधिक से अधिक ध्यान से पढ़ते हुए शिक्षण करवाए जाने

की पहल में अपने देश की भाषा, अपने देश की संस्कृति को सीखेंगे और जानेंगे। बालकों को विदेशी भाषा का भी चयन करने की छूट रहेगी और विद्यार्थी देश की भाषा के साथ विदेशी भाषा भी सीख सकेगा। इस प्रकार 'विविधता में एकता', 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' सहित 'द लेंग्वेज ऑफ इंडिया' को जानने का प्रयास किया गया है। और यह हमारे देश की भौगोलिक, सामाजिक और देश की भाषा का संज्ञान देश के उन्नत भविष्य के लिए एक मील का पत्थर साबित होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. नई शिक्षा नीति 2020, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट

2. द डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर फॉर नॉलेज शेयरिंग– दीक्षा ऐप के शैक्षणिक प्रशिक्षण कार्यक्रम, दिल्ली और सीबीएसई

3. डी एन ए–नई शिक्षा नीति का संपूर्ण विश्लेषण द्वारा जी न्यूज 29 जुलाई 2020

4. नीति कहाँ है नई शिक्षा नीति की?– एनडीटीवी

5. बदल जाएगा एजुकेशन सिस्टम हो जाएँगे कई बदलाव–आज तक

6. दीक्षा ऐप शैक्षणिक कार्यक्रम– नैशनल इनिशिएटिव फॉर स्कूल हेड्स एंड टीचर्स होलिस्टिक अडवांसमेंट (निष्ठा)

– हिंदी शिक्षक, राजकीय उत्तर आदर्श माध्यमिक विद्यालय, राम दरबार, करसान,
(शिक्षा विभाग केंद्र शासित प्रदेश), चंडीगढ़–160002

❑❑❑

नई शिक्षा नीति और मातृभाषा

डॉ. बी. अशोक

नई शिक्षा नीति स्कूली शिक्षा से उच्च शिक्षा तक भारतीय भाषाओं को शामिल करने के पक्ष में है। यह स्कूली शिक्षा में त्रिभाषा सूत्र पर बल देती है। यह पाँचवीं कक्षा तक मातृभाषा या स्थानीय भाषा को माध्यम बनाने को अहमियत देती है। त्रिभाषा नीति पर ज़ोर देकर इस नीति ने स्पष्ट किया है कि किसी पर भी कोई भी भाषा थोपी नहीं जाएगी।

भारत में इतिहास के विभिन्न कालखंडों में निषाद, किरात और द्राविड़ जाति के समुदाय द्वारा भूखंड के विशाल क्षेत्रों में फैले भिन्न भाषा मानसिकता वाले भारतीय जनमानस एवं जनसंस्कार को समाजिक रूप से विकसित करने में प्राचीन आर्य भाषा संस्कृत का अभिन्न योगदान रहा है। वह संस्कृति, दर्शन, साहित्य, धर्म और अंततः भारतीयता का प्रतीक बन गया। वैदिक काल से ही भारत में व्यापक रूप से द्विभाषिकता की मान्यता रही। जहाँ क्षेत्रीय व्यवहार, साहित्य या दर्शन की समस्या आई वहाँ संस्कृत को स्वीकार गया और हृदयगत भावों को वाणी देने की समस्या उभरी तो लोकभाषा सामने आई।

उत्तर वैदिक काल में भारत के दक्षिण में आर्य संस्कृति के फैलाव के साथ संस्कृत भी फैलती गई। इस सफर में संस्कृत ने अपने संपर्क में आनेवाली सभी आर्य और अनार्य भाषाओं को प्रभावित किया। इस प्रकार भारत की विभिन्न भाषाओं के बीच एकता का शिलान्यास संस्कृत ने किया और भारत व्यापक अर्थ में एकभाषिक क्षेत्र की संज्ञा का अधिकारी बन गया। हालाँकि यहाँ विभिन्न परिवार की भाषाएँ प्रचलित हैं, परंतु भारत के बाहरी क्षेत्रों के उन परिवारों की भाषा भिन्नता की दृष्टि में भारत में बोली जानेवाली भाषाएँ ज्यादा समान और ज्यादा निकट है। इस प्रकार शिक्षा द्वारा प्रदत्त एक केंद्रीय भाषा तथा मातृभाषा के रूप में स्वस्वीकृत विकेंद्रित क्षेत्रीय भाषाओं की द्विभाषिकता की परंपरा भारत में प्राचीन काल से ही विद्यमान है जो आज त्रिभाषा सूत्र के रूप में यहाँ मौजूद है।

484 पन्नों वाला एन ई पी 2019 का दस्तावेज स्कूली पूर्व, स्कूली एवं उच्च शिक्षा के साथ व्यावसायिक शिक्षा, वयस्क शिक्षा तथा शिक्षक प्रशिक्षण की विस्तृत योजना प्रस्तुत करता है। एन ई पी के प्रारूप के अनुसार आठ साल से कम उम्र के बच्चे भाषाएँ तेजी से सीखते हैं। भाषा बच्चे के संज्ञानात्मक विकास का अहम पहलू है। इसलिए कम आयु में ही कम से कम तीन भाषाएँ तेजी से सीखते हैं। इसलिए कम आयु में ही कम से कम तीन भाषाएँ सीखने का मौका मिलना चाहिए। यह प्राथमिक स्तर पर शिक्षा में बहुभाषिकता को बल देता है। बहुभाषिकता को समस्या के बजाय समाधान के रूप में नई शिक्षा नीति देखती है।

मातृभाषा किसी भी व्यक्ति की सामाजिक तथा भाषिक पहचान होती है। यह समस्त मानसिक व्यापारों की अभिव्यक्ति का तथा सामाजिक संगठनों

के विकास का मापदंड बनती है। राष्ट्रनिर्माण की प्रक्रिया में भी मातृभाषा शिक्षण की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसमें भाषा का परिमार्जन तथा मानकीकरण होता है। अपनी व्यवस्था और विशिष्टता के बलबूते एक भाषा दूसरी भाषा से पृथक अस्तित्व बनाती है। वह ध्वनि रूप, शब्द, पद, वाक्य तथा प्रोक्ति के सहारे संकल्पनाओं को अभिव्यक्ति देती है। संधि एवं समास की प्रक्रिया से अर्थ में अपनापन समाहित करती है। शब्द और वाक्य में संदर्भानुसार परिवर्तन लाकर विविध मनोभावों को प्रस्तुत करती है। भाषा की यह अस्थिरता और असमानता ही उसका स्वत्व है।

शिक्षा में मातृभाषा का यह भी महत्व है कि छात्र अपनी मातृभाषा और मातृसंस्कृति से जुड़कर शिक्षण के क्षेत्र में अग्रसर हो जाता है। स्थानीय भाषा में पढ़ाई आसान होगी ही, साथ–साथ कम प्रदेशों में बोली जाने वाली धूमिल भाषाओं को ऊर्जा भी मिलेगी। शिक्षा व्यवस्था के आगामी परिणामों पर यह सकारात्मक प्रभाव डालेगा। वैज्ञानिक मत भी इस पर जोर देता है कि प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा द्वारा प्रदत्त ज्ञानार्जन किसी भी अन्य भाषा की तुलना में ज्यादा प्रभावशाली है।

मातृभाषा से ही समस्त संस्कार और व्यवहार प्राप्त किया जाता है। यह भावों से भावों को जोड़ने की कड़ी का कार्य करती है। यह जीवन के प्रारंभिक वर्षों में संसार की वस्तुओं, क्रियाओं एवं घटनाओं को समझने का आधार बनती है। मातृभाषा में शिक्षण के अभाव में बच्चों की सृजनात्मकता पर आँच आ सकती है। क्योंकि यह अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। यह संस्कृति की संवाहिका है। व्यक्तित्व के रूपायन और विकास में इसकी भूमिका बड़ी है। वस्तुतः सहज, सरल और प्रभावी अभिव्यक्ति का आधार मातृभाषा ही है।

मातृभाषा में शिक्षार्जन करने वाले बच्चे स्थानीय साहित्य और संस्कार को भी सुचारू रूप से ग्रहण करने में सक्षम रहेंगे। गांधीजी ने एक बार रेखांकित किया था कि राष्ट्र के जो बालक अपनी मातृभाषा के बजाय दूसरी भाषा में शिक्षा ग्रहण करते हैं, वे आत्महत्या करते हैं। यह सारी मौलिकता का नाशक है। अतः बापू ने इसे राष्ट्रीय संकट माना। मातृभाषा से बलवती होने वाला मौलिक चिंतन साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा बौद्धिक संपदा की वृद्धि में सहारा देता है।

मातृभाषा शिक्षण की प्रक्रिया हरेक बालक के लिए लगभग समान होती है। क्योंकि मातृभाषा हर किसी की जिंदगी से जुड़ी रहने वाली है। भाषा सीखने में इच्छा का और स्मृति का बड़ा स्थान होता है। मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण करने वाले बालक का अनुभव संसार व्यापक होता है। वह पहले ही मातृभाषा की भाषिक संरचना से अवगत रहता है। इसलिए संप्रेषण के नए सोपानों को छूने में मातृभाषा में अध्ययन काफी हद तक सहायक है। हर प्रांत की कुछ न कुछ अनूठी विशेषता होती है– वहाँ का भोजन, वहाँ की संस्कृति, वहाँ की बोली, वहाँ का संगीत, वहाँ का नाच–गान आदि। उनका मान रखना चाहिए और उन धरोहरों को संभालकर रखना चाहिए। यही असली विविधता है, जिसका हमें आदर करना है और प्रोत्साहित करना है। भारत जैसे भाषाई विविधता वाले भूभाग में मातृभाषा में शिक्षार्जन के आरंभिक सोपानों को पार करने वाला छात्र अपने देश की सांस्कृतिक विभिन्नता को कालांतर में देश की भाषा के सहारे पहचानकर विश्वबंधुत्व की भावना को समझने में सक्षम बनेगा, यही नई शिक्षा नीति की बुनियादी संकल्पना है।

भारत उपमहाद्वीप के विस्तृत भू–भाग में 130 करोड़ जनता द्वारा बोली जाने वाली बोलियों, उपभाषाओं और भाषाओं के साथ उसके बोलने वाले जन समुदायों की विभिन्नता को नज़र में रखते हुए भारत को एक ओर भाषाई सामाजिक विकट विग्रह की संज्ञा दी जाती है तो दूसरी ओर भाषिक समूह एवं जनसमुदाय के मूल में प्रवृत्तमान एकात्मकता की दृष्टि से भारत को एक भाषिक क्षेत्र की संज्ञा भी दी जाती है। समूचे दक्षिण–पूर्व एशिया में यही एक उपमहाद्वीप है जो भाषिक संरचना की अभूतपूर्व विशेषताओं के बावजूद

अनेकता में एकता का अद्‌भुत चमत्कार प्रस्तुत करता है।

भाषा की अपनी जगह है। भाषा की अपनी महत्ता है। भाषा हमारी अभिव्यक्ति का माध्यम है। सबसे पहले मातृभाषाओं को स्थान मिले, फिर देशभाषा हिंदी को। वैश्वीकरण के इस दौर में तीसरी भाषा के रूप में एक विलायती भाषा भी समीचीन है। यह कहना अनुचित न होगा कि भाषा के सहारे देश को जोड़ने के तथा देश की संस्कृति को बुलंद करने के बापू के सपने को साकार होते देखने का समय आ चुका है। व्यक्तिगत एवं प्रांतगत संकीर्णता की दीवारों के उस पार देखने वाले देखें कि भाषा ही वह कड़ी है जिसके सामने विंध्य भी मस्तक झुकाएगा।

– सह आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, यूनिवर्सिटी कॉलिज, तिरुवनंतपुरम–695043

❑❑❑

हर शिक्षा नीति में शिक्षक की भूमिका

डॉ. शकुंतला कालरा

शिशु ईश्वर की सर्वोत्तम कृति है। उसके विकास के लिए घर में माता–पिता, विद्यालय में शिक्षक की संयुक्त भूमिका है। इनमें से एक की भी भूमिका विघटित होती है तो बालक का सामाजिक दृष्टि से विकास अवरुद्घ हो जाता है और व्यक्तित्व कुंठित। गुरु–शिष्य अथवा शिक्षक–छात्र का संबंध अत्यंत मधुर एवं स्नेहपूर्ण होता है। ज्ञान का विशाल सागर शिक्षक छात्रों के जीवन का कुशल निर्माता है। उस पर बच्चों के व्यक्तित्व–निर्माण की बहुत–बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी है। बालक अनगढ़ पत्थर की तरह है जिसमें सुंदर मूर्ति छिपी है, जिसे शिल्पी की आँख देख पाती है। वह उसे तराश कर सुंदर मूर्ति में बदल सकता है। क्योंकि मूर्ति पहले से ही पत्थर में मौजूद होती है शिल्पी तो बस उस फालतू पत्थर को, जिससे मूर्ति ढकी होती है, एक तरफ कर देता है और सुंदर मूर्ति प्रकट हो जाती है। माता–पिता, शिक्षक और समाज बालक को इसी प्रकार संवारकर खूबसूरत व्यक्तित्व प्रदान करते हैं। अतः उसका समग्र जीवन आदर्श की परिकल्पना की सीमा में आबद्घ है। गुरु और शिष्य में भावात्मक लगाव होता है। शिक्षा के क्षेत्र में हमारी गुरुकुल परंपरा अत्यंत महत्वपूर्ण थी। यह शिक्षा प्रकृति के सानिध्य में खुले आसमान के नीचे पेड़ों की छाया में बैठकर ग्रहण की जाती थी। यह परंपरा गुरु और शिष्य के प्रत्यक्ष संबंधों पर आधारित थी। उनके पारस्परिक मधुर संबंध शिक्षा को नीरस एवं बोझिल नहीं होने देते थे। गुरु का स्नेह और वात्सल्य तथा शिष्य का गुरु के प्रति श्रद्धा–विश्वास एक आदर्श शिक्षा को जन्म देता था। आज एक दूषित राजनीति दोनों ओर पलने लगी है। दलगत स्वार्थ, राजनीतिक लाभ से प्रेरित दोनों पक्षों में स्वस्थ दृष्टिकोण का अभाव खटकने लगा है। आज दोनों एक दूसरे से भयभीत हैं। विद्यार्थी भयभीत है कि उसे प्रैक्टिकल की परीक्षा में अध्यापक व्यक्तिगत कारणों से फेल कर सकता है और शिक्षक भयभीत है कि विद्यार्थी किसी भी गुटबाजी में पड़कर उन पर आक्रमण कर सकता है। ऐसा क्यों होता है? नमन योग्य अध्यापक पर विद्यार्थी की अश्रद्धा क्यों? इसके अनेक कारण हो सकते हैं। आइए इस पर विचार करें।

बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण में शिक्षालय की महत्वपूर्ण भूमिका है, क्योंकि शिक्षालय बच्चों के लिए घर का दूसरा प्रतिरूप है जिसमें बच्चा अपना आधे से अधिक दिन गुजारता है। विद्यार्थी–जीवन की दुखद या सुखद स्मृतियाँ जीवनपर्यंत अपना अस्तित्व रखती हैं उसके कटु–अनुभव उसका पूरा जीवन पीछा करते हैं, दूसरे अर्थ में वे व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं।

शिक्षक का व्यक्तित्व बालक पर सीधा प्रभाव डालता है। बच्चा उसे आदर्श रूप में ग्रहण करता है तथा उसके व्यवहार का अनुकरण करता है। बाल–मनोवैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि स्कूली बच्चों के लिए शिक्षक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। एम.सी. जोम्स का मानना है कि शिक्षक

का पहनावा सदा सलीकेदार होना चाहिए और उसे अपने व्यवहार का ध्यान रखना चाहिए। शिक्षक का व्यवहार बालकों के प्रति उदार, विनम्र अपनत्व से पूर्ण एवं स्नेहिल होना चाहिए, जिससे वह अपनी कठिनाइयों, समस्याओं को उनके सामने रख सके। गुरु–शिष्य का यह रागात्मक संबंध विद्यार्थी के व्यक्तित्व पर सापेक्षिक प्रभाव डालता है। अध्यापक के द्वारा समय और ध्यान पाने वाला छात्र सकारात्मक गुणों से युक्त होता है।

बच्चे गीली मिट्टी हैं, जिससे शिक्षक मनचाहे खिलौने गढ़ सकता है। उसका पेशा बहुत जिम्मेदारी का पेशा है। नई–नई प्रतिभाओं को रूप देना, उनका मार्गदर्शन करना उसकी महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। विद्यार्थियों के प्रति उसका दृष्टिकोण निष्पक्ष होना चाहिए, भेद–भाव की कोई दीवार नहीं होनी चाहिए। धर्म, जाति, प्रांत या भाषा का कोई भेद नहीं होना चाहिए। धार्मिक सहिष्णुता के अभाव में कोई भी शिक्षक स्वयं को राष्ट्र की सेवा में समर्पित नहीं कर सकता।

एक अच्छे शिक्षक का गुण है बिना किसी भेदभाव के अपनी अवलोकन शक्ति के आधार पर छात्र की व्यक्तिगत क्षमता, रुचि और योग्यता को पहचान कर उसे सही दिशा प्रदान करना। जब शिक्षक का व्यवहार पक्षपातपूर्ण होता है यानी एक के प्रति नरम और दूसरे के प्रति कठोर तब इससे बच्चों को बहुत मानसिक तकलीफ होती है। प्रायः यह देखा गया है कि जो बच्चे धनी परिवार से संबंधित होते हैं या जिन बच्चों के माता–पिता से उनके अच्छे संबंध होते हैं उनको वे अच्छे अंक प्रदान करते हैं। बुद्धिमान बच्चों को अधिक पसंद करते हैं। अध्यापक का यह नैतिक कर्तव्य है कि वे वैयक्तिक संबंध एवं सामाजिक–आर्थिक स्तर के आधार पर किसी प्रकार का पक्षपात न करें। अन्यथा छात्र अध्यापकों के प्रति श्रद्धा नहीं रखेंगे। एक अध्यापक एक बच्चे को पसंद और दूसरे को नापसंद करता है तो इससे बच्चे के मन में कुछ मानसिक ग्रंथियाँ बन जाती हैं। जिन्हें दूर न किया जाए तो वे पूरी जिंदगी बनी रहती हैं। ऐसे बच्चे अक्सर रोगग्रस्त हो जाते हैं और स्कूल और अध्यापक दोनों के प्रति शत्रुता का भाव रखने लगते हैं। अतः शिक्षक को चाहिए ऐसी स्थिति पैदा न होने दें।

कभी–कभी ऐसा भी होता है कि अध्यापक एक बात को एक ही बार समझाते हैं। कठिन विषय को भी जल्दी समझाकर आगे बढ़ना चाहते हैं। दुबारा पूछने पर बुरी तरह से डाँट देते हैं। ऐसा करके उनकी जिज्ञासावृत्ति को अनजाने में ही हमेशा के लिए दबा दिया जाता है। अतः एक शिक्षक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह धैर्यपूर्वक बच्चों की हर समस्या का समाधान करें। पूरी कक्षा के सामने किसी भी बच्चे की आलोचना न करें। उनकी हँसी उड़ाने या उन्हें अयोग्य, नालायक या मूर्ख कहने से बच्चों में हीन भावना, असुरक्षा की भावना जन्म लेने लगती है, परिणामतः उनका व्यक्तित्व विकसित होने के स्थान पर हमेशा के लिए कुंठित रह जाता है। अतः अध्यापन–तकनीक बच्चों की रुचि उसकी मानसिक, बौद्धिक योग्यता के अनुरूप हो। वह उबाऊ न हो अन्यथा बच्चे अध्यापक के साथ–साथ उस विषय को भी नापसंद करने लगते हैं।

बच्चों को उनके कार्यों के लिए सदा प्रोत्साहित करें। एक कुशल अध्यापक छात्रों की प्रशंसा कर उनका आत्मबल बढ़ाता है। पूरी कक्षा में उसके सहपाठियों के सामने की गई प्रशंसा उसके बौद्धिक स्वास्थ्य के लिए टॉनिक का काम करती है। ऐसा वातावरण बनाएँ कि उनकी विशिष्टताएँ उजागर हो सकें। 'राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली' में महर्षि अरविंद ने कहा था– "हर व्यक्ति में दिव्यता का अंश है, कुछ विशेषता है और शिक्षा का यही कार्य है, कि इसे खोज निकाला जाए, विकसित किया जाए और प्रयोग में लाया जाए।"

वास्तव में एक अच्छे शिक्षक का कर्तव्य है कि वह विद्यार्थी की प्रतिभा को पहचान कर उसके छिपे हुए गुणों को बाहर निकाले। सच्चे शिक्षक को एक मूर्तिकार की भाँति होना चाहिए जो अनगढ़ को तराश कर सुंदर मूर्ति का रूप देता है, वैसे ही एक शिक्षक भी सामान्य विद्यार्थी को असाधारण व्यक्तित्व प्रदान कर राष्ट्र का कल्याण कर सकता है। विद्यार्थियों के मन मस्तिष्क एवं

बुद्धि की बंद खिड़कियों को खोलकर उसे खुला वातावरण देकर उन्हें सही दिशा देने में शिक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका है।

बच्चों को भय से सदा मुक्त रखें। तानाशाह, रौब में रहने वाले कठोर शिक्षक बच्चों को पसंद नहीं। शिक्षक को भावुक, धैर्यशील एवं बच्चों की भावनाओं को समझने वाला होना चाहिए। ऐसे शिक्षकों के कड़े अनुशासन को भी बच्चे सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं। कुछ शिक्षक बच्चों की शिकायतें प्रिंसिपल या उनके अभिभावकों से कर देते हैं। देखने में आता है पी.टी.ए. मीटिंग में बच्चे डरे–डरे स्कूल जाते हैं। अध्यापक उन्हें डराते हैं कि वे उनकी शिकायत उनके माता–पिता से करेंगे और इधर माता–पिता धमकाते हैं कि वे उनकी शिकायत उनके अध्यापक से करेंगे। परिणामतः 'पी.टी.ए. मीटिंग' का दिन बच्चों को बहुत बड़ा हौवा लगता है। दोहरे डर से सिकुड़ा बच्चा तनावग्रस्त होकर आत्मविश्वास खोने लगता है। जो बच्चा हमेशा दूसरों से शासित होता है, अथवा जिसे हर समय दंड का भय बना रहता है, उसमें हीनता मनोग्रंथि विकसित हो सकती है। वह प्रतियोगिता की सारी भावना खोने लगता है। इसमें बच्चे के आत्मसम्मान की भावना को बहुत क्षति पहुँचती है। अतः शिक्षक बच्चों के प्रति सहानुभूति का दृष्टिकोण अपनाएँ। माता–पिता और शिक्षकों को चाहिए वे बच्चे की क्षमताओं, भावनाओं, रचनात्मक क्रियाओं के रहस्यों को भलीभाँति समझें और उन्हें सही दिशा दें। यह दोनों की संयुक्त जिम्मेदारी है कि वे उसके मार्ग की रुकावटों और मुश्किलों को दूर करके उसके विकास में सहायक वातावरण तैयार करें।

शिक्षण एक पुनीत कार्य है। शिक्षक का पहला और अंतिम कर्तव्य यही है कि वे बालकों के श्रेय के लिए निष्ठा से काम करें। शिक्षण का कार्य एक समर्पण है। इसे केवल नौकरी समझना भूल है। अपने विषय के प्रति सद्भाव हो, जिससे शिक्षक विषय के आंतरिक भाव को ग्रहण कर विद्यार्थियों तक पहुँचा सके। बालक और शिक्षक के हृदय धरातल एक होने चाहिए। यह बात बहुत महत्वपूर्ण है कि शिक्षक का मानसिक स्तर अधिक ऊँचा, ज्ञान–अनुभव अधिक पुष्ट और प्रगाढ़ है, किंतु उसे बालक के ज्ञान स्तर को ही ध्यान में रखकर पढ़ाना चाहिए। शिक्षक को चाहिए कठिन से कठिन विषय को सरलीकृत करके उन्हें समझाए। उदाहरण, दृष्टांत आदि देकर उसे रोचक बनाए। कंठस्थ करने के ऐसे सूत्र दे जो उन्हें जीवनपर्यंत न भूलें।

शिक्षा–मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि शिक्षण–पद्धति ऐसी हो कि जिसे सभी बच्चे चाहे वह सूक्ष्म बुद्धि के हों या सामान्य बुद्धि के आसानी से समझ सकें। उनका मानना है कि काफी कुछ तो अध्यापकों पर निर्भर करता है कि वे विषय के सभी पक्षों को कैसे समझाते और कैसे भ्रांतियाँ दूर करते हैं।

बच्चों के लिए शारीरिक दंड वर्जित होना चाहिए। आजकल स्कूलों में यह वर्जित है, किंतु फिर भी कभी–कभी शिक्षक बच्चों की पिटाई करके उनके स्वाभिमान को ठेस पहुँचाते हैं। होमवर्क न करके लाने पर, किताब, कॉपी न लाने पर, फीस आदि समय पर न लाने पर अथवा क्लास में बातचीत करने पर अथवा कोई शरारत करने पर बच्चे अक्सर दंडित किए जाते हैं। बेंच पर खड़ा रखना, क्लास के बाहर खड़ा रखना अथवा लंच टाइम में बाहर न जाने देना आदि आम बात है। ऐसे कई मामले सामने आते हैं जब शिक्षकों द्वारा पिटाई होने पर बालकों को शारीरिक क्षति भोगनी पड़ती है। जोर से चाँटा मारने पर उनका कान का पर्दा फट जाता है। कनपटी पर चोट लगने पर वे बेहोश तक हो जाते हैं। तन और मन से सुकुमार बच्चों पर अमानवीय अत्याचार न करें। अन्यथा, रोष, क्रोध, ग्लानि, आत्माभिमान के बीच दबकर बच्चों का व्यक्तित्व/कृतित्व और नेतृत्व तीनों का विकास रुक जायेगा। बच्चों की हित–चिंता शिक्षक का सबसे महत्वपूर्ण कार्यभार है। शिक्षक को यह जानना और अनुभव करना चाहिए कि उस पर हर छात्र के भाग्य का उत्तरदायित्व है, जिसे स्कूल शिक्षा दे रहा है।

उन्हें ऐसा दंड कदापि न दें, जिनसे उनकी प्रतिष्ठा को ठेस लगे अथवा उनके साथ अन्याय हो। हमारे परिचित एक परिवार में अच्छे प्रतिष्ठित

स्कूल में पढ़ने वाले उनके बेटे को विचित्र प्रकार से दंडित किया गया। मामूली सी बात को लेकर उसे प्रिंसिपल के कमरे के बाहर सारा दिन भूखे–प्यासे खड़ा रखा गया और बाकी पूरी क्लास के बच्चों को पिकनिक ले जाया गया। यह दंड कितना अमानवीय है। सारी क्लास से अलग रखकर उसका कौन सा उपकार किया? कैसा सुधार किया? क्या इससे बच्चा सुधर जायेगा? बच्चा तो उदास और दुखी हुआ ही, बाकी बच्चों का मन भी पिकनिक पर नहीं लगा। घर आकर बच्चे ने खाना भी नहीं खाया और सिसकते–सिसकते जो बताया वह मर्म को छू गया। अध्यापकों के प्रति अश्रद्धा का भाव स्थायी रूप से उसके मन में घर कर गया। पढ़ाई के प्रति अरुचि और हीन भावना का उदय हुआ सो अलग। अतः ऐसी कठोरता और निर्ममता न बरतें।

शिक्षकों को चाहिए बच्चों के व्यक्तित्व में बाधक न बनकर सहयोगी बनें। दूसरे बच्चों द्वारा की गई शिकायतों से शिक्षकों को उत्तेजित नहीं होना चाहिए और न ही उन्हें सत्य ही मान लेना चाहिए। दंड की अपेक्षा प्रेम, स्नेह, सद्भाव उसको सुधार की ओर ले जाएगा। अतः शिक्षक बच्चों के प्रति उदार बनें। उन्हें गलत शब्द न कहें न इस प्रकार के दंड देकर उन्हें हीनोन्मुख करें।

कुल मिलाकर शिक्षण कार्य साध्य और साधन दोनों ही है। राष्ट्र की नई पौध– इन बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण का कार्य शिक्षक ही करता है। अतः ऐसा वातावरण बनाएँ कि विद्यालय घर बन जाए। भय न हो, सौहार्द हो। स्वतंत्रता का वातावरण हो, जहाँ छात्र अपने को पिंजरे का पक्षी न माने। कोई भी कार्य बंधन न हो। शिक्षक के ज्ञान की ज्योति से उसका अंतर्बाह्य ज्योतिर्मान हो उठे। देश की युवा प्रतिभाओं को उभारने, उन्हें दिशा देने और सँवारने में शिक्षकों की महत्वपूर्ण भूमिका है। यह उनका एक राष्ट्रीय दायित्व है, जिन्हें उन्हें पूरी ईमानदारी के साथ पूरा करना है। यानी शिक्षक की जिम्मेदारी ज्ञान देने तक ही सीमित नहीं है, उसका उद्देश्य छात्र को मात्र डिग्री के योग्य बनाना नहीं वरन् एक अच्छा व्यक्ति भी बनाना है। सही तरीके से देखें तो शिक्षा का कार्य मूल्य–विकास करना होना चाहिए। वर्तमान समाज मूल्य–संकट के दौर से गुज़र रहा है। आज शिक्षकों को पुस्तकीय ज्ञान के साथ–साथ उनके जीवन–विकास' के प्रमुख आयाम को भी सोचना होगा।

यह तो थी शिक्षकों की जिम्मेदारी, जिसके वहन की उनसे अपेक्षा की जाती है। शिक्षकों के प्रति सरकार की भी जिम्मेदारी है। शिक्षक वास्तव में बच्चों के व्यक्तित्व और उसके भविष्य को आकार देते हैं। राष्ट्र का निर्माण करते हैं, किंतु शिक्षको के अधिकारों की स्थिति वैसी नहीं है, जैसी होनी चाहिए। शिक्षकों के लिए उच्चतर दर्जा उनके प्रति आदर और सम्मान को भी पुनर्जीवित करना होगा। ताकि शिक्षण व्यवसाय हेतु उन्हें प्रेरित किया जा सके। शिक्षा के क्षेत्र में हमारी गुरुकुल परंपरा अत्यन्त महत्वपूर्ण थी। उनके पारस्परिक मधुर संबंध यानी गुरु का स्नेह और वात्सल्य तथा शिष्य का गुरु के प्रति श्रद्धा–विश्वास एक आदर्श शिक्षा को वापस लाना होगा।

– डॉ. शकुंतला कालरा, (मैत्रेयी कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय) एन. डी. 57, पीतमपुरा, दिल्ली–110034

❑❑❑

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन की शिक्षा नीति

डॉ. राजरानी शर्मा

शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो जन्म से ही आरंभ हो जाती है और आजीवन चलती रहती है। वस्तुतः हमारे जीवन में शिक्षा उस तत्व के समान है जिसके बिना हम मनुष्य के रूप में अपने जीवन की कल्पना नहीं कर सकते। पुराने समय में शिक्षा मोक्ष–प्राप्ति का साधन मानी जाती थी आज शिक्षा के मायने बदल गए हैं। अब शिक्षा ज्ञान का अर्जन भी करती है तो आजीविका का साधन भी बन गई है।

लगभग दो सौ वर्षों की ब्रिटिश दासता के बाद पंद्रह अगस्त, 1947 को देश स्वतंत्र हुआ और 26 जनवरी, 1950 को भारतीय संविधान लागू हुआ। देश के संघीय ढाँचे में शिक्षा संबंधी उत्तरदायित्वों को केंद्र तथा राज्यों के मध्य विभाजित किया गया। स्वतंत्रता के पश्चात् केंद्र सरकार शिक्षा के ढाँचे में सुधार हेतु समय–समय पर विभिन्न आयोगों की स्थापना करती रही है–

1. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग–अध्यक्ष, डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, 4 नवंबर, 1948

2. माध्यमिक शिक्षा आयोग– डॉ. लक्ष्मी मुदालियर, 23 सितंबर, 1952

3. राष्ट्रीय शिक्षा आयोग– डॉ. डी. एस. कोठारी, 14 जुलाई, 1964

4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–संसद सदस्यों की समिति, 5 अप्रैल, 1967

5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–संसद सदस्यों की समिति, मई, 1986

6. बिना बोझ के शिक्षा – प्रो. यशपाल, मार्च, 1992

7. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा – प्रो. यशपाल, जुलाई 2004

8. नई शिक्षा नीति– के. कस्तूरीरंगन

स्वतंत्रता के पश्चात् देश के सामने अनेक समस्याएँ थी। इन अनेक समस्याओं में से एक समस्या शिक्षा प्रणाली के पुनर्गठन करने तथा शिक्षा के अवसरों का देश में विस्तार करने की भी थी। सभी बच्चों को अनिवार्य तथा निःशुल्क शिक्षा उपलब्ध करवाने, अनपढ़ प्रौढ़ों को साक्षर बनाने, माध्यमिक शिक्षा में गुणात्मक सुधार करने, विज्ञान–प्रौद्योगिकी शिक्षा का विस्तार करने, बालिकाओं, पिछड़े व अल्पसंख्यकों के शैक्षिक विकास को सुनिश्चित करने तथा मातृभाषा, प्रशिक्षक भाषा व राष्ट्रभाषा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करने जैसी अनेक चुनौतियाँ स्वतंत्र भारत सरकार के सामने थीं। इन्हीं सब समस्याओं के समाधान हेतु 4 नवंबर, 1948 को डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय आयोग का गठन किया गया। इस आयोग को शिक्षा से संबधित निम्न बिंदुओं पर विचार करके, संस्तुतियाँ देने का दायित्व सौंपा गया–

1. भारत में विश्वविद्यालय शिक्षा तथा अनुसंधान के उद्देश्य

2. विश्वविद्यालयों की वित्त व्यवस्था

3. विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम

भाषा ISSN 0523-1418

4. विश्वविद्यालयों के प्रवेश मानक।

5. विश्वविद्यालयों में शिक्षण का माध्यम।

6. भारतीय संस्कृति, इतिहास, साहित्य, भाषा, दर्शन और ललित कलाओं का उच्च अध्ययन।

7. अध्यापकों की योग्यता, सेवा–शर्त, वेतन तथा कार्य।

8. विद्यार्थियों के कल्याण के लिए योजनाएँ प्रस्तुत करना।

डॉ. राधाकृष्णन ने अपनी अध्यक्षता में गठित आयोग में उपर्युक्त बिंदुओं पर गंभीर अध्ययन किया और शिक्षा–प्रणाली में सुधार हेतु ठोस सुझाव दिए।

1. शिक्षा का उद्देश्य–आयोग ने 25 अगस्त, 1949 को अपनी रिपोर्ट दी जिसमें शिक्षा के निम्नलिखित मकसद बताए गए–

(क) लोकतंत्र की सफलता के लिए नागरिकों को शिक्षित करना

(ख) नागरिकों में आत्मविश्वास जाग्रत करना

(ग) अतीत की जानकारी के साथ–साथ वर्तमान की समझ रखना

(घ) रोजगार हेतु व्यावसायिक और पेशेवर प्रशिक्षण प्रदान करना

(ड़) ज्ञान के उपार्जन द्वारा सहज जीवन जीना

(च) निडरता, विवेक आदि मानव–मूल्यों का विकास करना

(छ) अपनी संस्कृति की गौरवशाली परंपरा से विद्यार्थियों को अवगत कराना

2. अध्यापकों की श्रेणियाँ, योग्यता, शर्तें आदि– इस श्रेणी के अंतर्गत आयोग ने निम्नलिखित सिफारिशें दीं–

(क) शिक्षकों को चार श्रेणियों में विभाजित किया जाना चाहिए–प्रोफेसर, रीडर, व्याख्याता और प्रशिक्षक

(ख) अध्यापकों की योग्यता के आधार पर ही एक श्रेणी से दूसरी श्रेणी में पदोन्नति दी जानी चाहिए

(ग) शिक्षकों की भविष्य निधि, आवास, कार्य के घंटे और अवकाश के विषय में बताया जाए–

–सप्ताह में शिक्षण कार्य 18 घंटे होना चाहिए

–सेवानिवृत्ति की आयु 60 से बढ़ाकर 64 वर्ष करने को कहा

–शिक्षकों को आगे अध्ययन करने के लिए एक बार में एक वर्ष और संपूर्ण सेवा काल में तीन वर्ष का अध्ययन अवकाश मिलना चाहिए

3. विश्वविद्यालयों के प्रवेश मानक–इस श्रेणी के अंतर्गत आयोग की संस्तुतियाँ निम्नलिखित हैं–

(क) विश्वविद्यालयों में 3000 से अधिक और उससे संबंधित महाविद्यालयों में विद्यार्थियों की संख्या 1500 से अधिक नहीं होनी चाहिए

(ख) बारहवीं तक शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों को ही विश्वविद्यालयों या महाविद्यालयों में प्रवेश दिया जाना चाहिए

(ग) अधिकाधिक विद्यार्थियों तक शिक्षा पहुँचाने के लिए महाविद्यालयों में सांध्यकालीन कक्षाएँ लगानी चाहिए

(घ) आयोग ने प्रथम श्रेणी के अंको के लिए न्यूनतम प्राप्तांक 70 प्रतिशत, द्वितीय श्रेणी के लिए 55 प्रतिशत और तृतीय श्रेणी के लिए 40 प्रतिशत अंक निर्धारित किए

(ड़) विश्वविद्यालयों में कार्य दिवसों की संख्या एक वर्ष में 180 दिन होनी चाहिए इसमें परीक्षा के दिनों को शामिल नहीं किया गया है

4. विश्वविद्यालयों की वित्त व्यवस्था–इस श्रेणी के अंतर्गत आयोग ने निम्नलिखित सिफारिशें की–

(क) विश्वविद्यालयों के वित्त और प्रशासन संबंधी विषय संविधान की समवर्ती सूची में रखे जाने चाहिए

(ख) केंद्र सरकार और राज्य सरकारों को परस्पर मिलकर जिम्मेदारी निभानी चाहिए

(ग) शिक्षा से संबधित कानून बनाने का कार्य केंद्र सरकार का होगा और राज्य सरकारें उनको राज्य में लागू करेंगी

(घ) विश्वविद्यालयों में एकरूपता लाने और विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों को अनुदान प्रदान करने के लिए 'विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना की जानी चाहिए

5. विश्वविद्यालयों का शैक्षिक ढाँचा– इस श्रेणी के अंतर्गत कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिए गए–

(क) उच्च शिक्षा के तीन स्तर होने चाहिए– स्नातक (तीन वर्ष), स्नातकोत्तर (दो वर्ष), शोध (न्यूनतम दो वर्ष)

(ख) उच्च शिक्षा को विषय के आधार पर तीन श्रेणियों में बाँटा जाना चाहिए– कला, विज्ञान, व्यावसायिक और तकनीकी

(ग) विश्वविद्यालयों में कला, विज्ञान, व्यावसायिक और तकनीकी विषयों के शिक्षण हेतु अलग–अलग विभाग खोले जाने चाहिए

(घ) कृषि, वाणिज्य, इंजीनियरिंग, प्रौद्योगिकी और चिकित्सा के शिक्षण–प्रशिक्षण के लिए स्वतंत्र महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों की स्थापना की जानी चाहिए

(ड़) आयोग ने व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा को छह भागों में बाँटा– शिक्षक शिक्षा, कृषि शिक्षा, वाणिज्य शिक्षा, इंजीनियरिंग और तकनीकी शिक्षा, चिकित्सा शिक्षा और कानूनी शिक्षा

इस प्रकार विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग की सिफारिशों के आधार पर ही 'विश्वविद्यालय अनुदान आयोग' की स्थापना की गई। इस आयोग ने मुख्यतः विश्वविद्यालय स्तर की ही विभिन्न श्रेणियों में अनुशंसाएँ की हैं। प्राथमिक और माध्यमिक स्तर के शिक्षा–संबंधी सुधारों की चर्चा नहीं की गई है।

शिक्षा नीति संबंधी दृष्टिकोण को एक स्थान पर व्यक्त किया है–

"स्वराज्य मिलते ही ऐसा नहीं होगा कि सबके सिर तो सख्त हो जाएँ पर तकिया मुलायम हो जाए। किसी की आज्ञा से ही कवि–कल्पना को यथार्थ नहीं बनाया जा सकता। स्वराज्य की प्राप्ति तथा रक्षा के लिए सबसे पहली आवश्यकता एक अधिक न्याययुक्त सामाजिक व्यवस्था की है। हमें एक ऐसे सामाजिक भवन का निर्माण करना होगा जिसका मूल सत्य, स्वातंत्र्य एवं साम्य के सिद्धांतों में होगा। विश्वविद्यालय के सदस्य इस नए भवन के बनाने में कारीगर का काम भी करेंगे तथा अपेक्षित सामग्री भी स्वयं होंगे। यदि वे विश्वविद्यालय से निकलकर, ईमानदारी की भावना लेकर निर्द्वंद्व होकर, साहस तथा विवेक के साथ जीवन आरंभ करें तो वे भावी भारत के निर्माण में हमारे सहायक होंगे।"[1] स्पष्ट है कि राधाकृष्णन जी विश्वविद्यालयों में देश की ऐसी युवा पीढ़ी का निर्माण करना चाह रहे थे जो देश की सामाजिक व्यवस्था को दुरुस्त करते हुए देश को प्रगति के पथ पर अग्रसर करे।

शिक्षा के उद्देश्यों के विषय में भी राधाकृष्णन जी ने अपनी पुस्तकों में काफी कुछ लिखा है। शिक्षा प्राप्ति के सुनिश्चित उद्देश्य उनके मस्तिष्क में थे–

"इस समय मैं पाश्चात्य शिक्षा–व्यवस्था की सविस्तार व्याख्या करना नहीं चाहता, मुझे केवल यह बताना है कि वह शिक्षा किस ढंग की हो। दो मुख्य बातें, उस विषय में हमारे सामने आती हैं, एक तो लोकतांत्रिक पद्धति और दूसरी वैज्ञानिक भावना। विद्यालय का कर्तव्य केवल विद्वान तैयार करना ही नहीं है, उसे देश के लिए श्रेष्ठ नेता भी तैयार करना है।"[2]

निस्संदेह राधाकृष्णन जी एक दूरदृष्टा थे। विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने जाकिर हुसैन, मेघनाथ साहा तथा लक्ष्मण स्वामी मुदलियार सहित शैक्षिक विद्वानों की टोली का नेतृत्व किया जिसने भारत में 25 विश्वद्यिालयों का दौरा किया और एक रिपोर्ट तैयार की जो आज भी आधुनिक भारतीय शिक्षा के स्तंभों में से एक है। इस रिपोर्ट में उच्च शैक्षणिक सस्थाओं की समस्याओं तथा उनके स्तर को सुधारने के बेहतरीन सुझाव और प्रस्ताव दिए गए थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सर्वपल्ली राधाकृष्णन–अनुवाद विशंभरनाथ त्रिपाठी, अपर इंडिया पब्लिशिंग हाउस लिमिटेड, लखनऊ, पृष्ठ 65–66

2. वही पृष्ठ–1153. विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम

– एसोसिएट प्रोफ़ेसर, सत्यवती महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

❑❑❑

महान शिक्षा शास्त्री : डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन

डॉ. हरिसिंह पाल

प्रख्यात शिक्षाविद डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ऐसे विश्वस्तरीय दार्शनिक राजनेता थे जिन्होंने विश्व के समक्ष प्राचीन व समृद्ध भारतीय अध्यात्म, दर्शन और धर्म का प्रभावशाली विवेचन प्रस्तुत किया। 5 सितंबर 1888 को तमिलनाडु के तिरुबल्ली कस्बे में जन्मे, राधाकृष्णन ने दर्शनशास्त्र में स्नातकोत्तर की उपाधि ली। चेन्नई के प्रेसीडेंसी कॉलेज में दर्शनशास्त्र के प्राध्यापक के रूप में आपने अध्यापन कार्य शुरू किया। बाद में मैसुरु और कोलकाता में भी अपनी शैक्षिक सेवाएँ दी। डॉ. राधाकृष्णन ने बनारस हिंदू विश्वविद्यालय एवं आंध्र प्रदेश विश्वविद्यालय के कुलपति पद को भी सुशोभित किया। आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के मैनचेस्टर कॉलेज में हिंदू धर्म पर दिए गए उनके व्याख्यान 'द हिंदू व्यू आफ लाइफ' के नाम से प्रकाशित हुए और विश्वभर में चर्चित हुए। उन्होंने यूनेस्को जैसे अंतरराष्ट्रीय संगठन में भारत का प्रतिनिधित्व भी किया।

स्वाधीनता के पश्चात् 1948 में डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में 'विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग' का गठन किया गया। उन्होंने भारत के तत्कालीन सभी 25 विश्वविद्यालयों का दौरा करके, वहाँ के शिक्षकों और शिक्षार्थियों से विमर्श कर 1949 में जो रिपोर्ट प्रस्तुत की वह भारतीय उच्च शिक्षा का प्रकाश स्तंभ है। उन्होंने रिपोर्ट में कहा था– "शिक्षा को आध्यात्मिकता और सभ्यता एवं संस्कृति का पोषण करना चाहिए। शिक्षा से बौद्धिक अग्रदूत तथा दूरदर्शी नेताओं का निर्माण होना चाहिए।" उन्होंने विभिन्न धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन की आवश्यकता पर बल दिया। वह शिक्षा द्वारा उच्च भारतीय आदर्शों उदात्त भावनाओं और आध्यात्मिक प्रवृत्तियों का निर्माण चाहते थे।

डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता वाले विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने उच्च शिक्षा के ढाँचे में अनेक परिवर्तनों का सुझाव दिया। इनकी प्रमुख सिफारिशों में 12 वर्ष की स्कूली शिक्षा के बाद विश्वविद्यालय में नामांकन का प्रावधान जारी रखना, विभिन्न राज्यों द्वारा बड़े स्तर पर उपकरणों एवं सुप्रशिक्षित कर्मचारियों से परिपूर्ण इंटरमीडियेट कॉलेजों की स्थापना करना, 10 से 12 वर्ष तक की स्कूली शिक्षा के बाद छात्रों को व्यावसायिक शिक्षा की और आकर्षित करने हेतु प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना करना, शिक्षकों का वर्गीकरण (अनुदेशक, प्राध्यापक, रीडर और प्रोफेसर) के साथ इनके वेतन का निर्धारण आदि शामिल है। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन शिक्षा आयोग ने विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में शैक्षणिक और गैर शैक्षणिक कर्मचारियों की संख्या, इनकी योग्यता एवं इनका अनुपात, छात्रों की संख्या, पाठ्यक्रम, विशेष ट्यूटोरियल कक्षाएँ आदि के बारे में भी विस्तृत रूप से अध्ययन करके अनेक सिफारिशें प्रस्तुत कीं।

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के अध्यक्ष के रूप में डॉ. राधाकृष्णन ने स्वयं लिखा "यदि हम

इसी प्रकार केवल व्यावसायिक और औद्योगिक शिक्षा पर बल देकर 'आत्मा' का हनन करते गए तो अपने समाज में आसुरिक हलचल के द्वारा केवल राक्षस राज्य लाने में समर्थ हो सकेंगे।" उनका मानना था कि धर्म–प्राण भारत के लिए आध्यात्मिक खुराक आवश्यक है। उन्होंने इसीलिए विश्वविद्यालय स्तर पर धार्मिक शिक्षा का जो स्वरूप प्रस्तुत किया वह आध्यात्मिक है सांप्रदायिक नहीं। सभी शिक्षण संस्थाओं का प्रांरभ वह मौन चितंन से करने पर जोर देते थे। उनका सुझाव था कि प्रथम वर्ष में बुह कनफ्यूशियस, सुकरात, शंकर, रामानुज, माधव, मुहम्मद, कबीर, नानक, गांधी आदि की जीवनियाँ पढ़ाई जाएँ। यह सर्व–धर्म समभाव की ओर पहला कदम था।

विश्वविद्यालय के द्वितीय वर्ष में विश्व के धार्मिक ग्रंथों के उन भागों की पढ़ाने की सिफारिश की जो सार्वभौमिक हों सभी धर्मों में समान हों। यह सुझाव भी सर्व धर्म समभाव की दिशा में दूसरा कदम है। तीसरे वर्ष में धर्म दर्शन (Philosophy of Religion) की प्रमुख समस्याओं को पढ़ाए जाने का सुझाव दिया। इससे सभी धर्मों के बीच समन्वय का रास्ता भी साफ होता जाएगा। सबसे बड़ी बात यह कि यह शिक्षा छात्र–छात्राओं को अपराधी और अनुशासनहीन होने से रोकेगी।

भाषा संस्कारों की जननी होती है। अतः विदेशीभाषा का शिक्षा का माध्यम बनाने से छात्रों एवं शिक्षकों में विदेशी संस्कार घर कर लेते हैं। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए राधाकृष्णन आयोग ने स्पष्ट कहा– "उच्च शिक्षा के माध्यम के रूप में यथाशीघ्र अंग्रेजी के स्थान पर किसी भारतीय भाषा का प्रयोग प्रारंभ किया जाए।" इस तथ्य को और स्पष्ट करते हुए आयोग ने आगे लिखा– "उच्चशिक्षा का माध्यम प्रादेशिक भाषा हो, परंतु राष्ट्रभाषा को एक या अधिक विषयों की शिक्षा का माध्यम बनाया जा सकता है।" पुनः आयोग ने यह भी संकेत किया– संघीय भाषा के लिए नागरीलिपि का प्रयोग किया जाए। 'इससे पूर्व अंग्रेजी शासन काल में उच्चशिक्षा का माध्यम सदैव अंग्रेजी रही। इस दृष्टि से राधाकृष्णन आयोग का यह सुझाव क्रांतिकारी माना जा सकता है।

स्वतंत्र भारत में सबसे पहले विश्वविद्यालय शिक्षा के लिए विश्व प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन की अध्यक्षता में आयोग का गठन इस बात की ओर स्पष्ट संकेत था कि हमारी भारत सरकार को उच्चशिक्षा की सर्वाधिक चिंता थी। शिक्षा की गुणवत्ता बनाए रखने में अध्यापकों की भूमिका निर्णायक होती है। इसी को दृष्टिगत रखते हुए सुयोग्य अध्यापकों की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा था– "समाज में अध्यापक का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। वह एक केंद्र बिंदु है जहाँ से बौद्धिक परंपराएँ एवं तकनीकी कुशलताएँ एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को संचारित होती हैं अध्यापक सभ्यता के दीप को प्रज्वलित रखने में योगदान प्रदान करता है। वह केवल छात्र का ही मार्गदर्शन नहीं करता अपितु संपूर्ण राष्ट्र के भाग्य का भी निर्माण करता है। अतः अध्यापकों को समाज के प्रति अपने विशिट कर्तव्य को पहचानना चाहिए।"

एक सुदक्ष शिक्षक के रूप में डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन का अनुभव बहुत व्यापक था। इसीलिए उन्होंने अपनी अध्यक्षता वाले 'विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग' से अपने कार्य क्षेत्र की सीमाओं को लांघकर माध्यमिक शिक्षा के संबंध में भी ठोस अनुशंसाएँ करवाई। उन्होंने कहा था– "हमारी माध्यमिक शिक्षा हमारे शिक्षा ढाँचे की सबसे कमजोर कड़ी है और उसमें शीघ्र सुधार की आवश्यकता है।" भारत के लिए 10+2+3 शिक्षा संरचना इसी आयोग की मुख्य सिफारिश थी। उनके अन्य सुझावो में 10 के बजाय 12 वर्षो की माध्यमिक शिक्षा, इस स्तर पर सामान्य तथा विशिष्ट शिक्षा हेतु विभिन्न विषयों की व्यवस्था, अच्छी शिक्षक सुविधाओं की व्यवस्था तथा शिक्षकों की स्थितियों में यथावांछित सुधार प्रमुख थे।

एक विद्वान दार्शनिक के रूप में डॉ. राधाकृष्णन का मानना था कि मानवीय विकास में किसी प्रकार की बाधाएँ नहीं आनी चाहिए चाहे वह समाज के स्तर पर हो अथवा शिक्षा के स्तर पर। वह प्रत्येक व्यक्ति को अपने ढंग से विकसित होने के पक्ष में थे। उन्हें मानव की असीमित क्षमताओं के विकास पर पूरी आस्था थी। इसीलिए डॉ. राधाकृष्णन ने

अपनी अध्यक्षता वाले आयोग में इन्हीं बिंदुओं को दृष्टिगत रखते हुए शिक्षा में सुधार की अनुशंसाएँ की। राष्ट्रवाद के प्रबल समर्थक डॉ. राधाकृष्णन संकीर्ण राष्ट्रीयता के विरोधी थे। वह अंतरराष्ट्रवाद तथा विश्वबंधुत्व के बीच एक तादात्म्य स्थापित कर चलने के समर्थक थे। विश्वशांति की स्थापना के लिए उन्होने तत्काल प्रयास करने पर जोर दिया। इसके लिए डॉ. राधाकृष्णन ने तीन सिद्धांत बताए– जातिगत समानता, विश्वराष्ट्रमंडल और अंतरराष्ट्रीय पुलिस बल। वस्तुतः वह ऐसे पहले भारतीय शिक्षा शास्त्री थे, जिन्होंने आधुनिक शिक्षा को आधारभूत स्वरूप प्रदान किया। उनका जीवन दर्शन, विचारधारा एवं उनकी दूरदर्शिता संपूर्ण मानवजाति के लिए प्रेरणा स्रोत है।

स्वतंत्रता के समय भारत में विश्वविद्यालयी पठन–पाठन में शिक्षार्थियों के भावी जीवन के पथ–प्रदर्शन हेतु उचित व्यवस्था नहीं थी। इस ओर डॉ. राधाकृष्णन ने अपनी विविध पुस्तकों व्याख्यानों और संस्तुतियों द्वारा संकेत अभिव्यक्त भी किया था। उनका मत था कि उच्च शिक्षा द्वारा छात्रों में विश्व दृष्टि का प्रसार किया जाना चाहिए। वह संकीर्ण राजनीति द्वारा फैलाई जा रही सांप्रदायिकता के सख्त खिलाफ थे। उनका कहना था– "विश्वविद्यालय एक ज्ञानपीठ है, पूजन का केंद्र नहीं। इसका ध्येय ज्ञानोपार्जन है, संप्रदाय की स्थापना नहीं। विश्वविद्यालय से संबंधित होने के कारण यह हमारा विशेषाधिकार और गौरव है कि हम सत्य की खोज करे और इसके अन्वेषण में इस भय से हतोत्साहित न हों कि इसका परिणाम क्या होगा।" डॉ. राधाकृष्णन उच्चशिक्षा के माध्यम से व्यक्ति की अंतर्दृष्टि का विकास चाहते थे, जिससे व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में रचनात्मकता का उद्वेलन हो सके।

किसी भी देश के भविष्य की इमारत, शिक्षा की मजबूत नींव पर ही गढ़ी जा सकती है। जिस देश की शिक्षा व्यवस्था जितनी सुव्यवस्थित होगी, वह देश उतनी ही शीघ्रता से विकास के शीर्ष पर अपना परचम लहरा पाएगा। महान शिक्षाविद डॉ. राधाकृष्णन भारत को उन्नत देशों की श्रेणी में देखना चाहते थे। इसी इच्छा से उन्होंने भारत की उच्च शिक्षा को उन्नत बनाने पर विशेष बल दिया। वह देश के विश्वविद्यलायों को मात्र पुस्तकीय ज्ञान का संयंत्र नहीं बनाना चाहते थे, अपितु वैचारिक स्वतंत्रता, अध्यात्म एवं आत्म ज्ञान से युक्त सामाजिक कर्तव्यों एवं राष्ट्रहित का पाठ पढ़ाना भी मानते थे। भारत के उच्च शिक्षण संस्थान उनके लिए शिक्षा एवं संस्कृति के मंदिर थे, जहाँ शिक्षा का लक्ष्य समाज में सांस्कृतिक उत्थान हेतु छात्रों को मानवीय गुणों से संबद्ध करना है। डॉ. राधाकृष्णन ने स्वतंत्र भारत में विश्वविद्यालय की भूमिका को सर्वोपरि मानते हुए इसे व्यावहारिक ज्ञान, सहनशीलता व पवित्रता आदि गुणों से युक्त देश के युवाओं के चरित्र निर्माण में आवश्यक बताया था।

आजादी से पूर्व भारत में नारी शिक्षा के लिए कोई विशेष प्रयास नहीं किए गए थे। डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता वाले विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने इसी को लक्षित करते हुए अनुशंसा की थी– "शिक्षित स्त्रियों के बिना व्यक्ति शिक्षित नहीं हो सकते हैं। यदि सामान्य शिक्षा पुरुषों या स्त्रियों तक सीमित रखी जाती है तो स्त्रियों को भी शिक्षा प्राप्त करने का अवसर दिया जाना चाहिए तभी शिक्षा को दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित किया जा सकेगा।" आयोग ने विश्वविद्यालयी शिक्षा के संदर्भ में सामान्य शिक्षा के साथ–साथ स्त्रियों के लिए धर्म, कला, गृहविज्ञान तथा गृहकला शिक्षण पर विशेष बल दिया।

डॉ. राधाकृष्णन ने ग्रामीण जीवन से गरीबी हटाने और उच्च शिक्षा उपलब्ध कराने के उद्देश्य से शहरी भूमि से इतर ग्रामीण क्षेत्र में उच्च शिक्षा हेतु विश्वविद्यालय निर्माण की अनुशंसा की जिससे ग्रामीण अंचल के युवक–युवतियाँ अपने क्षेत्र विशेष के अनुकूल शिक्षार्जन में सक्षम हो सकें। उनका मंतव्य ग्रामीण विश्वविद्यालय या महाविद्यालय बनवाने का यह था कि ग्रामीण अंचल में रहने वाले भारतीय उच्च शिक्षा की लौ से वंचित न रह जाएँ। विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने इसीलिए ग्रामीण अंचलों में एक प्रमुख विश्वविद्यालय के अंतर्गत कई छोटे–छोटे महाविद्यालय स्थापित करने की अनुशंसा की थी। यह तथ्य उल्लेखनीय है कि

स्वंतत्र भारत में पहली बार ग्रामीण क्षेत्रों मे उच्च शिक्षा की प्रगति के लिए विश्वविद्यालय निर्माण की पहल की। इसके साथ ही आयोग ने ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के लिए पुस्तकालयों एवं प्रयोगशालाओं की सुविधा किसी एक ही स्थान पर उपलब्ध कराने का सुझाव दिया। डॉ. राधाकृष्णन ने आयोग के माध्यम से ग्रामीण महाविद्यालयों में छात्रों की संख्या 300 और विश्वदियालयों में 2500 तक निर्धारित की। इनके पाठ्यक्रम के लिए कृषि विज्ञान, समाजशास्त्र, भाषा, दर्शन साहित्य, विज्ञान एवं अर्थशास्त्र आदि विषयों को शामिल करने की अनुशंसा की। डॉ. राधाकृष्णन को उनकी प्रखर योग्यता एवं राष्ट्र को विकासोन्मुखी पथ पर अग्रसर करने की नीति व वैचारिक दृष्टिकोण के लिए 1967 में 'भारत रत्न' से सम्मानित किया गया।

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने अपने वृहद अध्ययन और अनुशीलन के आधार पर कर्म के सिद्धांत पर बल दिया। उनका मानना था कि मनुष्य का वर्तमान कर्म उसके भविष्य का निर्माण करते हैं। उनकी धार्मिक निष्ठा एवं मानवतावादी विचारों ने उन्हें इस बात की प्रेरणा दी कि वे सभी के लिए सामाजिक और धार्मिक तथा आर्थिक न्याय की वकालत करें। वह सामाजिक लोकतंत्र की स्थापना से संबंधित प्रयासों तथा आर्थिक सुविधाओं के समान वितरण की योजनाओं को, धार्मिक भावना की ही अभिव्यक्ति मानते थे। उनका विश्वास था कि यह विश्व परब्रह्म की शाश्वत सर्जनशीलता में निहित अगणित संभावनाओं में से ही एक का साक्षात्कार है, इसलिए उसमें जो कुछ हो रहा है, उसके मूल में देदीप्यमान आध्यात्मिक प्रयोजन विद्यमान है। विश्वब्रह्म ही स्वतंत्र शक्ति की अभिव्यक्ति है।

महान शिक्षा शास्त्री डॉ. राधाकृष्णन ने शिक्षक को राष्ट्रीय व सामाजिक परंपराओं का प्रतिनिधि बताया था तथा शिक्षण को व्यवसाय नहीं बल्कि समर्थक की भावना से जोड़ने पर बल दिया। उनका मानना था कि राष्ट्र की सर्वोत्तम मेधा शक्ति को ही शिक्षक होना चाहिए क्योंकि विद्यार्थियों को उत्तम नागरिक बनाने का कार्य शिक्षक ही करते हैं। उनकी मान्यता थी कि उच्च शिक्षक वही हो सकता है जो उत्तम चारित्रिक गुणों से युक्त हो और वह विद्यार्थियों को अपने व्यक्तित्व व कृतित्व से अनुप्राणित कर सके। उनका मानना था "जब तक हमारे पास ऐसे समर्पित व प्रतिबद्ध शिक्षक नहीं होंगे, जो शिक्षा को एक मिशन माने, तब तक हम अच्छी शैक्षिक व्यवस्था विकसित नहीं कर सकते।

1949 में डॉ. राधाकृष्णन सोवियत रूस में भारत के राजदूत बनाए गए। एक राजदूत के रूप में उनके पास गंभीर और महत्वपूर्ण दायित्व था। फिर भी उन्होंने ऑक्सफोर्ड में अध्यापन और अपना लेखन जारी रखा। उन्होंने दर्शन, संस्कृति शिक्षा और सामाजिक विषयों पर अनेक ग्रंथों की रचना की। अंग्रेजी तथा संस्कृत की असाधारण योग्यता के कारण एक ओर शिक्षित भारतीयों को अपनी समृद्ध दार्शनिक विरासत से परिचित कराने का कार्य किया, दूसरी ओर उनके ही प्रयास से पश्चिमी जगत ने भारतीय दर्शन को 'आंतरिक शांति' के रूप में स्वीकार किया।

सन् 1952 में डॉ. राधाकृष्णन को भारत का उपराष्ट्रपति निर्वाचित किया गया। निरंतर 10 वर्षो तक उपराष्ट्रपति पद तथा राज्यसभा के उत्तरदायित्व को पूर्ण करने के पश्चात् आपको 1962 में भारत का राष्ट्रपति बनाया गया। राष्ट्र की राजनीति में उच्चशिखर पर रहते हुए भी वह अध्ययन, अध्यापन और अद्वितीय लेखन का कार्य अनवरत रूप से करते रहे।

राष्ट्रपति पद पर आसीन होने के पश्चात् 5 सितंबर, 1962 को उनके जन्मदिन पर उनके मित्र और विद्यार्थी उन्हें बधाई देने पहुँचे और उनका जन्मदिन समारोह मनाने की अनुमति माँगी इस पर डॉ. राधाकृष्णन जी ने कहा– 'यदि आप लोग कुछ करना ही चाहते है तो इस दिन को शिक्षक दिवस के रूप में देशभर के शिक्षकों के कल्याण के लिए मनाइए।" तभी से 5 सितंबर को 'शिक्षक दिवस' के रूप में मनाया जाता है। यही नहीं उन्होंने शिमला स्थित 'राष्ट्रपति निवास' को 'उच्च अध्ययन संस्थान' के रूप में राष्ट्र को समर्पित कर दिया जो

आज भी उच्च अध्ययन के लिए भारत भर में विख्यात है।

राष्ट्रपति पद से सेवनिवृत्त होने के पश्चात् डॉ. राधाकृष्णन 1967 में चेन्नई आ गए तथा 17 अप्रैल, 1975 को उन्होंने अंतिम साँस ली। महर्षि दयानंद की भाँति डॉ. राधाकृष्णन ने भारतीय समाज को अंधविश्वासों व कुरीतियों से मुक्त कराने का प्रयास किया तथा शिक्षा को समाज सुधार का साधन बताया। एक महान शिक्षा शास्त्री और विद्वान दार्शनिक के रूप में डॉ. राधाकृष्णन सदैव स्मरण किए जाएँगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. संस्कार शिक्षाः डॉ. गार्गीशरण मिश्र 'मराल', कौंसिल फार टीचर एजूकेशन, जालंधर 2013

2. भारत में विद्यालय शिक्षाः डॉ. जयंती प्रसाद मिश्र, श्याम प्रकाशन, दिल्ली 1993

3. शिक्षा, शिक्षक और समाज, डॉ. रमेशचंद्र धनगर, पचौरी प्रकाशन, मथुरा, 2020

4. शिक्षा मित्र डॉ. महेश भार्गव (संपादक) आगरा, दिसंबर 2009

5. शैक्षिक उन्मेष, (अक्तूबर–दिसंबर 2019), केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा

– 684, इंद्रापार्क, नई दिल्ली–45

❑❑❑

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भारतीय भाषाओं की भूमिका

डॉ. संतोष खन्ना

वर्ष 2020 में देश में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति लाई गई है। इससे पहले श्री राजीव गांधी के प्रधानमंत्री काल में वर्ष 1986 में भारत में एक शिक्षा नीति लागू की गई थी। तब से लगभग 40 वर्षों से संसार और भारत में कई तरह के नए–नए परिवर्तन आए। इन वर्षों में विज्ञान के नाम कई उपलब्धियाँ दर्ज हुईं तो वैश्वीकरण, बाजारवाद और पूंजीवाद की आँधी का परचम लहराया। यहाँ तक कि सोवियत संघ का विघटन हुआ और समाजवादी देशों ने भी आर्थिक सुधारों को अपना कर आर्थिक प्रगति की बुलंदियाँ हासिल की। सूचना क्रांति ने तो जीवन की दिशा ही बदल कर रख दी। वाणिज्य–व्यापार का ढंग भी बदल गया। इस बीच भारत में एक और महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ। भारत एक युवा राष्ट्र बन गया अर्थात् अब भारत की 65 प्रतिशत जनसंख्या ऐसे युवाओं की है जो 35 वर्ष से कम आयु के हैं। इस नए भारत को और आगे ले जाने के लिए और युवाओं को शिक्षा और रोजगार के बेहतर अवसर उपलब्ध कराने के लिए इस शिक्षा नीति को लाया गया है।

स्वामी विवेकानंद ने शिक्षा के उद्देश्य के बारे में कहा है कि मनुष्य की अंतर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है। इस शिक्षा नीति के अनुसार यह महसूस किया गया है कि यदि हमें मनुष्य की अंतर्निहित पूर्णता को वस्तुतः बाहर लाना है तो उसके लिए उसे कम से कम आरंभिक शिक्षा उसकी मातृभाषा के माध्यम से ही दी जानी चाहिए। इस नई शिक्षा नीति में इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए भारतीय भाषाओं की भूमिका का उल्लेखनीय योगदान होगा।

भारत में शिक्षा के क्षेत्र में अनेक प्रकार की योजनाएँ चलाई जाती रही हैं और कई प्रकार के सुधार लाने का प्रयास किया जाता रहा है। भारत के संविधान निर्माताओं ने शिक्षा को संविधान के निर्माण के समय उसे मूल अधिकार के रूप में नहीं, बल्कि संविधान में उसे नीति निर्देशक तत्वों में शामिल किया था। उसके पीछे मंशा यह थी कि देश नया–नया आजाद हुआ है तो आरंभ में इतने वित्तीय साधन जुटाना संभव नहीं होगा, इसलिए शिक्षा को मूल अधिकारों में नहीं जोड़ा जा सकता था। यद्यपि नीति निर्देशक तत्वों को मूल अधिकारों की भाँति न्यायालयों के माध्यम से लागू नहीं किया जा सकता था फिर भी उन्हें शासन के लिए मूलभूत माना गया था। अनुच्छेद 45 में यह व्यवस्था की गई थी कि संविधान लागू होने के 10 वर्ष के भीतर 6 से 14 वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों के लिए निशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी।

समय के साथ–साथ स्थिति यह बनी कि शिक्षा संबंधी इस नीति निर्देशक तत्व को उच्चतम न्यायालय ने मौलिक अधिकार घोषित कर दिया जिसके लिए संसद ने भारत के संविधान में 86वाँ संशोधन कर उसमें एक नया अनुच्छेद 21ए जोड़ दिया। उसमें यह प्रावधान किया कि "राज्य 6 वर्ष

से 14 वर्ष तक की आयु वाले सभी बालकों के लिए निशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का ऐसी रीति से, जो राज्य विधि द्वारा आधारित करें, उपबंध करेगा।"

इस प्रकार शिक्षा के मौलिक अधिकार बन जाने पर उसे क्रियान्वित करने के लिए संसद ने शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 बनाया जिसके अंतर्गत प्रत्येक बालक को अच्छी शिक्षा प्राप्त करने का मौलिक अधिकार मिल गया। इस कानून में सबको गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने के साथ–साथ नैतिक शिक्षा की भी बात कही गई है। इस कानून को लागू करने के लिए यद्यपि अनेक नए स्कूल बनाए गए और उन्हें सुविधाएँ देने का प्रयास भी किया गया फिर भी वंचित वर्गों के अनेक ऐसे बच्चे रह गए हैं जिन तक शिक्षा का उजाला अभी तक नहीं पहुँच सका है। इसलिए जब भारत सरकार ने वर्ष 2020 में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनाई उसका एक प्रमुख उद्देश्य यह रखा कि वर्ष 2030 तक वंचित वर्गों के सभी बच्चों के लिए शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भारतीय भाषाओं की भूमिका के महत्व को पहली बार स्वीकार किया गया है। ऐसा नहीं है कि देश में पहली बार शिक्षा नीति बनाई गई हो। इससे भी पहले वर्ष 1968 में कोठारी आयोग के नेतृत्व में दी गई सिफारिशों के आधार पर प्रथम शिक्षा नीति बनी थी जिसमें शिक्षा को राष्ट्रीय महत्व का विषय घोषित कर 14 वर्ष तक के बच्चों को निशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का लक्ष्य रखा गया था। इसमें संस्कृत भाषा के शिक्षण को प्रोत्साहन देने की बात की गई थी क्योंकि संस्कृत को भारतीय संस्कृति का एक अनिवार्य अंग माना गया था। तत्पश्चात्, 1986 में पुनः एक शिक्षा नीति बनाई गई। इसके अंतर्गत 'ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड' आरंभ किया गया था। वर्ष 1992 में शिक्षा नीति में संशोधन किए गए थे। परंतु इस शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं को कोई महत्व नहीं दिया गया था।

ऐसा पहली बार हुआ कि इसरो के अध्यक्ष रहे डॉक्टर कस्तूरी रंगन की अध्यक्षता में बनी समिति ने इस नई शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाने की बात कही है। अगर ऐसा नहीं किया जाता तो नई शिक्षा नीति का उद्देश्य ही परास्त हो जाता क्योंकि किसी भी देश की शिक्षा में उस देश की भाषाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है परंतु भारत की शिक्षा व्यवस्था में भारत की भाषाओं की भूमिका हमेशा नगण्य ही रही है जिसका परिणाम यह हुआ है कि भारतीय मनीषा का जिस दिशा में विकास होना चाहिए था नहीं हो पाया। आज भारत में जो अध्ययन हो रहा है उसका लाभ समाज को नहीं मिल पा रहा है।

भाषाएँ संस्कृति की वाहक होती हैं। संस्कृति भाषा के हर तंतु, हर स्वर में समाई होती है। कहा जाता है कि शिक्षा में माध्यम का बहुत बड़ा महत्व होता है। देश में भारतीय संस्कृति उपेक्षित ही होती आ रही है और अब तो लोग बात–बात पर भारतीय संस्कृति का मजाक उड़ाते नजर आते हैं क्योंकि अधिकांश भारतीयों का ज्ञान प्राप्त करने का माध्यम अंग्रेजी ही रहा है। अतः हम अंग्रेजी माध्यम से चीजों को देखते आ रहे हैं। स्वाभाविक ही है अंग्रेजी भाषा के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करने वाले लोगों का विज़न अथवा दूरदृष्टि भारतीयता से ओतप्रोत न होकर पश्चिमी सभ्यता के आईने में देखती है। यह भी कारण है कि बेशक हमने अंग्रेजों से आजादी हासिल कर ली है परंतु हम अंग्रेजियत से मुक्त नहीं हो सके हैं, हम मानसिक गुलामी से मुक्त नहीं हो सके हैं। जब तक हम अपनी भारतीय भाषाओं के माध्यम से अध्ययन नहीं करेंगे, हम वस्तुस्थिति को नहीं देखेंगे तब तक हम भारतीय संस्कृति को नहीं समझ सकेंगे, अपने देश की समस्याओं को उसके सही परिप्रेक्ष्य में नहीं समझ सकेंगे।

आइए, देखते हैं कि इस शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं की भूमिका को कैसे प्रस्तुत किया गया है? नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में आरंभिक स्तर की शिक्षा में भारतीय भाषाओं को माध्यम बनाने की व्यवस्था करने के साथ–साथ इसमें अनेक और नई व्यवस्थाएँ की गई हैं। सर्वप्रथम, 1986 में लागू की गई 10+2+3 व्यवस्था को हटाकर उसके स्थान पर 5+3+3+4 व्यवस्था लागू की जाएगी। इसमें पाँच का मतलब है 3 साल प्री स्कूल के और

कक्षा एक और कक्षा दो। उसके बाद तीन का मतलब है कक्षा 3, 4 और 5। अगले 3 का अर्थ है कक्षा 6, 7 और 8 और अंतिम चार का अर्थ है कक्षा 9, 10, 11 और 12। पहली बार 3 वर्ष से 5 वर्ष तक के बच्चों की शिक्षा और पोषण की व्यवस्था की गई है जिसके अंतर्गत 3 वर्ष से 5 वर्ष के बच्चों को आँगनबाड़ी/बाल वाटिका/प्री स्कूल के माध्यम से निशुल्क सुरक्षित एक गुणवत्तापूर्ण प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी। उसके पश्चात्, 6 से 8 वर्ष के बच्चों की प्राथमिक विद्यालयों में कक्षा एक तथा कक्षा दो में शिक्षा प्रदान की जाएगी। आरंभ से लेकर कक्षा 5 तक शिक्षा का माध्यम मातृभाषा/स्थानीय भाषा अपनाने पर बल दिया गया है। साथ ही शिक्षा नीति में कक्षा 8 तक और उसके पश्चात् शिक्षा का माध्यम बनाने की बात कही गई है। यही नहीं , स्कूली शिक्षा और उच्च शिक्षा के छात्रों के लिए संस्कृत तथा अन्य भारतीय भाषाओं का विकल्प भी उपलब्ध होगा किंतु किसी भी छात्र पर भाषा के चयन की बाध्यता नहीं होगी।

भारतीय भाषाओं के संबंध में देश में जैसी मानसिकता चल रही है अथवा राजनैतिक बाध्यताओं के कारण शायद 'यथासंभव' शब्द का प्रयोग मजबूरी रही होगी परंतु इस शब्दावली का सहारा लेकर तमाम संस्थान इस व्यवस्था से बच निकलने के रास्ते तलाश लेंगे जिससे इस क्षेत्र में यथास्थिति बने रहने की संभावनाएँ प्रबल रहेंगी। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में अनेक जरूरी और लाभकारी परिवर्तन किए गए हैं परंतु शिक्षा के माध्यम में परिवर्तन की व्यवस्था देश की बाल मनीषा के लिए वरदान सिद्ध हो सकती है क्योंकि भारतीय भाषाओं में शिक्षा देने का सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि इससे भारतीय प्रज्ञा में ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में मौलिकता का उन्मेष हो सकेगा, भारतीय संस्कृति और भारतीयता सुरक्षित होगी, जिससे राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ होगी जोकि समय की सबसे बड़ी माँग है। परंतु एक वेबीनार में देश के शिक्षा मंत्री ने कहा है कि "हिंदी ही नहीं, सभी भारतीय भाषाओं पर बल दिया जा रहा है। जो लोग मातृभाषा के प्रयोग से होने वाले लाभ पर संदेह व्यक्त कर रहे हैं, मैं उन्हें बताना चाहता हूँ कि विश्व में विकसित देशों ने अपनी मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा प्राप्त कर बड़ी उपलब्धियाँ अर्जित की हैं। हम अंग्रेजी भाषा के विरुद्ध नहीं हैं। हम भारतीय भाषाओं को सशक्त बनाना चाहते हैं।"

उधर केंद्रीय विद्यालयों की ओर से भी वर्तमान शिक्षा नीति के अंतर्गत अब कुछ विरोधी स्वर सुनाई देने लगे हैं। कहा जा रहा है कि केंद्रीय विद्यालयों में उन लोगों के बच्चे शिक्षा ग्रहण करते हैं जिनके अभिभावकों का अपनी नौकरी के कारण देशभर में स्थानांतरण होता रहता है। इन केंद्रीय विद्यालयों का वर्तमान में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही है। इस संबंध में केंद्रीय विद्यालयों के प्रभारी एक वरिष्ठ अधिकारी ने कहा की भाषाओं संबंधी यह सिफारिश बहुत बढ़िया है और अकादमिक दृष्टि से भी यह बहुत सही है किंतु दुर्भाग्य से हमारे देश में अच्छी चीजों को होने नहीं दिया जाता है। बच्चे घर में एक भाषा विशेष बोलते हैं परंतु जब वह स्कूल आते हैं तो उन पर अंग्रेजी थोप दी जाती है जिससे वह हमेशा उलझन में बने रहते हैं परंतु भारत की भाषाओं संबंधी स्थिति को देखते हुए यह सिफारिश व्यावहारिक नहीं लगती है। इस संबंध में भारत के शिक्षा मंत्री ने यह कहा कि इस शिक्षा नीति की अच्छी बात यह है कि राज्य अपने क्षेत्राधिकार में आने वाले स्कूलों में इसे कैसे लागू करेंगे इसका फैसला उन्हें स्वयं करना होगा। जहाँ तक स्कूलों का संबंध है भारत को शिखर पर ले जाने के लिए हम सबको साथ लेकर चलेंगे।

त्रिभाषा सूत्र

भारत में समाज के ताने–बाने को सशक्त बनाने तथा राष्ट्रीय एकता के हित में भारत की नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत त्रिभाषा सूत्र लागू करने का प्रावधान किया गया है। वैसे त्रिभाषा सूत्र की यह व्यवस्था पहली बार नहीं की गई है अपितु 1968 में पारित भाषा संबंधी संकल्प के अंतर्गत इस सूत्र को 1968 में बनी शिक्षा नीति में शामिल किया गया था। तत्पश्चात्, 1986 में जो शिक्षा नीति बनी उसमें भी इस व्यवस्था को लागू किया गया था। उसमें कहा गया था कि तीन

भाषाओं को पढ़ाने की व्यवस्था की जाएगी। यह भाषाएँ होंगी हिंदी, अंग्रेजी और एक अन्य भारतीय भाषा। हिंदी भाषी राज्यों में हिंदी और अंग्रेजी के साथ–साथ दक्षिण की एक भाषा पढ़ाई जाएगी, वहीं गैर– हिंदी राज्यों में हिंदी के साथ अंग्रेजी और वहाँ की क्षेत्रीय भाषा पढ़ाई जाएगी। तब भी तमिलनाडु में इस व्यवस्था का विरोध हुआ था और अब भी वहाँ नई शिक्षा नीति के तहत त्रिभाषा सूत्र का विरोध हो रहा है। उनका कहना है कि इस तरह हिंदी को पिछले दरवाजे से प्रवेश कराया जा रहा है। वहाँ अभी भी हिंदी नहीं पढ़ाई जाती, वहाँ केवल दो–भाषा सूत्र लागू है अंग्रेजी और तमिल। वैसे नई शिक्षा नीति में हिंदी का उल्लेख कहीं नहीं किया गया और साथ ही किसी भाषा को थोपने की तो बात ही नहीं की गई है। इस संबंध में वर्तमान नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में यह कहा गया है कि बदलते समय की आवश्यकताओं को सुनिश्चित करने, शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने, इनोवेशन और शोध को बढ़ावा तथा देश को ज्ञान की सुपर पावर बनाने के लिए नई शिक्षा नीति की जरूरत है जिसमें देश की आधुनिक भाषाओं को भी बढ़ावा देना आवश्यक है इसलिए इस शिक्षा नीति के अंतर्गत शिक्षा बच्चे की मातृभाषा के माध्यम से दी जाएगी। 2 से 8 वर्ष की आयु के बीच बच्चे भाषाएँ जल्दी सीख लेते हैं इसलिए उनका भाषाओं से परिचय जल्दी कराया जाएगा पहले मातृभाषा में उनकी शिक्षा प्रारंभ की जाएगी और तीसरी क्लास के बाद दो और भाषाएँ पढ़ाने की व्यवस्था की जाएगी। वे भाषाएँ कौन सी होंगी, इसका चयन बच्चे स्वयं करेंगे। छठी कक्षा में विज्ञान और गणित अंग्रेजी में भी पढ़ाना शुरू किया जाएगा। इसके साथ संस्कृत, पाली, ओड़िया, तमिल, तेलुगु जैसी क्लासिकल भाषाओं को 2 वर्ष के लिए पढ़ाने का विकल्प रखा गया है। छात्र इन में से कोई एक भाषा कक्षा 6 से 12 तक के बीच कभी भी चुन सकते हैं।

यदि भारतीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाया जाएगा तो उसके कई लाभ होंगे। पहला, बच्चों की स्वाभाविक प्रतिभा का विकास होगा, उनमें मौलिकता का गुण उभर कर सामने आएगा और साथ ही इस प्रकार हमारी भारतीय संस्कृति और भारतीयता के प्रति प्रतिबद्धता बढ़ेगी जिससे भारत में राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ होगी और उसके साथ देश की सुरक्षा और अखंडता भी सुनिश्चित की जा सकेगी। इन सब का एक और लाभ यह होगा कि भारतीय भाषाएँ देश की भिन्न–भिन्न प्रतियोगी तथा अन्य परीक्षाओं और शासन प्रशासन का माध्यम भी बन सकेंगी।

अब बात हिंदी की करते हैं। हिंदी भारत के संविधान में और राजभाषा अधिनियम, 1963 में संघ सरकार की राजभाषा है। भारत में हिंदी के दस राज्य तो हिंदी भाषा–भाषी हैं, इन राज्यों की राजभाषा भी हिंदी है। देश के हर राज्य में हिंदी भाषी हैं जिन्हें भाषा के माध्यम से शिक्षा दी जाती है।

बेशक संसद में कामकाज की हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाएँ हैं परंतु अब सच यह है कि वर्तमान में लगभग 70 से 80 प्रतिशत संसद सदस्य हिंदी में अपने भाषण देते हैं। अधिकांश इलेक्ट्रॉनिक मीडिया हिंदी का प्रयोग कर रहा है और राजनैतिक गलियारों में भी यह समझा जाता है कि अगर देश की मुख्य धारा की राजनीति का हिस्सा बनना है तो हिंदी सीखनी होगी। वैसे तमिलनाडु में हिंदी का राजनैतिक तौर से विरोध होता है परंतु दक्षिण भारतीयों में काफी लोग हिंदी पढ़ते लिखते हैं और कई लोग तो हिंदी में इतने पारंगत हैं कि दक्षिण भारतीयों भाषाओं में रचे जा रहे साहित्य का हिंदी में अनुवाद कर रहे हैं। इन सारे विरोध के बावजूद हिंदी आगे बढ़ रही है और विश्व पटल पर छा रही है और हिंदी भविष्य में अवश्य उच्च शिक्षा का माध्यम भी बनेगी।

– संतोष खन्ना, बी4/48 (ई) शालीमार बाग, दिल्ली–110088

❑❑❑

नई शिक्षा नीति में शिक्षक शिक्षा का विवेचन

डॉ. अनिल कुमार

शिक्षा नीति किसी भी समाज/राष्ट्र की आधारभूत आवश्यकता होती है, जिसमें उस राष्ट्र के अतीत का विश्लेषण, वर्तमान की आवश्यकता और भविष्य की संभावनाएँ समाहित रहती हैं। नई शिक्षा नीति में शिक्षक शिक्षा का विवेचन करने से पूर्व यहाँ 'शिक्षा' 'शिक्षक' और 'शिक्षा नीति' और 'नई शिक्षा नीति' पर दृष्टिपात करना आवश्यक है। शिक्षा जीवन पर्यंत चलने वाली वह प्रक्रिया हैं, जिसके अंतर्गत कोई व्यक्ति अपने अनुभवों को अर्जित कर जीवन की विभिन्न समस्याओं का समाधान करता है, परिस्थितियों पर विजय प्राप्त कर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए अपने कर्तव्यों का निर्वहन करता है। वस्तुतः जन्म से प्रत्येक व्यक्ति शिशु के रूप में पूर्णतः असहाय और कुछ प्राकृतिक प्रवृत्तियों को लेकर इस संसार में आता है। परंतु वह शिक्षा के माध्यम से अपनी प्राकृतिक प्रवृत्तियों का शोधन तथा मार्गांतीकरण(Sublimation & Redirection) करते हुए स्वयं को मानव और एक सामाजिक प्राणी के रूप में परिणत करता है। इसीलिए कहा जाता है कि जैसे कि शारीरिक विकास हेतु भोजन का महत्व है उसी प्रकार सामाजिक विकास के लिए शिक्षा का भी महत्व है। किसी भी सभ्यता एवं संस्कृति का विकास शिक्षा के द्वारा ही होता है।

व्यापक अर्थ–संदर्भ में शिक्षा जीवनभर चलने वाली प्रक्रिया है। इसके विपरीत संकुचित दृष्टि से शिक्षा से आशय बालक को विद्यालय में प्रदान की जाने वाली शिक्षा है। जब एक बालक को पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार वयस्क वर्ग एक निश्चित अवधि और निश्चित पद्धति से एक निश्चित प्रकार का ज्ञान प्रदान करता है तो उसे शिक्षा कहा जाता है। उपर्युक्त दृष्टि से यहाँ पर शिक्षा–विशिष्ट अवधि, विशिष्ट शिक्षालय, विशिष्ट शिक्षण, विशिष्ट पद्धति एवं विशिष्ट पाठ्यक्रम आदि सभी कुछ निश्चित हो जाता है। शिक्षा के व्यापक और संकुचित ये दो अर्थ–संदर्भ वस्तुतः समाज में शिक्षा के प्रति दो दृष्टिकोण है। समग्रतः कहा जा सकता है कि– शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक या व्यक्ति का बौद्धिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक विकास होता है और यह उसके जीवन को सफल बनाती है। शिक्षा व्यक्ति/बालक के व्यवहार में इस प्रकार परिवर्तन व परिवर्द्धन लाती है जो कि व्यक्ति, समाज, देश व सारे विश्व के लिए आवश्यक है। विद्यालय में शिक्षक बालक को वही शिक्षा प्रदान करता है जो कि समाज और बालक के उन्नयन के लिए आवश्यक है।

'शिक्षा' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत भाषा के 'शिक्ष' शब्द से हुई है, जिसका शाब्दिक अर्थ है– सीखना और सिखाना। अतः सीखने–सिखाने की प्रक्रिया का नाम शिक्षा है। शिक्षा का अंग्रेज़ी रूपांतर एजूकेशन (Education) है। अंग्रेज़ी के एजूकेशन (Education) शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'एजुकेटम' (Educatum) से हुई है। लैटिन में 'एजूकेटम' शब्द 'ई' (E) और 'केटम' (Catum)

भाषा ISSN 0523-1418

से बना है, 'ई' (E) का अर्थ है– अंतः (अंदर) और केटम (Catum) शब्द का अर्थ है– आगे बढ़ना/अग्रसर होना। इस प्रकार शाब्दिक अर्थ की दृष्टि से शिक्षा का अर्थ है– बालक की अंतर्निहित शक्तियों/गुणों का बाहर की ओर विकास करना। शिक्षा के द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान व कौशल में वृद्धि और व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है। इसके द्वारा मनुष्य सुसंस्कृत, सभ्य तथा योग्य बनाया जाता है, जिससे कि व्यक्ति और समाज यानी व्यष्टि और समष्टि दोनों का सतत रूप से विकास होता है।

प्राचीनकाल से शिक्षा भारतीय जीवन–पद्धति का अभिन्न अंग रही है। समय–समय पर समाज चिंतकों ने शिक्षा को परिभाषित करने का कार्य भी किया है जैसे– आद्य शंकराचार्य ने कहा है– 'शिक्षा वह है, जो मुक्ति दिलाए।' महात्मा गांधी के अनुसार– "शिक्षा से अभिप्राय बालक एवं मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा में निहित सर्वोत्तम शक्तियों के सर्वांगीण प्रकटीकरण से है।" ऐसे ही गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर का मत है कि– "शिक्षा का अर्थ मस्तिष्क को इस योग्य बनाना है कि वह सत्य की खोज कर सके और उस सत्य को अपना बनाते हुए उसे व्यक्त कर सके।" समग्रतः शिक्षा समाज में मानव मूल्यों के विकास पर बल देती है।

शिक्षा नीति से आशय है– देश में शिक्षा से संबंधित नियमों व सिद्धांतों की एक निश्चित रूपरेखा। शिक्षा नीति में देश की शैक्षिक प्राथमिकताओं, उद्देश्यों व लक्ष्यों तथा शिक्षा के प्रतिफलों का समावेश किया जाता है। प्रत्येक देश की शिक्षा नीति अपने काल–परिवेश की समस्याओं का समाधान निकालने की कोशिश करती है। शिक्षा नीति के अंतर्गत विद्यालय प्रशासन, शैक्षिक अनुसंधान आदि सम्मिलित रहते हैं। इसमें समावेशी शिक्षा सहित ऐसे अनेक बिंदुओं को समाहित किया गया है जिनमें भारतीय संस्कृति व मूल्य, भाषा, चिंतन, परंपरा, कौशल, विकास सहित अंतरराष्ट्रीय आदान–प्रदान को भी महत्व दिया गया है।

भारत में शिक्षा नीति निर्माण का कार्य भारत सरकार द्वारा गठित विभिन्न आयोग करते रहे हैं। इन आयोगों में राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर के प्रसिद्ध शिक्षाविद, शोधकर्ता शामिल होते हैं जो कि देशभर में सर्वेक्षण और अध्ययन के पश्चात् अपना विवरण तैयार करते हैं। उसी विवरण के आधार पर अपनी संस्तुति प्रस्तुत करते हैं। सरकार इन्हीं संस्तुतियों को ध्यान में रखकर शिक्षा नीति (नीतियों) का निर्माण करती है। शिक्षा नीति के नज़रिए से 1968 में पहली और 1986 में दूसरी शिक्षा नीति आई। 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति भारत के आधुनिकीकरण, जिसमें शिक्षा के विकास हेतु व्यापक ढाँचा, शिक्षा के क्षेत्र में बुनियादी सुविधाएँ मुहैया कराने पर बल देती है। परंतु 1990 के दौरान भूमंडलीकरण और बाजारवाद की प्रक्रिया ने तेजी पकड़ी, फलतः एक ओर निरक्षरता की दर में वृद्धि देखने को मिली तो दूसरी ओर विद्यालयों–महाविद्यालयों के आधारभूत ढाँचा और अध्ययन–अध्यापन से जुड़ी हुई अनेक समस्याएँ अभी तक विद्यमान है। जून, 2017 में 'डॉ. के. कस्तूरीरंगन समिति' ने व्यापक लोकतांत्रिक रूप से देश के कोने–कोने से सभी वर्गों की राय ली। यह शिक्षा 'सबका विकास, सबका विश्वास' की मनोभूमि पर आधारित है।

नई शिक्षा नीति में अनेक महत्वपूर्ण बिंदु शिक्षा के क्षेत्र में अनुमोदित किए गए हैं। इनमें से शिक्षक शिक्षा–या अध्यापक प्रशिक्षण भी शिक्षा का एक महत्वपूर्ण अंग है। अध्यापक ही वह आधारभूत स्रोत है, जो छात्रों में ज्ञान के साथ–साथ चरित्र का समग्र विकास करता है। भारतीय समाज में शिक्षक को गुरु कहा गया है जो कि क्रियात्मक, संरचनात्मक तथा परिवर्तनात्मक ऊर्जा से परिपूर्ण माना गया है। शिक्षक अपने प्रेरक आचार–विचार द्वारा बच्चों में सद्गुणों–संस्कारों का संचार करते हुए उनमें सकारात्मकता का समावेश करता है। शिक्षक परिवर्तित सामाजिक परिदृश्य के अनुरूप अपने विद्यार्थियों को भावी जीवन के लिए तैयार करता है। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक–शिक्षा

पर भी ध्यान दिया जाए। शिक्षक–शिक्षा एक तरह से व्यावसायिक तैयारी है जिसमें उन युवाओं को प्रशिक्षित किया जाता है जो शिक्षण क्षेत्र में जाना चाहते हैं।

शिक्षक शिक्षा के विकास की पृष्ठभूमि पर यदि हम गौर करें तो पाते हैं कि प्राचीनकाल में शिक्षक–शिक्षा का दायित्व गुरुकुलों में प्रधान आचार्य पर निर्भर था। परंतु समय के साथ समाज की आवश्यकताएँ बदली। समाज में बड़े पैमाने पर शिक्षकों की आवश्यकता अनुभव की गई और स्वतंत्र भारत में डॉ. राधाकृष्णन के प्रतिनिधित्व में 'राधाकृष्णन आयोग' गठित किया गया। इस आयोग ने 1948–1949 में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसमें कि शिक्षा के गिरते स्तर के लिए शिक्षकों की हीन दशा यानी शिक्षकों के शिक्षण–प्रशिक्षण के अभाव को प्रमुख कारण माना। इसके अतिरिक्त महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में अध्यापकों को आजीविका के लिए कोई अन्य कार्य न करना पड़े। इसलिए इस आयोग ने शिक्षकों के वेतन में वृद्धि की सिफारिश भी जोरदार शब्दों में की। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सुधारों के लिए 'राधाकृष्णन आयोग' के सुझाव बड़े महत्वपूर्ण थे परंतु देश के शिक्षाविदों एवं चिंतकों ने एक बात यह महसूस की कि जब तक माध्यमिक शिक्षा सुदृढ़ नहीं होगी, तब तक विश्वविद्यालयी शिक्षा में भी सुधार होने की संभावना नगण्य है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सन् 1948 में केंद्रीय शिक्षा सलाहकार मंडल ने माध्यमिक शिक्षा की जाँच हेतु एक आयोग गठित करने की सलाह दी। सन् 1951 में केंद्रीय शिक्षा सलाहकार मंडल ने पुनः उपर्युक्त प्रस्ताव की सिफारिश करते हुए कहा कि माध्यमिक शिक्षा एकमार्गी हो चुकी है, जिसके पुनर्गठन की अत्यधिक आवश्यकता है। परिणामस्वरूप 23 दिसंबर, 1953 को भारत सरकार ने मद्रास विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ. ए. लक्ष्मण स्वामी मुदालियर की अध्यक्षता में माध्यमिक शिक्षा आयोग गठित किया। अध्यक्ष के नाम के कारण इस आयोग को 'मुदालियर आयोग' भी कहा जाता है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने भी अध्यापकों की दयनीय स्थिति पर विचार करते हुए कहा कि शिक्षा को हम व्यक्ति निर्माण की प्रक्रिया मानते हैं, तब यह अनिवार्य हो जाता है कि अध्यापकों के स्तर एवं सेवा की दशाओं में सुधार किया जाए। आयोग ने अध्यापकों का चयन एवं नियुक्ति, अध्यापकों की सेवाओं की दशाएँ तथा योग्यता, प्रशिक्षण काल, अवकाश ग्रहण आयु, वेतन, व्यक्तिगत ट्यूशन, सामाजिक स्तर, प्रधानाध्यापक, अध्यापक प्रशिक्षण आदि समस्याओं पर ध्यान दिया। आयोग ने शिक्षकों के प्रशिक्षण को आवश्यक माना है, उच्च विद्यालयों में अध्यापन करने वाले अध्यापक प्रशिक्षित स्नातक हों। तकनीकी विषयों के अध्यापकों को प्रशिक्षण के साथ–साथ विषयों का स्नातक होना भी आवश्यक है। उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों की योग्यता के समरूप अध्यापक रखे जाने चाहिए। प्रशिक्षित अध्यापक का प्रशिक्षण कार्यकाल सामान्यतः एक वर्ष होना चाहिए।

कोठारी शिक्षा आयोग (1964–66) ने सुझाव दिया कि भारत सरकार को राज्यों और स्थानीय निकायों को अपने–अपने क्षेत्रों में शैक्षिक योजनाएँ बनाने और उन्हें क्रियान्वित करने के लिए दिशा–निर्देश देने चाहिए। परिणामस्वरूप 1968 में भारत सरकार ने देश के सामाजिक–सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास, राष्ट्रीय एकता और समानतावादी समाज के निर्माण के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु शिक्षा आयोग के सुझावों के अनुरूप शिक्षा का जीर्णोद्धार व पुनर्निमाण को अत्यावश्यक माना है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सन् 1968 में भारत सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा की जिसमें 17 आधारभूत सिद्धांतों पर बल दिया गया– राष्ट्रीय शिक्षा नीति में अध्यापक शिक्षा पर भी बल देते हुए। अध्यापक के व्यक्तिगत चरित्र व गुणों, शैक्षिक योग्यताओं तथा व्यावसायिक योग्यताओं पर बल दिया गया है। अतः समाज में शिक्षकों को सम्मानित स्थान मिलना चाहिए, उनके वेतन को भी सम्मानजनक होना चाहिए, उनको स्वतंत्र अध्ययन करने, अनुसंधान करने, महत्वपूर्ण राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय समस्याओं पर अपने विचार रखने की शैक्षणिक स्वतंत्रता होनी चाहिए।

नई शिक्षा नीति के निर्माण से पहले तत्कालीन शिक्षा की त्रुटियों की ओर संकेत करते हुए भावी

नीति के बारे में भारत सरकार द्वारा सन् 1975 में 'शिक्षा की चुनौती, नीति संबंधी परिप्रेक्ष्य' नामक 76 पृष्ठीय दस्तावेज़ तैयार किया गया, जिसका उद्देश्य था शिक्षा नीति के संबंध में देशव्यापी विचार–विमर्श को प्रोत्साहित करते हुए नई शिक्षा नीति के निर्माण हेतु पर्याप्त आधार तैयार हो सके तथा समाज के विभिन्न वर्ग अपने विचारों, आवश्यकताओं तथा माँगों को नई शिक्षा नीति के निर्धारकों के सामने रख सकें। कई शिक्षाविदों, विद्वानों से विचार–विमर्श के उपरांत मई, 1976 में भारत सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रारूप जारी किया जो 12 खंडों में विभाजित था।

सन् 1970–80 के दशक में भारत कई सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक परिवर्तनों से होकर गुजरा। इसके कारण देश एवं समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप नई शिक्षा नीति की आवश्यकता महसूस की गई। सन् 1985 में तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री ने राष्ट्र के लिए एक नई शिक्षा नीति तैयार करने की घोषणा की।

1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के खंड नौ में शिक्षक शिक्षा के विषय में कहा गया है– सरकार तथा समुदाय को शिक्षकों को रचनात्मक तथा सृजनात्मक दिशा में प्रोत्साहित एवं प्रेरित करने वाली परिस्थितियों के लिए तैयार करने का प्रयास करना चाहिए। श्रेष्ठता, वस्तुनिष्ठता तथा आवश्यकता से अनुरूपता को सुनिश्चित करने की दृष्टि से शिक्षक चयन विधियों के पुनर्गठन पर बल देते हुए सारे देश में शिक्षकों के एक समान वेतन तथा सेवा शर्तों के प्रयास किए गए। शिक्षा मूल्यांकन की एक खुली जगह, सहभागी तथा समानता आधारित व्यवस्था पर बल दिया गया तथा उच्च क्षेत्रों में प्रोन्नति के तर्कसंगत अवसर दिए जाने पर बल दिया गया। प्रथम कदम के रूप में अध्यापक शिक्षा प्रणाली में सुधार पर ध्यान दिया गया, क्योंकि अध्यापक शिक्षा एक सतत प्रक्रिया है और सेवापूर्व तथा सेवारत रूप इसके अभिन्न अंग है। अध्यापक संघों के ईमानदारी तथा शिक्षक मर्यादा को बढ़ाने और वृत्तिक कदाचार को रोकने में सार्थक भूमिका निभाने पर बल दिया गया। प्राथमिक विद्यालयी शिक्षक तथा अनौपचारिक व प्रौढ़ शिक्षा में कार्यरत व्यक्तियों के लिए सेवापूर्व एवं सेवारत कार्यक्रम के आयोजन हेतु जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना पर जोर दिया गया। (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986)।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के पश्चात् लगभग 34 वर्ष बाद 2020 को नई शिक्षा नीति को राष्ट्र के सम्मुख रखा। इस शिक्षा नीति को बनाने में देश की लगभग ढाई लाख ग्राम पंचायतें, 6600 ब्लॉक और 650 जिलों से विचार–विमर्श किया गया। इसमें शिक्षाविदों, अध्यापकों, अभिभावकों, जनप्रतिनिधियों और बड़े पैमाने पर छात्रों से भी सुझाव लेकर उनका मंथन किया गया। राष्ट्रीय आवश्यकता जन आकांक्षाओं के अनुरुप नई शिक्षा नीति 2020 की घोषणा की गई है। इसमें मानव संसाधन विकास मंत्रालय का नाम बदलकर शिक्षा मंत्रालय किया गया, केंद्र व राज्य सरकारों के सहयोग से शिक्षा क्षेत्र पर जीडीपी के 6 फीसदी हिस्से के बराबर निवेश का लक्ष्य, शैक्षिक पाठयक्रम को 5 + 3 + 3 + 4 प्रणाली पर विभाजित किया गया है, तकनीकी शिक्षा, भाषा की बाध्यताओं को दूर करना, दिव्यांग छात्रों एवं महिलाओं के लिए शिक्षा को सुगम बनाने पर बल दिया गया है, वर्तमान की रटंत एवं बोझिल होती जा रही शिक्षा के स्थान पर रचनात्मक सोच, तार्किक निर्णय और नवाचार की भावना को भी प्रोत्साहित किया गया।

नई शिक्षा नीति में शिक्षक प्रशिक्षण की दृष्टि से अध्यापक प्रशिक्षण पर भी जोर दिया गया है। आज के वैश्वीकरण के दौर में चारों ओर बाजारवादी प्रवृत्ति के विकास के कारण समाज में शिक्षक का महत्व बहुत अधिक बढ़ गया है। भारत के परिवर्तित सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक परिदृश्य में नित नवीन चुनौतियाँ सिर उठा रही हैं। ऐसे में एक ओर जहाँ शिक्षा का बाजारीकरण हो रहा है, वहीं समाज में अमीर–गरीब के बीच की खाई और अधिक चौड़ी होती जा रही है। समाज के विभिन्न वर्गों की शिक्षा में प्रायः भारत और 'इंडिया' वाला अंतर स्पष्ट दिखता है। विद्यार्थियों की स्वयं से अपेक्षाएँ बढ़ती जा रही हैं। इस स्थिति में शिक्षक की भूमिका और अधिक बढ़ जाती है क्योंकि वही तीव्रता से बदल रहे परिदृश्य में उन्हें ढलने योग्य

बनने में मदद कर सकता है। समाज को ऐसे शिक्षकों की आवश्यकता है जो आदर्श चरित्र के निर्माण में सहायक हो जो राष्ट्र सेवा के लिए तत्पर हृदय का विकास करने में सहायक हो, साथ ही भावी जीवन को सक्षम बना पाए। समग्रतः शिक्षक छात्रों के लिए प्रेरक और सहयोगी बन सकें।

समाज में शिक्षक के उपर्युक्त महत्व को देखते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में शिक्षकों की भर्ती, उनके स्थानांतरण, शिक्षक पात्रता परीक्षा, उनके सेवाकाल के दौरान प्रशिक्षण, उत्कृष्ट प्रदर्शन कर रहे शिक्षकों को चिह्नित कर उन्हें पदोन्नति और वेतन वृद्धि, विशिष्ट बच्चों के लिए विशिष्ट शिक्षक आदि सहित शिक्षक प्रशिक्षण के लिए आवश्यक कदम उठाने के स्पष्ट संकेत है। दूसरे सबके साथ विद्यालय में अध्ययन–अध्यापन के वातावरण निर्माण के लिए विद्यालयों में पर्याप्त सुरक्षित भौतिक संसाधन, सीखने–सिखाने के लिए स्वच्छ और आकर्षक वातावरण, बिजली, पानी, कम्प्यूटर उपकरण, इंटरनेट, पुस्तकालय और खेल आदि मनोरंजन की सुविधाओं का ध्यान रखा जाएगा जिससे कि प्रभावी शिक्षण वातावरण का निर्माण हो सके। शिक्षण क्षेत्र में प्रवेश करने वाले उत्कृष्ट विद्यार्थी ही शिक्षक बने इसके लिए चार वर्षीय एकीकृत बी. एड. कार्यक्रम निर्धारित किया जाएगा। ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षकों को काम करने को प्रोत्साहित किया जाएगा। विशेष स्थितियों में ही शिक्षक स्थानांतरण होगा। बुनियादी प्रारंभिक मिडिल और माध्यमिक आदि सभी स्तरों पर शिक्षक पात्रता परीक्षा को विस्तृत किया जाएगा। अगले दो दशकों में अपेक्षित विषयों के अनुसार शिक्षक–रिक्तियों का आकलन कर योग्य शिक्षकों को नियुक्त किया जाएगा। (नई शिक्षक शिक्षा नीति 2020)

इसके साथ ही भविष्य में शिक्षक शिक्षा को दुरुस्त करने के लिए शिक्षकों के लिए व्यावसायिक मानक राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद् द्वारा एनसीईआरटी, सभी स्तर और क्षेत्रों के शिक्षक, प्रशिक्षक की तैयारी और विकास हेतु संस्थानों और उच्चतर शिक्षण संस्थानों के साथ परामर्श से सामान्य मानक परिषद के तहत व्यावसायिक मानक सेटिंग बॉडी के रूप में पुनर्गठित अपने नए स्वरूप में शिक्षकों के लिए राष्ट्रीय व्यावसायिक मानकों का एक सामान्य मार्गदर्शक सेट 2022 तक विकसित किया जाएगा। मानकों में विशेषज्ञता/रैंक के विभिन्न स्तरों पर शिक्षक की भूमिका और उस रैंक के लिए आवश्यक दक्षताओं की अपेक्षाओं को शामिल किया जाएगा। इसमें प्रत्येक रैंक में किए गए प्रदर्शन के मूल्यांकन के लिए मानक भी शामिल होंगे, जो कि समय–समय पर किए जाएँगे। सेवा पूर्व शिक्षक शिक्षा कार्यक्रमों के डिजाइन को भी सूचित करेगा। तब जाकर इसे राज्य द्वारा अपनाया जा सकता है और इन मानकों के आधार पर शिक्षकों का कॅरियर मैनेजमेंट होगा जिसमें कार्यकाल, व्यावसायिक विकास के प्रयास, वेतन वृद्धि, पदोन्नति और अन्य पहचान शामिल होंगे। कार्यकाल अवधि या वरिष्ठता के बजाय सिर्फ निर्धारित मानकों के आधार पर पदोन्नति और वेतन में वृद्धि होगी। 2030 में राष्ट्रीय स्तर पर व्यावसायिक मानकों की समीक्षा और संशोधन किया जाएगा और उसके बाद हर दस वर्षों में शिक्षा व्यवस्था की गुणवत्ता का आनुभविक विश्लेषण किया जाएगा।

इसके साथ ही शिक्षक शिक्षा का दृष्टिकोण यह मानते हुए कि शिक्षकों को उच्चतर–गुणवत्ता की सामग्री के साथ–साथ शिक्षणशास्त्र में प्रशिक्षण की आवश्यकता होगी, शिक्षक शिक्षा को धीरे–धीरे वर्ष 2030 तक बहु–विषयक कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में शामिल किया जाएगा। जैसे–जैसे कॉलेज और विश्वविद्यालय बहु–विषयक बनने की दिशा में बढ़ेंगे और उनका लक्ष्य ऐसे उत्कृष्ट शिक्षा विभाग स्थापित करना होगा जो शिक्षा में बीएड, एमएड और पीएचडी की डिग्री प्रदान करेंगे।

नई शिक्षा नीति में मातृभाषा के विकास हेतु वर्ष 2030 तक, शिक्षण के लिए न्यूनतम योग्यता 4 वर्षीय एकीकृत बी.एड. डिग्री होगी जिसमें विस्तृत ज्ञान सामग्री और अध्यापन सामग्री से शिक्षण कराया जाएगा। इसमें स्थानीय स्कूलों में छात्र–शिक्षण के रूप में व्यावहारिक अभ्यास प्रशिक्षण भी शामिल होगा। 4 वर्षीय एकीकृत बी.एड. डिग्री प्रदान करने

वाले इन्ही बहु–विषयक संस्थानों के द्वारा ही 2 वर्षीय बी.एड. डिग्री कार्यक्रम नीति प्रदान की जाएगी और यह केवल उनके लिए ही आवश्यक होगा जो पहले से ही अन्य विशिष्ट विषयों में स्नातक की डिग्री प्राप्त कर चुके हैं। इन बी.एड. कार्यक्रमों को एक वर्षीय बी.एड. कार्यक्रमों के रूप में भी समुचित रूप से विकसित किया जा सकता है जो केवल उन व्यक्तियों को प्रदान किया जाएगा जिन्होंने चार वर्षीय बहु–विषयक स्नातक डिग्री या किसी विशिष्टता में परा–स्नातक डिग्री प्राप्त की हो और उस विशिष्ट विषय में विषय शिक्षक बनना चाहते हो। इस प्रकार की बी.एड. डिग्रियाँ केवल चार वर्षीय एकीकृत बी.एड. उपलब्ध कराने वाले मान्यता प्राप्त बहु–विषयक उच्चतर शिक्षा संस्थानों द्वारा ही प्रदान की जा सकती हैं। 4 वर्षीय एकीकृत बी.एड. कार्यक्रम प्रदान करने वाले वे बहु–विषयक उच्चतर शिक्षा संस्थान, जिनके पास मुक्त दूरस्थ शिक्षण की मान्यता भी है, दूर–दराज और दुर्गम भोगौलिक स्थानों के विद्यार्थियों और अपनी अर्हता को बढ़ाने की इच्छा रखने वाले सेवारत शिक्षकों के लिए मिश्रित मोड से भी उच्चतर गुणवत्ता वाले बी.एड. कार्यक्रम प्रदान कर सकते हैं, जिसके लिए वे कार्यक्रम के व्यावहारिक प्रशिक्षण और छात्र–शिक्षण घटक तथा मेंटरिंग हेतु उपयुक्त और ठोस व्यवस्था करेंगे।

इस प्रकार समग्रतः नई शिक्षा नीति में देश और समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप संस्तुतियाँ की गई, जो कि शिक्षकों के माध्यम से ही पूर्ण होनी है। इसके लिए शिक्षक–शिक्षा पर भी समुचित ध्यान दिया गया है।

– 65, मोहम्मदपुर, पो. ऑ. हिरनकी, दिल्ली – 110036

❑❑❑

मूल्य शिक्षा प्रसार में महिलाओं की भूमिका

डॉ. रवींद्र कुमार

'मूल्य शिक्षा' में केवल दो शब्द हैं: 'मूल्य' एवं 'शिक्षा', लेकिन, इन दो ही शब्दों से बनी 'मूल्य शिक्षा' की अवधारणा और उद्देश्य अति व्यापक हैं। पहला शब्द 'मूल्य': एक वचनीय परिप्रेक्ष्य में मानव को व्यवहारों में रचनात्मकता की अनुभूति कराने वाला मूल तत्व है। मूल्य व्यक्ति को सदाचार में प्रविष्ट होने के लिए मार्गदर्शन प्रदान करता है। जब कोई मूल्य अनेक जन के जीवन व्यवहारों का सामान्य रूप से मार्गदर्शक बन जाता है; सदाचार उनके जीवन से संबद्ध हो जाता है, तो उस स्थिति में वृहद् कल्याण का मार्ग प्रशस्त हो जाता है। व्यक्तियों के जीवन को ऊँचाई देने के साथ, वृहद् कल्याण ही अंततः सभी मूल्यों का प्रयोजन होता है। वृहद् उन्नति, विशाल स्तरीय जनोत्थान, मूल्यों की आधारभूत भावना होती है। दूसरा शब्द 'शिक्षा': वह प्रक्रिया जो जीवनभर जारी रहती है; मनुष्य के सर्वांगीण – चहुँमुखी विकास को समर्पित है, तथा मानव को मुक्ति के द्वार तक ले जाती है। इसीलिए तो भारत में कहा गया है, "सा विद्या या विमुक्तये – विद्या वही है, जो मुक्ति प्रदान करे।"

व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के साथ ही, वृहद् मानव कल्याण के मूल उद्देश्य को केंद्र में रखते हुए 'मूल्य' और 'शिक्षा' एक–दूसरे से अभिन्नतः जुड़े हुए हैं। मूल्य शिक्षा, इसीलिए, वह है, जो किसी भी प्रकार के भेदभाव के बिना – समान रूप से महिला–पुरुष के चहुँमुखी विकास का मार्ग प्रशस्त करे। मूल्य शिक्षा मनुष्य को नैतिक, विकासोन्मुखी, सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों से जोड़कर रखती है। मनुष्य को वांछित कर्तव्य परायणता की अनुभूति कराती है; उसमें, व्यक्तिगत से सार्वभौमिक स्तर तक व्यवस्था के सुचारु संचालनार्थ अपरिहार्य उत्तरदायित्वों के निर्वहन के लिए अलख जलाती है। इस हेतु उसे प्रेरित करती है। इस प्रकार, मेरा अपना स्पष्ट मत है कि मूल्य शिक्षा, अपने सच्चे अर्थ में, वास्तविक शिक्षा का ही प्रतिरूप है। दूसरे शब्दों में, यह शिक्षा की मूल भावना का प्रकटीकरण है; जीवन सार्थकता का माध्यम अथवा मार्ग है। प्रचीनकालिक और सत्यमयी भारतीय उद्घोषणा 'सा विद्या या विमुक्तये' की संपुष्टि है।

हजारों वर्षों से अति समृद्ध संस्कृति के पोषक तथा अतिप्राचीनकाल से ही आध्यात्मिक–शैक्षणिक विश्वगुरु के रूप में अपनी पहचान रखने वाले – संसारभर को ज्ञान–विज्ञान में नेतृत्व प्रदान करने वाले देश हिंदुस्तान में मूल्य शिक्षा का महत्व, प्रतिष्ठा और गौरव भी शताब्दियों पुराना है। मूल्य शिक्षा की अवधारणा विश्वभर के लिए नई हो सकती है पश्चिमी जगत के देशों में इससे संबंधित कई आधुनिक अवधारणाएँ सामने आई हैं, जैसे कि मानव–मूल्य प्रतिष्ठान की वर्ष 1995 ईसवी की "व्यापक मूल्य शिक्षा योजना"। लेकिन, कायिक –

शरीर श्रम के साथ ही व्यायाम एवं योगाभ्यास, सदाचरण और आत्मनिर्भरता के दृष्टिकोण से ऋषियों–ऋषिकाओं व महर्षियों की छत्रछाया में ज्ञान प्रदान किया जाना प्राचीनकाल से ही व्यक्ति के चहुँमुखी विकास को समर्पित भारत की सुदृढ़ शिक्षा व्यवस्था – प्रक्रिया से अभिन्नतः जुड़े पक्ष हैं। मूल्य शिक्षा का पक्ष स्वाभाविक रूप से प्रचीनकालिक महर्षियों–ऋषियों–ऋषिकाओं और महापुरुषों– युगपुरुषों के जीवनकाल से जुड़ा है। महिलाओं के दृष्टिकोण से हम अति विशेष रूप से वैदिक मंत्रों से जुड़ीं – मंत्र दृष्टा रोमशा, लोपा मुद्रा, विश्ववारा, शाश्वती व अपाला जैसी विभिन्न ऋषिकाओं व उपनिषदकालीन मैत्रेयी तथा गार्गी जैसी परम विदुषियों के नाम विशेष रूप से और गर्व के साथ हम आज भी ले सकते हैं।

संक्षेप में कहने का तात्पर्य यह है कि मूल्य शिक्षा अति प्राचीनकाल से ही भारत की शिक्षा–प्रक्रिया की पूरक–प्रतिरूप है। इसमें महिला वर्ग का योगदान प्रारंभ से ही महत्वपूर्ण तथा उल्लेखनीय है। इन ऋषिकाओं से जुड़े शास्त्रार्थ प्रकरणों से मूल्य शिक्षा का श्रेष्ठतः प्रकटीकरण होता है। उनके शास्त्रार्थों आदि से प्रकट मूल्य शिक्षा के पक्ष आज तक भी विचारणीय हैं; वे जानने–समझने योग्य हैं।

मूल्य शिक्षा का प्राचीनकालिक भारतीय संदर्भ हो अथवा कोई पश्चिमी जगत से जुड़ा आधुनिक सिद्धांत, लेकिन जो पहलू अनिवार्यतः इसके साथ संबद्ध हैं, या इसके मूल में हैं, वे सभी कालों में सामान्यतः एक समान रहे हैं। वर्तमान में भी वे ही प्रमुख हैं तथा मूल्य शिक्षा की मूल भावना, उद्देश्य एवं ध्येय को प्रकट करते हैं। नैतिक–चारित्रिक विकास, व्यवहार–कुशलता और दक्षता के साथ आत्म–निर्भरता, मूल्य शिक्षा से जुड़े पहलू हैं। ये व्यक्ति के चहुँमुखी विकास के मार्ग को प्रशस्त करते हैं, वास्तव में, ये शिक्षा की मूल भावना और उद्देश्य है। मूल्य शिक्षा को केंद्र में रखकर जब हम नैतिक–चारित्रिक विकास की बात करते हैं, तो हमें, तब भी, निश्चिततः यह समझ लेना चाहिए कि इसका प्रयोजन व्यक्ति में उत्तरदायित्व भावना की अनुभूति एवं कर्तव्य–निर्वहन के लिए सदैव जागृति उत्पन्न करना है। सामान्यतः भी नैतिकता की कसौटी अंततः समुचित रूप से कर्तव्य–पालन–उत्तरदायित्व–निर्वहन ही है। इस संबंध में मैं अपने निर्धारित मत को प्रतिबद्धता के साथ दोहराते हुए कहता हूँ, "व्यक्ति में नैतिकता की परख उसके द्वारा उत्तरदायित्वों के निर्वहन से ही हो सकती है। जो व्यक्ति भली–भाँति अपने उत्तरदायित्वों को समझता है और उनका निर्वहन करता है, वही, वास्तव में, नैतिकता का पालन करता है। केवल ऐसा व्यक्ति ही नैतिक होने का दावा कर सकता है।"

नैतिकता–सदाचार, व्यवहार–कुशलता और आत्मनिर्भरता सुनिश्चित करने वाली – मानव के चहुँमुखी विकास, अर्थात् जीवन सार्थकता को समर्पित मूल्य शिक्षा की प्रथम पाठशाला परिवार है। प्रथम अध्यापिका, निस्संदेह, माँ ही होती है। मूल्य शिक्षा के इस मूल स्रोत और केंद्र से स्वतः ही स्पष्ट है कि इसके प्रारंभ और प्रसार में महिला वर्ग की भूमिका सर्वप्रमुख है। इतना ही नहीं, इस संबंध में महिलाओं की भूमिका, वर्तमान में भी परिवार की धुरी होने के कारण, निर्णायक है, और सदा प्रासंगिक भी है।

मूल्य शिक्षा–संबंधी जो समकालीन–आधुनिक अवधारणाएँ हैं, वे इसके प्रसार में, सामाजिक ढाँचे में मूलभूत परिवर्तन के बाद भी–संस्थाओं के प्रभावी होने के बावजूद, परिवारों की भूमिका को अतिमहत्वपूर्ण स्वीकार करती हैं। जब परिवारों की भूमिका की बात हो, तो उसकी धुरी–महिला के निर्णायक योगदान की स्थिति स्वतः ही समझ में आ जाती है। इस संबंध में एलिस और मोरगन की पारिवारिक मूल्य योजना जैसे विचार भी हमारे सामने हैं।

महिलाएँ, यह वास्तविकता है, मूल्य शिक्षा की प्रारंभिक स्रोत हैं। पारिवारिक–सामाजिक स्तरों पर इसके प्रसार में स्त्रियों की भूमिका अतिमहत्वपूर्ण है। साथ ही, शैक्षणिक संस्थाओं के माध्यम से,

भारत ही नहीं, अपितु विश्व के सभी देशों में इस दिशा में महिलाओं का योगदान सराहनीय और उल्लेखनीय है। मैं स्वयं विश्वभर में मूल्य शिक्षा के क्षेत्र में महिला वर्ग की भूमिका और योगदान का अपने अनुभवों से साक्षी हूँ।

स्वयं शिक्षा क्षेत्र में अपने निरंतर बढ़ते कदमों और सशक्तिकरण के स्तर में होती वृद्धि के चलते महिला वर्ग, निस्संदेह, मूल्य शिक्षा के प्रसार में अभूतपूर्व योगदान कर सकता है। महिला वर्ग संसार की कुल जनसंख्या का लगभग आधा है। वर्तमान में विश्व में लगभग तीन अरब बयासी करोड़ महिलाएँ हैं। इसमें भी लगभग एक अरब किशोरियाँ और युवतियाँ हैं। यदि पचास वर्ष से कम आयु की महिलाओं की बात की जाए, तो यह संख्या लगभग दो अरब होगी। इसलिए, महिलाएँ इस हेतु पूर्णतः सक्षम हैं। बात केवल इसे उनके एक परम कर्तव्य के रूप में लेने की है। इस दिशा में महिलाओं से श्रेष्ठ कार्य कोई अन्य नहीं कर सकता। अतः महिलाएँ मूल्य शिक्षा प्रसार कार्य को नेतृत्व प्रदान करें। इस बहुत बड़े कार्य के माध्यम से मानवता को उसके वांछित स्तर तक पहुँचाने में अपनी भूमिका का निर्वहन करें।

– भारतीय शिक्षाशास्त्री एवं पूर्व कुलपति, मेरठ विश्वविद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश

❑❑❑

नई शिक्षा नीति में मातृभाषा के संदर्भ में सिक्किम का अध्ययन

डॉ चुकी भूटिया

पूर्वोत्तर प्रांत देश का संवेदनशील क्षेत्र है, भारत की विविधता की झाँकी यहाँ हर स्तर पर देखने को मिलती है ऐसे में उस वैविध्यपूर्ण संस्कृति को सुरक्षित और संरक्षित करते हुए राष्ट्रीय एकता को कैसे पुष्ट किया जाए यह चिंतनीय विषय है। इसमें आठ राज्य शामिल हैं जिनमें अरुणाचल प्रदेश, त्रिपुरा, मेघालय, असम, नागालैंड, मणिपुर, मिजोरम और सिक्किम हैं। पूर्वोत्तर प्रांतों के संदर्भ में कहा जाता है कि सात बहनों के एक भाई हैं सिक्किम और यह सांस्कृतिक सौहार्द के रूप में पूर्वोत्तर राज्यों के मध्य अपनी विशिष्ट पहचान बनाए हुए है। अध्ययन क्षेत्र के फलक को सीमित करते हुए सिक्किम के संदर्भ को ही यहाँ चर्चा का विषय बनाया गया है। क्षेत्रफल की दृष्टि से गोवा के पश्चात् दूसरे स्थान पर सिक्किम आता है परंतु इसके बावजूद भी कई जातीय संस्कृतियाँ यहाँ विकसित हैं, जिनमें नेपाली, गुरुंग, तामाँग, नेवार, भोटिया, मगर, राई, लिम्बू, लेपचा, सुनुवार, शेरपा, कुलुंग, तिब्बती, थामी, भुजेल और माझी हैं। इन सभी का अपना विकसित सामाजिक–सांस्कृतिक वैशिष्ट्य है और इसके अलावा भाषिक तौर पर भी सभी जातियों की अपनी भाषा है। भूमंडलीकरण के इस दौर में जब संपूर्ण विश्व एक संस्कृति की छत्र–छाया में आने का संकेत देती है। ऐसे में इन जातियाँ में अपनी अस्मिता के लिए अकुलाहट देखने को मिलती है। सभी जातियों की अपनी भाषिक परंपरा है, भाषिक स्तर पर आज प्रत्येक वर्ग इतनी चेतना से भरा हुआ है कि वे अपनी भाषा को बोली मानने तक में सहमत नहीं होते हैं, वे अपनी भाषा की समृद्ध परंपरा की बात करते हैं और उसके ऐतिहासिक महत्व को सिद्ध करने की चेष्टा में रहते हैं। उसके महत्व के घटने का भय पाले रहते हैं जबकि कई भाषाएँ ऐसी हैं जिसके बोलने वाले वक्ताओं की संख्या 100 भी नहीं है। वैचारिक मतभेद की स्थिति से बचते हुए उन्हें भाषा मान लेने में कोई दिक्कत भी नहीं है।

सिक्किम की संपर्क भाषा नेपाली है, जो भारोपीय परिवार की भाषा है और जिसे आठवीं अनुसूची में शामिल किया गया है। इसके अलावा ग्यारह और भाषाएँ हैं जिन्हें सिक्किम में राज्यभाषा की मान्यता प्राप्त है नेपाली, गुरुंग, तामाँग, नेवार, भोटिया आदि मगर राज्य की ओर से इन्हें संरक्षण प्राप्त नहीं है। जिन्हें राज्य का संरक्षण प्राप्त है वे भाषाएँ शिक्षा और राज्य के कई कार्यालयों में तथा राज्य विधानसभा की कार्य–प्रणाली में प्रयोग में लाई जाती हैं। एक विषय के रूप में आठवी कक्षा तक उसकी पढ़ाई होती है जबकि कुलुंग, तिब्बती, थामी, भुजेल और माझी इनके प्रयोगकर्ताओं की संख्या बहुत कम है और राज्य संरक्षण के अभाव में भाषाएँ किस तरह मरती है इसका प्रमाण इनके माध्यम से देख सकते हैं। भूटिया, लेपचा के अलावा अन्य जातियाँ नेपाली के अंतर्गत आने वाली उपजातियाँ हैं, नेपाली के अलावा लगभग सभी तिब्बती बर्मी भाषा परिवार से संबद्ध हैं, कई

भाषाएँ ऐसी हैं जिनकी लिपि तिब्बती लिपि से विकसित है, सभी भाषाएँ एक प्रांत विशेष में प्रयुक्त होने के कारण एक दूसरे को प्रभावित भी करती हैं। कुलुंग, माझी, भुजेल, थामी जैसी भाषाएँ सरकारी संरक्षण के अभाव में लुप्त प्राय हो रही हैं, उसमें माझी भाषा की स्थिति बहुत चिंताजनक है। अस्सी बरस का ठक बहादुर नामक व्यक्ति अकेला था, जो माझी भाषा बोल और समझ सकता था और जो यह कहता था कि मेरी भाषा को समझने वाला कोई नहीं है, मैं नदी में जाकर उसकी लहरों और पत्थरों से बातें करता हूँ क्योंकि मैं जानता हूँ उसे अब समझने वाला कोई नहीं है। तीन बरस पहले उनकी मृत्यु के साथ माझी भाषा खत्म हो गई। ठक बहादुर की मौत के साथ केवल एक भाषा नहीं मरी बल्कि उसके साथ उसकी संस्कृति और परंपरा भी समाप्त हो गई, एक बार मृत घोषित को जीवंत करना अब संभव नहीं होगा।

प्रत्येक समाज और उसकी भाषा शेष राष्ट्र और पूरी दुनिया से अपनी मान्यता की माँग और आग्रह करती है। राष्ट्र की मुख्यधारा के साथ इन जनजातीय भाषाओं को कैसे एकता बद्ध किया जाए यह चिंतनीय विषय है। हर भाषा स्वयं में व्यापक है, अपने माध्यम से वह किसी समाज और संस्कृति को साथ लिए आगे बढ़ती है। भाषाई अस्मिता की बेचैनी के साथ संवाद की गुंजाईश हमेशा महसूस की जाती रही है। भारत में अनगिनत छोटी–छोटी भाषाएँ हैं, इनके अपने दुख हैं, बेचैनियाँ हैं, इनमें अस्मिता की तड़प है, आज वैश्वीकरण के युग में छोटी–छोटी भाषाओं में अस्मिता की तड़प ज्यादा है। पूर्वोत्तर की अनेक मातृभाषाएँ इस तड़प के साथ जी रही हैं। यही तड़प उनमें अपनी भाषा और संस्कृति की सुरक्षा और संवर्धन को सक्रिय किए हुए है। विलुप्ति के कगार पर पहुँची भाषा को सुरक्षित करने के निमित्त जो प्रयास हो रहे हैं वे पर्याप्त नहीं हैं परंतु युवाओं में भाषा संस्कृति के प्रति जो सक्रियता हाल के दिनों में दिख रही हैं वह अवश्य सुखद भविष्य की सूचना देती है। आज भारतीय भाषाओं में लगभग संवादहीनता की स्थिति है। दूसरी भाषाओं में क्या घट चुका है और क्या घट रहा है यह हम नहीं जानते हैं इस तरह हम समग्र राष्ट्रीय बौद्धिकता के बीच खड़े नहीं है, सिर्फ अपनी भाषाई बौद्धिकता में कैद हैं। भारतीय भाषाओं के बीच परस्पर संबंध, सांस्कृतिक संवाद और तुलनात्मक साहित्य विमर्श अभी पिछड़ी हालत में है।

राष्ट्र की ऐसे भाषिक परिदृश्य में नई शिक्षा नीति में पाँचवी कक्षा तक की पढ़ाई मातृभाषा में होने का निर्णय वाकई मातृभाषाओं की सुरक्षा की दिशा में लिया गया महत्वपूर्ण कदम है। कई भाषाएँ हैं जो इस भय से आक्रांत है। राज्य संरक्षण प्राप्त भाषाएँ ही प्रयोग के स्तर पर बहुत कम होती जा रही है ऐसे में अन्य छोटी भाषाएँ जिनको राज्यभाषा की मान्यता प्राप्त नहीं है और जो शिक्षा से जुड़ी नहीं हैं उनकी चिंता कितना वाजिब है। बाजार और रोजगार की भाषा चयन में व्यक्ति की निष्ठा नहीं है परंतु जमाने का दबाव और माँग के अनुरूप वह चलने को विवश होता है। ऐसे में शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषाओं को लेकर जो पहल सरकार की ओर से हो रही है वह स्तुत्य है।

नई शिक्षा नीति में मातृभाषाओं पर बल देते हुए सरकार द्वारा उसे अनिवार्य घोषित नहीं किया गया है। वह विकल्प रूप में प्रस्तुत है। उसे मानना शिक्षण संस्थानों के लिए अनिवार्य नहीं है। ऐसे में सरकार की नीति मानकर सरकारी संस्थाएँ इसका अनुसरण करने को बाध्य होंगी परंतु निजी संस्थाएँ अपने यथा स्थिति रूप को ही निरंतर बनाए रखने की कोशिश में रहेंगी जबकि ऐसी स्थिति में शिक्षा के स्तर में अंतर आएगा। सरकारी संस्थानों में मध्यम वर्ग और निम्न वर्ग के बच्चे ही शिक्षा प्राप्ति के निमित्त जाते हैं, समाज में आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों को इस शिक्षा नीति के नकारात्मक परिणाम भुगतने होंगे। ऐसे में सरकार को भरसक प्रयत्न करना चाहिए कि भाषिक स्तर पर एकरूपता लाने की चेष्टा करे, ताकि निजी संस्थान और सरकारी संस्थान के भाषिक स्वरूप में एकरूपता बनी रहे। वरना भाषा की सुरक्षा और संवर्धन में उठाया गया सरकार का यह कदम विशेष वर्गों के लिए कहीं घातक सिद्ध न हो। नई शिक्षा नीति और मातृभाषा के संदर्भ में कार्य करते

हुए यह ज्ञात हुआ कि मेघालय राज्य की गारो भाषा में प्राथमिक शिक्षा दी जाती है। सभी विषय गारो भाषा में पढ़ाए जाते हैं और उसके लिए पाठ्यक्रम की सभी पुस्तकें भी गारो में निर्मित हैं। यह एक सुखद आनंद देने वाली स्थिति है पर चिंता का विषय यह है कि बच्चे का स्तर पाँचवी के बाद जहाँ पहुँचा रहता है वहाँ से किसी नई भाषा को बुनियादी स्तर से सीखना उनके लिए आसान नहीं होता है। सभी परिस्थितियों को मद्देनजर रखते हुए एक ऐसा सामंजस्य लाने का प्रयास करना होगा जिसमें शिक्षा का स्तर घटने का भय न हो, जमाने की माँग के अनुरूप रोजगार और बाजार की भाषा के साथ विद्यार्थी का संपर्क बना रहे और इसके बावजूद भी अपनी भाषा और संस्कृति की रक्षार्थ सरकार की नीतियाँ बनी रहें, उसका दबाव बना रहे क्योंकि शिक्षा में मातृभाषा को स्थान मिलते ही स्वतः मातृभाषा के प्रति लोगों की जिज्ञासा और झुकाव बढ़ जाएगा।

भाषा के विश्लेषण–विवेचन से स्पष्ट है कि भाषा भावों और विचारों की संवाहिका है, ऐसे में उस भाषा में अपने को व्यक्त करना जो बिना प्रयास के सरल और सहज गति में आपके यहाँ हो, उस भाषा में सोचना और सपने देखना होता हो तो वह भाषा अभिव्यक्ति को बहुत समृद्ध बनाता है। भाषा में अपने विचारों और भावों को समर्थ तरीके से प्रस्तुत करना आवश्यक है, वर्तमान दौर चुनौतियों से भरा हुआ दौर है, जीवन में श्रेष्ठता और गुणवत्ता का महत्व लगातार बढ़ा है ऐसे में अभिव्यक्ति कौशल में दक्षता की प्राप्ति में भाषा की संवेदना को पकड़ने की कला आनी चाहिए। इसमें व्यक्ति तभी समर्थ होगा जब व्यक्ति को उस भाषा का परिवेश मिलेगा। स्वामीनाथन अय्यर की रिपोर्ट के अनुसार बच्चों को सीखने के लिए सर्वाधिक सरल भाषा वही है जो घर में बोली जाती है और जिनको वे सुनते हैं, यही उनकी मातृभाषा है। शोधों से यह सिद्ध हो चुका है कि मातृभाषा में व्यक्ति का संज्ञानात्मक विकास बेहतर होता है। मातृभाषा में शिक्षा का प्रावधान होने से शिक्षा का स्तर स्वाभाविक तरीके से ऊँचा होगा क्योंकि जिस शिक्षित पीढ़ी का निर्माण होगा वह गुणवत्ता के स्तर पर बेहतर होगी। शिक्षा व्यवस्था में अंग्रेजी और अन्य भाषाओं का दबाव जो विद्यार्थियों में बना रहता है उस तनाव से विद्यार्थी मुक्त हो जाएँगे, एक सरल–सहज वातावरण के साथ एक ऐसी भाषा में शिक्षा प्राप्त करना जिसको समझने के लिए मानस को कोई कठिनाई नहीं होगी तो चिंतामुक्त वातावरण में एक सहज व्यक्तित्व का निर्माण भी संभव होगा। जबकि इसके पूर्व की शिक्षा व्यवस्था में विद्यार्थी का आधे से ज्यादा समय भाषा सीखने में लग जाता था, विद्यार्थी अपनी क्षमताओं को उचित ढंग से ज्ञानार्जन में व्यय नहीं कर पाता था।

नई शिक्षा नीति से दिनोंदिन घटती मातृभाषाओं की स्थिति सुधरेगी इसका विश्वास किया जा सकता है। अपने अस्तित्व और पहचान के संकट से जूझता आदिवासी और गैर आदिवासी समाज भाषा के स्तर पर अपनी परंपरा और संस्कृति पर फख़ करेगा। प्राथमिक शिक्षा को मातृभाषा में लागू करने की स्थिति में सरकार को बहुत श्रम करना पड़ेगा पर जातीय संस्कृति की सुरक्षा में लिया गया उसका कदम पीढ़ियाँ याद करेंगी पर उसे मातृभाषाओं में रोजगार के अवसर खोलने होंगे ताकि लाभ को ध्यान में रखते हुए व्यक्ति अपनी भाषा के प्रति आकृष्ट हो सके।

भाषा को जीवंत बनाए रखने के लिए व्यक्ति समूह, संस्था या उसमें साहित्य सृजन ही कामगार सिद्ध नहीं होता है बल्कि उसके लिए कई शक्तियों का सामूहिक सहयोग अपेक्षित रहता है, तभी मातृभाषाएँ बची रहेंगी और भारत की वैविध्यपूर्ण छटा निरंतर अपनी पूर्ण आभा के साथ सुरक्षित रहेगी।

– डॉ. चुकी भूटिया, सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, भाषा एवं साहित्य संकाय, सिक्किम विश्वविद्यालय, गंगटोक, सिक्किम

❑❑❑

नई शिक्षा नीति 2020 : एक विवेचन

विजय कुमार भारती

"ज्ञान स्वयं में वर्तमान है, मनुष्य केवल उसका आविष्कार करता है" (स्वामी विवेकानंद), यही बात शिक्षा पर भी लागू होती है। यद्यपि शिक्षा और ज्ञान लगभग एक दूसरे के पर्याय हैं। मनुष्य की विकास यात्रा में आविष्कार का यह सिलसिला अब तक जारी है।

जहाँ तक नीति निर्धारण का प्रश्न है, कोई राष्ट्र जब किसी लोकतांत्रिक ढाँचे का निर्माण करना चाहता है तो उसे ठोस नीतियों का सहारा लेना पड़ता है, जिससे वह सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था को भी दुरुस्त कर सके। जहाँ तक शिक्षा संबंधी नीति का प्रश्न है, यह किसी भी राष्ट्र के लोकतांत्रिक ढाँचे को मज़बूत करने में सबसे प्रमुख भूमिका निभाती है। शिक्षा नीति व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका को लंबे अरसे तक प्रभावित करती है।

नई शिक्षा नीति पर विचार करने से पहले इसकी पृष्ठभूमि पर विचार करना बेहद ज़रूरी है। भारतीय संविधान के नीति निर्देशक तत्वों के अनुसार '6 से 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाने की बात है'। इसके बाद 1984 में डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का निर्माण हुआ। इसी समय से राष्ट्रीय शिक्षा नीति के निर्माण की प्रक्रिया शुरू हुई। कोठारी आयोग (1964–1966) की पहल पर 1968 में शिक्षा नीति में महत्वपूर्ण बदलाव आया। इसके बाद 1986 में भारत सरकार ने नई शिक्षा नीति का एक प्रारूप तैयार किया, जो 1985 में 'शिक्षा की चुनौती' नामक एक दस्तावेज पर आधारित था। इस दस्तावेज में भारत के प्रशासकीय, व्यावसायिक, राजनीतिक, सामाजिक तथा बौद्धिक वर्ग के शिक्षा संबंधी विचार शामिल किए गए थे। –इस नीति की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि इसमें सारे देश के लिए एक समान शैक्षिक ढाँचे को स्वीकार किया गया था और अधिकांश राज्यों ने 10+2+3 की संरचना को अपनाया।

इस नीति में 1992 में संशोधन किया गया था। 2019 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा नई शिक्षा नीति की पहल हो चुकी थी। जिसे 29 जुलाई 2020 को घोषित किया गया। यह नीति अंतरिक्ष वैज्ञानिक के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में गठित की गई समिति की रिपोर्ट पर आधारित है।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के तहत वर्ष 2030 तक सकल नामांकन अनुपात (Gross Enrolment Ratio-GER) को 100% लाने का लक्ष्य रखा गया है। निश्चित तौर पर यह लक्ष्य काफ़ी महत्वपूर्ण है।

दूसरा लक्ष्य है– नई शिक्षा नीति के अंतर्गत शिक्षा क्षेत्र पर सकल घरेलू उत्पाद 6% के हिस्से को सार्वजनिक व्यय किया जाय। कोई भी शिक्षा नीति राष्ट्रीय नीति का प्रमुख हिस्सा होती है। इसलिए यह जरूरी है कि शिक्षा नीति पर सकल

घरेलू उत्पाद का अधिक से अधिक प्रतिशत खर्च किया जाय। क्योंकि सिर्फ 6% खर्च करके 100% लक्ष्य को प्राप्त किया जाना असंभव–सा लगता है। एक बार डॉ. अम्बेडकर ने संसद में अपील की थी– "हम शिक्षा पर उतनी राशि तो खर्च करें ही, जितनी हम लोगों से उत्पाद शुल्क के रूप में लेते हैं।" (बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर, संपूर्ण वांड्मय, खंड–3, सामाजिक न्याय तथा आधिकारिता मंत्रालय, नई दिल्ली, संस्करण, 2020, पृ. 43–44) क्योंकि भारत जैसे देश में शिक्षा के साथ–साथ कई तरह की सामाजिक–आर्थिक चुनौतियाँ विद्यमान हैं। इसलिए शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उससे जुड़ी हुई विभिन्न समस्याओं का समाधान जरूरी है। यह अक्सर देखा गया है कि बच्चे और बच्चियाँ पढ़ाई सिर्फ आर्थिक कारणों की वजह से ही नहीं छोड़ते, सामाजिक–सांस्कृतिक कारण भी इसके लिए काफ़ी जिम्मेदारी होते हैं। यह सही है कि उनमें एक बड़ा कारण आर्थिक कारण है।

'पाँचवीं कक्षा तक की शिक्षा में मातृभाषा, स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप में अपनाने पर बल दिया गया है। साथ ही मातृभाषा को कक्षा–8 और आगे की शिक्षा के लिए प्राथमिकता देने का सुझाव दिया गया है'। यह भाषा–नीति (Language policy) का प्रश्न है। इस संदर्भ में सेमुअल की यह टिप्पणी विशेष महत्व रखती है– "Languages are the pedigrees of nations." –अर्थात भाषाएँ किसी राष्ट्र की वंशावली की तरह होती हैं। विकीपीडिया के अनुसार भाषा नीति का संबंध भाषा–दर्शन, भाषाई–पुनर्जीवन, भाषा–शिक्षा आदि से है।' अतः यह स्पष्ट है कि भाषा नीति समाज को पुनर्जीवित करने में एक प्रमुख भूमिका निभाती है। जहाँ तक नई शिक्षा नीति का सवाल है 2019 से ही इसकी प्रक्रिया शुरू हो गई थी। वैसे भाषा का मामला, हरदेव बाहरी के शब्दों में– "भाषा के नाम पर जितनी भावुकता, चेतना और अनुदारता आज के युग में वर्तमान है उतनी पहले कभी नहीं रही" (हरदेव बाहरी, हिंदी : उद्भव, विकास और रूप, किताब महल, इलाहाबाद, संस्करण, 1965, पृ.264)। बात भले ही 1965 की हो पर यह सच्चाई आज भी बरकरार है। यही वजह है कि हिंदी को लेकर ठोस नीति हम नहीं बना पा रहे हैं।

जो भी हो, नई शिक्षा नीति के अंतर्गत शिक्षण के माध्यम के रूप में पहली से पाँचवीं कक्षा तक मातृभाषा का इस्तेमाल किया जाएगा। इसके पीछे मंशा यह है कि रटकर पढ़ने की प्रवृत्ति को ख़त्म किया जाए और समझकर पढ़ने की प्रवृत्ति विकसित की जाए। इस प्रकार यह नीति सराहनीय है।

भाषा के क्षेत्र में यह पहल काफ़ी महत्वपूर्ण है। मातृभाषा में शिक्षा बौद्धिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने में काफ़ी सहायक होगी। शायद यही वजह है कि भारतेंदु ने कहा था– निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। स्पष्ट है कि भाषा हर प्रकार की उन्नति में सहायक होती है बशर्ते वह ज्ञान के विविध स्रोतों को प्रदान करने का आधार बने। इन चुनौतियों को हिंदी प्रेमियों ने आत्मसात किया और आज हिंदी पूरे विश्व में एक महत्वपूर्ण भाषा के रूप मे उभरकर आ चुकी है। यही कार्य अन्य भारतीय भाषाओं और क्षेत्रीय भाषाओं को करना है। परंतु इसमें चुनौती यह है कि भारत की सभी स्थानीय या क्षेत्रीय भाषाओं में ज्ञान के विविध स्रोत कैसे उपलब्ध कराए जायँ। भारत में भाषाओं का वैविध्य तो है ही, बोलियों का भी वैविध्य है और सभी बोलियाँ उतनी विकसित नहीं हैं। प्रसिद्ध आलोचक रामविलास शर्मा के शब्दों में– "कुछ देशों मैं जैसे कि पोलैंड में स्थानीय बोलियों का दर्जा जातीय संस्कृति में अपेक्षाकृत ऊँचा है इससे जातीय एकता की कोई क्षति नहीं होती सभी लोग लोक संस्कृति का आदर करते हैं।" (रामविलास शर्मा, ऐतिहासिक भाषा विज्ञान और हिंदी भाषा, राजमल बोरा (सं.) राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2017, पृ. 71) परंतु हमारे यहाँ स्थिति ठीक इसके विपरीत है। बोलियाँ सिर्फ़ काम चलाने के लिए हैं, उनका सम्मान नहीं किया जाता। फिर भी बोलियों की चुनौतियों को यदि स्वीकार किया जाता है तो यह बड़ा ही सार्थक कदम होगा। परंतु इसमें अनुवाद की एक सार्थक भूमिका होगी। सवाल यह है कि क्या कोई विद्यार्थी बोलियों के माध्यम से

ज्ञान अर्जित कर अपना कैरियर बना सकता है? एक समस्या यह भी है बोलियों के साथ हिंदी और अंग्रेज़ी जैसी भाषाओं का तारतम्य कैसे स्थापित होगा। यदि भोजपुरी की बात करें तो फिर भी इसकी शब्द संपदा हिंदी के निकट है। अर्थात हिंदी को बोलियों के साथ दिक़्क़त नहीं है फिर भी हिंदी व्याकरण के ज्ञान का संकट आज भी विद्यमान है। वैसे आंचलिक भाषाओं के पास ज्ञान की एक बड़ी विरासत है– सामाजिक, सांस्कृतिक तथा औषधीय ज्ञान आदि की। नई शिक्षा नीति के माध्यम से हम इनका उपयोग कर सकते हैं।

शिक्षा नीति के तहत यह प्रावधान भी महत्वपूर्ण है कि स्कूली और उच्च शिक्षा में विद्यार्थियों के लिए संस्कृत के साथ–साथ अन्य प्राचीन भारतीय भाषाएँ भी विकल्प के तौर पर उपलब्ध होंगी। इस प्रावधान से सभी भारतीय भाषाओं को विकसित होने के अवसर मिलेंगे। भारतीय भाषाओं के संपर्क सूत्र का विस्तार होगा। भाषाओं के सांस्कृतिक आदान–प्रदान में सुविधा होगी। अच्छी बात यह भी है कि किसी भी विद्यार्थी पर भाषा के चुनाव की कोई बाध्यता नहीं होगी। सवाल सिर्फ़ भाषा को चुनने का नहीं है, भाषा के माध्यम से भविष्य चुनने का भी है।

यद्पि भाषा का संबंध सिर्फ भाषा से नहीं है, न केवल लिपि से है। भाषा के माध्यम से जीवन के सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक सरोकारों को समृद्ध किया जाता है। नई शिक्षा नीति के तहत जिस भाषा नीति का प्रावधान किया गया है, वह इसलिए सराहनीय है क्योंकि इसमें पाँचवीं कक्षा तक मातृभाषा में शिक्षा देने का प्रावधान है। इससे मातृभाषा के माध्यम से बच्चों का मानसिक विकास होगा। परंतु समस्या यह है कि पाँचवी कक्षा तक मातृभाषा में शिक्षा देने के बाद जब वे अन्य भाषाओं में शिक्षा ग्रहण करेंगे तो क्या उन्हें उतनी ही सुविधा होगी। यदि ऐसा नहीं है तो फिर यह शिक्षा नीति अधूरी साबित होगी। वैसे जिस उम्र में शिक्षा देने की बात आ रही है और भाषा सीखने की बात आ रही है वह भाषा सीखने की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण उम्र है और मानसिक विकास की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है। यदि उन्हें एक साथ कई भाषाओं को सीखने के अवसर प्राप्त होंगे तो वे बौद्धिक रूप से काफ़ी समृद्ध होंगे। परंतु इसके साथ–साथ यह सवाल भी महत्वपूर्ण है कि सिखाने वाले कौन हैं उनकी भाषा दक्षता कितनी है; उनकी योग्यता कैसी है; उनका ज्ञान कैसा है। क्या मातृभाषा सिखाने वाले लोग सक्षम हैं? देखना यह है कि विद्यार्थी एक साथ कितनी भाषाएँ सीख रहा है और भाषाओं के सीखने के कारण उसे रोज़गार के कितने अवसर प्राप्त हो रहे हैं। इस प्रकार भाषा का प्रश्न एक जातीय प्रश्न के रूप में हमारे सामने उपस्थित होता है। नामवर सिंह के अनुसार– "भाषा का सवाल अनिवार्य रूप से जातीयता से जुड़ा हुआ है और जातीयता के संदर्भ में ही भाषा समस्या का सही समाधान संभव है" (नामवर विचार कोश, महेंद्र राजा जैन (सं.) नई किताब, दिल्ली, संस्करण, 2012, पृ.235)।

नई शिक्षा नीति से संबंधित यह सवाल भी जुड़ा हुआ है कि उच्च शिक्षा तक पहुँचने के कितने अवसर प्राप्त होंगे। एक सवान यह भी कि विदेशी भाषा को सीखते हुए विद्यार्थी अपने को कितना समृद्ध कर पाएँगे। भारत जैसे देश में जहाँ बहुत कम लोग पढ़े लिखे हैं या बहुत कम विद्यार्थी हैं, जो पढ़े–लिखे पृष्ठभूमि से आते हैं। ऐसी भाषाओं को सीखना उनके लिए एक चुनौती भरा काम है। साथ ही उन पर आजीविका का भी भारी दबाव होता है। इसी दबाव के कारण विद्यार्थी बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं।

देश भर के उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए "भारतीय उच्च शिक्षा परिषद" नामक एक एकल नियामक की परिकल्पना की गई है। एकल नियामक की परिकल्पना बहुत अच्छी है। परंतु इसके कार्य करने की पद्धति को लोकतांत्रिक बनाए रखने की पहल सरकार को करनी होगी। ताकि सारे उच्च शिक्षण संस्थानों की कर्म संस्कृति को लगभग समान रूप से समृद्ध किया जा सके। उच्च शिक्षण संस्थानों को समान रूप से शिक्षा के संसाधन

मुहैया कराए जा सकें। जिससे सभी विद्यार्थी समान सुविधाएँ प्राप्त कर सकें। हम प्रतियोगिता एक–सी रखना चाहते हैं पर सुविधाएँ एक जैसी मुहैया नहीं करा पाते।

एम.फिल. समाप्त किए जाने का निर्णय भी सराहनीय है। एम.फिल. के कारण विद्यार्थियों के समय की बर्बादी हो रही थी। यह कार्य एम.ए. में लघु शोध प्रबंध के ज़रिए भी हो सकता है। परंतु जिन्हें एम.फिल. की डिग्री मिल चुकी है, उनका भविष्य भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए। किसी नई शिक्षा नीति की क़ीमत पुराने विद्यार्थियों को न चुकानी पड़े। साथ ही यह निर्णय भी महत्वपूर्ण है कि अनुसंधान में प्रवेश के लिए तीन साल के स्नातक डिग्री के बाद एक साल स्नातकोत्तर करके पी–एच.डी. में प्रवेश लिया जा सकता है। परंतु पी–एच.डी. के नाम पर चलनेवाले गोरख धंधे पर सरकार को नकेल कसनी होगी। हाल ही में शोध कार्य में प्लेजरिज़्म पर रोक लगाने की योजना सराहनीय है। नई शिक्षा नीति में शिक्षकों के प्रशिक्षण को विशेष महत्व दिया गया है। व्यापक सुधार के लिए शिक्षक प्रशिक्षण और सभी शिक्षा कार्यक्रमों को विश्वविद्यालयों या कॉलेजों के स्तर पर शामिल करने की सिफारिश की गई है। वर्तमान समय में शिक्षकों का प्रशिक्षण विशेष महत्व रखता है आज विद्यार्थियों के साथ शिक्षा में जितने संकट मौजूद हैं, उनके लिए शिक्षक भी ज़िम्मेदार हैं और साथ ही वह व्यवस्था भी, जिसमें वह कार्य करते हैं। संस्थाओं का कार्य है– शिक्षकों को अधिक से अधिक अकादमिक बनाना, न कि क्लर्क बनाना। प्रशिक्षण इसके लिए ज़रूरी है पर संस्थाओं पर भी नज़र रखी जानी चाहिए ताकि शिक्षकों को शिक्षण की पूरी स्वतंत्रता दी जा सके। साथ ही विद्यार्थियों को ज्ञानार्जन की भी।

शिक्षकों और छात्रों के बीच लोकतांत्रिक परिवेश का सृजन किया जाना चाहिए तथा संवाद की प्रक्रिया का विस्तार होना चाहिए।

प्राइवेट स्कूलों में मनमाने ढंग से फीस रखने और बढ़ाने को भी रोकने का प्रयास किया जाएगा, यह पहल भी प्रशंसनीय है। आज इससे विद्यार्थी और अभिभावक दोनों ही त्रस्त हैं। विद्यार्थी इन स्थितियों में मानसिक तनाव के शिकार होते हैं। बल्कि सभी शैक्षिक संस्थानों में एक जैसे शुल्क की व्यवस्था होनी चाहिए। यह कितना त्रासद और असमानतामूलक है कि किसी महानगर के विश्वविद्यालय का विद्यार्थी कम शुल्क देता है और पिछड़े अंचल का विद्यार्थी उससे अधिक।

'पहले 'समूह' के अनुसार विषय चुने जाते थे, किंतु अब उसमें भी बदलाव किया गया है। जो छात्र इंजीनियरिंग कर रहे हैं वह संगीत को भी अपने विषय के साथ पढ़ सकते हैं इस नीति से उनकी प्रतिभा को बहुमुखी बनाया जा सकेगा। विद्यार्थी अपनी प्रतिभा का विस्तार कर सकेंगे। चयन की बाध्यता ने वर्षों से विद्यार्थियों की प्रतिभा का हनन किया है। वैसे शिक्षा बाँधने का नहीं, मुक्त करने का कार्य करती है।

'नेशनल साइंस फ़ाउंडेशन' की तर्ज पर 'नेशनल रिसर्च फ़ाउंडेशन' बनाया जाएगा। जिससे पाठ्यक्रम में विज्ञान के साथ सामाजिक विज्ञान को भी शामिल किया जाएगा।' यह पहल भी इस अर्थ में महत्वपूर्ण है कि शोध का विस्तार होगा, इस क्षेत्र में एक खुलापन आएगा। सामाजिक विज्ञान को शामिल कर शिक्षा की सामाजिक भूमिका का विस्तार किया जा सकेगा।

यह उम्मीद है कि नई शिक्षा नीति, उच्च शिक्षा तक पहुँचने के अवसर प्रदान करने की चुनौतियों को आत्मसात करेगी। यह सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना के निर्माण में सहायक होगी। भारतीय भाषाओं तथा आंचलिक भाषाओं को सीखकर विद्यार्थी अपने भविष्य का निर्माण कर पाएँ। महिलाओं के लिए स्थितियाँ अभी भी बदतर है। शिक्षा अर्जित करने का निर्णय उनके पास नहीं हैं। असुरक्षा की स्थितियाँ उनके साथ सदैव बनी ही रहती हैं। स्कूल से उच्च शिक्षा तक पहुँचते–पहुँचते विवाह संस्थान उन्हें निगल लेता है। थर्ड जेंडर के लोगों के लिए भी ठोस शिक्षा नीति होनी चाहिए। शिक्षण संस्थानों में निहित

संकीर्णतावादी, सामंतवादी, जातिवादी, सांप्रदायिक तथा पुरुष सत्तात्मक तत्व विद्यार्थियों को मानसिक तौर पर पंगु बनाते हैं। भारत जैसे देश में यह एक गंभीर चुनौती है। यद्यपि सरकार इस ओर ध्यान दे रही है, परंतु इस पर और गंभीरता से विचार करने की ज़रूरत है। नई शिक्षा नीति के तहत एक बड़ी चुनौती तकनीकी शिक्षा की है। इसके बिना विद्यार्थियों का भविष्य अंधकारमय है।

हाल में कोरोना काल में शिक्षा की एक नई चुनौती उभरकर आई है, ऑनलाइन पढ़ाई की। इसमें सबसे बड़ी समस्या इंटरनेट कनेक्शन की रही है। किसी शहर में 4जी है और कहीं 2 जी भी नहीं है। भारत के बहुत से ऐसे अंचल है जहाँ बिजली भी ठीक से नहीं पहुँची है। इंटरनेट कनेक्शन हमेशा बाधित होता रहता है। ऐसे में हम उन्हें शिक्षा के समान अवसर कैसे प्रदान कर सकते हैं। आर्थिक कारणों की वजह से विद्यार्थियों के लिए डेटा भी एक समस्या बन जाती है। मोबाइल पर पढ़ाई करने से उनकी आँखों पर बहुत बुरा असर हो रहा है। विद्यार्थियों की आँखें क्या भावी राष्ट्र की आँखें नहीं हैं? कितना अच्छा होता कि सरकार किसी योजना के तहत उन्हें लैपटॉप मुहैया करा सकती। यदि ऐसा होता है, तो उच्च शिक्षा के क्षेत्र में और विद्यार्थियों के भविष्य निर्माण के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण कदम साबित होगा। क्योंकि आने वाला समय ऑनलाइन के महत्व को अस्वीकार नहीं कर पाएगा, भले ही हम कोरोना से मुक्त हो जाएँ।

अतः शिक्षा नीति के साथ अन्य कई नीतियों का समायोजन करना होगा। शिक्षा नीति का रोज़गार नीति से समन्वय स्थापित करना होगा। कोई भी शिक्षा नीति तब सफल मानी जा सकती है जब देश का सबसे ग़रीब आदमी लाभान्वित हो। वैसे हर नियम में कोई न कोई कमी रह ही जाती है, पर देश और समाज से प्यार करते हुए हम कमियों को दूर करते रहते हैं। क्योंकि– 'Education is the chief defense of nations' (Edmund Burke) अर्थात शिक्षा किसी राष्ट्र की रक्षा का मुख्य आधार है। अभिप्राय यह है कि शिक्षित लोगों के अभाव में राष्ट्र का सारा ढाँचा खोखला हो जाता है और राष्ट्र को कमज़ोर करनेवाली सारी विकृतियाँ मज़बूत होने लगती हैं। हम भारतीय यह कभी नहीं चाहेंगे कि हमारे देश का रक्षा तंत्र कहीं से भी कमज़ोर हो जाए।

– प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, क़ाज़ी नज़रुल विश्वविद्यालय, आसनसोल, 713340, प. बंगाल

❑❑❑

संपर्क सूत्र

1. डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय, प्रोफेसर एवं अध्यक्ष हिंदी विभाग, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई–400098
2. प्रो. पूरन चंद टंडन, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
3. डॉ. आरती स्मित, डी–136, गली नं. –5, गणेश नगर, पांडव नगर कॉम्प्लेक्स, दिल्ली–92
4. डॉ. मोनिका पारीक, काउंसलर, एस. ओ. एल, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
5. मीनाक्षी डबास 'मन', प्रवक्ता–हिंदी, राजकीय सह शिक्षा विद्यालय, पश्चिम विहार, दिल्ली
6. डॉ. बीना देवबर्मा, सहायक प्राध्यापिका, हिंदी विभाग, रामठाकुर कॉलेज, अगरतला, त्रिपुरा
7. अखिलेश आर्येन्दु, 7/377, प्रथम तल, कृष्णा गली (इंद्रा पार्क), ज्वाला नगर, शाहदरा, दिल्ली–110032
8. डॉ. वेदप्रकाश, सी–298, सरिता विहार, नई दिल्ली–110076
9. प्रो. गजेंद्र कुमार पाठक, प्रोफेसर, हिंदी विभाग, मानविकी संकाय, हैदराबाद विश्वविद्यालय हैदराबाद–500046
10. डॉ. वसुधा गाडगिल, वैभव अपार्टमेंट, उत्कर्ष बगीचे के सामने, 69, लोकमान्य नगर, इंदौर, मध्य प्रदेश
11. प्रो. प्रदीप के. शर्मा, कुलसचिव उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, चेन्नई
12. डॉ. अभिषेक शर्मा, समन्वयक, हिंदी विभाग , रेवेंशा विश्वविद्यालय, ओड़िशा, भारत
13. डॉ. हरीश कुमार सेठी, असिस्टेंट प्रोफेसर, अनुवाद अध्ययन और प्रशिक्षण विद्यापीठ, ब्लॉक 15–सी, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, मैदान गढ़ी, नई दिल्ली–110068
14. डॉ. राज शेखर, हिंदी विभागाध्यक्ष, लोयोला कॉलेज, चेन्नई–600034, तमिलनाडु
15. डॉ. सत्येंद्र श्रीवास्तव, सहायक प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग, हंस राज कॉलेज, दिल्ली
16. अंतरा करवड़े, अनुध्वनि 117, श्रीनगर एक्स्टेंशन, इंदौर
17. डॉ. हरेंद्र सिंह, एसोसियेट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, ज़ाकिर हुसैन दिल्ली कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
18. प्रो. रसाल सिंह, अधिष्ठाता, छात्र कल्याण, जम्मू केंद्रीय विश्वविद्यालय, जम्मू
19. डॉ. बनवारी लाल मीना, असिस्टेंट प्रोफेसर (शिक्षा), मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

20. डॉ. नृत्य गोपाल, हिंदी विभाग, हंसराज कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–110007
21. संजय चौधरी, संपादक, 'सड़क दर्पण', कमरा नं. 301, केंद्रीय संड़क अनुसंधान संस्थान, दिल्ली–मथुरा मार्ग, नई दिल्ली–110025
22. गोपाल शर्मा, 6–3–120–23 एन पी ए कॉलोनी, शिवरामपल्ली, हैदराबाद
23. डॉ. शशिकांत मिश्र, अध्यक्ष, हिंदी विभाग, एवी कॉलेज ऑफ आर्ट्स, साइंस एंड कॉमर्स, दोमलगुड़ा, हैदराबाद–500029
24. डॉ. जयंत कर शर्मा, एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, गवर्नमेंट विमेंस कॉलेज, संबलपुर, ओड़िशा
25. हरिराम, हिंदी शिक्षक, सर्वोदय बाल विद्यालय पूठकलां, (शिक्षा निदेशालय राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र) दिल्ली–110086
26. डॉ. संजय कुमार, राजनीतिक विज्ञान विभाग, असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, जाकिर हुसैन कॉलेज इवनिंग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
27. हेतराम, हिंदी शिक्षक, राजकीय उत्तर आदर्श माध्यमिक विद्यालय, राम दरबार, करसान, (शिक्षा विभाग केंद्र शासित प्रदेश), चंडीगढ़–160002
28. डॉ. बी. अशोक, सह आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, यूनिवर्सिटी कॉलिज, तिरुवनंतपुरम–695043
29. डॉ. शकुंतला कालरा, (मैत्रेयी कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय) एन. डी. 57,पीतमपुरा, दिल्ली–110034
30. डॉ. राजरानी शर्मा, एसोसिएट प्रोफ़ेसर सत्यवती महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
31. डॉ. हरिसिंह पाल, 684, इंद्रापार्क, नई दिल्ली–45
32. डॉ. संतोष खन्ना, बी4/48 (ई) शालीमार बाग, दिल्ली–110088
33. डॉ. अनिल कुमार, 65, मोहम्मदपुर पो. ऑ. हिरनकी, दिल्ली – 110036
34. डॉ. रवींद्र कुमार, भारतीय शिक्षाशास्त्री एवं पूर्व कुलपति मेरठ विश्वविद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश
35. डॉ चुकी भूटिया, सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग भाषा एवं साहित्य संकाय, सिक्किम विश्वविद्यालय, गंगटोक, सिक्किम
36. विजय कुमार भारती, प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, क़ाज़ी नज़रुल विश्वविद्यालय, आसनसोल, 713340, प. बंगाल

❑❑❑

केंद्रीय हिंदी निदेशालय

भाषा पत्रिका की सदस्यता हेतु आवेदन पत्र

सेवा में,

निदेशक

केंद्रीय हिंदी निदेशालय, उच्चतर शिक्षा विभाग,

शिक्षा मंत्रालय, पश्चिमी खंड–7, आर. के. पुरम्, नई दिल्ली – 110066

ईमेल – chdsalesunit@gmail.com

फोन नं. – 011–26105211 एक्सटेंशन नं. 201, 244

महोदय / महोदया,

कृपया मुझे भाषा (द्वैमासिक पत्रिका) का एक वर्ष के लिए / पाँच वर्ष के लिए / दस वर्ष के लिए / बीस वर्ष के लिए दिनांक ..... से सदस्य बनाने की कृपा करें। मैं पत्रिका का वार्षिक / पंचवर्षीय / दसवर्षीय / बीसवर्षीय सदस्यता शुल्क ..... रुपए, निदेशक, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, नई दिल्ली के पक्ष में नई दिल्ली स्थित अनुसूचित बैंक में देय डिमांड ड्राफ्ट सं. ..... दिनांक ..... द्वारा भेज रहा / रही हूँ। कृपया पावती भिजवाएँ।

नाम : .....

पूरा पता : .....

.....

.....

मोबाइल / दूरभाष : .....

ई–मेल : .....

संबद्धता / व्यवसाय : .....

आयु : .....

पूरा पता जिस पर : .....

पत्रिका प्रेषित की जाए .....

सदस्यता	शुल्क डाक खर्च सहित
वार्षिक सदस्यता	रु. 125.00
पंचवर्षीय सदस्यता	रु. 625.00
दसवर्षीय सदस्यता	रु. 1250.00
बीसवर्षीय सदस्यता	रु. 2500.00

डिमांड ड्राफ्ट निदेशक, केंद्रीय हिंदी निदेशालय के पक्ष में नई दिल्ली स्थित अनुसूचित बैंक में देय होना चाहिए। कृपया ड्राफ्ट के पीछे अपना नाम एवं पूरा पता भी लिखें।

नाम एवं हस्ताक्षर

नोट : कृपया पते में परिवर्तन होने की दशा में कम से कम दो माह पूर्व सूचित करने का कष्ट करें।

निदेशक, केंद्रीय हिंदी निदेशालय के कक्ष में दिनाक 10 मार्च 2021 को आयोजित भाषा, वार्षिकी और साहित्यमाला के संपादक एवं परामर्श मंडल तथा विभागीय सदस्यों की बैठक

पंजी संख्या. 10646/61
ISSN 0523-1418

भाषा (दवैमासिक)
BHASHA-BIMONTHLY
पी. ई. डी. 305-2-2021
700

भाषा

मार्च–अप्रैल (विशेषांक) 2021

केंद्रीय हिंदी निदेशालय
उच्चतर शिक्षा विभाग
शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार
पश्चिमी खंड–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110066
www.chdpublication.mhrd.gov.in
प्रबंधक, भारत सरकार मुद्रणालय, रिंग रोड, मायापुरी, नई दिल्ली – 110064 द्वारा मुद्रित